कश्मीरशब्दामृतम्

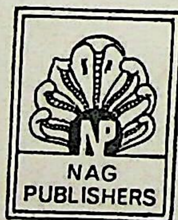
[काश्मीरी व्याकरण]

THE KĀŚMĪRAŚABDĀMṚTAM

(A Kashmiri Grammar)

Originally written in Sanskrit by
ISHVARA KAULA

Critically Edited Translated with notes & Additions
By
Dr. ANANT RAM SHASTRI
Formerly Principal, Ranbir Sanskrit Vidyapeetha, Jammu



NAG PUBLISHERS
11A/U.A. Jawahar Nagar, Delhi-7 (India)

This book is a grammar of **Kashmiri Language in Hindi**. Originally, it was written in Sanskrit. Kashmiri is a language which is very little known, but which is of great importance for the purposes of comparative philology. Existing grammars of it have been made by foreigners and are imperfect. They all suffer from at least one grave fault, viz that they are based on the representation of the language which is displayed to them by the Persian alphabet. It hasadopted the Devanagari character, ingeniously modified to suit the purpose. Hence the importance.

कश्मीरशब्दामृतम्

[काश्मीरी व्याकरण]

THE KĀŚMĪRAŚABDĀMṚTAM

(A Kashmiri Grammar)

Originally written in Sanskrit by
ISHVARA KAULA

Critically Edited Translated with notes & Additions
By
Dr. ANANT RAM SHASTRI
Formerly Principal, Ranbir Sanskrit Vidyapeetha, Jammu



NAG PUBLISHERS
11A/U.A. Jawahar Nagar, Delhi-7 (India)

Published with the Financial Assistance from the Ministry of Education & Culture, Govt. of India.

NAG PUBLISHERS

(i) 11A/U.A. (Post office Bldg.), Jawahar Nagar, Delhi-7

(ii) 8A/U.A.-3 Jawahar Nagar. Delhi-110007

(iii) Jalalpurmafi (Chunar-Mirzapur) U. P.

First Edition
1985

Printed In India

Published by Nag Sharan Singh for Nag Publishers,
11 A/U.A. (Post office building) Jawahar Nagar, Delhi-110007
and printed at Amar Printing Press, 8/25, Vijay Nagar,
Delhi--110009

प्राक्कथन

भाषा एक ऐसा सम्प्रेषण माध्यम है जिससे मानव मात्र अपने मनोभावों को अल्पाल्प समय में और यथेष्ट रूप से अभिव्यक्त कर सकता है। यद्यपि मनोभावों को संप्रेषित करने के लिए इंगितादि अन्य साधन भी हैं परन्तु उक्त सम्प्रेषण माध्यमों से कोई सहृदय अर्थसंगति बिठलाने में सफल तथा विफल भी हो सकता है या अन्य अर्थ भी ग्रहण कर सकता है। इस प्रक्रिया से भाव-संप्रेषण में समय अधिक लगता है। अतः लोक में भाषा ही भावाभिव्यक्ति का उत्तम एवं सशक्त माध्यम है। भाष् धातु से निष्पन्न भाषा शब्द का अर्थ है—वाणी में प्रयुक्त सार्थक शब्दसमूह जिसके द्वारा मानव अपने भावों को सम्प्रेषित करता है। प्रत्यक्ष व्यक्ति के लिए भाव-सम्प्रेषण बोलचाल से किया जा सकता है परन्तु परोक्ष व्यक्ति के लिए लिखित भाषा से यह कार्य सम्पन्न होता है। अतः भाषा के भाषित और लिखित दो रूप होते हैं।

भाषा के शुद्ध प्रयोग के लिए व्याकरण का ज्ञान अत्यन्त अनिवार्य है। वह विद्या जिसमें किसी भाषा के शुद्ध प्रयोगों के नियमों आदि का निरूपण होता है उसे "व्याकरण" कहते हैं। मनोभाव प्रकट करने के लिए वाक्यों का प्रयोग होता है और वाक्य रचना पदों से होती है। पदरचना सुबन्त या तिङन्त युक्त प्रातिपदिकों से सम्भव है। वाक्य पद तथा वर्णों से सम्बद्ध नियमों का समाचीन ज्ञान व्याकरण से होता है।

प्राचीन वैयाकरणों ने व्याकरण को ही वेदांगों में सर्वोपरि स्वीकार किया हैं—"मुखं व्याकरणं स्मृतम्"। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए शाकटायन, पाणिनि, कात्यायन, पतञ्जलि प्रभृति व्याकरण प्रणेताओं ने स्व स्व ग्रन्थों की रचना की। महाभाष्य रचयिता पतञ्जलि ने महाभाष्य के प्रारम्भ में व्याकरणाध्ययन के पाँच प्रधान प्रयोजन बताये हैं—"रक्षोहागमलघ्वसंदेहाः प्रयोजनम्।" लोप आगम तथा वर्ण विकारों का ज्ञाता ही भलीभाँति वेदादि विद्या की रक्षा करने में समर्थ हो सकता है। महाभाष्य की दीपिका टीका में रक्षा का अर्थ "सतोऽर्थस्यानपरिहारो रक्षा नाम"—प्रतिपादित

किया गया है। ऊह से अभिप्राय है—"अन्वययोग्यविभक्त्यादिकल्पनमित्यर्थः।" व्याकरण आगम भी है। यह षड् अंगों में प्रधान है। प्रधान में किया गया प्रयत्न फलवान् होता है। लघुता या सुगमता से भाषा-ज्ञान के लिए व्याकरण अनिवार्य है। पुनः संशय निवृत्ति के लिए भी व्याकरण-ज्ञान आवश्यक है। इन प्रयोजनों के अतिरिक्त भाष्यकार ने व्याकरणाध्ययन के तेरह अन्य गौण प्रयोजनों का उल्लेख किया है —"इमानि च भूयः शब्दानुशासनस्य प्रयोजनानि—तेऽसुराः, दुष्टः शब्दः, यदधीतं, यस्तु प्रयुङ्क्ते, अविद्वांसः, विभक्तिं कुर्वन्ति, यो वा इमां, चत्वारि, उत त्व, सक्तुमिव, सारस्वतीं, दशम्यां पुत्रस्य, सुदेवो असि वरुण इति।" अतः भाषा-ज्ञान हेतु व्याकरण शास्त्र का महत्त्व स्वतः सिद्ध है।

कश्मीरशब्दामृतम् एक सामान्य व्याकरण के आदर्श पर संस्कृत-रचित काश्मीरी भाषा का व्याकरण है। यह एक उत्तम ग्रन्थ है। इसे हेमचन्द्र द्वारा स्वयं प्रणीत बताया जाता है। काश्मीरी भाषा प्रान्तीय भाषा है किन्तु तुलनात्मक भाषाविज्ञान की दृष्टि से इसका अत्यधिक महत्त्व है। वर्तमान में उपलब्ध इस भाषा की अपूर्ण व्याकरण पुस्तकें पाश्चात्य विद्वानों द्वारा रचित हैं। काश्मीरी भाषा के फारसी वर्णमाला से व्यक्त रूप पर आधारित ये व्याकरण पुस्तकें फारसी वर्णमाला, काश्मीरी में प्रयुक्त खण्डित स्वर-ध्वनियों को प्रकट करने में समर्थ नहीं है। काश्मीरशब्दामृतम् के प्रणेता ईश्वर कौल ने अपनी लक्ष्यसिद्धि के लिए इस भाषा के देवनागरी रूप को ग्रहण कर एक व्याकरण प्रस्तुत किया है। ईश्वर कौल की व्यवस्था से निस्सन्देह इस भाषा में प्रयुक्त वर्णों की निश्चित ध्वनियों का ज्ञान होता है। लेखक ने काश्मीरी भाषा के उस रूप को प्रकाशित किया है जो श्रीनगर में रहने वाले हिन्दुओं के तथा घाटी में अन्य लोगों के द्वारा व्यवहृत काश्मीरी बोली से थोड़ा भिन्न है। पाश्चात्य विद्वानों ने जिन व्याकरणों की रचना की वे हैप्पी वैली में नब्बे प्रतिशत मुसलमानों द्वारा प्रयुक्त मुस्लिम बोली पर आधृत है। फिर भी काश्मीरी भाषा की अल्पजनों द्वारा प्रयुक्त "हिन्दू बोली" का महत्त्व कम नहीं है। यह "शिक्षित शासक वर्ग" की भाषा हैं जिसे जीवित परम्परा ने मुस्लिम प्रभाव से सुरक्षित रखा। अतः यह काश्मीर का शुद्धतम स्वरूप है।

काश्मीरशब्दामृतम् के प्रणेता ईश्वर कौल का जन्म उस परिवार में हुआ जिसमें संस्कृत विद्वानों की एक लम्बी परम्परा थी। ईश्वर कौल फारसी तथा अरबी के भी प्रकाण्ड पंडित थे। १८६१ ईस्वी में महाराजा ने इन्हें फारसी तथा अरबी ग्रन्थों का संस्कृत तथा हिन्दी भाषा में अनुवाद

करने के लिए नियुक्त किया था। दस वर्ष पश्चात् इन्हें महाराज द्वारा महा-मन्त्री नीलाम्बर मुकर्जी के परामर्श पर स्थापित किये गये संस्कृत विद्यालय में प्राचार्य के पद पर नियुक्त किया गया था।

व्याकरण के प्राक्कथन के अनुसार इस ग्रन्थ का प्रणयन १८७५ ईसवीं (विक्रमसम्वत् १९३२) में हुआ परन्तु उनके पुत्र आनन्द कौल के अनुसार इसकी रचना विक्रम संवत् १९१३ में हुई और इसका संशोधित एवं परि-वर्धित संस्करण १८७९ ईसवीं (वि० स० १९३६) में किया गया। इस व्याकरण पुस्तक के अतिरिक्त इन्होंने कश्मीरी भाषा का कोष, तथा अन्य अनेकानेक ग्रन्थों की रचना की।

जम्मू-स्थित रणवीर केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ के भूतपूर्व प्राचार्य डा० अनन्तराम शास्त्री ने ईश्वर कृष्ण कौल के कश्मीरशब्दामृतम् का संस्कृत से हिन्दी अनुवाद, प्रस्तुत ग्रन्थ के रूप में विद्वानों तथा काश्मीरी भाषानुरागियों के समक्ष स्थापित किया है। इसमें नौ प्रकरण हैं। प्रथम का नाम संधि प्रकरण है उसमें स्वर सन्धि के नियमों का विवरण है। द्वितीय का नाम लिङ्ग प्रकरण है। इसको तीन उप-प्रकरणों में विभाजित किया गया है—लिंगपाद संबुद्धिपाद तथा सर्वनाम पाद। तीसरे तृतीय प्रकरण का नाम समास प्रक्रिया, चतुर्थ का तद्धित प्रक्रिया, पंचम का अव्यय प्रकिया तथा षष्ठ का स्त्री प्रत्यय प्रकरण है। सप्तम प्रकरण का नाम आख्यात-प्रक्रिया है इसमें दो भाग हैं--धातुपाठ और परिशिष्ट नाम-धातु। आठवां प्रकरण भी आख्यात प्रक्रिया है। इसके चार भाग हैं—(१) वर्तमानपाद (२) भविष्यपाद (३) भूतपाद (४) हेतुपाद। नवम प्रकरण का नाम कृदन्त प्रक्रिया है जिसमें दो भाग हैं—(१) कृत्क्रियादिपाद (२) भावपाद। इन प्रकरणों के अतिरिक्त अकारदिक्रम से धातुपाठ, अकारादिक्रम से उदाहरण सूची तथा गणपाठ है।

कश्मीरी भाषा के संस्कृत लिखित प्रामाणिक व्याकरण कश्मीरशब्दा-मृतम् का डा० शास्त्री द्वारा सम्पादन अनुवाद तथा टिप्पणियों सहित प्रकाशन निश्चित रूप से एक महनीय कार्य है। आशा है कि डा० शास्त्री का यह ग्रंथ अन्य विद्वानों को भी अन्य भाषाओं का व्याकरण लिखने में प्रेरणा प्रदान करेगा।

डा० राजेन्द्रनाथ शर्मा

हिन्दू महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

विषय-सूची

कश्मीरशब्दामृतम्

यत्प्रसादाग्नो[1] विघ्नगणा यान्ति ह्यगण्यताम् ।
अभीप्सिताय तं वन्दे शरदीव घनाघनाः ॥ १ ॥

तां वन्दे या चतुष्षष्टिवर्णरूपेण भारती ।
वागर्थरूपवन्ध्यायां क्रीडयत्यखिलान्कृतीन् ॥ २ ॥

कश्मीरे संस्कृता भाषा ह्यभूदित्यनुमीयते ।
पूर्वं सैवाधुना कालवशात्संकरतामिता ॥ ३ ॥

सूत्रधातुनिबन्धेन शब्दाश्चाधुनिकाः क्रियाः ।
व्याक्रियन्ते तथा नोपभ्रष्टाः स्युस्ते पुनर्यथा ॥ ४ ॥

यस्य हृत्सदने वाङ्मे प्रभातोऽच्छप्रपूरिते ।
इवाभीक्ष्णमसापत्न्यसूचके धरणीपतेः ॥ ५ ॥

तस्य राजाधिराजस्य जम्बूकश्मीरभूभुजः ।
श्रीमच्छ्रीरणवीराख्यसिंहस्यामिततेजसः ।
अतिवेलप्रसादाप्तवृत्तिना क्रियते त्विदम् ॥ ६ ॥

संवीक्ष्य कल्पनाभोगं हृष्यन्त्वस्मिन्सुपूरुषाः ।
स्वोत्पादने पितृद्वेषी कुहनोऽन्यस्य का व्यथा ॥ ७ ॥

वेदव्याकरणे किल त्रिनयनाभ्यस्ते च सारस्वत
ऐन्द्रे सादर ऐन्दवे सुमनसां यो बाहुलेयेऽपि च ।

---

१. यत्प्रसादा···ना

प्रीत्या ईश्वर कौल ईशनिरतः कश्मीरशब्दामृतम्
सद्वर्षे सुतिथौ शुभोडुनि शुभे घस्रे च मासे व्यधात् ॥ ८ ॥[1]

---

१. (८) अस्य श्लोकस्य श्लिष्टार्थपदेभ्योऽयमर्थान्तरो व्यज्यते-वेद-व्याकरणे वेदा इति संख्यार्थे चत्वारि, व्याकरणानि अष्टौ, अङ्कानां वामतो गतिरिति नयेन तच्चतुरष्टरूपं संख्यानं चतुरशीतिर्भवति तस्मिश्चतुरशीत्यात्मके ८४ संख्याने त्रिनयनाभ्यस्ते त्रिभिर्नयनाभ्यां द्वाभ्यां पूर्वरीत्या त्रयोविंशत्या अभ्यस्ते गुणिते सति द्वि २ त्रि ३ नव ९ एका १ त्मिका संख्या अर्थत एकोनविंशतिः शतं द्वात्रिंशच्च जायते, तत्संख्यात्मके सद्वर्षे एकोनविंशतिशताधिकद्वात्रिंशे वैक्रमे संवत्सरे इत्यन्वयः, तथा सारस्वते सुतिथौ सरस्वतीदेवतायां तिथौ पञ्चम्यामिति यावत् पुनश्च ऐन्द्रे शुभोडुनि सति इन्द्रदेवतात्मके ज्येष्ठा-नक्षत्रे, घस्रे च शुभे ऐन्दवे इन्दुर्देवतास्येत्यैन्दवः सोमवासरे इत्यर्थः, शुभपदेन अवशिष्टः शुक्लपक्षोऽवगम्यते इति भावः ॥ तथाकृते । संवत् १९३२ कार्तिकशुक्लपञ्चम्यां सोमवासरे ज्येष्ठानक्षत्रे ईशनिरतः शिवभक्त ईश्वर कौलः सुमनसां सहृदयानां देवानां च प्रीत्यै कश्मीर-शब्दामृतं नाम इदं कश्मीरभाषाव्याकरणं व्यधात् निरमादिति ॥

ॐ अक्षरसंकेतपरिपाटीयम्
यह अक्षर संकेत परिपाटी है

प्रसिद्धा वर्णाः
प्रसिद्ध-वर्ण

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग ङ
च छ ज ट ठ ड त थ द न प फ ब भ म य र ल व श ष स ह क्ष

अप्रसिद्धानां संकेतः
अप्रसिद्धों के संकेत

अ आ उ ऊ ऋ च छ ज श

काश्मीरीभाषाशब्दाः—काश्मीरीभाषा के शब्दः—

अगनु अलतु आशिद् उजलु[1] ऋथ्

संस्कृतभाषाशब्दाः—संस्कृतभाषा के शब्दः—

अग्निः अलक्तः आश्विनः उज्जवलः ऋतुः

काश्मीरीभाषाशब्दाः—काश्मीरीभाषा के शब्दः—

पपु तनु दारू गरु[2] सरू कूमू

संस्कृतभाषाशब्दाः—संस्कृतभाषा के शब्दः—

पक्वः तनुः श्मश्रुः अश्वः शीतम् कूर्मः

काश्मीरीभाषाशब्दाः—काश्मीरीभाषा के शब्दः—

करि पपि दरि करु पपु दरु

संस्कृतभाषाशब्दाः—संस्कृतभाषा के शब्दः—

वलयाः पक्वाः दृढाः वलयः पक्वः दृढः

काश्मीरीभाषाशब्दाः—काश्मीरीभाषा के शब्दः—

दरू पपू करू चरु छरु जरु पोज्

सस्कृतभाषाशब्दाः—संस्कृतभाषा के शब्दः—

दृढा पक्वा अप्रसूता बहु रिक्तम् वधिरः पानीयम्

अत्रोर्ध्वचिह्नं स्वरस्याधोबिन्दुर्व्यञ्जनस्य ज्ञेया। तथा ऊकार-मात्रा (पू), इकारमात्रा (रि), उकारस्य (रु) ज्ञेया।

यहां ऊपरचिह्न स्वर का, नीचे बिन्दु व्यञ्जन का ज्ञान कराता है एवं ऊकार की मात्रा—(पू), इकार की मात्रा—(रि) और उकार की—(रु) जानना।

---

१. व्वजलु इत्यपि

२. सर्वदा हि गरु इत्यत्र गकाराश्रितः उकारः प्रसिद्धतयोच्चार्यते

कश्मीरशब्दामृतम्

तत्रादौ

सन्धिप्रकरणम् ॥१॥

अत्र वक्ष्यमाणशब्दशास्त्रे सन्धेः (अक्षरसंयोगस्य) सिद्धिः (विधानं)

सन्धिसिद्धिः पदेषु ॥ १ ॥

पदेषु (लिङ्गस्वरूपेषु धातुस्वरूपेषु च) विज्ञेया।

इस कहे जाने वाले शब्दशास्त्र में सन्धि अथवा अक्षरसंयोग की सिद्धिविधान लिङ्ग-स्वरूप एवं धातुस्वरूप पदों में जानना।

न वाक्येषु ॥ २ ॥

अत्र तिङन्तसुबन्तसमुदायरूपेषु वाक्येषु सन्धिर्नाविधार्यः।

यहां तिङन्त एवं सुबन्त समुदायरूप वाक्यों में सन्धि नहीं करना।

व्यञ्जनं परेण सन्धेयम् ॥ ३ ॥

ताप उकु। अनेन सन्धौ कृते। तापकु। आतपस्य। इति सिद्धम्। ताप्-उकु-यहां इस सूत्र से सन्धि किए जाने पर 'तापकु' यह सिद्ध होता है, जिसका अर्थ 'आतपस्य' धूप का–है।

कर् यान्। अनेन संयोगे कृते कर्यान्। चकार। इति सिद्धम्। कर्-यान्—यहां इससे संयोग किए जाने पर 'कर्यान्' सिद्ध होता है, जिसका अर्थ है—'चकार' किया।

पदेषु किम्। तिम् आय्। त आयाताः। अत्रोभयोः सुबन्ततिङन्त-योर्विद्यमानत्वात्सन्धिनिषेधः।

पदेषु किम्, तिम् आय्, त आयाताः—यहां दोनों में सुबन्त—तिङन्त होने से सन्धि नहीं होगी।

असवर्णेऽकारस्य लोपः ॥ ४ ॥

ड्यक उकु। गाट उलु। अनेन अकारस्य लोपे कृते। ड्यकुकु। ललाटस्य। गाटुलु। बुद्धिमान्। इति सिद्धम्।

ड्यक-उकु, गाट-उलु, यहां इस सूत्र से असवर्ण होने पर अकार का लोप हुआ; जिससे 'ड्यकुकु' और 'गाटुलु' सिद्ध हुआ और क्रमानुसार इनका अर्थ 'ललाट का' एवं 'बुद्धिमान्' हुआ।

पदेषु किम्। च्यह् व्वल्। त्वम् एहि। अत्र सन्धिर्न भवति। (क्वाचित्कोऽयं विधिरुकारादिष्वसवर्णेषु विध्यन्तरस्य वक्ष्यमाणत्वात्)।

पदेषु किम्, पदों में क्या? च्यह्-व्वल्, त्वम्-एहि, यहां सन्धि नहीं होती है। (यह विधान क्वाचित्क है अर्थात् कहीं होता है और कहीं नहीं भी होता है, क्योंकि उकारादि असवर्णों में अन्य विधान नहीं कहा गया है)।

स्वरः सवर्णे दीर्घपरलोपौ ॥५॥

करान् छ्य आ। अछि इट्। अनेन दीर्घे परलोपे च कृते। करान् छ्या। (सा कि नु करोति)। अछीट्। (दुर्दृष्टिः) सू. ४।३६) इति सिद्धम्।

करान्-छ्य-आ, अछि-इट्, यहां इस सूत्र से दीर्घ और परे अक्षर का लोप कर देने पर 'करान् छ्या' और 'अछीट्' सिद्ध हुआ, जिसका अर्थ क्रम से 'वह क्या करती है?' एवं 'बुरी नजर' है।

पदेषु किम्। पछि इम्। अतिथय एते। इत्यत्र सन्धिर्न भवति।

पदेषु किम् पदों में क्या? पछि-इम्, अतिथय-एते, यहां सन्धि नहीं होती है।

अकारेऽकारलोपः ॥५क॥

गर अन्। अनेन अकारस्य लोपः। गरन्। गृहाणि। इति सिद्धम्।

गर-अन्, यहां इस सूत्र से अकार का लोप हो गया और 'गरन्' यह सिद्ध हुआ, जिसका अर्थ है—बहुत घर।

अकार इकार ए ॥६॥

अकार इकारे परे एकारो भवति परलोपश्च। च्य इन्। (च्येन्। तेन पीतानि)। च्यकारादकारविश्लेषं कृत्वानेनाकारस्यैकारे कृते च्येन इति सिद्धम्।

अकार से इकार के परे होने पर 'एकार' होता है और पर का लोप। जैसे—च्य-इन, यहां 'च्यकार' से 'अकार' अलग कर इस

सूत्रसे 'अकार' के स्थान पर 'एकार' करने पर 'च्येन' यह सिद्ध हुआ, जिसका अर्थ है—उसने पीए।

उकार ओ ॥७॥

अकार उकारे परे ओकारो भवति परलोपश्च। ख्य उन्। ख्योन्। तेन खादितम्। च्य उन्। च्योन्। तेन पीतम्। अत्राकारोकारयोः सन्धौ कृते अनेन ओकारपरलोपौ।

अकार से उकार के परे होने पर 'ओकार' हो जाता है और परलोप। जैसे—ख्य-उन्-ख्योन, च्य-उन्-च्योन। यहां अकार और उकार की सन्धि हो जाने पर इस सूत्र से 'ओकार' हो गया और पर लोप भी, जिससे 'ख्योन्' और 'च्योन्, सिद्ध हुआ और क्रमानुसार इनका अर्थ 'उसने खाया' एवं 'उसने पीया' हुआ।

एकार ऐ ॥८॥

अकार एकारे परे ऐ संपद्यते। ग एय्। (गैय्। ते गताः)। प्य एय्। (प्यैय्। ते पतिताः)। अनेन सन्धौ कृते गैय् प्यैय् इति भवति।

अकार से एकार परे होने पर 'ऐ' होता है। जैसे—ग-एय्, प्य-एय्। यहां इस सूत्र से सन्धि करने पर क्रमशः—गैय् और प्यैय् सिद्ध होता है। जिसका अर्थ यथाक्रम है—वे गए और वे गिरे।

ओकार औ ॥९॥

अकार ओकारे परे औ भवति। ग ओव्। अनेन सन्धौ कृते। गौव (स गतः)। प्यौव। (स पतितः)।

अकार से ओकार परे होने पर 'औ' होता है। जैसे—ग-ओव्, प्य-ओव्, यहां इस सूत्र से सन्धि करने पर—'गौव' और 'प्यौव' सिद्ध होता है। क्रमशः अर्थ है—'वह गया', और 'वह गिरा'।

इकारो ऽसवर्णे यो ऽपर लोपः ॥१०॥

इकारोऽसवर्णे स्वरे न परलोपो यस्य तथाविधो यः संपद्यते। करि उकु। इकारस्य यत्वे परलोपाभावे च व्यञ्जनं परेण संधेयमिति (सू. ३)। कर्युकु। इति सिद्धम्।

इकार से असवर्ण स्वर के परे होने पर परलोप नहीं होता। जैसे—करि—उकु, यहां इकार को यकार हो जाने पर परलोप के

अभाव में सूत्र-३ के नियमानुसार व्यञ्जन अपने से परले अक्षर के साथ मिल जाता है और 'कर्युकु'। यह सिद्ध होता है।

पदेषु किम्। कति आय। कुत आगताः। इत्यत्र वाक्ययोर्विद्यमानत्वात्-सन्धिनिषेधः।

पदेषु किम्। पदों में क्या? कति-आय, कुत-आगताः, यहां वाक्यों में होने से सन्धि का निषेध है।

उकारो वः ॥११॥

उकारोऽसवर्णे स्वरे परे वकारो भवति परलोपाभावश्च। करान् छुआ। अनेन वत्वे कृते। करान् छ्वा। (स किं नु करोति) इति सिद्धम्।

उकार से असवर्ण स्वर परे होने पर 'वकार' होता है और पर-लोप नहीं होता। जैसे– करान् छु-आ, यहां इस सूत्र से 'वकार' कर दिए जाने पर 'करान् छ्वा'। यह रूप सिद्ध होगा, जिसका अर्थ है – वह क्या करता है?

पदेषु किम्। पटु अन्। और्णमानय। अत्र सन्धिनिषेधः।

पदेषु किम्, पदों में क्या? पटु-अन्, यहां सन्धि का निषेध है और इस का अर्थ है कि ऊर्णवस्त्र लाओ।

इति श्रीशारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे
कश्मीरशब्दामृते सन्धिप्रकरणम् ॥१॥

अथ लिङ्ग प्रकरणे ॥२॥

लिङ्गपादः ॥१॥

अकारान्तानां प्रथमैकबहुत्वे लिङ्गवत् ॥१॥

अकारान्तानां लिङ्गानामेकवचनं वहुवचनं वा स्त्रीपुंसोर्लिङ्ग-वद्विज्ञेयम् । ड्यक । ललाटम् । ड्यक । ललाटानि । व्यत्र । भगिनी । व्यत्र । भगिन्यः ।

अकारान्त लिङ्गों के एकवचन वा वहुवचनं स्त्रीलिङ्ग और पुंल्लिग में लिंगानुसार ही जानना । जैसे—ड्यक-ललाटम्-एकवचन, ड्यक-ललाटानि-वहुवचन । व्यत्र-भगिनी-एकवचन। व्यत्र-भगिन्यः-वहुवचन ।

ऊदन्तानां पुंसि ॥२॥

ऊकारान्तानां च लिंगानां प्रथमाया एकवचनं वहुवचनं च लिंगवद्विज्ञेयं पुंल्लिग एव । अत्र शारदाक्षेत्रभाषाशब्दशास्त्रे इकारान्तं लिंगमुवर्णान्तं च लिंगं तत्तन्मात्रिकान्तमेव बोध्यम् । न तु सम्पूर्णम् । किन्तु तेषु पूर्ववर्णसंबन्धिनः स्वरस्याप्रसिद्धता विज्ञेया । (७० सूत्रोक्तो विधिरयम्) । सा च आकारस्य अकारप्लुतत्वशब्दवद्भवतीति परिभाष्यते । दानू । करकः । अनार । दानू । करकाः । बहुत अनार । पुंसिकिम् । बड़ू । महती । बड़ी । वज्य । महत्यः । बड़ियां :

ऊकारान्त लिंगों के प्रथमा का एकवचन और वहुवचन लिंगा-नुसार पुंल्लिग ही जानना । इस शारदाक्षेत्र के भाषाशब्दशास्त्र में इकारान्त लिंग और उकारान्त लिंग उस-उस मात्रा के अन्त को लक्ष्य रखकर ही जानना, न कि सम्पूर्ण को । किन्तु उनमें पूर्व वर्ण से सम्बद्ध स्वर की अप्रसिद्धता जानना । (सूत्र-७० में यह विधि कही गई है) । और वह अप्रसिद्धता आकार को अकारप्लुतत्वशब्द की तरह होती है, ऐसी परिभाषा है । जैसे-दानू-करकः-अनार । दानू-करकाः-बहुत अनार । पुल्लिग में क्या ? स्त्रीलिंग में भी देखिए—बड़ू-महती-बड़ी । वज्य-महत्य.-बड़ियां ।

व्यञ्जनान्तानां च ॥ ३ ॥

व्यञ्जनान्तानां पुंल्लिगानां प्रथमैकवहुत्वे लिंगवद्भवतः। जैसे-दय्। ईश्वरः। ईश्वर। दय्-ईश्वराः। बहुत ईश्वर।

पुंल्लिग व्यञ्जनान्त शब्दों के प्रथमा विभक्ति के एकवचन और वहुवचन में लिंगानुसार हुआ करता है। जैसे—दय्-ईश्वरः-ईश्वर। दय्-ईश्वराः-बहुत ईश्वर।

इ प्रत्ययस्याकारो व्यञ्जने ॥४॥

व्यञ्जनान्तानां पुंल्लिगानामकारान्तानां च व्यञ्जने परे इ प्रत्ययस्य अकारो भवति। गर सूतिन्। गृहेण। घर करके। वाल-सूतिन्। वालेन। वाल करके। गर शब्दात् वाल शब्दात् च हेतौ सूतिन्नन्तौ सूत्यन्तौ वा (सू० ५९) इत्यनेन इ सूतिन् प्रत्ययः। अनेन इकारस्य अकारः। अकारव्यञ्जनान्तानां किम्। गुरि सूतिन्। अश्वेन। घोड़े करके। व्यञ्जने किम्। गुरिलोयु। अश्वेन हतः। घोड़े ने मारा। पुंसि किम्। मालि सूतिन्। मालया। माला करके।

पुंल्लिग व्यञ्जनान्त और अकारान्त शब्दों से परे व्यञ्जन के आने पर 'इ' प्रत्यय का 'अकार' होता है। जैसे-गर-सूतिन्-गृहेण-घर कर के। वाल सूतिन्-वालेन-वाल कर के। यहां 'गर' शब्द और 'वाल्' शब्द से 'हेतौ सूतिन्नन्तौ सूत्यन्तौ वा (सू०-५९) इस सूत्र के नियमानुसार 'इ सूतिन्' प्रत्यय हो गया और इसी से ही 'इकार' के स्थान में अकार भी हो गया। अकार व्यञ्जनान्तों का क्या-गुरि-सूतिन्-अश्वेन-घोड़े करके। व्यञ्जन में क्या-गुरिलोयु-अश्वेन हतः-घोड़े ने मारा। पुंल्लिग में क्या-मालिसूतिन्-मालया-माला कर के।

न संख्यावाचिभ्यः ॥५॥

संख्यावाचिभ्यो व्यञ्जनान्तेभ्यो लिंगेभ्यः इ प्रत्ययस्य अकारो न भवति। सति सूतिन्। सप्तभिः। सात करके। ऐठि सूतिन्। अष्टाभिः। आठ करके। सत् शब्दात् ऐठ् शब्दात् इ सूतिन् प्रत्ययः।

व्यञ्जनान्त संख्यावाचक लिंगों से 'इ' प्रत्यय के स्थान पर 'अकार' नहीं होता है। जैसे—सति-सूतिन्-सप्तभिः-सात कर के। ऐठि-सूतिन्-अष्टाभिः-आठ करके। यहां 'सत्' और 'ऐठ्' शब्द से 'इ सूतिन्' प्रत्यय हुआ।

इतो लोपः ॥ ६ ॥

इकारात् इ प्रत्ययस्य लोपो भवति। पोथि सूतिन्। पुस्तिकया। पोथी कर के। पूथि शब्दात् इ सूतिन् प्रत्ययः। पूर्ववर्णोकारस्यौकारः स्त्रियाम् (सू. ३३) इत्यनेन उपधाया ऊकारस्य ओकारः। अनेन इकारलोपः।

इकार से 'इ' प्रत्यय का लोप होता है। जैसे-पोथि सूतिन्-पुस्तिकया-पोथी कर के। यहां 'पूथि' शब्द से 'इ सूतिन्' प्रत्यय हुआ और पूर्व वर्ण के उपधा के 'ऊकार' को 'स्त्रियाम्' (सू० ३३) इस सूत्र से 'ओकार' हो गया और इसी से 'इकार' का लोप भी हुआ।

यड्गाव्थर्कठ्वडभ्य ऊकारमात्रादेशः ॥ ७ ॥

एभ्यः शब्देभ्यः इ प्रत्ययस्य ऊकारमात्रादेशो भवति। यड़ू सूतिन्। उदरेण। पेट कर के। यड् शब्दात् इ सूतिन् प्रत्ययः। अनेन इकारस्य ऊकारमात्रादेशः। ऊदन्तत्वे सिद्धे पूर्वस्वरस्याख्याततः ज्ञेया। व्यञ्जनं परेण सन्धेयम् (सू. १/३) यड़ू सूतिन्। इति सिद्धम्। एवं। गोवू (सू. ७२) सूतिन्। गवा। गऊ कर के। थरू सूतिन्। पृष्ठेन। पीठ करके। कठू सूतिन्। कुष्ठेन। कुष्ठ कर के। वड़ू सूतिन्। व्याजेन। व्याज करके।

यड्, गाव्, थर्, कठ् और वड्, इन शब्दों से इ प्रत्यय के स्थान पर ऊकार मात्र आदेश होता है। जैसे—यड़ू-सूतिन्-उदरेण-पेट कर के। यहां 'यड्, शब्द से 'इ सूतिन्' प्रत्यय हुआ और इस सूत्र से 'इकार' के स्थान पर 'ऊकार' मात्र आदेश हुआ। ऊदन्तत्व सिद्ध हो जाने पर पूर्वस्वर का ज्ञान आख्यात से कर लेना। व्यञ्जन को अपने से परे अक्षर से जोड़ देना चाहिए (१/३) सूत्र के नियमानुसार-'यड़ू सूतिन्' यह सिद्ध हुआ। इसी तरह 'गोवू (सू० ७२) सूतिन्-गवा-गऊ कर के। थरू सूतिन्-पृष्ठेन-पीठ करके। कठू सूतिन्-कुष्ठेन-कुठ करके। वड़ू सूतिन्-व्याजेन-व्याज कर के।

उदन्तानां लिङ्गवदेकत्वमेव ॥ ८ ॥

स्पष्टम्। करू। कटकः। कड़ा।
स्पष्ट ही है। करू-कटकः-कड़ा।

स्त्रियामिदूदन्तानाम् ॥ ९ ॥

इकारान्तानामूकारान्तानां च स्त्रियामेकवचनमेव लिङ्गवद्भवति । पूथि । पुस्तिका । पोथी । पटू । पट्टिका । फट्टी । एकवचनं किम् । पोथ्य । पुस्तिकाः । पोथियां । पच्य । पट्टिकाः । फट्टियां । स्त्रियां किम् । वाचू । कुटुम्बजनाः । टब्बर ।

इकारान्त और ऊकारान्त शब्दों का स्त्रीलिंग में एकवचन ही लिंगानुसार होता है । जैसे—पूथि-पुस्तिका-पोथी । पटू-पट्टिका-फट्टी । एकवचन क्या ? पोथ्य-पुस्तिकाः-पोथियां । पच्य-पट्टिकाः-फट्टियां । स्त्रीलिंग में क्या ? वाचू-कुटुम्बजनाः-टब्बर ।

व्यञ्जनान्तानां च ॥ १० ॥

व्यञ्जनान्तानां स्त्रीलिंगानामेकवचनमेव लिंगवद्भवति । क्रख् । कोलाहलः । ऊँचाशब्द । क्रकशब्दस्य । वर्गप्रथमान्तानां प्रथमायां द्वितीयः (सू० ६६) इत्यनेन कस्य खः । एकवचनं किम् । क्रक । कोलाहलाः । ऊँचे शब्द ।

स्त्री लिंग में व्यञ्जनान्त शब्दों का एकवचन ही लिंगानुसार होता है । जैसे—क्रख्-कोलाहलः– ऊँचा शब्द । यहां क्रक शब्द के प्रथम वर्ग के प्रथम अक्षर को द्वितीय अक्षर (६६ सू०) से 'क' के स्थान में 'ख' हो गया । एकवचन क्या ? क्रक-कोलाहलाः—ऊँचे शब्द ।

वहुत्वेऽकारागमः ॥ ११ ॥

व्यञ्जनान्तानां (इद्) ऊदन्तानां च स्त्रीलिंगानां वहुवचने अकारागमो भवति । (पोथ्य । पुस्तकानि । पोथियां) । पच्य । पट्टिकाः । फट्टियाँ । क्रक । कोलाहलाः । ऊँचे शब्द । पटू शब्दात् अनेन अकारागमे कृते । ऊदन्तटवर्गस्य चवर्गः प्रथमावहुत्वादिषु स्त्रियाम् (सू. २२) इत्यनेन सूत्रेण टकारस्य चकारे कृते । उवर्णान्तानामिकारः (सू० ३०) इति ऊमात्राया इकारः । इकारोऽसवर्णे योऽपरलोपः (सू० १/१०) इति यत्वम् । अन्यत् स्पष्टम् ।

स्त्रीलिंग व्यञ्जनान्त और ऊदन्त शब्दों के वहुवचन में 'अकार' का आगम होता है । जैसे—(पोथ्य-पुस्तकानि-पोथियां)। पच्य-पट्टिकाः फट्टियाँ । क्रक-कोलाहलाः-ऊँचे शब्द । 'पटू' शब्द से इस सूत्र द्वारा 'अकार' का आगम करने पर ऊदन्त टवर्ग को चवर्ग प्रथमा के

वहुवचन में स्त्रीलिंग में हुआ करता है। इस नियम के अनुसार (सू० २२) इस सूत्र से टकार को चकार हो गया। उवर्णान्तों को इकार होता है (सू० ३०) के सिद्धान्तानुसार 'ऊ' मात्रा का इकार हो गया। इकार को असवर्ण परे होने पर 'य' होता है और अपर का लोप हो जाता है (सू० १/१०) के नियमानुसार 'य' हो गया। अन्य स्पष्ट है।

न्प्रत्यये सर्वत्र ॥ १२ ॥

सर्वत्र स्त्रीलिंगे पुंलिङ्गे च न् प्रत्यये पर अकारागमो भवति। गुर्यन्छुह खसान्। अश्वानारोहति। घोड़ियों को चढ़ता है। कोर्यन्छुह रछान्। कन्याः पाति। (कुड़ियों) कन्याओं को पालता है। कटन् छुह मारान्। मेषान्हन्ति। भेडुओं को मारता है। गुरु शब्दात्। द्वितीयायां स्राव् (सू. ३८) इति 'न्' प्रत्ययः। अनेनाकारागमः। उवर्णान्तानामिकारः (सू० ३०) इतीकारः। कूरू शब्दस्य। पूर्ववर्णोकारस्यौकारः स्त्रियाम् (सू० ३३) इत्यनेनोपधाया ऊकारस्यौकारः। यत्वम्। शेषं पूर्ववत्।

सब जगह स्त्रीलिंग और पुंल्लिग में 'न्' प्रत्यय और फिर 'अकार' का आगम होता है। जैसे—गुर्यन् छुह खसान्-अश्वानारोहति-घोड़ियों पर चढ़ता है। कोर्यन् छुह रछान्-कन्याः पाति-कन्याओं को पालता है। कटन् छुह मारान्-मेषान्हन्ति-भेडुओं को मारता है। यहां 'गुरु' शब्द से द्वितीयायां स्राव् (सू० ३८) इस नियमानुसार 'न' प्रत्यय हुआ और इसी से 'अकार' का आगम भी हुआ। उवर्णान्तों को 'इकार' होता है (सू० ३०) के नियम से 'इकार' हुआ। 'कूरू' शब्द के पूर्ववर्ण के 'उकार' को 'ओकार' स्त्रीलिंग में हुआ (सू० ३३) के नियम से उपधा के 'ऊकार' को 'ओकार' और बाद में यकार। बाकी पहिले की तरह।

नोदन्तानां पुंसि ॥ १३ ॥

ऊकारमात्रान्तानां पुंल्लिगानां न् प्रत्ययें परे अकारागमो न भवति। दानून् छुह् ख्यवान्। करकान् खादति। अनारों को खाता है। लारून्। इन्द्रवारुणीः। खीरों को। कान्जून्। काञ्चिकानि। कांजी।

पुंल्लिग ऊकारमात्रान्त शब्दों को 'न्' प्रत्यय और फिर 'अकार' का आगम नहीं होता है। जैसे—दानून् छुह् ख्यवान्-करकान् खादति-अनारों को खाता है। लारून्-इन्द्रवारूणी:-खीरों को। कान्जून्-काञ्चिकानि-काँजी।

कृतादेशव्यञ्जनान्तेभ्यश्च ॥ १४ ॥

येषां व्यञ्जनान्तानां लिङ्गानामादेश: कृतो भवति न तु ऊमात्रान्तानां तेषां न् प्रत्यये परे अकारागमो न भवति। रात्। ग्रन्द्। कथ्। इति शब्दा: (सू० २३)। राचून् छुह् परान्। रात्री: पठति। रात्रियों को पढ़ता है। ग्रन्जून् छुह् वुछान्। संख्या: पश्यति। गिनतियों को देखता है। कछून् छुह वुठान्। सूत्रतन्तुराशीन् वेष्टयति। लच्छे के सूत बेठता है। कृतादेशव्यञ्जनान्तेभ्य: किम्। पच्यन् छुह् गरान्। पट्टिका घटयति। फट्टियों को गढ़ता है।

जिन व्यञ्जनान्त लिंगों को आदेश होता है न कि ऊमात्रान्तों को, उनके 'न्' प्रत्यय परे होने पर 'अकार' का आगम नहीं होता है। जैसे—रात्, ग्रन्द्, कथ्, ये शब्द (सू० २३)। राचून् छुह् परान्-रात्री: पठति-रात्रियों को पढ़ता है। ग्रन्जन् छुह् वुछान्-संख्या: पश्यति-गिनतियों को देखता है। कछून् छुह् वुठान्-सूत्रतन्तुराशीन् वेष्टयति-लच्छे के सूत बेठता है। कृतादेशव्यञ्जनान्तों से क्या? पच्यन् छुह् गरान्-पट्टिका घटयति-फट्टियों को गढ़ता है।

वा गन्जूगासूबाचूहान्जूभ्य: ॥१५॥

एभ्य: शब्देभ्य: पुंस्त्वादकारागमो वा विकल्पेन भवति। गन्जून् छुह् मारान्। चर्मकारान्मारयति। चमिआरों को मारता है। गासून्। तृणविक्रेतृन्। घसियारों को। बाचून् छुह् प्यतरान्। कुटुम्बजनान्पाति। कुटुम्ब को पालता है। हान्जून् छुह् रछान्। नाविकान्पाति। हांजियों को पालता है। वा। गन्जन्। गासन्। वाचन्। हान्जन्।

गन्जू, गासू, बाचू, और हान्जू शब्दों से पुंलिङ्ग होने के कारण 'अकार' का आगम विकल्प से होता है। जैसे—गन्जून् छुह् मारान्-चर्मकारान् मारयति-चमिआरों को मारता है। गासून्-तृणविक्रेतृन्-घसियारों को। बाचून् छुह् प्यतरान्-कुटुम्बजनान् पाति-कुटुम्ब को

पालता है। हान्जून् रछान्-नाविकान्पाति-हांजिओं (मल्लाहों) को पालता है। अथवा-गन्ज़न्, गासन्, बाचन्, हान्ज़न्।

कृतादेशानामूमात्रा आगमः ॥ १६ ॥

कृतादेशशब्दस्य पुनर्ग्रहणम्। यत्र-यत्र वचने व्यञ्जनान्तानां लिङ्गानामादेशः कृतः स्यात्तत्र ऊमात्रागमो भवति। रात्। सत्। कथ्। ग्रन्द्। हान्। इति लिङ्गानि (सू० २३)। राचू। रात्रयः। रातें। सचू। आशाः-आशाएं। कछू। सूत्रतन्तुराशयः। लच्छे। ग्रन्जू। संख्या। गिनतियाँ। हानू। हानयः। हानियाँ। ऊमात्रान्तत्वे पूर्वस्वरस्याप्रसिद्धता।

कृतादेशशब्द का पुनर्ग्रहण। जिस-जिस वचन में व्यञ्जनान्त-लिङ्गों को आदेश किया गया हो, वहां 'ऊ' मात्र आगम होता है। जैसे-- रात्, सत्, कथ्, ग्रन्द्, हान्-ये लिङ्ग हैं (सू० २३)। राचू-रात्रयः-रातें। सचू-आशाः-आशाएं। कछू-सूत्रतन्तुराशयः-लच्छे। ग्रन्जू-संख्या-गिनतियां। हानू-हानयः-हानियां। 'ऊ' के अन्त में होने पर पूर्वस्वर अप्रसिद्ध हुआ करता है।

यङ्गाव्क्वठ्थर्वडां च कृतादेशविधिः ॥ १७ ॥

एषां शब्दानां च कृतादेशलिङ्गाद्विधिरागमनिषेधौ भवतः। अकारागमस्य निषेधः ऊमात्रागमस्य विधिः स्यात्। यङ्। उदराणि। बहुत्त पेट। गोवू (सू० ७२)। गावः। गऊआं। क्वठ्। कुष्ठानि। औषधविशेषः। कुठें। थरू। पृष्ठानि। पोठें। वडू। कलान्तराणि। व्याजें।

खार्मार्सार्राशादीनां च ॥१८॥

एतदादीनां व्यञ्जनान्तानां स्त्रीलिङ्गानां चाऽकारागमनिषेध ऊमात्रागमश्च भवति। खार्। खारी। खारू। खार्यः। मार। नाम नदी। मारू। नद्यः। सार्। पट्टीभेदः। सारू। पट्ट्यः। राश्। वणिग्धनम्। राशू। धनानि।

स्त्रीलिङ्ग में 'एतद्' आदि व्यञ्जनान्तशब्दों में 'अकार' के आगम का निषेध होता है और 'ऊ' मात्र आगम होता है। जैसे— खार-खारी-खारू। मार्-नाम नदी-मारू-नद्यः। सार्-पट्टीभेदः-सारू-पट्ट्यः। राश्-वणिग्धनम्-राशू-धनानि।

ह्रान्तानां शश्च ॥ १९ ॥

इकारान्तानां स्त्रीलिङ्गानां प्रथमाबहुत्वादिष्वऽकारागमनिषेध ऊमात्रागमाप्तिर्भवति अन्त्यस्य हकारस्य च शकारो भवति । काह् । एकादशी । काशू । एकादश्य: । बाह् । द्वादशी । बाशू । द्वादश्य: । पाह् । विष्टा । पाशू । विष्टा: । एवं काशूव् सूतिन् । एकादशीभि-रित्यादि ।

स्त्रीलिङ्ग इकारान्त शब्दों के प्रथमा-बहुवचन में 'अकार' के आगम का निषेध और 'ऊ' मात्र आगम की प्राप्ति होती है एवं अन्त के हकार को शकार हो जाता है। जैसे—काह्-एकादशी-काशू-एकादश्य: । बाह्-द्वादशी-बाशू-द्वादश्य: । पाह्-विष्टा-पाशू-विष्टा: । इसी तरह काशूव् सूतिन्-एकादशीभिरित्यादि ।

ऊकारादौकारस्य वत्वम् ॥ २० ॥

ऊमात्राया: परस्य औकारस्य सर्वत्र पुंल्लिङ्गे स्त्रीलिङ्गे च वकार: स्यात् । राचूव् सूतिन् । रात्रिभि:-रातों करके । यहूव् पुछ्य । उदरेभ्य: । पेटों के लिए । दानूव् सूतिन् । करकै: । अनारों कर के । बाचूव् सूत्य् । कुटुम्बै: । टब्बरों करके ।

'ऊ' की मात्रा से परे औकार को सब जगह पुंल्लिङ्ग और स्त्री-लिङ्ग में 'वकार' होता है। जैसे—राचूव् सूतिन्-रात्रिभि:—रातों करके । यहूव् पुछ्य्-उदरेभ्य:-पेटों के लिए । दानूव् सूतिन्-करकै:—अनारों करके । बाचूव् सूत्य्-कुटुम्बै:-टब्बरों करके ।

ऊदितोरकारागम: स्त्रियां सकारे ॥ २१ ॥

ऊकारान्तस्येकारान्तस्य च लिङ्गस्य सकारे परेऽकारागमो भवति स्त्रियाम् । पट्ठ । तञ् । हट्ट । पूथि । शब्दा: । पच्य । पट्टिकाम् । फट्टी । तञ्य् । तन्वीम् । पतली । हच्य । काष्ठम् । लकड़ी । पोथ्य-पुस्तिकाम्-पोथी । द्वितीयायां स्नाव् (सू० ३८) इति स् प्रत्यय: । (स्लोप: स्त्रियां सर्वत्र (सू० ४०) इति सकारस्य लोप:) । ऊदन्तट-वर्गस्य (सू० २२) इति टस्य च: । उवर्णान्तानामिकार: (सू० १।१०) इति यत्वम् । अनेनाकारागम: । पूथि शब्दस्य चानेनाकारागम: । इकारोऽसवर्णे योऽपरलोप: (सू० १।१०) इति यत्वम् । व्यञ्जनं परेण सन्धेयम् (सू० १।३) । पूर्ववर्णोकारस्यौकार: (सू० ३३) इत्यूकार-स्यौत्वम् ।

ऊकारान्त और एकारान्त लिङ्ग को सकार परे रहते अकार का आगम होता है स्त्रीलिङ्ग में। जैसे—पटू, तनू, हटू, पूथि—शब्द हैं। पच्य-पट्टिकाम्-फट्टी। तन्य्-तन्वीम्-पतली। हच्य-काष्ठम्-लकड़ी। पोथ्य-पुस्तिकाम्-पोथी। द्वितीयायां स्नाव् (सू० ३८) इससे 'स्' प्रत्यय हुआ। (स् लोपः स्त्रियां सर्वत्र (सू० ४०) से सकार का लोप)। ऊदन्तटवर्गस्य (सू० २२) इससे 'ट' को 'च' हुआ। उवर्णान्तानामिकारः (सू० ३०) इससे ऊ' की मात्रा को इकार हुआ। इकारोऽसवर्णे योऽपरलोपः (सू० १।१०) इससे 'य' हुआ और 'अकार' का आगम भी। 'पूथि' शब्द को इस सूत्र से 'अकार' का आगम हुआ। इकारोऽसवर्णे योऽपरलोपः (सू० १।१०) से 'य' और व्यञ्जनं परेण सन्धेयम् (सू० १।३) से पूर्ववर्ण के 'उकार' को 'ओकार' तथा (सू० ३३) से 'ऊकार' को 'ओकार' हो गया।

ऊदन्तटवर्गस्य चवर्गः प्रथमावहुत्वादिषु ॥ २२ ॥

प्रथमाया वहुवचनादिषु ऊमात्रायुतस्य टवर्गस्य चवर्गादेशो भवति स्त्रीलिङ्गम्। पटू। काठू। बडू। इति शब्दाः। पच्च छ्यह्। पट्टिकाः सन्ति। फट्टियां हैं। पच्यन् छुह् गरान्। पट्टिका घटयति। फट्टियों को गढ़ता है। पच्य सूतिन्। पट्टिकया। फट्टी करके। काछ्य छ्यह्। शाकादिकाष्ठानि सन्ति। सागों की लकड़ियां हैं। काछ्यन् छुह् फुटरान्। काष्ठानि भनक्ति। सागों की लकड़ियों को तोड़ता है। काछि सूतिन्। शाककाष्ठेन। सागों की लकड़ी कर के। वज्य छ्यह्। महत्यः सन्ति। बडियां हैं। वज्यन् छुह् दपान्। महतीर्वदति। बड़ी स्त्रियों को कहता है। वज्यौ सूतिन्। महतीभिः। बड़ो स्त्रियों करके।

प्रथमा के वहुवचनादिओं में 'ऊ' की मात्रा से युक्त टवर्ग को चवर्ग आदेश होता है स्त्रीलिंग में। पटू, काठू, बडू—ये शब्द हैं। पच्य छ्यह्-पट्टिकाः सन्ति-पट्टियां हैं। पच्यन् छुह् गरान्-फट्टियों को गढ़ता है। पच्य सूतिन्-पट्टिकया-फट्टी करके। काछ्य छ्यह्-शाकादिकाष्ठानि सन्ति-सागों की लकड़ियां हैं। काछ्यन् छुह् फुटरान्-काष्ठानि भनक्ति—सागों की लकड़ियों को तोड़ता है। काछि सूतिन्-शाककाष्ठेन-सागों की लकड़ी करके। वज्य छ्यह्-महत्यः सन्ति-बड़िया हैं। वज्यन् छुह् दपान्—महतीर्वदति—बड़ी स्त्रियों को कहता है। वज्यौ सूतिन्-महतीभिः—बड़ी स्त्रियों करके।

तवर्गान्तानामप्रसिद्धः ॥ २३ ॥

तवर्गान्तानां स्त्रीलिङ्गानां क्रमेण अप्रसिद्धः चवर्गादेशो भवति अप्रसिद्धो दन्त्यः । रात् । कथ् । ग्रन्द् । ईरन् । चामन । इति शब्दाः । राचू छयह् । रात्रयः सन्ति । रातें हैं । राचून् छुह् निवान्-रात्रीर्हरति—रातों को लेता है । राचूव् सूतिन् । रात्रिभिः । रातों करके । कछु-छयह् । सूत्रतन्तुराशयः सन्ति । लच्छे हैं । कछून् छुह् वुठान् । सूत्रतन्तुराशीन् वेष्टयति । लच्छों को बेठता है । कछूव् सूतिन् । सूत्रतन्तुराशिभिः । लच्छों करके । ग्रन्जू छयह् । संख्याः सन्ति । गिनतियां हैं । ग्रन्जून् छुह् गन्जरान् । संख्या गणयति । गिनतियों को गिनता है । एवं । ईरञ् । स्थूणाः । निहाइयां । ईरञ्व् सूतिन् स्थूणाभिः । निहाइयों करके । चामञ् । आमिक्षाः । पनीर । चामञू-व् सूतिन् । आमिक्षाभिः । पनीरों करके । सू० १४, १६, २० ।

स्त्रीलिङ्ग तवर्गान्त शब्दों को क्रम से अप्रसिद्ध चवर्ग का आदेश होता है । अप्रसिद्ध दन्त्य को कहा गया है । रात्, कथ् ग्रन्द्, ईरन् चामन—ये शब्द हैं । राचू छयह्-रात्रयःसन्ति—रातें हैं । राचून् छुह् निवान्—रात्रीर्हरति—रातों को लेता है । राचूव् सूतिन्-रात्रिभिः—रातों करके । कछू छयह्—सूत्रतन्तुराशयः सन्ति-लच्छे हैं । कछून् छुह् वुठान्-सूत्रतन्तुराशीन् वेष्टयति-लच्छों को बेठता है । कछूव् सूतिन्-सूत्रतन्तुराशिभिः-लच्छों करके । ग्रन्जू छयह्-संख्याः सन्ति-गिनतियां हैं । ग्रन्जून् छुह् गन्जरान्-संख्या गणयति-गिनतियों को गिनता है । इसी तरह-ईरञू-स्थूणाः-निहाइयां । ईरञूव् सूतिन्-स्थूणाभिः-निहाइयों करके । चामञू-आमिक्षाः-पनीर । चामञूव् सूतिन्-आमिक्षाभिः-पनीरों करके । (सू० १४, १६, २०)

न ख्वन्तन्नान्स्वन्हन्बनादीनाम् ॥ २४ ॥

एषां शब्दानां वर्गाक्षरादेशो न भवति । ख्वन् । कफोणिः । आरकी । ख्वन् । कफोणयः । आरकियां । तन् । तनु-देह् । तन । तन्वः । तनौ सूत्य् । नान् । नाभिः । नाभि । नान । नाभयः । नानौ सूतिन् । स्वन् । सपत्नी । साकन् । स्वन । सपत्न्यः । स्वनौ सूतिन् । हनि सूतिन् अल्पेन । वनि सूतिन् । पुञ्जेन ।

ख्वन्, तन्, नान्, स्वन्, हन् और बन आदि इन शब्दों को वर्गाक्षर आदेश नहीं होता है । ख्वन्-कफोणिः-आरकी । ख्वन-कफोणयः-

आरकियां । तन्-तनुः-देह । तन-तन्वः-तनौ सूत्य् । नान्-नाभिः-नाभि । नान-नाभयः-नानौ सूतिन् । स्वन्-सपत्नी-साकन् । स्वन-सपत्न्यः-स्वनौ सूतिन् । हनि सूतिन्-अल्पेन । वनि सूतिन्-पुञ्जेन ।

कथादीनां च ॥ २५ ॥

कथ् । (कथा) । वथ् । (मार्गः) । व्यथ् । (वितस्ता नाम नदी) । लथ् । (लत्ताप्रहारः) । दथ् । (लोष्टम्) । थ्वथ् । (अन्तरायः) । च्वथ् । (गुदम्) । चित्थ । (नाडीस्तम्भः) । चेथ् । (शरीरपरिवर्तनेन क्रीडाविशेषः) । ग्थ् । (नदीप्रवाहवेगः) पींथ् । (लेशः) । तोंथ् । (चञ्चुः) । इति कथादयः । एषां शब्दानां च वर्गाक्षरादेशो न भवति । कथ । कथाः । बातां । लत । लत्ताः । लतां । दत । लोष्ठानि । (ढेले) । थ्वत । अन्तरायाः । (विघ्न) । च्वत । गुदानि । गांडां । चित । नाडी-स्तम्भनानि । थंभना । कथौ सूतिन् । अन्तरायेण । च्वतन् प्यठ् । गुदेषु । चिति सूतिन् । नाडीस्तम्भनेन । चेति सूतिन् । गति सूत्य् । प्रवाहेन । पींति सूत्य् । अल्पेन । तोंति सूतिन् । चञ्च्वा ।

कथ्-कथा । वथ्-मार्गः । व्यथ्-वितस्ता नामनदी । लथ्-लत्ता-प्रहार । दथ्-ढेला । थ्वथ्-विघ्न । च्वथ्-गुदा । चित्थ-नाडीस्तम्भ । चेथ्-शरीरपरिवर्तन से क्रीडाविशेष । ग्थ्-नदीप्रवाहवेग । पींथ्-लेश । तोंथ्-चोंच । ये कथादि शब्द हैं । इन शब्दों को वर्गाक्षर-आदेश नहीं होता है । कथ-कथाः-बातां (कथाएँ) । लत-लत्ताः-लतां । दत-लोष्ठानि-ढेले । थ्वत-अन्तरायाः-विघ्न । च्वत-गुदानि-गुदाएं । चित-नाडीस्त-म्भनानि-थंभना । कथौ सूतिन्-अन्तरायेण-विघ्न द्वारा । च्वतन् प्यठ्-गुदेषु-गुदाओं में । चिति सूतिन्-नाड़ीस्तम्भनेन-नाड़ीस्तम्भन द्वारा । चेति सूतिन्-गति सूत्य-प्रवाहेन-प्रवाह द्वारा । पींति सूत्य्-अल्पेन-घोड़े से । तोंति सूतिन्-चञ्चचा-चोंच से ।

टवर्गान्तानां च ॥ २६ ॥

टवर्गान्तानां ऊमात्रारहितानां स्त्रीलिङ्गानां चवर्गादेशो न भवति । नट् । गर्वेठ् । ह्वड् । इति शब्दाः । नटि सूतिन् । कम्पेन । गर्वठि पुछ्य् । गृहोपकरणाय । ह्वडि सूतिन् । हठेन । ऊमात्रारहितानां किम् । च्वटू । अपूपः । च्वच्य छुह् ख्यवान् । अपूपान् खादति । च्वच्यौ सूतिन् । अपूपैः ।

स्त्रीलिङ्ग में 'ऊ' की मात्रा से रहित टवर्गान्त शब्दों को चवर्ग आदेश नहीं होता है। नट्, गर्वेठ्, ह्वड्—ये शब्द। नटि सूतिन्-कम्पेन-कम्प से। गर्वेठि पुछ्य्-गृहोपकरणाय-घर के साधन के लिए। ह्वडि सूतिन्-हठेन-हठ से। 'ऊ' की मात्रा से रहित शब्दों का क्या? च्वटू-अपूपः-पुआ। च्वच्य छुह् ख्यवान्-अपूपान्-खादति—पुए खाता है। च्वच्यौ सूतिन्-अपूपैः-पुओं से।

वाल्साल्जाल्कलां नः ॥ २७ ॥

एषां शब्दानां अन्त्यस्य जकारो भवति स्त्रियाम्। वाल्। सर्पादि-बिलम्। साल्-स्याली। जाल्। जालिका। कल्। चिन्ता। वाजू। बिलानि। साजू। स्याल्यः। जाजू। जालिकाः। कजू। चिन्ताः। वाजूव् सूतिन्। साजूव् सूतिन्। जाजूव सूत्य्। कजूव् सूतिन्। साधनं पूर्ववत्। स्त्रियां किम्। वाल सूतिन्। एषां शब्दानां किम्। गल्। कपोलादधो गल्संज्ञः। गलौ सूतिन्। जालि सूत्य्। कम्पेन।

इन शब्दों के अन्तिम अक्षर को स्त्रीलिङ्ग में जकार होता है। वाल। सर्पादिबिलम्। साल्। स्याली। जाल्। जालिका। कल्। चिन्ता। वाजू। बिलानि। साजू। स्याल्यः। जाजू। जालिका। कजू। चिन्ताः। वाजूव् सूतिन्। साजूव सूतिन्। जाजूव सूत्य। कजूव सूतिन्। साधन पहले की तरह। स्त्रीलिङ्ग में क्या। वाल सूतिन्। इन शब्दों का क्या। गल्। कोपालादधो गलसंज्ञः। गलौ सूतिन् जालि सूत्य्। कम्पेन

हाल्शब्दस्य स्त्रियां समासेऽपि ॥ २८ ॥

हाल्शब्दस्य लकारस्य जकारो भवति स्त्रीलिङ्गवर्तमानसमास-पदान्तेऽपि। हाल्। शाला। हाजू किन्य्। शालातः। हाजू प्यठ्। शालोपरि। समासान्ते यथा। स्वरहाजू अन्दर। महानसे। हस्ति-हाजू अन्दर। हस्तिशालायां। स्त्रीलिङ्गे किम्। चाटहालम् अन्दर। पाठशालायाम्।

हाल् शब्द के लकार को स्त्रीलिङ्गवर्तमानसमासपदान्त में भी जकार होता है। हाल्-शाला। हाजू किन्य-शालातः। हाजू प्यठ्-शालोपरि। समासान्त में जैसे-स्वरहाजू अन्दर-महानसे-रसोईघर में। हस्तिहाजू अन्दर-हस्तिशालायां-हस्तिशाला में। स्त्रीलिङ्ग में क्या। चाटहालम् अन्दर-पाठशालायां-पाठशाला में।

वा कुंडल् कर्तलोः ॥२६॥

कुंडल् कर्तल् इत्यनयोः शब्दयोर्वा विकल्पेन लकारस्य जकारो भवति। कुंडल्। कपालिका। कुंडलि सूतिन्। कुंडजू सूतिन्। कर्तल् खड्गः। कर्तलि सूतिन्। कर्तजू सूतिन्।

कुंडल् और कर्तल् दोनों शब्दों में विकल्प से लकार को जकार हो जाता है। कुंडल्-कपालिका। कुंडलि सूतिन्। कूंडेजू सूतिन्। कर्तल्-खड्गः। कर्तलि सूतिन्। कर्तजू सूतिन्।

उवर्णान्तानामिकारः ॥ ३० ॥

उकारान्तानां च लिङ्गानां प्रथमाबहुत्त्वादिविभक्तिगणे अन्त्य-स्वरस्य इकारो भवति। गुरु। घोटकः। गुरिस् छुह् खसान्। अश्वमा रोहति। एवं गुर्यन्। गुरि सूतिन्। इत्यादि। गुरु शब्दात् द्विती-यायां स्नाव् (सू० ३८) इति स्न् प्रत्ययौ। न्प्रत्यये सर्वत्र (सू० १२) इति अकारागमः। अनेन उकारस्य इकारः। यत्वम्। पटू। पट्टिका। पच्य। पच्यन्। पचि सूतिन्। प्रथमे। बहुत्वेऽकारागमः (सू० ११) इति। अपरत्र न्प्रत्यये सर्वत्र (सू० १२) इति अकारागमः। ऊदन्तट-वर्गस्य (सू० २२) इति टकारस्य चकारः। अनेन ऊकारस्य इकारः। तृतीये। इतो लोपः (सू० ६) इति इप्रत्ययस्य लोपः।

उकारान्त और ऊकारान्त लिङ्गों के प्रथमाबहुत्वादिविभक्तिगण में अन्त में होने वाले स्वर को इकार हो जाता है। गुरु-घोटकः-घोड़ा। गुरिस् छुह् खसान्-अश्वमारोहति-घोड़े परसवार होता है। इसी तरह गुर्यन्-गुरि सूतिन् इत्यादि। गुरु शब्द से द्वितीया में स्नाव् (सू० ३८) इससे स्-न् प्रत्यय। 'न्' प्रत्यय में सब जगह (सू० १२) से 'अकार' का आगम और इससे 'उकार' को इकार और इसके बाद यकार हुआ। पटू-पट्टिका-पच्य-पच्यन्-पचि सूतिन्-प्रथमा में बहुवचन में अकार' का आगम (सू० ११) इससे हुआ। दूसरी जगह 'न्' प्रत्यय में सब जगह (सू० १२) से 'अकार' का आगम। ऊकारान्त टवर्ग के 'टकार' को (सू० २२) से 'चकार' हुआ और इसी से 'ऊकार' को 'इकार' हुआ। तृतीय में 'इतो लोपः (सू० ६) से 'इ' प्रत्यय का लोप हो गया।

नोदन्तानां पुंसि ॥ ३१ ॥

ऊकारान्तानां लिङ्गानां पुंल्लिङ्गे अन्त्यस्वरस्य इकारो न भवति।

दानू । करकः । दानू । दाडिमान् । दानूव् सूतिन् । दाडिमैः । हान्जूव् सूत्य् । नाविकैः । बाचूव् सूत्य् । कुटुम्बैः । गन्जूव् सूत्य् । चर्मकारैः । ऊदन्तानां पुंसि (सू० २) इति बहुवचनं लिङ्गवत् । द्वितोयायां स्नाव् (सू० ३८) इति 'न्' प्रत्ययः । ऊकारादौकारस्य वत्वम् (सू० २०) इति सूत्रेण औ सूतिन् औ सूत्य् प्रत्यययोः औकारस्य वत्वम् । पुंसि किम् । व्यछ्यौ सूतिन् । स्थूलाभिः ।

ऊकारान्त लिङ्गों के पुंल्लिङ्ग में अन्त के स्वर को 'इकार' नहीं होता है । दानू-करकः-अनार । दानू-दाडिमान्-अनारों को । दानूव् सूतिन्-दाडिमैः-अनारों से । हान्जूव् सूत्य्-नाविकैः-मल्लाहों से । बाचूव् सूत्य्-कुटुम्बैः-कुटुम्बों से । गन्जूव् सूत्य्-चर्मकारैः-चमिआरों से । ऊकारान्त शब्दों को पुंल्लिग में (सू० २) से लिङ्गानुसार बहुवचन । द्वितोया में स्नाव् (सू० ३८) इससे 'न्' प्रत्यय हुआ । ऊकार से ओकार को 'व' (सू० २०) के अनुसार 'औ सूतिन्-औ सूत्य् प्रत्ययों में 'ओकार' को 'व' । पुंल्लिङ्ग में क्या ? व्यछयौ सूतिन्-स्थूलाभिः-मोटों से ।

व्यञ्जनान्तस्योकारोपधाया अन् ॥ ३२ ॥

व्यञ्जनान्तस्य शब्दस्य उपधाभूतस्य उकारस्य प्रथमाबहुत्वादिषु अकारो भवति । बादर शब्दः-बादर-वानराः । बादरौ सूत्य्-वानरैः ।

व्यञ्जनान्त शब्द के उपधाभूत 'उकार' को प्रथमा के बहुवचन में 'अकार' होता है । बादर् शब्दः-बादर-वानराः-बहुत वानर । बादरौ सूत्य्-वानरैः-वानरों से ।

पूर्ववर्णोकारस्यौकारः स्त्रियाम् ॥ ३३ ॥

स्त्रोलिङ्गे वर्तमानस्य पूर्ववर्णसंबन्धिन ऊकारस्य ओकारो भवति प्रथमाबहुत्वादिविभक्तिगणे । पूथि (प्र० ए०) । पुस्तकम् । कूरू (प्र० ए०) । कन्या । पोथ्य (प्र० व०) । पोथ्य (द्वि० ए०) छ्हू परान् । पोथि सूतिन् (तृ० ए०) पोथ्यौ पुछ्य् (च० व०) । कोर्य (प्र० व०) । कन्याः कोर्य (द्वि० ए०) छुहू रछान् । कोर्यन् (द्वि० व०) । कोर्यौ सूत्य् (तृ० व०) । इत्यादि । अनेन पूर्ववर्णोकारस्य ओकारः । साधनं पूर्ववत् ।

अत्र स्थानेऽन्तरतमः (पा० १।१।५०) इति वचनाद्यथा पूर्ववर्ण-संबन्धिन ऊकारस्य ओकारो भवति तथैव ईकारस्य एकारो भवतीति

बोध्यम् । सीरू् । इष्टिका । सेयं । इष्टिकाः । खीति । क्षेत्रम् । खेत्य । क्षेत्राणि । इत्यादि । गोरादीनां तु न । गीरादयस्तु । गीरू् । (गैरिकम्) । गीदू । अर्भकविष्टा । चीरि । चीरिका । टीठू । अहंकारः । टीरू । (शीतस्थौदनस्य घनीभूतो राशिः) पीरू । (पीठकम्) । इत्यादयः प्रायशो ज्ञेयाः । गीरू् । गैरिकम् । गीरि सूतिन् । गैरिकेण । इत्यादीनि स्वरूपाणि भवन्ति ।

स्त्रीलिङ्ग में वर्तमान पूर्ववर्ण से सम्बद्ध 'ऊकार' को 'ओकार' होता है प्रथमावहुत्वादिविभक्तिगण में । पूथि-प्रथमा एकवचन-पुस्तकम्-पुस्तक । कूरू-प्रथमाएकवचन-कन्या-लड़की । पोथ्य-प्रथमा-वहुवचन-पुस्तकें । पोथ्य-द्वितीया एकवचन-पुस्तक को-छुह् परान् । पोथि सूतिन्-तृतीयाएकवचन-पुस्तक से । पोथ्यौ पुछ्य-चतुर्थी वहुवचन-पुस्तकों के लिए, इत्यादि । कोर्य-प्रथमावहुवचन-कन्याः-लड़कियें । कोर्य-द्वितीयाएकवचन-कन्याको-छुह् रछान् । कोर्यन्-द्वितीया वहुवचन-कन्याओं को । कोर्यौ सूत्य्-तृतीया वहुवचन-कन्याओं से, इत्यादि । इससे पूर्व वर्ण के 'उकार' को 'ओकार' हुआ । साधन पहिले की तरह ।

यहां 'स्थानेऽन्तरतमः (पा० १।१।५०) इस वचन से जैसे पूर्ववर्ण से सम्बद्ध 'ऊकार' को 'ओकार' होता है, वैसे ही 'ईकार' को 'एकार' हो जाता है । ऐसा जानना । सीरू्-इष्टिका-ईंट । सेयं-इष्टिकाः-ईंटें । खीति-क्षेत्रम्-खेत । खेत्य-क्षेत्राणि-बहुत खेत, इत्यादि । गीरादियों को तो नहीं, गीरादि तो । गीरू्-गैरिकम्-गेरी । गीदू-अर्भकविष्टा-बच्चे की टट्टी । चीरि-चीरिका । टीठू-अहंकारः-अभिमान । टीरू-शीतस्यौदनस्य घनीभूतो राशिः-ठण्डे भात का बना हुआ पिण्ड । पीरू-पीठकम्-आसन । इत्यादि प्रायः जानना । गीरू-गैरिकम्-गेरी । गीरि सूतिन्-गैरिकेण-गेरी से । इत्यादि स्वरूप होते हैं ।

वहुषु पुंस्यप्रथमायाम् ॥३४॥

प्रथमावहुवचनं वर्जयित्वा पुंल्लिङ्गे विद्यमानस्य पूर्ववर्णसम्बन्धिन ऊकारस्य वहुवचनेषु ओकारो भवति । गूरू । गोपः । गूलु-फूलसारः । गोर्यन् (द्वि. व.) । गोल्यन् । गोर्यौ सूतिन् । इत्यादि । द्वितीयायां 'न्' प्रत्ययः । तृतीयायां औ सूतिन् प्रत्ययः । उवर्णान्तानामिकारः (सू.३०)

न प्रत्यये सर्वत्र (सू. १२) इत्यकारागमः। अनेनोपधाया ऊकारस्य ओकारः। यत्वम्। वहुषु किम्। गूरिन्-गोपम्। ग्वाले को। गूलिस्। फलसारम्। अप्रथमायां किम्। गूरि। गोपाः। गूलि। फलसाराः। पुंसि किम्। कोय। कन्याः। पोथ्य। पुस्तकानि।

प्रथमा के वहुवचन को छोड़कर पुंल्लिङ्ग में विद्यमान पूर्व वर्ण से-सम्बद्ध ऊकार' को वहुवचन में 'ओकार' हो जाता है। गूरु-गोपः-ग्वाला। गूलू-फूलसारः-फूलसार। गोर्यन्-द्वितीया बहुवचन-ग्वालों को। गोल्यन्-फूलसारों को-द्वितीया वहुवचन। गोयौं सूतिन्-ग्वालों से-तृतीया वहुवचन, इत्यादि। द्वितीया में 'न्' प्रत्यय। तृतीया में 'औ सूतिन' प्रत्यय। उवर्णान्त शब्दों को 'इकार' (सू. ३०) से 'न्'। प्रत्यय होने पर सब जगह (सू.१२) से 'अकार' का आगम हुआ। इस से उपधा के ऊकार को 'ओकार' तथा 'य' हुआ। वहुवचनों में क्या? गूरिन्-गोपम्-ग्वाले को। गूलिस्-फलसारम्-फलसार को। अप्रथमा में क्या? गूरि-गोपाः-ग्वाले। गूलि-फलसाराः-फलसार वहुत। पुंल्लिङ्ग में क्या? कोर्य-कन्याः-कन्याएं। पोथ्य-पुस्तकानि-पुस्तकें।

न मूलादीनाम् ॥३५॥

मूल। मूलम्। कस्तूरु। (पक्षिविशेषः)। कूटु। (वृक्ष-स्तम्भः)। चूठू। (पालीवतः, सेव् इति भाषायाम्)। छूल्। (निर्झरः)। टूरु। (पात्रविशेषः, स्त्रीभियस्मिन्नन्न मुज्यते) डूरु। (पुष्पादिलघुवाटिका) डूस्। गदाविशेषः)। तूरू। (शीतम्)। दूरू। (अल्पमार्गः, गलीति भाषायाम्)। नस्तूरु। (नस्तितः)। बूथ्। (भूतः)। यूरू्। (अल्प-शाखा)। रूद्। (वृष्टिः)। लूख्। लोकाः, (लोग इति भाषायाम्)। लूद्र्। (लोलुभः)। लूब्र्। (लोलुभः)। बूठ। (उष्ट्रः)। सूर्। (भस्म) हूस्। कोलाहलः। इत्यादयः प्रायशो बोध्याः। एषां शब्दानां पूर्ण-वर्णोकारस्य ओकारो न भवति।

मूल शब्दः

	प्र.	द्वि.	तृ.	च.
ए.	मूल्	मूलम् वा मूल्	मूल सूतिन्	मूल पुछ्य
व.	मूल्	मूलन् वा मूल्	मूलौ सूतिन्	मूलौ पुछ्य्

	प.	ष.	स.	अ (सम्बोधन)
ए.	मूल निश	मूलकु	मूलस् प्यठ्	हा मूल
व.	मूलौ निश	मूलन् हन्दु	मूलन् प्यठ्	हा मूलौ

मूल्-मूलम्-मूल । कस्तूरु-पक्षिविशेषः-परिन्दा । कूठु-वृक्षस्तम्भः-वृक्षस्तम्भ । चूठ्-पालीवतः-सेव । छूल्-निर्झरः-झरना । टूरु-पात्र-विशेषः-पात्र-जिसमें स्त्रियों से अन्न खाया जाता है । डूरु-पुष्पादिलघु-वाटिका-फूलों की छोटी बगीची । डूस्-गदाविशेषः-विशेष गदा । तूरू-शीतम्-सर्दी । दूरू-अल्पमार्गः-गली । नस्तूरु-नस्तितः-नस्तित । बूथ्-भूतः-भूत । यूरू-अल्पशाखा-टहनी । रूद्-वृष्टिः-वर्षा । लूख्-लोकाः-लोग । लूद्र्-लोलुभः-लालची । लूब्र्-लोलुभः-लोभी । बूठ्-उष्ट्रः-ऊँट । सूर्-भस्म-राख । हूस्-कोलाहलः-शोर । इत्यादि प्रायः जानने । इन शब्दों को पूर्व वर्ण के 'उकार' को 'ओकार' नहीं होता है ।

मूल शब्द—

	प्र.	द्वि.	तृ.	च.
ए.	मूल	मूल को	मूल से	मूल के लिए
व.	मूलों	मूलों को	मूलों से (द्वारा)	मूलों के लिए

	प.	ष.	स.	अ. (सम्बोधन)
ए.	मूल से	मूल का	मूल में	हे मूल
व.	मूलों से(अलग)	मूलों का	मूलों में	हे मूलो

व्यञ्जनान्तादकारागमो व्यञ्जने ॥३६॥

व्यञ्जनान्तात्पुंल्लिङ्गात् व्यञ्जने परे अकारागमो भवति । काव् । काकः । काव सन्दु । काव् शब्दात् । स्त्रीसम्बन्धैकानेकत्वे स्नौ हन्दु (सू. ४२) इति स् हन्तु प्रत्ययः । पुंप्राणिनः (सू. ४६) इति हस्य सः । पुंसि सम्बन्धषष्ठ्यां च (सू. ४१) इति आदिसकारस्य लोपः । अनेन अकारागमः । पुंसि किम् । मालि हन्दु । व्यञ्जनान्तानां किम् । गुरि सन्दु । अश्वस्य । व्यञ्जने किम् । कावौ सूतिन् । काकैः ।

पुंल्लिङ्ग व्यञ्जनान्त शब्द से व्यञ्जन परे रहते 'अकार' का आगम होता है । काव्-काकः-कौआ । काव सन्दु-यहां काव् शब्द से

'स्त्री सम्बन्धैकानेकत्वे स्नौ हन्दु (सू. ४२) इस सूत्र से स् हन्तु प्रत्यय और 'पुंप्राणिनः' (सू. ४६) इस से 'ह्' को 'स'। 'पुंसि सम्बन्ध-षष्ठयां च (सू.४१) इस सूत्र से आदि सकार का लोप और इसी से 'अकार' का आगम हुआ। पुंल्लिङ्ग में क्या ? मालि हन्तु। व्यञ्जनान्तों का क्या ? गुरि सन्दु-अश्वस्य-घोड़े का। व्यञ्जन में क्या ? कावौ सूतिन्-काकैः-कौओं से।

स्त्रियामिकारः ॥३७॥

व्यञ्जनान्तात् स्त्रियां वर्तमानात् लिङ्गात् व्यञ्जने परे इकारागमो भवति। माल्। माला। मालि हन्दु। मालायाः। माल् शब्दात्। स्त्री-सम्बन्धैकानेकत्वे स्नौ हन्दु (सू.४२) इत्यादिना स् हन्दु प्रत्ययः। स् लोपः स्त्रियाम् (सू. ४०) इति स् लोपः। अनेन इकारागमः। व्यञ्जनान्तात् किम्। पच्थ हन्दु। पट्टिकायाः। व्यञ्जने किम्। मालौ सूतिन्। मालाभिः।

स्त्रीलिङ्ग में व्यञ्जनान्त वर्तमान लिङ्ग से व्यञ्जन परे होने पर 'इकार' का आगम होता है। माल्-माला-हार। मालि हन्दु-मालायाः-माला का। माल् शब्द से 'स्त्रीसम्बन्धैकानेकत्वे स्नौ हन्दु (सू. ४२) इत्यादि सूत्र से 'स् हन्दु' प्रत्यय हुआ। 'स् लोपः स्त्रियाम् (सू. ४०) इससे 'स्' का लोप और इसी से 'इकार' का आगम। व्यञ्जनान्त से क्या ? पच्य हन्दु-पट्टिकायाः-फट्टी का। व्यञ्जन में क्या ? मालौ सूतिन्-मालाभिः-मालाओं से।

द्वितीयायां स्नावसंबन्धषष्ठ्यां च ॥३८॥

स् न् इत्येतौ द्वितीयायाः एकत्ववहुत्वयोः प्रत्ययौ भवतः। सम्बन्धषष्ठीं वर्जयित्वा षष्ठ्याश्च क्रमेण प्रत्ययौ भवतः। गुरु्। घोटकः। गुरिन् छुह् खसान्। अश्वमारोहति। गुर्यन् छुह् रछान्। अश्वान्पालयति। गुरुशब्दात् अनेन स् न् प्रत्ययौ। वहुत्वे। न्प्रत्ययें सर्वत्र (सू. १२) इति अकारागमः। उवर्णान्तानामिकारः (सू. ३०) इति उकारस्य इकारः। यत्वम्। षष्ठ्यां यथा। ग्वरस् करिजि नमस्कार। गुरोर्नमस्कुर्यात्। द्वव्यन् दि ज़ि चादर। रजकानां वृह-तिकां दद्यात्। ग्वर् शब्दात् अनेन स् प्रत्ययः। व्यञ्जनान्तादकारा-गमो व्यञ्जने (सू. ३६) इति अकारागमः। द्वबुशब्दात् अनेन न्

प्रत्ययः । न्प्रत्यये सर्वत्र (सू. १२) इति अकारागमः । उवर्णान्तानामिकारः (सू. ३०) । यत्वम् ।

'स्, न्' ये दोनों प्रत्यय द्वितीया के एकवचन और वहुवचन में होते हैं । सम्बन्धकारक षष्ठी को छोड़ कर क्रमानुसार षष्ठी को प्रत्यय होते हैं । गुरु-घोटकः-घोड़ा । गुरिनु छुह् खसान्-अश्वमारोहति-घोड़े पर सवार होता है । गुर्यन् छुह् रछान्-अश्वान् पालयति-घोड़ों को पालता है । गुरु शब्द से इस द्वारा वहुवचन में 'स्, न्' प्रत्यय हुए । न्प्रत्यये सर्वत्र (सू. १२) इस से 'अकार' का आगम हुआ । उवर्णान्तानामिकारः (सू. ३०) से 'उकार' को इकार हुआ । फिर 'य' हो गया । षष्ठी में जैसे—ग्वरसु करिज़ि नमस्कार-गुरोर्नमस्कुर्यात्-गुरु जी को नमस्कार करो । द्रव्यन् दि ज़ि चादर-रजकानां वृहतिकां दद्यात्-धोबी को चादर दो । 'ग्वर' शब्द से इस नियमानुसार 'स्' प्रत्यय हुआ । व्यञ्जनान्तादकारगमो व्यञ्जने (सू. ३६) से 'अकार' का आगम हुआ । द्रवू शब्द से इस नियमानुसार 'न्' प्रत्यय हुआ । न्प्रत्यये सर्वत्र (सू. १२) से 'अकार' का आगम हुआ । उवर्णन्तानामिकारः (सू. ३०) से 'य' हुआ ।

वा प्रथमावदसर्वनाम्नः ॥३६॥

सर्वनामशब्दान् वर्जयित्वा द्वितीयाया एकत्ववहुत्वे प्रथमावद्वा विकल्पेन भवतः । द्वितीयाषष्ठीसमुदायवाक्ये तु नित्यं प्रथमावद्भवत इति बोध्यम् । करु छुह् गरान् । वा करिस् छुह् गरान् । वलयं घटयति । च्वच्य छह् ख्यवान् । वा च्वच्यन् छुह् ख्यवान् । अपूपान् भक्षयति । समुदायवाक्ये यथा । द्रविस् दिजि चादर् । रजकस्य वृहतिकां दद्यात् । अत्र द्रविस् इति षष्ठी । चादर इति द्वितीया । समुदायवाक्यत्वान्नित्यं प्रथमावदेव स्यात् न तु द्रविस् दिजि चादरि इति संभवेत् । असर्वनाम्नः किम् । तमिस् दपिज़ि । तं वदेत् । कमिस् वनि । कं वदेत् । इत्यादि ।

सर्वनामशब्दों को छोड़कर द्वितीया के एकवचन और वहुवचन में प्रथमा की तरह अथवा विकल्प से होते हैं । द्वितीयाषष्ठीसमुदायवाक्य में तो नित्य प्रथमा की तरह ही होते हैं, ऐसा जानना चाहिए । करु छुह् गरान्-वा करिस् छुह् गरान्-वलयं घटयति-कङ्कण घढ़ता

है। च्वच्य छुह् ख्यवान् वा च्वच्यन् छुह् ख्यवान्-अपूपान् भक्षयति-पुए खाता है। समुदायवाक्य में जैसे-द्रविस् दिजि चादर्-रजकस्य वृहतिकां दद्यात्-धोबी को चादर दो। यहां 'द्रविस्' यह षष्ठी है, 'चादर' यह द्वितीया है। समुदायवाक्यत्व से नित्य प्रथमा की तरह ही हो, न तो 'द्रविस् दिज़ि चादरि' यह हो। असर्वनाम से क्या ? तमिस् दपिज़ि-तं वदेत्-उसे कहे। कमिस् वनि-कं वदेत्-किसे कहे, इत्यादि।

स्लोपः स्त्रियां सर्वत्र ॥४०॥

सर्वेषां स्त्रीलिङ्गानां सर्वत्र द्वितीयायां षष्ठयां च स् प्रत्ययस्य लोपो भवति। मालि छुह छुनान्। मालां पातयति। मालि हन्दु पोप्। मालायाः पुष्पम्। माल् शब्दात् प्रथमे स् प्रत्ययः। स्त्रियामिकारः, (सू. ३७) इति इकारागमः। अनेन स् प्रत्ययलोपः। अपरत्र स् हन्दु प्रत्ययः। शेषं प्रथमवत्। सर्वेषां स्त्रीलिङ्गानां बोध्यम्।

सभी स्त्रीलिङ्गों के सब जगह द्वितीया और षष्ठी में 'स्' प्रत्यय का लोप होता है। मालि छुह् छुनान्-मालां पातयति-माला को गिराता है। मालि हन्दु पोप्-मालायाः पुष्पम्-माला का फूल। माल् शब्द से प्रथम 'स्' प्रत्यय। स्त्रियामिकारः (सू. ३७) इससे 'इकार' का आगम हुआ। और इस से ही 'स्' प्रत्यय का लोप हुआ। दूसरी जगह 'स् हन्दु' प्रत्यय। शेष पहिले की तरह। सभी स्त्री लिङ्गों को जानना।

पुंसि संबन्धषष्ठयां च ॥४१॥

सर्वेषां पुंल्लिगानां सम्बन्धषष्ठयां स् प्रत्ययस्य लोपो भवति। ग्वर् सन्दु चाह्। गुरोः शिष्यः। ग्वर् शब्दात्। स्त्रीसम्बन्धः (सू. ४२) इति स् हन्दु प्रत्ययः। अनेन स्कार लोपः। पुंप्राणिनः (सू. ४६) इति ह्रस्य सः। व्यञ्जनान्ताद् (सू. ३६) इत्यकारागमः। ड्यक्कु। ललाटस्य। ड्यकशब्दात्। अप्राणिना (सू.४८) इति स् उकु प्रत्ययः। अनेन स् लोपः। असवर्णे ऽकारस्य लोपः (सू. ११४) सम्बन्धषष्ठयां किम्। ग्वरस् छुह् नमस्कार् करान्। गुरोर्नमस्कारं करोति। साधनं पूर्ववत्।

सभी पुंल्लिगों के सम्बन्धषष्ठो में 'स्' प्रत्यय का लोप होता है। ग्वर् सन्दु चाह-गुरोः शिष्यः—गुरू का शिष्य। 'ग्वर्' शब्द से-स्त्री

सम्बन्ध: (सू. ४२) इससे 'स् हन्दु' प्रत्यय और इसी से 'सकार' का लोप हुआ। पुंप्राणिनः (सू. ४६) से 'ह' को 'स' हुआ। व्यञ्जनान्ताद् (सू. ३६) इससे 'अकार' का आगम। ड्यकुकु-ललाटस्य-ललाट का। 'ड्यक' शब्द से 'अप्राणिना (सू. ४८) इससे 'स् उकु' प्रत्यय हुआ और 'स्' का लोप। असवर्णे ऽकारस्य लोपः (सू. ११४) से असवर्ण में 'अकार' का लोप हुआ। सम्बन्ध षष्ठी में क्या? ग्वरस् छुह् नमस्कार् करान्-गुरोर्नमस्कारं करोति-गुरु को नमस्कार करता है। साधन पहले की तरह।

स्त्रीसंबन्धैकानेकत्वे स्नौ हृन्द्वन्तावेकत्वे ।।४२।।

पुंल्लिङ्गानां स्त्रीलिंगशब्दस्य एकत्वेन संबन्धे सति संबन्धलिंगादेकवचने स् हन्दु प्रत्ययः स्यात्। वहुत्वेन संबन्धे सत्येकवचने न् हन्दु प्रत्ययः स्यात्। माज्य् हन्दु न्यचिवु। मातुः पुत्रः। माज्यन् हन्दु न्यचिवु। मातृणां पुत्रः। न्यचिवु शब्दस्यैकस्य पुंल्लिङ्गस्य माजूशब्देन स्त्रीलिंगेन संबन्धात्संबन्धलिंगात् माजू शब्दात् स् हन्दु प्रत्यय न् हन्दु प्रत्ययौ। (ऊदितोरकारागमः स्त्रियां सकारः (सू० २१) इत्यकारागमः)। स्लोपः स्त्रियां सर्वत्र (सू० ४०) इति सकारलोपः। उवर्णान्तानामिकारः (सू० ३०) इत्यनेन ऊमात्राया इकारः। न्प्रत्यये सर्वत्र (सू० १२) इति अकारागमः। यत्वम्।

पुंल्लिगों का स्त्रीलिंगशब्द के एकत्व के साथ सम्बन्ध होने पर सम्बन्धलिंग से एकवचन में न् हन्दु प्रत्यय हो। माज्य् हन्दु न्यचिवु-मातुः पुत्रः-माँ का बेटा। माज्यन् हन्दु न्यचिवु-मातृणां पुत्रः-माताओं का बेटा। 'न्यचिवु' शब्द के एकवचनपुंल्लिग का 'माज' शब्द स्त्रीलिंग के साथ सम्बन्ध होने से सम्बन्धलिंग 'माजू' शब्द से 'स् हन्दु' और 'न् हन्दु' प्रत्यय हुए। 'ऊदितोरकारागमः स्त्रियां सकारः' (सू० २१) से 'अकार' का आगम हुआ। स्लोपः स्त्रियां सर्वत्र' (सू० ४०) इससे 'सकार' का लोप। 'उवर्णान्तानामिकारः' (सू० ३०) इससे 'ऊ' मात्रा को 'इकार' हुआ। 'न्प्रत्यये सर्वत्र' (सू० १२) से 'अकार' का आगम और 'य' हुआ।

वहुत्वे हन्द्यन्तौ ।।४३।।

पुंल्लिगानां स्त्रीलिंगस्यैकत्वेन संबन्धे सति संबन्धलिंगादेकवचने स् हन्दि प्रत्ययः । वहुत्वेन सम्बन्धे न् हन्दि प्रत्ययो भवति । माज्य हन्दि न्यचिवि । मातुः पुत्राः । माज्यन् हन्दि न्यचिवि । मातॄणां पुत्राः । अत्र न्यचिवि शब्दस्य बहुवचनत्वात् माज् शब्दात् स् हन्दि न् हन्दि प्रत्ययौ । स्लोपः । साधन पूर्ववत् ।

पुंल्लिङ्गों का स्त्रीलिङ्ग के एकत्व के साथ संबंध होने पर संबंध लिङ्ग से एकवचन में 'स् हन्दि' प्रत्यय और वहुत्व के साथ संबंध होने पर 'न् हन्दि' प्रत्यय होता है । माज्य हन्दि न्यचिवि-मातुः पुत्राः-मां के बेटे । माज्यन् हन्दि न्यचिवि-मातॄणां पुत्राः-मांओं के बेटे । यहां 'न्यचिवि' शब्द के वहुवचन होने से 'माजू' शब्द से 'स् हन्दि-न् हन्दि' प्रत्यय और 'स्' का लोप हुआ । साधन पहिले की तरह ।

स्त्रियां हन्जू अन्तावेकत्वे ।। ४४ ।।

स्त्रीलिङ्गस्य स्त्रीलिङ्गैकत्वेन संबन्धे सति संबन्धलिङ्गादेकवचने स् हन्जू प्रत्ययः स्त्रीलिङ्गानेकत्वेन संबन्धे सति न् हन्जू प्रत्ययो भवति । माज्य हन्जू कूरु । मातुः कन्या । माज्यन् हन्जू कूरु । मातॄणां कन्या । अत्रापि कूरुशब्दस्यैकत्वात्संबन्धलिङ्गात् माजू शब्दात् स् हन्जू प्रत्ययौ । साधनं पूर्ववत् ।

स्त्रीलिङ्ग का स्त्रीलिङ्ग-एकत्व के साथ संबन्ध होने पर संबन्ध-लिङ्ग से एकवचन में 'स् हन्जू' प्रत्यय और स्त्रीलिङ्ग-अनेकत्व के साथ सम्बन्ध होने पर 'न् हन्जू' प्रत्यय होता है । माज्य हन्जू कूरु-मातुः कन्या-मां की बेटी । माज्यन् हन्जू कूरु-मातॄणां कन्या-मांओं की कन्या । यहां 'कूरु' शब्द के एकत्व सम्बन्धलिङ्ग 'माजू' शब्द से 'स् हन्जू' प्रत्यय हुए । साधन पहिले की तरह ।

वहुत्वे हन्ज अन्तौ ।। ४५ ।।

स्त्रीलिङ्गानां वहुवचने स्त्रीलिङ्गैकानेकत्वसम्बन्धतः सम्बन्धि-लिङ्गात् स् हन्ज न् हन्ज प्रत्ययौ भवतः । माज्य हन्ज कोर्य । मातुः कन्याः । माज्यन् हन्ज कोर्य । मातॄणां कन्याः ।

स्त्रीलिंगों के वहुवचन में स्त्रीलिंग-एक-अनेकत्व सम्बन्ध से सम्बन्धिलिंग से 'स् हन्ज-न् हन्ज' प्रत्यय होते हैं । माज्य हन्ज कोर्य-

मातुः कन्याः-मां की बेटियां। माज्यन् हन्ज़ कोर्य-मातृणां कन्याः-मांओं की बेटियां।

पुंप्राणिन एकत्वसम्बन्धे हस्य सः सर्वत्र ॥ ४६ ॥

पुंल्लिगस्य प्रणिन एकवचनेन सह सम्बन्धे सति सर्वत्र स्त्रीलिंगे पुंल्लिगे च हकारस्य सकारो भवति। मालि सन्दु न्यचिवु। पितुः पुत्रः। मालि सन्ज़ कोर्य। पितुः कन्याः। दान्द सन्दु ह्यंग्। वृषभस्य श्रृंगम्। गरि् सन्दु लटु। अश्वस्य पुच्छः। प्राणिनः किम्। कनकु वाल्। कर्णस्य वालः। चाग्यकु तील्। दीपस्य तैलम्। अथकु माज्। हस्तस्य मांसम्। अत्रअथ कन् शब्दयोः प्राणित्वसम्भवेऽपि खण्डप्राणित्वादप्राणित्वमेव। प्राणिनः कर्णे छिन्नेऽपि न कर्णस्य प्राणिसंज्ञा। नापि छिन्नकर्णेन प्राणिनोऽप्राणित्वम्। पुंल्लिगस्य किम्। गोवू हन्दू वछु। गावो वत्सः। गोवू हन्जू वछ्रू। गावो वत्सा। कत्र हन्दु प्यतु। शिलाया अग्रम्। कत्र हन्जू छल्। शिलायाः खण्डम्। माज्य हन्दु मोलु। मातुः पिता। माज्य हन्जू माजू। मातुर्माता।

पुंल्लिग प्राणि का एकवचन के साथ सम्बन्ध होने पर सब जगह स्त्रीलिग में और पुंल्लिग में 'हकार' को 'सकार' होता है। मालि सन्दु न्यचिवू-पितुः पुत्रः-पिता का पुत्र। मालि सन्ज़ कोर्य-पितुः कन्याः-पिता की बेटियें। दान्द सन्दु ह्यंग्-वृषभस्य श्रृङ्गम्-बैल का सींग। गरि सन्दु लटु-अश्वस्य पुच्छः-घोड़े की पूंछ। प्राणि का क्या? कनकु वाल्-कर्णस्य वालः-कान का वाल। चाग्यकु तील्-दीपस्य तैलम्-दीये का तैल। अथकु माज्-हस्तस्य मांसम्-हाथ का मांस। यहां 'अथ' और 'कन्' शब्द में प्राणित्व के सम्भव होने पर भी खण्ड-प्राणित्व से अप्राणित्व ही। प्राणि के कान के कटने पर भी कान का प्राणी नाम नहीं है और न ही कटे कान से प्राणि में अप्राणित्व आ जाता है। पुंल्लिङ्ग का क्या? गोवू हन्दु वछु-गावो वत्सः-गाय का बछड़ा। गोवू हन्जू वछ्रू-गाय की बछड़ी। कत्र हन्दु प्यतु-शिलाया अग्रम्-शिला का अग्रभाग। कत्र हन्जू छल्-शिलायाः खण्डम्-शिला का खण्ड। माज्य हन्दु मोलु-मातुः पिता-माँ-का बाप। माज्य हन्जू माजू-मातुर्माता-माँ की माँ।

स्वन् रुप् शब्दयोर्वा ॥ ४७ ॥

स्वन् शब्दस्य रुप् शब्दस्य चैकत्वेन सम्बन्धे सति सर्वत्र स्त्रीलिङ्गे पुंल्लिङ्गे च विकल्पेन पुप्राणिवत्स्वरूपं भवति । स्वन सन्दु करु्-स्वर्णस्य कटकः । रुप सन्दु खोस् । रौप्यस्य कंसः । स्वन सन्जू गंग्जू । स्वर्णस्य गलन्तिका । रुप सन्जू लूर् । रौप्यस्य दण्डः । स्वनकु [1]छथ्र् । स्वर्णस्य छत्रम् । [2]रुपुकु थाल् । रौप्यस्य थालः । [3]स्वनचू वाजू । स्वर्णस्योर्मिका । [4]रुप रज् । रौप्यस्य रज्जुः ।

'स्वन्' और 'रुप' शब्द का एकत्व के साथ सम्बन्ध होने पर सब जगह स्त्रीलिंग और पुंल्लिग में विकल्प से पुंप्राणिवत्-स्वरूप होता है । स्वन सन्दु करु्-स्वर्णस्य कटकः-सोने का कड़ा । रुप सन्दु खोस्-रौप्यस्य कंसः-चान्दी की कौली । स्वन सन्ज़ू गंग्ज़ू-सोने की गलन्तिका । रुप सन्दु लूर्-रौप्यस्य दण्डः-चान्दी का दण्ड । स्वनकू छथर्-स्वर्णस्य छत्रम्-सोने का छत्र । रुपुकु थाल्-रौप्यस्य थालः । चान्दी का थाल । स्वनचू वाजू स्वर्णस्योर्मिका-सोने की अंगूठी । रुपचू रज्-रौप्यस्य रज्जुः-चान्दी की रस्सी ।

अप्राणिना पुंसोकुक्यौ पुंसि ॥ ४८ ॥

प्राणिव्यतिरिक्तस्य पुंल्लिगस्य एकत्वेन संबन्धे सति पुंल्लिगात् उकुकि क्रमेण भवतः । एकवचने उकु प्रत्ययः वहुवचने कि प्रत्ययो भवति । दाञुकु त्वमुल् । धान्यस्य तण्डुलः । हारुकु म्वंग् । आषाढस्य मुद्गः । कुलिकि वथ्र् । वृक्षस्य पत्राणि । मागकि द्वह् । माघस्य दिवसाः । एकत्वेन किम् । कुल्यन् हन्दि वथ्र् । वृक्षाणां पत्राणि । कुल्यन् हन्दु वथ्र् । वृक्षाणां पत्रम् । अप्राणिना किम् । काव् सन्दु । काकस्य । गोवू हन्दु । गोः ।

(४७-अत्र मूलपुस्तके 'रुप्' इति पाठः । शुद्धोच्चारणं तु 'वंप्' इत्यस्ति

(४७-स्वनुकु[1] छथ्र्; [2]रुपुकु थाल्, [3]स्वनचू वाजू, [4]रुपचू रज्; अस्मिन्वाक्यचतुष्टये सुवर्णादिभिन्नं छत्रम्; रौप्यस्थाधाराद्यर्थं थालौ तदिभिन्नोर्मिका; रौप्यस्य बन्धनार्थं तद्भिन्नरूपा रज्जुरित्येवमर्थो विवक्षितश्चेत्तदा मूलपाठः संगच्छते-अन्यथा स्वर्णमयं छत्रम्, रौप्यमयीथाली; स्वर्णमय्यूर्मिका; रौप्यमयी रज्जुरस्मिन्नर्थे; स्वन सन्दु छथ्र्; वर्प सन्दु थाल् । स्वन सन्जू । वर्प सन्जू रज् इत्येवं रूपाणि शुद्धानि सन्तीति ।

प्राणियों से अतिरिक्त पुंल्लिग के एकत्व के साथ सम्बन्ध होने पर पुंल्लिग से 'ठकु, कि' प्रत्यय क्रम से होते हैं। एकवचन में 'उकु' प्रत्यय और वहुवचन में 'कि' प्रत्यय होता है। दाञुकु त्वमुल्-धान्यस्य तण्डुलः-धान के चावल। हारुकु म्वंग्-आषाढस्य मुद्गः-आषाढ़ के मुद्ग। कुलिकि वथ्र्-वृक्षस्य पत्राणि-वृक्ष के पत्ते। मागकि द्वह्-माघस्य दिवसाः-माघ के दिन। एकत्व से क्या? कुल्यन् हन्दि वथ्र्-वृक्षाणां पत्राणि-वृक्षों के पत्ते। कुल्यन् हन्दु वथ्र्-वृक्षाणां पत्रम्-वृक्षों के पत्ता। अप्राणि से क्या? काव् सन्दु-काकस्य-कौए का। गोव् इन्दु-गोः-गाय का।

चूचौ न स्त्रियाम् ॥ ४६ ॥

स्त्रीलिंगानां प्राणिव्यतिरिक्तस्य पुंल्लिगस्यैकत्वेन संबन्धे संबन्धिपुंल्लिगादेकवचने 'चू' प्रत्ययः वहुवचने 'न' प्रत्ययो भवति। कुलिचू लण्डू। वृक्षस्य शाखा। कुलिच लञ्ज्य-वृक्षस्य शाखाः। नागचू नारिज्। नागस्य प्रणालिका। नागच नारिज। नागस्य प्रणालिकाः। एकत्वेन किम्। कुल्यन् हन्ज लवज्य। वृक्षाणां शाखाः। नागन् हन्ज नारिज। अखातानां प्रणालिकाः। अप्राणिना किम्। गरि सन्जू जंग्। अश्वस्य जङ्घा। कट सन्ज शोर्य। मेषस्य खुराः।

स्त्रीलिङ्गों के प्राणियों से अतिरिक्त पुंल्लिङ्ग के एकत्व के साथ सम्बन्ध में सम्बन्धिपुंल्लिङ्ग से एकवचन में 'चू' प्रत्यय और वहुवचन में 'न' प्रत्यय होता है। कुलिचू लन्डू-वृक्षस्य शाखा-वृक्ष की टहनी। कुलिच लञ्ज्य-वृक्षस्य शाखाः-वृक्ष की टहनियें। नागचू नारिज्-नागस्य प्रणालिका-नाग की प्रणालिकायें। एकत्व से क्या? कुल्यन् हन्ज लवज्य-वृक्षाणां शाखाः-वृक्षों की शाखायें। नागन् हञ्ज नारिज-अखातानां प्रणालिकाः-अखातों की प्रणालिकायें। अप्राणि से क्या? गरि सन्जू जंग्-अश्वस्य जङ्घा-घोड़े की टांग। कट सन्ज शोर्य-मेषस्य खुराः-भेड़ के खुर।

मनुष्यसंज्ञयोनुन्यौ पुंसि ॥ ५० ॥

मनुष्यनाम्ना संबन्धे सति पुंल्लिङ्गे एकत्ववहुत्वयोः उनु नि प्रत्ययौ भवतः। गण इति संज्ञा। गणनु न्यचिव्। गणस्य पुत्रः। राधाकृष्ण इति नाम। राधाकृष्णनि गरि। राधाकृष्णस्याश्वाः। ड्यकनु पत। ललाटस्य भक्तम्। अत्र ड्यक शब्दस्य दैवार्थकत्वात् उनु प्रत्ययः। अन्यत्र ड्यकुक रथ। ललाटस्य रक्तम्।

मनुष्य के नाम से संबन्ध होने पर पुंल्लिग में एकवचन और वहुवचन में 'उनु, नि' 'प्रत्यय होते हैं। गण-यह नाम है। गणनु न्यचिवु-गणस्य पुत्रः-गण का पुत्र । राधाकृष्ण-यह नाम। राधा-कृष्णनि गरि-राधाकृष्णस्याश्वाः-राधाकृष्ण के घोड़े । ड्यकनु पत-ललाटस्य भक्तम्-ललाट का भक्त। यहां ड्यक' शब्द के दैवार्थकत्व होने से 'उनु' प्रत्यय और दूसरी जगह ड्यकु रथ्-ललाटस्य रक्तम्-ललाट का रक्त।

स्त्रियां ञञौ च ॥ ५१ ॥

स्त्रीलिङ्गस्य मनुष्यनाम्ना संबन्धे सति संबन्धि-लिङ्गादेक-वहुवचनयोः 'ञ्-ञ' प्रत्ययौ भवतः। मनु इति नाम। मनिञ् कूरू। मनु इत्यस्य कन्या। मनिञ कोर्य। मनु इत्यस्य कन्याः। कृपाराम इति नाम। कृपारामञ् माजू। कृपारामस्य माता । कृपारामञ् व्यञ। कृपारामस्य भगिन्यः।

स्त्रीलिङ्ग के मनुष्य के नाम से सम्बन्ध होने पर संबन्धि-लिङ्ग से एकवचन और वहुवचन में 'ञ्-ञ' प्रत्यय होते हैं। मनु यह नाम है। मनिञ् कूरू-मनु इत्यस्य कन्या-मनु ये इस की कन्या है। मनिञ् कोर्य-मनु इत्यस्य कन्याः-मनु यह इसकी कन्याएं। कृपाराम यह नाम है। कृपारामञ् माजू-कृपारामस्य माता-कृपाराम की माता। कृपारामञ् व्यञ-कृपारामस्य भगिन्यः-कृपाराम की बहिनें।

सप्तम्यां स्नावन्दर्मन्ज्प्यठन्तौ स्वार्थभेदतः ॥ ५२ ॥

सनौ प्रत्ययौ । अन्दर अन्तः। मन्ज् अन्तौ । प्यठ् अन्तौ। स्वस्वार्थभेदतः सप्तम्यां प्रत्ययौ भवतः । अन्तरार्थे अन्दरन्तौ। मध्यार्थे मन्जन्तौ। उपर्यर्थे प्यठन्ताविति। अन्तर्वाणिभाषायां तु वेषान्तावपि प्रयुज्येते इति निर्णयम्। गरस् अन्दर्। गृहस्यान्तरे। नावि मन्ज्। नौकाया मध्ये। गरन् अन्दर्। गृहाणामन्तरे। नावन् मन्ज्। नौकानां मध्ये। गुरिस् प्यठ्। अश्वस्योपरि। गुर्यन् प्यठ्। अश्वानामुपरि। गरशब्दात् स् अन्दर् न् अन्दर् प्रत्ययौ। न्प्रत्यये सर्वत्र (सू.१२) इत्यकारागमः। अकारेऽकारलोपः (सू १।५ क)। नाव् शब्दात् स् मन्ज् न् मन्ज् प्रत्ययौ। स्लोपः सर्वत्र (सू० ४०) इति सकारलोपः । स्त्रियामिकारः (सू. ३७) इति इकारागमः। गुरु शब्दात् स् प्यठ् न् प्यठ् प्रत्ययौ। उवर्णान्तानामिकारः (सू०

३०) इति उकारस्य इकारः। न्प्रत्यये सर्वत्र (सू. १२) इत्यकारागमः। यत्वम्।

'स्' और 'न्' दो प्रत्यय हैं। अन्दर अन्तैः-मन्ज् अन्तौ-प्यठ् अन्तौ। अपने स्वार्थभेद से सप्तमी में प्रत्यय होते हैं। अन्तरार्थ में-अन्दरन्तौ, मध्यार्थ में-मन्जन्तौ और उपरि अर्थ में-प्यठन्तौ-। अन्तर्वाणिभाषा में तो 'वेषान्तौ' भी प्रयुक्त होते हैं, ऐसा निर्णय लेना। गरस् अन्दर्-गृहस्यान्तरे-घर के भीतर। नावि मन्ज्-नौकाया मध्ये-नौका के बीच। गरन् अन्दर-गृहाणामन्तरे-घरों के भीतर। नावन् मन्ज्-नौकानां मध्ये-नौकाओं के बीच। गुरिस् प्यठ-अश्वस्योपरि-घोड़े के ऊपर। गुर्यन् प्यठ्-अश्वानामुपरि-घोड़ों के ऊपर। 'गर' शब्द से' स् अन्दर्-न् अन्दर्' प्रत्यय। न्प्रत्यये सर्वत्र (सू.१२)इस से 'अकार' का आगम। अकारेऽकारलोपः (सू. १५ क) 'नाव्' शब्द से 'स् मन्ज्-न् मन्ज्' प्रत्यय। स्लोपः सर्वत्र (सू. ४०) से 'सकार' का लोप। स्त्रियामिकारः (सू. ३७) से 'इकार' का आगम। गुरु' शब्द से 'स् प्यठ्-न् प्यठ' प्रत्यय। उवर्णान्तानामिकारः (सू. ३०) इस से 'उकार' को इकार। न्प्रत्यये सर्वत्र (सू. १२) से 'अकार' का आगम और 'य'।

अधिकरणे क्यथन्तौ ॥ ५३ ॥

स् नौ प्रत्ययौ क्यथ् अन्तावाधारसप्तम्या एकत्ववहुत्वयोः प्रत्ययौ भवतः। थालस् क्यथ्। थाले। नावि क्यथ्। नौकायाम्। थालन् क्यथ्-थालेषु। नावन् क्यथ्। नौकासु।

'स्-नौ' प्रत्यय और क्यथ् अन्त में आधार सप्तमी के एकवचन और वहुवचन में प्रत्यय होते हैं। जैसे—थालस् क्यथ्-थाले-थाल में। नावि क्यथ्-नौकायाम्-नौका में। थालन् क्यथ्-थालेषु-थालों में। नावन् क्यथ्-नौकासु-नौकाओं में।

चतुर्थ्यां कितुकिचू अन्तौ पुंस्त्रीकर्मकतः ॥ ५४॥

वाक्येषु पुंल्लिङ्गैकत्वे कर्मणि सति स् नौ प्रत्ययौ कितु अन्तौ स्त्रीलिङ्गैकत्वे कर्मणि स् नौ किचू अन्तौ चतुर्थ्यामेकत्ववहुत्वयोः प्रत्ययौ भवतः। मालिस् कितु अनुन् पोञ्। पित्रे (तेन) आनीतं पानीयम्। मालिस् किचू अनून् गाव्। पि[1]त्रानीता गौः।

---

१. पित्रयानीता-मू.-पा.

वाक्यों में पुंल्लिङ्ग-एकवचन में कर्म में होने पर 'स्-नौ' प्रत्यय कितु। अन्त में स्त्रीलिङ्ग-एकवचन कर्म में 'स-नौ-किचू अन्त चतुर्थी में एकवचन और वहुवचन में प्रत्यय होते हैं। मालिस् कितु अनुन् पोञ-पित्रे (तेन) आनीतं पानीयम्-पिता के लिए उसने पानी लाया। मालिस् किचू अञून् गाव्-पि[1]त्रानीता गौः-पिताने गाए लाई।

किति किचान्तौ कर्मवहुत्वतः ।। ५५ ।।

वाक्ये पुंल्लिङ्गस्य वहुत्वे कर्मणि सति स्नौ प्रत्ययौ किति अन्तौ स्त्री वहुत्वे कर्मणि सति स्नौ किच अन्तौ चतुर्थ्यां प्रत्ययौ भवतः। गुरिस् किति अनिन् रव। अश्वायानीताः कम्बलाः। गुर्यन् कित्। अश्वेभ्यः। ग्वरस् किच अञन् पोथ्य। गुरवे आनीतानि पुस्तकानि। ग्वरन् किच। गुरुभ्यः। अत्रेदं ध्येयम्। कर्मिधातूनां कर्मणः स्त्रीपुंकर्मानुसारतः प्रोक्ताः प्रत्यया विज्ञेयाः। कर्तृधातूनां तु कर्तुः स्त्रीपुंल्लिङ्गैकवचनवहुवचनानुसारतो बोध्याः। यथा। व्यठनस् कितु आव्। स्थूलीभवनायागतः। व्यठनस् कित् आय्। स्थूलीभवनायागताः।

वाक्य में पुंल्लिङ्ग के वहुवचन में कर्म में होने पर 'स्-नौ' प्रत्यय और 'किति' अन्त में स्त्री लिङ्ग के वहुवचन में कर्म में होने पर 'स् नौ किच, प्रत्यय अन्त चतुर्थी में होते हैं। गुरिस् किति अनिन् रव-अश्वायानीताः कम्बलाः-घोड़े के लिए कम्बल लाए। गुर्यन् किति-अश्वेभ्यः-घोड़ों के लिए। ग्वरस् किच अञन् पोथ्य-गुरवे आनीतानि पुस्तकानि-गुरु के लिए पुस्तकें लाईं। ग्वरन् किच-गुरुभ्यः-गुरुओं के लिए। यहां यह जान लेना चाहिए। कर्मिधातुओं के तो स्त्री-पुंल्लिङ्ग कर्मानुसार कहे गए कर्मप्रत्यय जानने। कर्तृधातुओं के तो स्त्रीलिङ्ग और पुंल्लिङ्ग के एकवचन और वहुवचन के अनुसार कर्तृ प्रत्यय जानने। जैसे-व्यठनस् कितु आव्-स्थूलीभवनायागतः-स्थूलीभवन के लिए आया। व्यठनस् कित् आय्-स्थूलीभवनायागताः-स्थूलीभवन के लिए आए।

कर्तृतृतीयायामिदौतौ ।। ५६ ।।

तिसृषु कर्तृतीयाहेतुतृतीयासहार्थतृतीयासु मध्यात् इदौतौ इ

१. पित्रया (पित्रा)—मू. पा.

औ । इत्येतौ प्रत्ययौ कर्तृतृतीयाया एकत्ववहुत्वयोः प्रत्ययौ भवतः । अत्रापि पुंल्लिङ्गे इकारस्यार्धमात्रता बोध्या । स्त्रीलिङ्गेषु पूर्णता विज्ञेया । गुरि् मोरु् । अश्वेन हतः । तमि धनु । तेन [1]भणितम् । गुयौं मोरु् । अश्वैर्हतः । तिगो धनु । तै[2]भणितम् । कोरि दपु । कन्यया प्रोक्तम् । कोयौं दपु । कन्याभिः प्रोक्तम् ।

कर्तृतृतीया, हेतुतृतीया और सहार्थतृतीया तीनों में मध्य से इत्-औत' अर्थात् 'इ-औ' प्रत्यय । ये प्रत्यय कर्तृतृतीया के एक और वहुवचन में होते हैं । यहां भी पुंल्लिङ्ग में 'इकार' की आधी मात्रा जानना । स्त्रीलिङ्गों में पूरी जानना । गुरि् मोरु-अश्वेन हतः-घोड़े ने मारा । तमि धनु- तेन [3]भणितम्-उसने कहा । गुयौं मोरु्-अश्वैर्हतः-घोड़ों ने मारा । तिगो धनु- [4]तैर्भणितम्-उन्होंने कहा । कोरि दपु- कन्यया प्रोक्तम्-कन्या ने कहा । कोयौं दपु-कन्याभिः प्रोक्तम्-कन्याओं ने कहा ।

अन्द्रान्तौ निर्धारणे च ॥ ५७ ॥

इ औ प्रत्ययौ अन्द्र अन्तौ निर्धारणे एकत्ववहुत्वयोः प्रत्ययौ भवतः एकत्वे इ अन्द्र प्रत्ययः । वहुत्वे औ अन्द्र प्रत्ययो भवति । गर अन्द्र छुह जान् लाँक । गृहेऽमुकः साधुरस्ति । गरौ अन्द्र छुह् जान् आंगुन् । गृहाणां साध्वङ्गनमस्ति ।

'इ-औ' प्रत्यय और 'अन्द्र' अन्त में निर्धारण अर्थ में एक और वहुवचन में होते हैं । एकवचन में 'इ अन्द्र' प्रत्यय और वहुवचन में 'औ अन्द्र' प्रत्यय होता है । जैसे-गर अन्द्र छुह जान् लाँक-गृहेऽमुकः साधुरस्ति-घर में अमुक साधु है । गरौ अन्द्र छुह जान् आँगुन्-गृहाणां साध्वङ्गनमस्ति-घरों का अच्छा अङ्गना है ।

अकारव्यञ्जनान्तानां पुंस्येकवचने वाऽनऽसर्वनाम्नाम् ॥५८॥

---

१. वणितम्-मू. पा.
२. तैर्वणितम्-मू. पा.
३. वणितम्-मू. पा.
४. तैर्वणितम्-मू. पा.

५७. गर अन्द्र छुह् जान् लाँक । ईदृशेषु वाक्येषु स्वरे परेऽपि (सू.४) उक्तो विधिरिप्रत्ययलोपोऽवगन्तव्यः । किंचैतद्वाक्यार्थे विवक्षिते प्रायशो गर मन्ज छुह् जान् लाँक इत्येवं रूपवाक्यमेवोच्चार्यते इति । एवं गाम अन्द्र इत्यादिष्वपि ज्ञेयम् ।

५८. ऊमात्रान्तानामपि क्वचित्प्रत्ययादिलोपश्चेष्यते । कर्तृतृतीयाया एकत्वे अन् प्रत्ययान्तादाद्यक्षरस्याकारस्य च लोप इत्यर्थः । दानून् गऽजून हान्जून् इत्यादि ।

चानुकृष्टं नानुवर्तते इति निर्धारण इति निवृत्तम्। पुंल्लिङ्गाना मकारव्यञ्जनान्तानां कर्तृतृतीयाया एकत्वविषये विकल्पेन अन् भवति सर्वनामशब्दान्वर्जयित्वा। तत्रेदानीन्तनभाषायामन्प्रत्यय एव साधुतयोच्चार्यते। इ प्रत्ययविकल्पः प्राचीनभाषयैवेति बोध्यम्। ईश्वरन् दपु। ईश्वरेणोक्तम्। दयि दपु-ईश्वरेणोक्तम्। डयकन् करु्। ललाटेन कृतम्। खरन् नचु। खुरेण नर्तितम्। अकारव्यञ्जनान्तानां किम्। शुरि वदु। बालेन रुदितम्। पुंसि किम्। जंगि लोयु। जङ्घया क्षिप्तम्। एकवचने किम्। ईश्वरौ दपु। ईश्वरैः प्रोक्तम्।

पुंल्लिङ्ग अकारव्यञ्जनान्तों के कर्तृतृतीया के एकवचन के विषय में विकल्प से 'अन्' होता है सर्वनामशब्दों को छोड़कर। वहां आजकल की भाषा में 'अन्' प्रत्यय ही अच्छी तरह से उच्चरित होता है। 'इ' प्रत्यय का विकल्प प्राचीनभाषा से ही ऐसा जानना चाहिए। जैसे-ईश्वरन् दपु-इश्वरेणोक्तम्-ईश्वर ने कहा। दयि दपु-ईश्वरणोक्तम्-ईश्वर ने नहा। ड्यकन् करु्-ललाटेन कृतम्-ललाट से किया। खरन् नचु-खुरेण नर्तितम्-खुर से नाचा। अकार-व्यञ्जनान्तों का क्या? शुरि वदु-बालेन रुदितम्-बच्चे ने रोया। पुंल्लिङ्ग में क्या? जंगि लोयु-जङ्घया क्षिप्तम्। जङ्घा से फैंका। एकवचन में क्या? ईश्वरौ दपु-ईश्वरैः प्रोक्तम्-ईश्वरों ने कहा।

हेतौ सूतिन्नन्तौ सूत्यन्तौ वा ॥५९॥

इ औ प्रत्ययौ सूतिन् अन्तौ सूत्य् अन्तौ वा हेतुतृतीयायामेकत्व-वहुत्वयोः प्रत्ययौ भवतः अत्र इकारस्य पूर्णता बोध्या। अथ सूतिन् ख्योन्। हस्तेन भुक्तम्। अथौ सूतिन् ख्योन्। हस्तैर्भुक्तम्। श्राकि सूतिन् मोरुन्। छुरिकया हतः। श्राकौ सूतिन् मोरुन् -छुरिकाभिर्हतः। ख्वर् सूत्य् आव्। पादेनागतः। ख्वरौ सूत्य् गौव्। पादैर्गतः।

'इ-औ' प्रत्यय अन्त में सूतिन् वा सूत्य' हेतुतृतीया में एक और वहुवचन में प्रत्यय होते हैं। यहां 'अकार' की पूर्णता जानना। अथौ सूतिन् ख्योन्-हस्तेन भुक्तम्-हाथ से खाया। अथौ सूतिन् ख्योन्-

हस्तैर्भुक्तम्-हाथों से खाया। श्राकि सूतिन् मोरुन्-छुरिकया हतः-छुरी से मारा । श्राकौ सूतिन् मोरुन्-छुरिकाभिर्हतः-छुरियों से मारा। ख्वर सूत्य् श्राव्-पादेनागतः-पांश्रों से श्राया। ख्वरौ सूत्य् गौव्-पादैर्गतः-पाश्रों से गया।

सहार्थायां स्नौ ॥६०॥

स् न् प्रत्ययौ सूनिन् श्रन्तौ सूत्य् श्रन्तौ वा सहार्थतृतीयाया मेकत्ववहुत्वयोः प्रत्ययौ भवतः। मालिस् सूतिन् श्राव्। पित्रा सहागतः। बायिग् सूतिन् म्यूलु। भ्रात्रा साकं संगतः।

'स्-न्' प्रत्यय वा 'सूनिन् श्रन्तौ सूत्य् श्रन्त्यौ' सहार्थतृतीया में एकवचन श्रौर वहुवचन में प्रत्यय होते हैं। मालिस् सूतिन् श्राव्-पित्रा सहागतः:पिता के साथ श्राया। बायिग् सूतिन् म्यूलु-भ्रात्रा साकं संगतः-भाई के साथ मिला।

हेतोः संबन्धषष्ठी कर्तृतृतीययोः प्रयोगलिङ्गात्प्रत्ययौ वा ॥६१॥

हेतुभूतस्याश्वादेयः संबन्धषष्ठीप्रयोगः कर्तृतृतीयाप्रयोगो वा स एव लिङ्गं तस्मात्प्रोक्तौ इं सूतिन् श्रौ सूतिन् प्रत्ययौ वा इ सूत्य् श्रौ सूत्य् प्रत्ययौ हेतुतृतीयाया एकत्ववहुत्वयोर्भवतः। लिङ्गग्रहणं तु तेषां प्रयोगानामागमादेशाद्यर्थम्। गुरि सन्दि सूतिन् श्राव्। श्रश्वेनागतः। नावि हन्दि सूत्य् वोतु। नौकया प्राप्तः। महनिव्यन् हन्दि सूत्य् गौव्। पुरुषैर्गतः। गुरि सूत्य् श्राव्। श्रश्वेनागतः। नावि सूत्य् वोतु। नौकया प्राप्तः। महनिव्यन् हन्दि सूत्य् गौव्। पुरुषैर्गतः। गुरि सूत्य् श्राव्। श्रश्वेनागतः। नावि सूत्य् वोतु-नौकया प्राप्तः। महनिव्यौ सूत्य गौव्। पुरुषैर्यातः। गुरि् सन्दु शब्दात् इ सूतिन् प्रत्ययः। उवर्णान्तानामिकारः (सू. ३०) इत्यनेन सन्दु इत्यस्य उकारस्य इकारः। एवं सर्वेषाम्।

हेतुभूत श्रश्वादि का जो संबन्ध षष्ठी प्रयोग वा कर्तृतृतीया प्रयोग है, वही लिङ्ग है, उसी से कहे गए 'इ सूतिन् श्रौर श्रौ सूतिन्' 'प्रत्यय वा इ सूत्य् श्रौर श्रौ सूत्य्' प्रत्यय हेतुतृतीया के एक-वचन श्रौर वहुवचन में होते हैं। लिङ्ग ग्रहण तो उन प्रयोगों के श्रागमादेश के लिए है। जैसे-गुरि् सन्दि सूतिन् श्राव्-श्रश्वेनागतः-श्रश्व ने श्राया। नावि हन्दि सूत्य् वोतु-नौकया प्राप्तः-नौका द्वारा प्राप्त। महनिव्यन् हन्दि सूत्य गौव-पुरुषैर्गतः-पुरुषों से गया। गुरि

सूत्य् आव्-अश्वेनागतः-घोड़े से आया। नावि सूत्य् वोतु-नौकया प्राप्तः-नौका से प्राप्त। महनिव्यौ सूत्य् गौव्-पुरुषैर्यातः-पुरुषों से गया। गुरि् सन्दु शब्द से ६ सूतिन् प्रत्यय। उवर्णान्तानामिकारः (सू. ३०) इस से 'सन्दु' इस के 'उकार' को 'इकार'। इस तरह सभी को

ख्वत निश वाऽपायपञ्चम्यास् ॥ ६२ ॥

तस्मादेव संबन्धषष्ठीप्रयोगलिङ्गस्तृतीयाप्रयोगलिङ्गाद्वा ख्वत् प्रत्ययो निश प्रत्ययो वा अपायपञ्चम्याः स्वरूपं भवति। निश स्थाने निशिन् इति ख्वत स्थाने ख्वतन् इति च व्यवह्रियत इति बोध्यम्।

ग्वर सन्दि ख्वत छुह् गाटुलू। गुरोः सकाशाद्दत्तोऽस्ति। यद्वा। कश हन्दि ख्वत छुह् त्रकुरु। शिलायाः कठिनोऽस्ति। रुप निश छुह् स्वन् आन्। रौप्यात्स्वर्णंसाध्वस्ति। यद्वा। रूपौ ख्वत् छिह् द्यार् जान्। रौप्याद्धनं शुभमस्ति।

उसी सम्बन्धषष्ठीप्रयोग लिङ्ग से वा तृतीया प्रयोगलिङ्ग से ख्वत प्रत्यय वा निश प्रत्यय अपायपञ्चमी का स्वरूप होता है। निश स्थान में 'निशिन्' यह और ख्वत स्थान में 'ख्वतन्' यह व्यवहार में आता है, ऐसा जानना। ग्वर सन्दि ख्वत छुह् गाटुलु-गुरोः सकाशाद्दत्तोऽस्ति-गुरु के पास से दिया है। अथवा-कश हन्दि ख्वत छुह् त्रकुर्-शिलायाः कठिनोऽस्ति-शिला से कठिन है। रुप निश छुह् स्वन् आन्-रौप्यात्स्वर्णं साध्वस्ति-चान्दी से सोना अच्छा है। अथवा-रूपौ ख्वत छिह् द्यार् जान्। रौप्याद्धनं शुभमस्ति-चान्दी से धन अच्छा है।

सामान्यचतुर्थ्यां पुछ्य ॥ ६३ ॥

संवन्धषष्ठीप्रयोगलिङ्गात्तृतीयाप्रयोगलिङ्गाद्वा चतुर्थ्यां पुछय प्रत्ययः स्यात्। एकवहुत्वे लिङ्गादेव बोध्येते। पुत्र पुछय् आव्। पुत्रायागतः। यद्वा। पुत्र सन्दि पुछय्। पुत्राय। पुत्रौ पुछय् आव्। पुत्रेभ्य आगतः। यद्वा। पुत्रन् हन्दि पुछ्य्। पुत्रेभ्यः।

संवन्धषष्ठीप्रयोगलिङ्ग से वा तृतीया प्रयोगलिङ्ग से चतुर्थी में 'पुछ्य' प्रत्यय हो। एकवचन और वहुवचन में लिङ्ग से ही जाने जाते हैं। पुत्र पुछ्य् आव्-पुत्रायागतः-पुत्र के लिए आया। अथवा-

पुत्र सन्दि पुछ्य्-पुत्राय-पुत्र के लिए। पुत्रौ पुछ्य् आव्-पुत्रेभ्य आगतः-पुत्रों के लिए आया। अथवा-पुत्रन् हन्दि पुछ्य्-पुत्रेभ्यः-पुत्रों के लिए।

उकुप्रत्ययस्योकारस्याऽकारः ॥ ६४ ॥

षष्ठीप्रयोगसम्बन्धिन 'उकु' प्रत्ययोकारस्य अकारः स्यात्। पट्यकि पुछ्य् । और्णवस्त्राय । पट्युकु प्रयोगलिङ्गात्पुछ्य् प्रत्ययः। अनेन उकारस्य अकारः। उवर्णान्तानाम् (सू० ३०) इति इकारागमः।

षष्ठीप्रयोग से सम्बद्ध 'उकु' प्रत्यय के 'उकार' को 'अकार' हो। पट्यकि पुछ्य्-और्णवस्त्राय-ऊन के वस्त्र के लिए। पट्युकु प्रयोग-लिङ्ग से 'पुछ्य्' प्रत्यय। इस से 'उकार' को 'अकार' हुआ। उवर्णान्तानाम् (सू० ३०) इससे 'इकार' का आगम हुआ।

पञ्चम्यामिदौतौ प्यठान्तौ निशांतावन्द्रान्तौ वा ॥ ६५ ॥

लिङ्गात् इ औ प्रत्ययौ प्यठ अन्तौ वा निश अन्तौ वा अन्द्र अन्तौ पञ्चम्या एकत्ववहुत्वयोः प्रत्ययौ भवतः। ते च स्वस्वस्थानेषु प्रयुज्यन्ते। गाम प्यठ। ग्रामात्। सर्प निश। सर्पात्। गामौ प्यठ। ग्रामेभ्यः। सर्पौ निश। सर्पेभ्यः। गर अन्द्र द्राव्। गृहान्निर्गतः। नावि अन्द्र द्राव्। नावो निर्गतः।

लिङ्ग से 'इ-औ' प्रत्यय प्यठ अन्तौ वा निश अन्तौ वा अन्द्र अन्तौ पञ्चमी से एकवचन-वहुवचन में प्रत्यय होते हैं और वे अपने अपने स्थानों में प्रयुक्त होते हैं। गाम प्यठ-ग्रामात्-ग्राम से। सर्प निशसर्पात्-सर्प से। गामौ प्यठ-ग्रामेभ्यः-ग्रामों से। सर्पौ निश-सर्पेभ्यः-सर्पों से। गर अन्द्र द्राव्-गृहान्निर्गतः-घर से निकला। नावि अन्द्र द्राव्नावो निर्गतः-नौका से निकला।

वर्गप्रथमान्तानां प्रथमायां द्वितीयः ॥ ६६ ॥

वर्गप्रथमान्तानां लिङ्गानां प्रथमाविभक्तौ स्वस्ववर्गसंबन्धी द्वितीयाक्षरो भवति। त्रख्। द्रोणः। काछ्। काचः। कठ्। मेषः। त्रख्। द्रोणाः। काछ्। काचाः। कठ्। मेषाः। हथ्। शतानि। ताफ्। आतपः। ताफ्। आतपाः। प्रथमायां किम्। त्रक सूतिन्। द्रोणेन। काच सूतिन्। यक्ष्मणा। कट पुच्छ्य्। मेषाय। हतुकु। शतस्य। तापस् प्यठ्। आतपोपरि।

वर्गप्रथमान्त लिङ्गों की प्रथमाविभक्ति में अपने-अपने वर्ग-

संबन्धी द्वितीयाक्षर होता है। त्रख्-द्रोणः-दोना। काछ्-काचः-काच। कठ्-मेषः-भेड़। प्रथमाएकवचन। त्रख्-द्रोणाः। दोने। काछ्-काचाः शीशे। कठ्-मेषाः-भेड़ें। प्रथमा वहुप्रचन। हथ्-शतानि-सौ। ताफ्-आतपः-धूप। ताफ्-आतपाः-धूपें। प्रथमा में क्या ? त्रक सूतिन्-द्रोणेन-दोने से। काच सूतिन्-यक्ष्मणा-यक्ष्मा से। कट पुछय्-मेषाय-भेड़ के लिए। हतुकुशतस्य-सौ का। तापस् प्यठ्-आतपोपरि-धूप के ऊपर।

स्त्रियामेकवचन एव ॥ ६७ ॥

स्त्रीलिङ्गे वर्तमानस्य वर्गप्रथमान्तस्य प्रथमाया एकवचने एव स्वस्ववर्गद्वितीयाक्षरो भवति। क्रख। कोलाहलः। रच्। गुञ्जा। नठ। कम्पः। वथ्। मार्गः। चाफ्। भुक्तिः। एकवचने किम्। क्रक। कोलाहलाः। रच। गुञ्जाः। नट। कम्पाः। वत। मार्गाः। चाप। भुक्तयः। एवं द्वितीयादिविभक्तिषु बोध्यम्।

स्त्रीलिङ्ग में वर्तमान वर्गप्रथमान्त के प्रथमा के एकवचन में ही अपने-अपने वर्ग का दूसरा अक्षर होता है। जैसे—क्रख्-कोलाहलः-शोर। रच्-गुञ्जा-रत्ती। नठ्-कम्पः-कम्प। वथ्-मार्गः-मार्ग। चाफ्-भुक्तिः-भोग। एकवचन में क्या ? क्रक-कोलाहलाः-बहुत शोर। रच-गुञ्जाः-रत्तियें। नट-कम्पाः-बहुत कम्प-कम्पी। वत-मार्गाः-बहुत मार्ग। चाप-भुक्तयः-बहुत भोग। इसी तरह द्वितीया आदि विभक्तियों में जानना।

न संयोगे तचोः ॥ ६८ ॥

लिङ्गन्ते पूर्ववर्णसंयुक्तयोस्तकारचकारयोर्द्वितीयाक्षरादेशो न भवति। सञ्। सौचिकः। वत्च। वर्तिका। ब्वकञ्। बाला शुनी। मकञ्। परशुः। मस्त्। शिरोरुहः। नस्त्। नासिका। तचोः किम्। रेम्फ्। अल्पार्थः। चाम्फ्। सान्त्वम्। संयोगे किम् ? रथ्। रक्तम्। ऋछ्। उपजातिः।

लिङ्गान्त में पूर्ववर्णसंयुक्त के तकार-चकार में दूसरे अक्षर का आदेश नहीं होता है। सञ्-सौचिकः-सोची (दर्जी)। वत्च-र्वतिका-बत्ती। ब्वकञ्-बालाशुनी-छोटी कुत्ती। मक्ञ्-परशुः-कुल्हाड़ा। मस्त्-शिरोरुहः-सिर के बाल। नस्त्-नासिका-नाक। 'त' और 'च' में क्या ? रेम्फ्-अल्पार्थः-थोड़ा अर्थ। चाम्फ्-सान्त्वम्-शान्त। संयोग में क्या ? रथ्-रक्तम्-लाल। ऋछ्-उपजातिः-उपजाति।

उदन्तानामोदुपधाया आत्वमप्रथमैकत्वे ॥ ६९ ॥

प्रथमैकवचनं वर्जयित्वा उदन्तानामुकारान्तानां लिङ्गानामुपधाभूतो य ओकारस्तस्य आत्वं भवति शेषासु विभक्तिषु। तत्रादेशागमादिना इकारान्तीभूतस्थाने उपधाया वक्ष्यमाणसूत्रेण (सू० ७०) अप्रसिद्धता विज्ञेया। मालि। पितरः। मालिस्। पितरम्। मालि सन्दु। पितुः। वालि। कुण्डलानि। वालिस्-कुण्डलम्। वालि दपु। कुण्डलेनोक्तम्। वायि। भ्रातरः। वायिस। भ्रातरम्। वायि सन्दु। भ्रातुः। मोलु। वोलु। वोयु शब्देभ्यः। उवर्णान्तानामिकारः (सू० ३०) इति सूत्रेण उमात्राया इकारमात्रादेशः। अनेनोपधाया ओकारस्य आत्वम्। उदन्तानां किम्। पोष्। पुष्पाणि। पोष सूतिन्। पुष्पेण।

प्रथमा के एकवचन को छोड़कर उदन्त-उकारान्त लिङ्गों के उपधाभूत जो 'ओकार' उसे शेष विभक्तियों में 'आ' होता है। वहां आदेश आगम-आदि से इकारान्तीभूतस्थान में उपधा की वक्ष्यमाणसूत्र से (सू० ७०) से अप्रसिद्धता जानना। मालि-पितरः (बहुवचन)। मालिस्-पितरम्-पिता को। मालि सन्दु-पितुः-पिता की। वालि-कुण्डलानि-बहुत कुण्डल। वालिस्-कुण्डलम्-कुण्डल। वालि दपु-कुण्डलेनोक्तम्-कुण्डल ने कहा। वायि-भ्रातरः—बहुत भाई। वायिस-भ्रातरम्-भाई को। वायि सन्दु-भ्रातुः-भाई का। मोलु, वोलु, वोयु शब्दों से उवर्णान्तों को 'इकार' होता है (सू० ३०) इस सूत्र से 'उ' मात्रा को 'इकार' मात्र आदेश हुआ। इससे उपधा के 'ओकार' को 'आ' हुआ। उदन्तों का क्या? पोष्-पुष्पाणि-बहुत फूल। पोष सूतिन्-पुष्पेण-फूल से।

इदुदूदन्तानामवर्णाप्रसिद्धता ॥ ७० ॥

इमात्रान्तानामुमात्रान्तानां च लिङ्गानां शब्दानां चोपधाया अवर्णस्याप्रसिद्धता निर्णेया। उदाहरणानि पूर्वसूत्रोक्तानि (सू० ६९)। अन्यान्यपि यथा। पटु। (और्णवस्त्रम्)। हटु—(कण्ठः)। तनु।

---

७०. येषां शब्दानां पूर्वसूत्रेण (६९) उपधाभूतस्योकारस्याकारः कृतस्तेषामेव तस्योपधाकारस्य द्वितीयैकत्वेऽप्रसिद्धता विज्ञेया। यथा। मालिस् वायिस् इत्यादि। नत्वन्येषामिदुदूदन्तानाम्। यथा। परिस् करिस् इत्यादि।

(तनुः)। इत्यादीनां शब्दानां स्वयमुकारमात्रान्तत्वादुपधाया अकारस्याऽप्रसिद्धता। एषामेव शब्दानाम्। उवर्णान्तानाम् (सू० ३०) इत्यादिसूत्रेण वहुत्वविषये उकारस्य इकारे कृते इकारान्तीभूतत्वात्तत्राप्यप्रसिद्धता। पटि। हटि। तनि। ऊमात्रान्तानां यथा। माजू। (माता)। काठू। (काष्टम्)। अत्र स्वयमूमात्रान्तत्वादप्रसिद्धता। वहुत्वे तु। वहुत्वेऽकारागमः (सू० ११) इति सूत्रेणाकारागमे कृते। ऊदन्तटवर्गस्य (सू० २२) इत्यादिना ठकारस्य छकारे च कृते। उवर्णान्तानामिकारः (सू० ३०) इत्यकारस्य इकारः यत्वे च कृते उपधाया अकारस्य प्रसिद्धता सिद्धा इति। (माज्य)। काछ्य)।

इमात्रान्त और उमात्रान्त लिङ्गों और शब्दों की उपधा के अवर्ण की अप्रसिद्धता का निर्णय कर लेना। उदाहरण पूर्व सूत्र में कहे जा चुके हैं (सू. ६६)। और भी जैसे-पटु-और्णवस्त्रम्-ऊन का गर्म कपड़ा। हट—कण्ठः—कण्ठ। तनु—तनुः शरीर। इत्यादि शब्दों के स्वयं उकारमात्रान्त होने से उपधा के 'अकार' की अप्रसिद्धता। इन्हीं शब्दों के 'उवर्णान्तानाम् (सू. ३०) इत्यादि सूत्र से वहुवचन के विषय में 'उकार' के 'इकार' करने पर इकारान्तीभूत होने से वहां भो अप्रसिद्धता। पटि, हटि, तनि। ऊमात्रान्तों का जैसे-माजू-माता-मां। काठू-काष्ठम्-काठ। यहां स्वयं ऊमात्रान्त होने से अप्रसिद्धता। वहुवचन में तो 'वहुत्वेऽकारागमः (सू. ११) इस-सूत्र से 'अकार' का आगम करने पर। ऊदन्तटवर्ग का (सू २२) इत्यादि से 'ठकार' को 'छकार' कर देने पर। 'ऊवर्णान्तानामिकारः (सू, ३०) से 'अकार को 'इकार' और 'य' करने पर उपधा के अकार की प्रसिद्धता सिद्ध है। माज्य-काछ्य।

ज़ाम ओत्वं परस्वरलोपश्च ॥७१॥

ज़ाम् शब्दस्योपधाया ओत्वं भवति तस्मात्परस्य प्रत्ययागमादिजस्य स्वरस्य च लोपः स्यात् अप्रथमैकत्वे। ज़ोम्। ननन्दरः। ज़ोम् वन्। ननन्दरं वद। ज़ोमुन्। ननन्द्रः। ज़ोम् दपु। ननन्द्रक्तोम्। ज़ोम्व्-ननन्द्भिः। ज़ोम् हन्दु। ननन्दुः। इत्यादि।

'जाम्' शब्द के उपधा को 'ओ' होता है, उससे परे प्रत्ययागमादि 'ज' का और स्वर का अप्रथमा के एकवचन में लोप हो जाता है। ज़ोम्-ननन्दरः-बहुत ननदें। ज़ोम् वन्-ननन्दरं वद-ननद को कहो। ज़ोमुन्-ननन्द्रः-ननद। ज़ोम् दपु-ननन्द्रोक्तम्-ननद ने कहा। ज़ोम्व्-ननन्द्भिः-ननदों ने। ज़ोम् हन्दु-ननन्दुः-ननद का। इत्यादि।

गाव् शब्दस्यौकारः ॥ ७२ ॥

गाव् शब्दसंबन्धिन उपधाया आकारस्य ओकारो भवति । प्रथमैकवचनं वर्जयित्वा । गोवू । गावः । गोवून् । गावः । गोवू हन्दु । गोः । गाव् शब्दात्सर्वत्रानेनोपधाया ओकारे कृते । यङ्गाव्क्वठ्थर्वडां च कृतादेशविधि (सू. १७) रिति सूत्रेण अकारागमनिषेधः ।

'गाव्' शब्द से सम्बद्ध उपधा के 'आकार' को 'ओकार' होता है प्रथमा के एकवचन को छोड़कर । गोवू-गावः-गौएं । गोवून्-गावः-गौओं को । गोवू हन्दु-गोः-गाय का । 'गाव्' शब्द से सब जगह इस से उपधा का 'औकार' कर देने पर 'यङ्गाव्क्वठ्थर्वडां च कृतादेशविधिः (सू. १७) इससे 'अकार' के आगम का निषेध ।

उदन्तत्र्यक्षराणामुकारस्याकारः ॥ ७३ ॥

उदन्तानां त्र्यक्षरादीनां लिङ्गानामुपधाभूतस्य उकारस्य अकारो भवति प्रथमैकवचनं वर्जयित्वा । गाटलिस् । दक्षम् । गाटल्यन् । दक्षान् । गाटल्यौ । दक्षः । गाटलिस् प्यठ् । दक्षात् । गाटुलु शब्दात् । द्वितीयायां स्नौ (सू. ३८) स् न् प्रत्ययौ । उवर्णान्तानामिकारः (सू. ३०) । न्प्रत्यये सर्वत्र (सू. १२) अकारागमः । अनेनोपधाया अकारः । त्र्यक्षराणां किम् ? कुलिम् । वृक्षम् । कुल्यन् । वृक्षान् ।

उदन्त त्र्यक्षरादि लिङ्गों के उपधाभूत 'उकार' को 'अकार' होता है प्रथमा के एकवचन को छोड़कर । गाटलिस्-दक्षम्-चतुर । गाटल्यन्-दक्षान्-चतुरों को । गाटल्यौ-दक्षैः-चतुरों से । गाटलिस् प्यठ्-दक्षात्-चतुर से । गाटुलु शब्द से 'द्वितीयायां स्नौ' (सू. ३८) से स् न् प्रत्यय । 'उवर्णान्तानामिकारः' (सू. ३०) न्प्रत्यये सर्वत्र (सू. १२) से 'अकार' का आगम । इस से उपधा का अकार । त्र्यक्षरों का क्या ? कुलिम्-वृक्षम्-वृक्ष । कुल्यन्-वृक्षान्-वृक्षों को ।

न.क्वछलादीनां शेषं कर्म ॥ ७४ ॥

क्वछुलु । च्वतुलु । चकुलु । ग्वगुलु । वातुलु । वतुकु । गगुरु् । म्वंगुरु् । इत्यादयः । एषां शब्दानामुकारान्तलिङ्गशेषक्रिया न भवति, किन्तु उपधाया अकारादेशो भवति । कछल् । भारिकाः । च्वतल् । स्वव्यभिचारकारयितारः । चकल्-चक्राकाराः । ग्वगल् । वर्तुलाकाराः । वातल् । चण्डालाः । वतक् । वर्तकाः । गगर् । मूषकाः ।

म्वंगर् । छागपोताः ।

क्वछुलु, च्वतुलु, चकुलु, ग्वगुलु, वातुल, वतुकु, गगुरु, म्वंगुरु-इत्यादि । इन शब्दों के उकारान्तलिङ्गशेषक्रिया नहीं होती है, किन्तु उपधा के 'अकार' का आदेश होता है । कछल्-भारिकाः-भार ढोने वाले । च्वतल्-स्वव्यभिचारकारयितारः-अपना व्यभिचार-कराने वाले । चकल्-चक्राकाराः-चक्र की तरह आकार वाले । ग्वगल्-वर्तुलाकाराः-गोल आकार वाले । वातल्-चण्डालाः-चण्डाल । वतक्-वर्तकाः-बत्तिएं । गगर्-मूषकाः-चूहे । म्वंगर्-छागपोताः-छागपोत ।

इकारेलोपः ॥ ७५ ॥

त्र्यक्षराधिकानामुकारान्तानामिकारे परे उपधाया उकारस्य लोपो भवति । गाट्लि । दक्षाः । गाट्लि वनु । दक्षेणोक्तम् । गाट्लि सन्दि पुछ्य । दक्षाय । गाट्लि सन्दु । दक्षस्य । साधनं पूर्ववत् । इकारे किम् ? गाट्लिस् । दक्षम् । साधितचरमेव ।

तीन अक्षर से अधिक अकारान्तों के 'इकार' परे होने पर उपधा के 'उकार' का लोप होता है । गाट्लि-दक्षाः-चतुर (बहुत) । गाट्लि वनु-दक्षेणोक्तम्-दक्ष ने कहा । गाट्लि सन्धि पुछ्य-दक्षाय-दक्ष के लिए । गाट्लि सन्दु-दक्षस्य-दक्ष का । साधन पहिले की तरह । इकार में क्या ? गाट्लिस्-दक्षम्-दक्ष को ।

युकारोपधाया इत् ॥ ७६ ॥

उकारान्तानां लिङ्गानामुपधाभूतस्य युकारस्य इत् भवति प्रथमैकवचनं वर्जयित्वा । ज़िठि । वृद्धः । ज़िठिग् । वृद्धम् । ज्युठु शब्दात् । उवर्णान्तानाम् (सू. ३०) इत्यनेन इकारे कृते । अनेन यु उपधाया इत्वम् ।

उकारान्त लिङ्गों के उपधाभूत 'युकार' को 'इत्' होता है प्रथमा के एकवचन को छोड़कर । ज़िठि-वृद्धः-बूढ़ा । ज़िठिग्-वृद्धम्-

---

(७६, ७९) महन्युवु । गहनिवु । न्यचुवु । क्युतु । कितु । ज्युठु । जिठु । इत्यादयः शब्दाः उभयरूपेणात्रलिखिता अपि पृथगरूपेणैव महन्युवु इत्याद्यात्मकेन शुद्धोच्चारणाः संगताश्चावगन्तव्याः ।

बूढे को। 'ज्युठु' शब्द से 'उवर्णान्तानाम्' (सू. ३०) इससे 'इकार' करने पर 'यु' उपधा को 'इ' हो गया।

यूकारस्येसोरीत् ॥ ७७॥

उकारान्तानां लिङ्गानाम् इ-स् इत्येतयोः परयोरुपधाया यूकारस्य ईकारो भवति। चीनि। भित्तयः। चीनिस्-भित्तिम्।

उकारान्त लिङ्गों के 'इ-स्' इन से परे उपधा के 'यूकार' को 'ईकार' होता है। चीनि-भित्तयः-भित्तिएं। चीनिस्-भित्तिम्-भित्ति को।

शेषेष्वेकारः ॥ ७८ ॥

उकारान्तानां यूकारोपधायाः शेषप्रत्ययेषु एकारो भवति। चेन्यन्। भित्तीः। चेन्यौ सूतिन्। भित्तिभिः। चेन्युकु-भित्तेः। चेन्यन् प्यठ्। भित्तिषु। साधनं पूर्ववत्।

उकारान्तों को 'यूकार' उपधा के शेषप्रत्ययों में 'एकार' होता है। चेन्यन्-भित्तीः-भित्तियों को। चेन्यौ सूतिन्-भित्तिभिः-भित्तिओं से। चेन्युकु-भित्तेः-भित्ति का। चेन्यन् प्यठ्-भित्तिषु-भित्तिओं में। साधन पहले की तरह।

न गुरुत्वं ह्रस्वस्य संयोगे ॥ ७९ ॥

संयोगे परे पूर्ववर्णसंबन्धिनोह्रस्वस्य गुरुत्वं नोच्चार्यते इति परिभाष्यते। महन्युवु। पुमान्। अत्र हकारसबन्धिनः अकारस्य न गुरुत्वम्। एवं सर्वत्र विज्ञेयम्।

संयोग परे पूर्ववर्ण से सम्बद्ध ह्रस्व को गुरुत्व से उच्चरित नहीं किया जाता है, ऐसी परिभाषा है। महन्युवु-पुमान्-पुरुष। यहां 'हकार' से सम्बद्ध 'अकार' का गुरुत्व नहीं होता है। ऐसा सब जगह जानना।

इति शारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते
लिङ्गप्रकरणे लिङ्गपादः प्रथमः ॥ २।१ ॥

---

७७. न्यूलु शब्दस्य सर्वत्र। सर्वेषु प्रत्ययेषु परेषूपधाया ईकारो विधेय इत्यर्थः। नील्यन्। नील्यौ सूतिन्। इत्यादि।

अथ लिङ्गप्रकरणे ॥ २ ॥

संबुद्धिपादः ॥ २ ॥

आमन्त्रणे ॥ १ ॥

इत उत्तरं ये प्रत्ययास्त आह्वाने विज्ञातव्या: ।

इस के बाद जो प्रत्यय आएंगे, वे आह्वान अर्थात् सम्बोधन में जानना ।

पुम्मादराह्वाने विशिष्टान्नाम्नो वा पूर्वं हे ॥ २ ॥

पुंसा पुरुषस्यादरेण संबोधने कर्तव्ये जात्यादिना जुव् शब्दादिना विशिष्टान्नाम्नो वा शब्देन केवलान्नाम्नो वा पूर्वं हे शब्दः प्रयोज्यः । हे नारान् जुव् । हे गण कौल् ।

पुरुष द्वारा पुरुष के आदर से संबोधन करने पर जात्यादि से, जुव् शब्दादि से, विशिष्ट नाम से अथवा शब्द से अथवा केवल नाम से पूर्व 'हे' शब्द का प्रयोग करना चाहिए । हे नारान् जुव् । हे गण कौल !

अन्ते सा प्रत्ययश्च ॥ ३ ॥

तस्मादेव हे शब्दपूर्वाद्विशिष्टात्केवलान्नाम्नो वा आदरसंबोधन-विषये सा प्रत्ययो भवति । हे नारान् जुव् सा । हे राम कौल् सा । हे नारान् सा ।

उसी 'हे' शब्द पूर्व विशिष्ट अथवा केवल नाम से आदर संबोधनविषय में 'सा' प्रत्यय होता है । हे नारान् जुव् सा, हे राम कौल् सा, हे नारान् सा ।

हतसाहे पूर्वं वा ॥ ४ ॥

तस्मादेव विशिष्टात्केवलाद्वा नाम्नः 'हतसाहे' शब्दः वा पूर्वं प्रयोज्यः । सकारः सर्वत्र विकल्पेन बोध्यः । हतसा हे नारान् जुव् । हतसा हे राम कौल् । वा । हतसा हे नारान् जुव् सा । हतसा हे राम कौल् सा । विकल्पे तु । हसा हे नारान् जुव् । इत्यादि । केवलान्नाम्नस्तु सा प्रत्ययोऽवश्यं प्रयोज्यः । हतसा हे गण सा । हतसा हे गण इति न भवति ।

उसी विशिष्ट अथवा केवल नाम से 'हतसा हे' शब्द पूर्व प्रयुक्त करना चाहिए। 'सकार' सब जगह विकल्प से जानना। हतसा हे नारान् जुव्, हतसा हे राम कौल्। अथवा-हतसा हे नारान् जुव् सा, हतसा हे राम कौल् सा। विकल्प में तो—हसा हे नारान् जुव्, इत्यादि। केवल नाम से 'सा' प्रत्यय अवश्य प्रयुक्त करना चाहिए। हतसा हे गण सा, हतसा हे गण-यह नहीं होता है।

वा प्रत्ययः पुरोहितसामान्यदासेषु ॥ ५ ॥

पुरोहितस्य श्राद्धादिकारयितुः सामान्यजनस्य दासस्य च संबोधने कर्त्तव्ये केवलान्नाम्नो वा प्रत्ययो भवति हे शब्दश्च पूर्वं प्रयोज्यः। हे नारान् वा। केवलान्नाम्नः किम्। हे गण ब्रेठ् वा। इति तु न भवति। ब्रेठ् अत्र जातिर्विज्ञेया।

श्राद्ध आदि कराने वाले पुरोहित और सामान्यजन एवं दास के संबोधन में केवल नाम से प्रत्यय होता है और 'हे' शब्द का पहिले प्रयोग करना चाहिए। हे नारान् वा! केवल नाम से क्या? हे गण ब्रेठ् वा-यहां नहीं होता। 'ब्रेठ्' यहां जाति जानना।

हतसा हे पूर्वं वा वृद्धेषु ॥ ६ ॥

तेषु पुरोहितादिषु वृद्धेषु सत्सु हतसा हे पूर्वं प्रयोज्यः। वा शब्दात् हतवा हे च। हतसाहे सहन् वा। हतवा हे जन वा।

उन पुरोहित आदि वृद्धों के होने पर 'हतसा हे' पहिले प्रयुक्त होना चाहिए और 'वा' शब्द से 'हतवा हे'। हतसा हे सहज़् वा-हतवा हे ज़न वा।

आ प्रत्ययः कनिष्ठनीचयोः ॥ ७ ॥

कनिष्ठस्य नीचस्य च संबोधने कर्त्तव्ये विशिष्टात्केवलान्नाम्नो वा आ प्रत्ययः स्यात्।

कनिष्ठ और नीच के संबोधन में विशिष्ट अथवा केवल नाम से 'आ' प्रत्यय होता है।

हताशब्दः पूर्वं च ॥ ८ ॥

स्पष्टम्। हता माना। हता मान कौला। हता गल्या। तृतीयस्यात्र गलु शब्दस्योकारान्तत्वादुवर्णान्तानामिकारः (सू२. ।१।३०) इत्यनेन सूत्रेण इकारः। यत्वम्। व्यञ्जनं परेण संधेयम् (सू. १।३)। इत्थं पुंल्लिङ्गानां स्त्रीलिङ्गानां च यत्किंचिद्द्वितीयादिष्वागमादिकमभिहितं तत्सर्वं संबोधने चावधार्यम्।

स्पष्ट है-हता माना, हता मान कौला। हता गल्या-यहां तृतीय 'गलु' शब्द के 'उकारान्त' होने से 'उवर्णान्तानामिकारः (सू२.।१। ३०) इस सूत्र से 'इकार' और 'य' हुआ। 'व्यञ्जनं परेण संधेयम् (सू. १।३)। इस प्रकार पुंल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्गों का जो कुछ द्वितीयादि में आगमादिक कहा गया है, वह सब संबोधन में जानना।

हा दूरविपादयोराप्रत्ययस्य चोकारः ॥ ९ ॥

स्पष्टम्। हा नारानो। हा काको।

स्पष्ट है—हा नारानो, हा काको!

हतो वा ॥ १० ॥

नाम्नः पूर्वं दूरतो विपादतो वा संबोधने विधेये सति हतो शब्दः पूर्वं वा प्रयोज्यः। हतो पर्यो।

नाम से पहिले दूर से अथवा थोड़ी दूरी से संबोधन किए जाने पर 'हतो' शब्द का पहिले प्रयोग करना चाहिए। जैसे-हतो पर्यो!

माजू प्रत्ययो वृद्धस्त्रियो नाम्नः ॥ ११ ॥

पुरुषेण वृद्धाया ज्येष्ठायाः स्त्रियाः संबोधने कर्त्तव्ये केवला-नाम्नो माजू प्रत्ययो भवति।

पुरुष से बूढ़ी और अपने से बहुत बड़ी स्त्री का संबोधन किए जाने पर केवल नाम से 'माजू' प्रत्यय होता है।

बिञ् सामान्यायाः ॥ १२ ॥

सामान्यायास्तुल्यायाश्च स्त्रिया आह्वाने बिञ् प्रत्ययः अग्रे प्रयोज्यः।

सामान्य और समान अवस्था वाली स्त्री के बुलाने के लिए 'बिञ्' प्रत्यय आगे प्रयुक्त करना चाहिए।

हतपूर्वौ पूर्वे च ॥ १३ ॥

तौ माजू बिञ् प्रत्ययौ हतशब्दः पूर्वो ययोस्तथाविधौ पूर्वं च प्रयोज्यौ। हतमाजू पार्वत् माजू। हतबिञ् सरस्वत् बिञ्। वा। हत बिञ् पार्वत माजू।

'तौ माजू' और 'बिञ् प्रत्यय 'हत' शब्द पूर्व और बाद में प्रयुक्त होना चाहिए। हतमाजू पार्वत माजू, हतबिञ् सरस्वत बिञ् अथवा-हतबिञ् पार्वत माजू।

य् प्रत्ययः कनिष्ठनीचयोः ॥१४॥

पुरुषेण कनिष्ठाया नीचाया वा संबोधने कर्त्तव्ये नाम्नः य् प्रत्ययो भवति । तत्र नीचायां वृद्धायां सत्यां पूर्वप्रयुक्तप्रत्ययादग्रे वा प्रयोज्यः ।

पुरुष से अपने से छोटी वा नीच स्त्री के संबोधन में नाम से 'य्' प्रत्यय होता है । वहां नीच वृद्धा के होने पर पूर्वप्रयुक्तप्रत्यय से आगे प्रयोग करना चाहिए ।

हा हत हता पूर्वः पूर्वे च ॥१५॥

स एव य् प्रत्ययः हा पूर्वो हतपूर्वो हतापूर्वो वा नाम्नः पूर्वं प्रयोज्यः । हाय् वछरिय् । हतय् बछरिय् । हताय् वछरिय् ।

वही 'य्' प्रत्यय हा से पूर्व, हत से पूर्व अथवा हता से पूर्व, नाम से पूर्व प्रयुक्त होना चाहिए । हाय वछरिय्, हतय् बछरिय्, हताय् बछरिय् ।

स्त्रियादराहूते पुंनाम्नो वा प्रत्ययः ॥१६॥

स्त्रिया पुरुषस्यादरेणाह्वाने कर्तव्ये पुंनाम्नो वा प्रत्ययो भवति । तत्र प्रायः पुरोहितादिष्वेवात्र प्रयुज्यते ।

स्त्री से पुरुष का आदर पूर्वक संबोधन करने पर पुं नाम से 'वा' प्रत्यय होता है, वहां प्रायः पुरोहित आदि में हो प्रयुक्त होता है ।

औ प्रत्ययः प्रियकनिष्ठयोः ॥१७॥

स्पष्टम्-स्पष्ट है ।

हतपूर्वौ पूर्वं च ॥१८॥

तौ वा औ प्रत्ययौ हतपूर्वौ हतशब्दः पूर्वं ययोस्तथाविधौ पूर्वं च प्रयोज्यौ । हतवा हिमत् वा हतौ हिमत् कोलौ । हतवा काकौ । हतौ काकौ ।

'तौ' वा 'औ' प्रत्यय 'हत' शब्द पहिले प्रयुक्त कर इनका प्रयोग करना चाहिए । हतवा हिमत्त् वा-- हतौ हिमत् कोलौ । हतवा काकौ । हतौ काकौ ।

अ वा ॥१९॥

नाम्नः अग्रे 'अ' प्रत्ययो 'वा' प्रयोज्यः । हतवा काक । हतौ गण ।

नाम से आगे 'अ' प्रत्यय और 'वा' का प्रयोग करना चाहिए । हतवा काक-हतौ गण ।

बाय बायौ सामान्यसंज्ञायाश्च ।।२०।।

सामान्यसंज्ञाया लोकेषु ख्याताया: परौ बायबायौ वा प्रयोज्यौ। हतवा महादेव बाय। सामान्यसंज्ञाया: किम्। हत वा काक बाय। इति न भवति। काक्शब्दस्य पित्रादिष्वेव विशिष्टत्वात्।

लोगों में प्रसिद्ध सामान्य संज्ञा से परे 'बाय वा बायौ' का प्रयोग करना चाहिए। हत वा महादेव बाय—हतौ महादेव बायौ। सामान्य संज्ञा का क्या? हत वा काक बाय-यह नहीं होता। काक शब्द की पित्रादि में विशेषता होने से।

दूरे पूर्वं हतोव् च ।।२१।।

स्त्रिया पुरुषस्याह्वाने दूरत: कर्तव्ये हतोव् शब्दः पूर्वं प्रयोज्य:। हतोव् मनसा रामौ।

स्त्री से पुरुष का संबोधन दूर से करने पर 'हतोव्' शब्द पहिले प्रयुक्त होना चाहिए। हतोव् मनसा रामौ।

प्रत्याह्वाने म्लेच्छयापि ।।२२ ।।

म्लेच्छस्त्रिया भर्तुराह्वाने कर्तव्ये नाम्नो हतोव् शब्दः प्रयुज्यते। म्लेच्छ स्त्री से पति का संबोधन करने पर नाम से 'हतोव्' शब्द प्रयुक्त होता है।

ब्राह्मण्यां पतिसंबोधनाभावः ।।२३।।

केवलो हतशब्दः क्वचिन्नकट्ये ।।२४।।

क्वचिद्विविक्तनिकटस्थस्य भर्तुराह्वाने कर्तव्ये नामजात्यादि-रहित: केवलो हतशब्द: प्रयुज्यते।

कहीं एकान्त में समीप स्थित पति के संबोधन में नाम-जाति-आदि से रहित केवल 'हत' शब्द का प्रयोग करना चाहिए।

स्त्रीसंबोधने पुंवत् ।।२५ ।।

स्त्रिया स्त्रिय: सबोधने कर्तव्ये पुंवत् प्रत्यया भवन्ति। यथा पुरुषेण स्त्रीसंबोधनं क्रियते तथैव स्त्रियापीत्यर्थ:।

स्त्री से स्त्री का संबोधन करने पर पुंल्लिग की तरह प्रत्यय होते हैं। जैसे पुरुष से स्त्री का संबोधन किया जाता है, वैसे ही स्त्री से भी।

अङ्गीकारे संबोधनमुख्यप्रत्यया आहन्शब्दात्परा उक्त्युप-क्रमे ।। २६ ।।

अङ्गीकारे कर्त्तव्ये प्रोक्ताः संबोधनस्य मुख्याः प्रत्यया उक्तेरारम्भे आहन् शब्दात्परे प्रयोज्याः। आहन्सा। आहन्वा। आहनो। आहन्। माजू। आहन् बिञ्। आहनिय्। आहनू। आहनुव्।

अङ्गीकार करने पर कहे गए संबोधन के मुख्य प्रत्यय उक्ति के आरम्भ में 'आहन्' शब्द से परे प्रयुक्त करने चाहिए। आहन्सा, आहन्वा, आहनो, आहन् माजू, आहन् बिञ्, आहनिय्, आहनू, आहनुव्।

हपूर्वाश्च केवलक्रियाया अन्ते ॥ २७ ॥

केवलक्रियाया अङ्गीकारे कर्तव्ये ते सा आदि प्रत्यया ह पूर्वाः केवलक्रियायाश्चान्ते प्रयोज्याः।

केवल क्रिया के अङ्गीकार में 'ते-सा' आदि प्रत्यय 'ह' से पूर्व केवल क्रिया के अन्त में प्रयुक्त करना चाहिए।

वर्तमानायां प्रत्ययादावेव ॥ २८ ॥

वर्तमानायां विभक्तौ ते हपूर्वाः सा आदिप्रत्ययाः प्रत्ययात्पवं प्रयोज्याः। आहन्सा करान् हसा छुह्।

वर्तमान विभक्ति में वे 'ह' पूर्व 'सा' आदि प्रत्यय प्रत्यय से पूर्व प्रयुक्त करने चाहिए। जैसे-आहन्सा करान् हसा छुह्।

तदभावे नपूर्वाः ॥ २९ ॥

तस्याङ्गीकारस्याभावे सति न पूर्वा वाक्यारम्भे क्रियान्ते च प्रयोज्याः। नवा करान् नवा छुह्। एवमन्यत्।

उस अङ्गीकार के अभाव होने पर 'न' से पूर्व वाक्य के आरम्भ में और क्रिया के अन्त में प्रयोग करना चाहिए। न वा करान् नवा छुह्। इसी तरह और।

कर्मयुक्तायाः कर्मान्ते ॥ ३० ॥

कर्मयुक्तायाः क्रियाया अङ्गीकारे अभिधेये सति वाक्यारम्भे आहन्सो आदयो भवन्ति कर्मान्ते तु हसा आदयो भवन्ति। आहन्सा बत हसा छह रनान्।

कर्मयुक्ता क्रिया के अङ्गीकार में अभिधेय होने पर वाक्यारम्भ में आहन्सा आदि होते हैं, कर्मान्त में तो हसा आदि होते हैं। आहन्सा बत हसा छुह् रनान्।

कर्तृयुक्तायाः कर्तुरन्ते च ॥ ३१ ॥

कर्तृकर्मयुक्तायाः क्रियायाः अङ्गीकारे गम्यमाने वाक्यारम्भे

आह्न्सा आदयः प्रयोज्याः कर्तुरन्ते हसा आदयो भवन्ति । आह्न्सा नारान् हसा छुह् पूथि परान् । आह्न्वा राम हवा छुस् न्यन्द्र् करान् । इत्यादयो बुद्धिगता स्वयमूह्याः ।

कर्तृ-कर्म युक्त क्रिया के अङ्गीकार में गम्यमान वाक्यारम्भ में 'आह्न्सा' आदि प्रयोग होने चाहिए । कर्ता के अन्त में 'हसा' आदि होते हैं । आह्न्सा नारान् हसा छुह् पूथि परान् । आह्न्वा राम हवा छुस् न्यन्द्र् करान् । इत्यादि बुद्धिगत स्वयं समझ लेना ।

इति शारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते लिङ्गप्रकरणे संबुद्धिपादो द्वितीयः ॥ २।२ ॥

अथ लिङ्ग प्रकरणे ॥२॥

सर्वनाम पादः ॥३॥

तिह्, यिह्, क्याह्, हह्, हुह्, शब्दाः पुंस्यप्राणिनि ॥ १ ॥

प्राणिव्यतिरिक्तानां तदादीनां पुंसि तिह् आदयः शब्दा भवन्ति। तद् शब्दस्य तिह्। यद् शब्दस्य यिह्। किम् शब्दस्य क्याह्। इदम् शब्दस्य हह्। अदस् शब्दस्य हुह् शब्दो बोध्यः। प्रथमकवचनं सर्वत्र लिङ्गवदेव ज्ञेयम्।

प्राणियों से अतिरिक्त तदादियों के पुंल्लिङ्ग में तिह् आदि शब्द होते हैं। तद् शब्द का तिह्', यद् शब्द का 'यिह्', किम् शब्द का 'क्याह', इदम् शब्द का 'हह्' और अदस् शब्द का 'हुह्' शब्द जानना। प्रथमा के एकवचन को सब जगह लिङ्ग की तरह ही जानना।

सुह्, युस् कुस् इह्, हुह्, शब्दाश्च प्राणिनि ॥२ ॥

प्राणिनां मनुष्यादीनां तदादिशब्देषु सुह् आदिशब्दा अवधार्याः। सुह्। सः। युस्। यः। कुस्। कः। इह। अयम्। छुह्। असौ। अत्राप्येकवचनं लिङ्गवत्।

मनुष्य आदि प्राणिओं के लिए तदादि शब्दों में सुह् आदि शब्दों का प्रयोग करना। सुह्-सः-वह। युस्-यः-जो। कुस्-कः-कौन। इह-अयम्-यह। छुह्-असौ-वह। यहां पर भी एकवचन लिङ्गानुसार ही।

उकारोपधायाः स्त्रियां वत्वमप्राणिनि च ॥ ३ ॥

प्राणिनां स्त्रीलिङ्गानां तदादिशब्देष्वभिधेयेषु सुह् आदि शब्दानामुपधाभूतो य उकारस्तस्य वत्वं भवति अप्राणिनि स्त्री-लिङ्गे च। स्वह्। सा। वा। स। सा। इह्। असौ।

स्त्रीलिङ्ग प्राणियों के तदादि शब्द अभिधेयों में सुह् आदि शब्दों के उपधाभूत जो 'उकार' उसे 'व' होता है प्राणि-व्यतिरिक्त स्त्रीलिङ्ग में। स्वह, सा, वा, स, सा, इह्, असौ।

युस्कुसोरन्त्यस्य द्वित्वमकारागमश्च ॥४॥

युस् कुस् इत्येतयोः शब्दयोः स्त्रियामन्त्यस्य द्वित्वं भवति अकारागमश्च । य्वस्स । या । कस्स । का ।

'युस्, कुस्' इन शब्दों में स्त्री लिङ्ग में अन्त के अक्षर को द्वित्व होता है और 'अकार' का आगम । जैसे-य्वस्स-या-जो स्त्री । कस्स-का-कौन स्त्री ।

उभयेषां तम् यम् कम् इम् हुमो द्वितीयाद्येकवचनेषु ॥५॥

उभयेषां प्राणिवाचिनामप्राणिवाचिनां च तिहादिशब्दानां द्वितीयादीनामेकवचनेषु क्रमेण तम् आदय आदेशाः स्युः । तमिस् । तम् । यमिस् । यम् । कमिस् । कम् । इमिस् । इमम् । हुमिस् । अमुम् । सुह् शब्दादिभ्यो द्वितीयायां स्नाव् (सू० २।१।३८) इत्यादिना स्प्रत्ययः । स्प्रत्यय इकारागम (सू० १७) इति इकारागमः । अनेन तम् आदाय आदेशाः । केषांचिन्मते इह शब्दस्य न्वम् आदेशो भवति । तन्मते । न्वमिस् । एनम् । इति स्वरूपं भवति ।

दोनों प्राणिवाचक और अप्राणिवाचक 'तिह्' आदि शब्दों के द्वितीयादि के एकवचनों में क्रम से 'तम्' आदि आदेश हों । जैसे-तमिस्-तम्-उसे । यमिस्-यम्-जिसे । कमिस्-कम्-किसे । इमिस्-इमम्-इसे । हुमिस्-अमुम्-उसे । 'सुह्' शब्द आदि से 'द्वितीयायां स्नाव्' (सू० २।१।३८) इत्यादि से 'स्' प्रत्यय । स्प्रत्यय इकारागमः (सू० १७) इससे 'इकार' का आगम और इससे 'तम्' आदि आदेश । कइयों के मत में 'इह' शब्द को 'न्वम्' आदेश होता है । उनके मत में 'न्वमिस्-एनम्-यह स्वरूप होता है ।

अन्त्यस्य वाऽमिसोः ॥ ६ ॥

अन्त्यस्य 'हुह्' शब्दस्य इकारसकारयोः परयोर्विकल्पेन 'अम्' आदेशः स्यात् । अमिस् । अमुम् । अमि । अमुना । इसोः किम् । हुमौ । अमीभिः ।

अन्त के 'हुह्' शब्द के 'इकार-सकार' के परे होने पर विकल्प से 'अम्' आदेश होता है । अमिस्-अमुम्-उसे । अमि-अमुना-उससे । 'इ' और 'स' का क्या ? हुमौ-अमीभिः-उन्हीं से ।

अप्राणिनि स्प्रत्ययलोपस्तकारादेशश्च ॥ ७ ॥

अप्राणिनि अभिधेये सति तम् आदीनां स् प्रत्ययलोपो भवति ।

अन्त्यस्य च तकारादेशः स्यात्। तथ् छुह् चटान्। तच्छिनत्ति। यथ्। यत्। कथ्। किम्। इथ्। इदम्। हथ्। अदः। तिह् आदि-शब्देभ्यो द्वितीयायां स्नाव् (सू० २।१।३८) इति स्प्रत्ययः। उभये-षाम् (सू० ५) इत्यादि सूत्रेण तम् आदय आदेशाः। अनेन स्प्रत्यय-लोपः अन्त्याक्षराणां तकारः। वर्गप्रथमान्तानाम् (सू० २।१।६६) इति सूत्रेण तस्य थः।

प्राणि से अतिरिक्त अभिधेय होने पर 'तम्' आदि के 'स्' प्रत्यय का लोप होता है और अन्त के अक्षर को 'तकार' का आदेश होता है। तथ् छुह् चगन्-तच्छिनत्ति-उसे काटता है। यथ्-यत्-जो। कथ्-किम्-क्या। इथ्-इदम्-यह। हथ्-अदः-वह। 'तिह्' आदि शब्दों से 'द्वितीयायां स्नाव्' (सू० २।१।३८) इससे 'स्' प्रत्यय उभयेषाम् (सू० ५) इत्यादि सूत्र से 'तम्' आदि आदेश और इससे 'स्' प्रत्यय का लोप तथा अन्त के अक्षरों को 'तकार'। वर्गप्रथमान्तानाम् (सू० २।१।६६) इस सूत्र से 'त' को 'थ' हुआ।

च्ह् ब्वहोश्च्यम्यौ च ॥ ८ ॥

त्वम् अहम् इति शब्दवाचकयोः 'च्ह्-ब्वह्' शब्दयोर्द्वितीया-दीनामेकवचनेषु क्रमेण च्य-म्य आदेशौ भवतः स्प्रत्ययलोपश्च। च्य छह् वनान्। त्वां वदति। च्ह् शब्दाद्द्वितीयायां स्नाव् (सू० २।१।-३८) इति स्प्रत्ययः। अनेन च्य आदेशः स्प्रत्ययलोपश्च। एव-मन्यत्।

त्वम्-अहम्-इन वाचकशब्दों में 'च्ह्-ब्वह' शब्दों में द्वितीया आदि के एकवचनों में क्रम से 'च्य-म्य' आदेश होते हैं और 'स्' प्रत्यय का लोप। च्य छह् वनान्-त्वां वदति-तुझे कहता है। 'च्ह्' शब्द से 'द्वितीयायां स्नाव् (सू० २।१।३८) इससे 'स्' प्रत्यय और इससे 'च्य' आदेश एवं 'स्' प्रत्यय का लोप हुआ। इसी तरह और।

प्रत्ययस्य लोपो द्वितीयाकर्तृतृतीययोः ॥ ९ ॥

च्ह् ब्वह् इत्येताभ्यां शब्दाभ्यां द्वितीयायां कर्तृतृतीयायां च प्रत्ययस्य लोपः स्यात्। च्य छुह् वनान्। त्वां वदति। त्वह्य छुह् वनान्। युष्मान् वदति। चय वनुथ्। त्वया प्रोक्तम्। त्वह्य वनुथ्। युष्माभिः प्रोक्तम्।

'च्ह्-ब्वह्' इन शब्दों से द्वितीया में और कर्तृतृतीया में प्रत्यय का लोप होता है। च्य छुह् वनान्-त्वां वदति-तुझ कहता है। त्वह्य छुह् वनान्-युष्मान् वदति-तुम्हें कहता है। च्य वनुथ्-त्वया प्रोक्तम्-तूने कहा। त्वह्य वनुथ्-युष्माभिः प्रोक्तम्-तुमने कहा।

सश्च ॥ १० ॥

च्ह् ब्वह् शब्दाभ्यां स् इत्यस्य लोपो भवति च शब्दात्कर्तृ-तृतीयासंबन्धिनोः इ औ प्रत्यययोश्च लोपः स्यात्। च्य सूतिन्। त्वया सह। म्य सूत्य्। मया सह। च्ह् ब्वह् शब्दाभ्यां इ सूतिन् प्रत्ययः। च्ह्ब्वहोश्च्यम्यौ च (सू० ८) इति सूत्रेण च्य म्य आदेशौ। प्रत्ययस्य लोपः (सू० ९) इत्यनेन इकारस्य लोपः। अनेन स् लोपः।

'च्ह्-व्वह्' शब्दों से 'स्' का लोप होता है और शब्द से कर्तृ-तृतीया से सम्बद्ध 'इ-औ' प्रत्यय का लोप होता है। च्य सूतिन्-त्वया सह-तेरे साथ। म्य सूत्य्-मया सह-मेरे साथ। 'च्ह् ब्वह्' शब्दों से 'इ सूतिन्' प्रत्यय और च्ह्ब्वहोश्च्यम्यौ च (सू. ८.) इस सूत्र से 'च्य-म्य' आदेश तथा प्रत्यय स्य लोपः (सू ९) इससे 'इकार' का लोप एवं 'स्' का लोप हुआ।

षष्ठ्यामन्त्यस्वरस्य च्यख्यातत्वं च ॥ ११ ॥

च्ह्-ब्वह् शब्दाभ्यां षष्ठ्यामन्त्यस्वरस्य लोपो भवति च्यसंब-न्धिनश्चकारस्य ख्यातत्वं च स्यात्। च्योनु। तव। म्योनु। मम। च्ह्-ब्वह् लिङ्गाभ्यां मनुष्यसंज्ञयोनु (सू० २।१।५०) इति उनु प्रत्ययः, च्ह्ब्वहोश्च्यम्यौ च (सू. ८) इति च्य-म्य आदेशौ। अनेन अकार-लोपः। प्रत्ययादेरोत्पुंसि (सू० १३) इत्युकारस्यौकारः। चकारस्य च ख्यातता बोध्या।

'च्ह्-ब्वह्' शब्दों से षष्ठी में अन्त के स्वर का लोप होता है और 'च्य' से सम्बद्ध 'चकार' को ख्यातत्व हो। च्योनु-तव-तेरा। म्योनु-मम-मेरा। च्ह्-ब्वह् लिङ्गाभ्यां मनुष्यसंज्ञयोनु (सू. २।१।५०) इससे 'उनु' प्रत्यय और 'च्ह्ब्वहोश्च्यम्यौ च' (सू० ८) से 'च्य-म्य' आदेश तथा इससे 'अकार' का लोप हुआ। 'प्रत्ययादेरोत्पुंसि (सू. १३) से 'उकार' को 'ओकार' और 'चकार' की ख्यातता जानना।

स्त्रियामाकारः पुंबहुत्वे च ॥ १२ ॥

स्त्रियां वर्तमानाभ्यां च्ह्-ब्वह् शब्दाभ्यां षष्ठ्यामेकत्वबहुत्वयो-

रन्त्यस्वरस्याकारो भवति पुंल्लिङ्गस्य वहूवचनेऽपि । च्याञ् । तव । स्त्रीलिङ्गवाचिन. शब्दाः । च्यानि न्यचिवि । तव पुत्राः । म्यानि न्यचिवि । मम पुत्राः । साधनं पूर्ववत् ।

स्त्रीलिङ्ग के वर्तमान 'चह्-व्वह्' शब्दों से षष्ठी के एकवचन और वहुवचन में भी 'अकार' होता है। च्याञ्-तव-तेरा। स्त्रीलिङ्ग-वाची शब्द। च्याञ्-तव-तेरा। स्त्रीलिङ्गवाची बहुत-शब्द। च्यानि न्यचिवि-तव पुत्राः-तेरे बेटे। म्यानि न्यचिवि-मम पुत्राः-मेरे बेटे। साधन पहले की तरह।

प्रत्ययादेरोत्पुंसि ॥ १३ ॥

तयोः पुंल्लिङ्गस्य एकवचने प्रत्ययादेरुकारस्य ओकारो भवति । च्योनु । तव । म्योनु । मम । साधितचरावेव ।

उन दोनों में पुंल्लिङ्ग के एकवचन में प्रत्ययादि के 'उकार' को 'ओकार' होता है। च्योनु-तव-तेरा। म्योनु-मम-मेरा।

प्रयोगलिङ्गस्यौकारोपधाया आत्वं सर्वत्र ॥ १४ ॥

सर्वनामशब्दानां यत्र प्रयोगलिङ्गस्य उपधाभूत ओकारः स्यात्तत्र आत्वं भवति । च्यानि सूतिन् । त्वद्धेतुना । म्यानि सूतिन् । मद्धेतुना । सानि सूतिन् । अस्मद्धेतुना । तहन्दि सूतिन् । युष्मद्धेतुना । च्योनु । म्योनु । सोनु । इति प्रयोगलिङ्गेभ्यः इ सूतिन् प्रत्ययः । उवर्णान्तानामिकारः (सू० २।१।३०) इति उमात्राया इकारः । इतो लोपः (सू० २।१।६) इति इ प्रत्ययस्य लोपः । अनेनोपधाया आत्वम् । च्यानि सन्दि सूतिन् । त्वदीयेन । म्यानि सन्दि सूतिन् । मदीयेन । अत्र च्योनु म्योनु शब्दाभ्यां पूर्वं सन्दु प्रत्ययः । उवर्णान्तानाम् (सू० २।१।३०) इति इकारः । अनेनोपधाया आकारः । षष्ठीप्रयोगात् इ-सूतिन् प्रत्ययः । शेषं पूर्ववत् । वहुत्वे तु । च्यान्यौ सूतिन् । त्वदीयैः । म्यान्यौ सूतिन् । मदीयैः । तुहन्द्यौ सूतिन् । युष्मदीयैः । सान्यो सूतिन् । अस्मदीयैः । तृतीयाया औ सूतिन् प्रत्यय एव भवति । तुहन्दि सन्द्यौ सूतिन् । एवं सर्वनामशब्देषु सर्वत्र बोध्यम् ।

सर्वनाम शब्दों के यहां प्रयोगलिङ्ग का उपधाभूत 'ओकार' हो, वहां 'आ' होता है। च्यानि सूतिन्-त्वद्धेतुना-तेरे कारण। म्यानि-सूतिन्-मद्धेतुना-मेरे कारण। सानि सूतिन्-अस्मद्धेतुना-हमारे कारण। तहन्दि सूतिन्-युष्मद्धेतुना-तुम्हारे कारण। च्योनु, म्योनु,

सोनु-इन प्रयोगलिङ्गों से 'इ सूतिन्' प्रत्यय और उवर्णान्तानामिकार: (सू० २।१।३०) से 'उ' मात्रा को 'इकार' तथा 'इतो लोपः' (सू० २।१।६) से 'इ' प्रत्यय का लोप एवं इससे उपधा को 'आ' हुआ। च्यानि सन्दि सूतिन्-त्वदीयेन-तेरे से। म्यानि सन्दि सूतिन्-मदीयेन-मेरे से। यहां 'च्योनु-म्योनु' शब्दों से पूर्व 'सन्दु' प्रत्यय और 'उवर्णान्तानाम्' (सू० २।१।३०) से 'इकार' तथा इससे उपधा का 'आकार'। षष्ठीप्रयोग से 'इ सूतिन्' प्रत्यय हुआ। बाकी पहले की तरह। बहुवचन में तो च्यान्यौ सूतिन्-त्वदीयै:-तुम्हारों से। म्यान्यौ सूतिन्-मदीयै:-हमारों से। तुहन्द्यौ सूतिन्-युष्मदीयै:-तुम्हारों से। सान्यो सूतिन्-अस्मदीयै:-हमारों से। तृतीया का 'औ सूतिन्' प्रत्यय ही होता है। तुहन्दि सन्द्यौ सूतिन्। इस प्रकार सर्वनामशब्दों में सब जगह जानना।

त्वह्यस्यौ बहुत्वे ॥ १५ ॥

च्ह्-ब्वह् शब्दयो: सर्वत्र बहुत्वे त्वहि असि आदेशौ भवतः। त्वहि। यूयम्। असि। वयम्। त्वह्य। युष्मान्। अस्य। अस्मान्। द्वितीयायां न्प्रत्यये सर्वत्र (सू० २।१।११) इत्यकारागमे कृते प्रत्ययस्य लोप: (सू. ६) इत्यादिसूत्रेण नकारलोप:। यत्वम्।

'च्ह्-ब्वह्' शब्दों में हर जगह बहुवचन में 'त्वहि-असि' आदेश होते हैं। त्वहि-यूयम्-तुम। असि-वयम्-हम। त्वह्य-युष्मान्-तुम्हें। अस्य-अस्मान्-हमें। द्वितीया में 'न्प्रत्यये सर्वत्र' (सू० २।१।११) से 'अकार' का आगम करने पर 'प्रत्ययस्य लोप:' (सू ६) इत्यादि सूत्र से 'नकार' का लोप और 'य' हुआ।

तिम् यिम् कम् इम् हुमश्चोभयेषाम् ॥ १६ ॥

उभयेषां प्राणिवाचिनामप्राणिवाचिनां च शब्दानां सर्वत्र बहुत्वे तिम् आदय आदेशा भवन्ति। तिमन्। तान्। तानि। यिमन्। यान्। यानि। कमन्। कान्। कानि। इमन्। इमान्। इमानि। हुमन्। अमून्। अमूनि। तिह् आदिशब्देभ्यो। द्वितीयायां स्नाव् (सू० २।१।३८) इति न् प्रत्ययः। अनेन तिम् आदय आदेशाः। न्प्रत्यये सर्वत्र (सू० २।१।१२) इत्यकारागम:। एवं तिमौ सूतिन्। तिहन्दि पुछ्य। तिमौ प्यठ। तिहन्दु। तिमन् प्यठ्। इत्यादि विज्ञेयम्।

दोनों प्राणिवाचक और अप्राणिवाचक शब्दों के सब जगह वहुवचन में 'तिम्' आदि आदेश होते हैं। तिमन्-तान्-तानि-उन्हें। यिमन्-यान्-यानि-जिन्हें। कमन्-कान्-कानि-किन्हें। इमन्-इमान्-इमानि-इन्हें। हुमन्-अमून्-अमूनि-उन्हें। 'तिह्' आदि शब्दों मे 'द्वितीयायां स्नाव्' (सू० २।१।३८) से 'न्' प्रत्यय और इससे 'तिम्' आदि आदेश तथा 'न्प्रत्यये सर्वत्र' (सू० २।१।१२) से 'अकार' का आगम हुआ। इसी तरह-तिमौ सूतिन्, तिहन्दि पुछ्य, तिमौ प्यठ, तिहन्दु, तिमन् प्यठ्, इत्यादि जानना चाहिए।

स्प्रत्यय इकारागमः ॥ १७ ॥

तिह् आदिशब्दानां सकारे परे इकारागमो भवति। तमिस्। तम्। एवं सर्वेषाम्। अत्र लोपविधेर्वलीयस्त्वात् अप्राप्तिविषये सकारस्य लोपे कृते प्रोक्त आगमो न भवतीति।

'तिह्' आदि शब्दों को 'सकार' परे रहते 'इकार' का आगम होता है। तमिस्-तम्-उसे। इसी तरह सभी के। यहां लोपविधि के शक्तिशाली होने से अप्राप्तिविषय में 'सकार' का लोप कर देने पर कहा गया आगम नहीं होता है।

त्वहेर्हन्दौ हिलोपः पुंस्त्रियोर्वस्योत्वं च ॥ १८ ॥

च्हह् शब्दवहुत्वनियतस्य त्वहेः पुंल्लिङ्गे स्त्रीलिङ्गे च हन्दौ परे हिलोपो भवति वकारस्य च उत्वं भवति। पुंल्लिङ्गकथनात् इकारस्य सकारनिषेधः। तहन्दुः। युष्माकं पुं०। तुहन्जू। युष्माकं स्त्री। स्हन्द् स्हन्जू प्रत्ययौ। एकत्र सश्च (सू० १०) इति। अपरत्र स्लोपः स्त्रियां सर्वत्र (सू० २।१।४०) इति स् लोपः। अनेन हिलोपः वकारस्य उत्वं च।

च्हह् शब्द के वहुवचन में निश्चित 'त्वहेः' पुंल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग में 'हन्दौ' परे रहते 'हि' का लोप होता है और वकार को 'उ' हो जाता है। पुंल्लिङ्ग कहने से 'इकार' को 'सकार' का निषेध। तहन्दुः-युष्माकं (पुंल्लिङ्ग)-तुम्हारा। तुहन्जू-युष्माकं स्त्री-तुम्हारी स्त्री। स्हन्दु और स्हन्जू प्रत्यय। एक जगह 'सश्च' (सू० १०) इति। दूसरी जगह 'स्' का लोप। 'स्त्रियां सर्वत्र' (सू० २।१।४०) से 'स्' का लोप। इससे 'हि' का लोप और 'वकार को 'उ' हुआ।

असेराद्यन्तस्वरयोर्लोपाकारावुनुञोः ॥ १६ ॥

ब्वह् शब्दस्य वहुत्वे नियतस्य असि पदस्य उनु ञ् इत्येतयोः परयोरादिस्वरस्य लोपः अन्त्यस्वरस्य चाकारो भवति । सोनु । अस्माकम् । एकवचनम् । सानि । अस्माकं । वहुवचनम् । ब्वह् शब्दात् उनु नि प्रत्ययौ । त्वह्यस्यौ वहुत्वे (सू० १५) इति असि आदेशः । अनेनाकारस्य लोपः । इकारस्य च अकारः । एकत्र प्रत्ययादेरोत्पुंसि (सू० १३) उकारस्य ओकारः । षष्ठ्यामन्त्यस्वरस्य (सू० ११) इत्यादिना अकारलोपः । अपरत्र स्त्रियामाकारः पुं. वहुत्वे च (सू० १२) इति आकारः । स च इदन्तत्वादप्रसिद्धः (सू० २।१।७०) । एवं । साञ् । अस्माकम् । एकवचनं स्त्रीलिङ्गवाचकम् । सात्र । अस्माकम् । वहुवचनं स्त्रीलिङ्गवाचकम् । साधनं पूर्ववत् ।

ब्वह् शब्द के वहुवचन में नियत असि पद के 'उनु ञ्' ये परे होने पर आदि स्वर का लोप और अन्त के स्वर को 'अकार' होता है । सोनु-अस्माकम्-हमारे । एकवचन । सानि-अस्माकम्-हमारे । वहुवचन । ब्वह् शब्द से 'उनु-नि' प्रत्यय । त्वह्यस्यौ वहुत्वे (सू० १५) से 'असि' आदेश और इससे 'अकार' का लोप और 'इकार' को 'अकार' हुआ । एक जगह 'प्रत्ययादेरोत्पुंसि (सू० १३) से 'उकार' को 'ओकार' हुआ । षष्ठी में अन्त के स्वर के (सू० ११) इससे 'अकार' का लोप और दूसरी जगह स्त्रीलिङ्ग में 'आकार' पुंल्लिङ्ग-वहुवचन में होता है (सू० १२) के नियमानुसार 'आकार' हुआ और वह इदन्त होने से अप्रसिद्ध है (सू० २।१।७०) इस तरह । साञ् अस्माकम्-हमारे । एकवचन-स्त्रीलिङ्गवाचक । सात्र-अस्माकम्-हमारे । वहुवचन स्त्रीलिङ्गवाचक । साधन पहले की तरह ।

प्राणिनि मिलोपो वा सकारे ॥ २० ॥

प्राणिवाचिनां तदादिशब्दानां सकारे परे मिकारस्य बिकल्पेन लोपो भवति । तस् । तम् वा तस्य । तमिस् । तम् वा तस्य । तसन्दु । तस्य । तमि सन्दु । तस्य । सुह् शब्दात् स्प्रत्ययः । उभयेषाम् (सू० ५) इति तम् आदेशः । स्प्रत्यये इकारागमः (सू० १७) । अनेन एकत्र मिलोपः । एवं । यस् । यम् वा यस्य । यमिस् । यम् वा यस्य । यसन्दु । यस्य । यमि सन्दु । यस्य । कस् । कम् वा कस्य । कमिस् । कम् वा कस्य । कसन्दु । कस्य । कमि सन्दु । कस्य ।

प्राणिवाचक तदादि शब्दों के 'सकार' परे रहते 'मिकार' का विकल्प से लोप होता है। तस्-तम् वा तस्य-उसे वा उसके। तमिस्-तम् वा तस्य-उसे वा उसके। तसन्दु-तस्य-उसके। तमि सन्दु-तस्य-उसके। 'सुह्' शब्द से 'स्' प्रत्यय और 'उभयेषाम्' (सू० ५) इससे 'तम्' आदेश। 'स्प्रत्यये इकारागमः' (सू० १७)। इससे एक जगह 'मि' का लोप। इसी तरह। यस्-यम् वा यस्य-जिसे वा जिसके। यमिस्-यम् वा यस्य-जिसे वा जिसके। यसन्दु-यस्य-जिसके। यमिसन्दु-यस्य-जिसके। कस्-कम् वा कस्य-किसे वा किसके। कमिस्-कम् वा कस्य-किसे वा किसके। कसन्दु-कस्य-किसके। कमि सन्दु-कस्य-किसके।

इम् हुम् शब्दयोः संबन्धषष्ठयामेव। इसन्दु। अस्य। इमिसन्दु-अस्य। हुसन्दु-अमुष्य। हुमि सन्दु। अमुष्य। असन्दु। अस्य। अमि सन्दु। अस्य।

बहुत्वे तु सर्वेषां मन् इत्यस्य विकल्पेन लोप इष्यते। तिहन्दु वा तिमन् हन्दु। तेषाम्। यिहन्दु वा यिमन् हन्दु। येषाम्। कहन्दु वा कमन् हन्दु। केषाम्। इहन्दु वा इमन् हन्दु। एषाम्। हुहन्दु वा हुमन् हन्दु। अमीषाम्।

संबन्धषष्टयां किम्। इमिस्। इमं वा अस्य। हुमिस्। अमुं वा अमुष्य। अत्र विकल्पाभावः। प्राणिनि किम्। तम्युकु। तस्य वस्तुनः।

'इम्-हुम्' शब्दों के संबन्धषष्ठी में ही। इसन्दु-अस्य-इसका। इमि सन्दु-अस्य-इसका। हुसन्दु-अमुष्य-उसका। हुमि सन्दु-अमुष्य-उसका। असन्दु-अस्य-इसका। अमि सन्दु-अस्य-इसका।

बहुवचन में तो सभी को 'मन्' इसका विकल्प से लोप हो जाता है। तिहन्दु वा तिमन् हन्दु-तेषाम्-उनका। यिहन्दु वा यिमन् हन्दु-येषाम्-जिनका। कहन्दु वा कमन् हन्दु-केषाम्-किनका। इहन्दु वा इमन् हन्दु-एषाम्-इनका। हुहन्दु वा हुमन् हन्दु-अमीषाम्-उनका।

संबन्धषष्ठी में क्या? इमिस्-इमं वा अस्य-इसे वा इसके। हुमिस्-अमुं वा अमुष्य-उसे वा उसके। यहां विकल्प का अभाव है। प्राणि में क्या? तम्युकु-तस्य वस्तुनः-उस वस्तु का।

निश्चयार्थे धातुलिङ्गस्वरूपान्ते यः प्रत्यययोर्मध्ये वा ॥ २१ ॥

धातुस्वरूपस्य वर्तमानादिषु लिङ्गस्वरूपस्य च प्रथमादिषु तद्धितादिषु च निश्चयार्थे गम्यमाने अन्ते यः प्रत्ययो भवति । द्वयोः प्रत्यययोर्मध्ये वा भवति । तसन्दुय् । तस्यैव । तमि सन्दुय् । तस्यैव । ग्वरसूय् अन्दर । गुरावेव । ग्वरनूय् अन्दर् । गुरुष्वेव । एवं सर्वेषां लिङ्गानां सर्वासु विभक्तिषु बोध्यम् । प्रत्यययोर्मध्ये यथा । ग्वरबूथ् हन्दि पुछ्य् । गुरुभ्य एव । ग्वर सन्दिय् पुछच । गुरवे एव । अत्र एकवचने स् प्रत्ययस्य लोपे कृते सन्दु पुछच । इत्येतयोर्मध्ये य् प्रत्ययः । ग्वरन् हन्दिय् पुछ्य । वा ग्वरन् हन्दि पुछिय् । इत्यपि साधु । तद्धितप्रत्ययेभ्यो यथा । गाटलुय् । दक्ष एव । धातुस्वरूपेभ्यो यथा । करानूय् छ्ह् । करोत्येव । कर्योनूय् । अकृतैव तेन । करिय् । करिष्यत्येव । उपमायामपि क्वचिद्व्यवह्रियते । यथा चाट् ति गौव् न्यचिवुय् । शिष्योऽपि पुत्र एवास्ति ।

धातुस्वरूप और वर्तमानादि में लिङ्गस्वरूप का प्रथमादि में और तद्धितादि में निश्चयार्थ गम्यमान अन्त में जो प्रत्यय होता है अथवा दोनों प्रत्ययों के मध्य में होता है । तसन्दुय्-तस्यैव-उसी का । तमि सन्दुय्-तस्यैव-उसी का । ग्वरसूय् अन्दर्-गुरावेव-गुरु में हो । ग्वरनूय् अन्दर्-गुरुष्वेव-गुरुओं में ही । इस तरह सभी लिङ्गों के सभी विभक्तियों में जानना । प्रत्ययों के मध्य में जैसे-ग्वरनूय् हन्दि पुछ्य्-गुरुभ्य एव-गुरुओं के लिए ही । ग्वर सन्दिय् पुछ्य-गुरवे एव-गुरु के लिए ही । यहां एकवचन में 'म्' प्रत्यय का लोप करने पर सन्दु पुछ्य् इन दोनों के मध्य में 'य्' प्रत्यय । ग्वरन् हन्दिय् पुछ्य वा ग्वरन् हन्दि पुछिय् यह भी ठीक है । तद्धितप्रत्ययों से जैसे-गाट्लुय्-दक्ष एव-दक्ष ही । धातुस्वरूपों से जैसे—कराबूय्-छ्ह्-करोत्येव-करता है ही । कर्योनूय्-अकृतैव तेन-उसने नहीं किया ही । करिय्-करिष्यत्येव-करेगा ही । उपमा में भी कहीं व्यवहृत है । यथा-चाट् ति गौव् न्यचिवुय्-शिष्योऽपि पुत्र एवास्ति-शिष्य भी पुत्र ही है ।

सोरु शब्दस्वरूपेभ्यो नित्यमेव ॥ २२ ॥

सोरु शब्दस्य यानि स्वरूपाणि तेभ्यः प्रायशो नित्यमेव य्

प्रत्ययो भवति। सोरु्। सर्वः सोरुय्-सर्वं एव। सारि-सर्वे। सारिय्-सर्वे एव।

'सोरु्' शब्द के जितने स्वरूप हैं, उनसे प्रायशः सदा ही 'य्' प्रत्यय होता है। सोरु्-सर्वः-सब। सोरुय्-सर्वं एव-सब ही। सारि-सर्वे-सब। सारिय्-सर्वे एव-सभी।

य प्रत्यये औकारस्याव् ॥ २३ ॥

प्रत्ययसंबन्धिन औकारस्य य् प्रत्यये परे अव् भवति। गुर्यवूय् सूतिन्। घोटकैरेव। नमवूय् सूतिन्। नखैरेव। गुर्यौ सूतिन्। नमौ सूतिन्। इत्यनयोर्मध्ये य् प्रत्यये कृते अनेन औकारस्य अव्। व्यञ्जनं परेण संधेयम् (सू. १।३)।

प्रत्यय से सम्बद्ध 'औकार' को 'य्' प्रत्यय परे रहते 'अव्' होता है। गुर्यवूय् सूनिन्-घोटकैरेव-घोड़ों से ही। नमवूय् सुतिन्-नखैरेव-नाखूनों से ही। गुर्यौ सूतिन्, नमौ सूतिन्, इन दोनों के मध्य में 'य्' प्रत्यय करने पर इससे 'औकार' को 'अव्' हुआ। व्यञ्जन को अपने से परे के साथ मिला देना चाहिए (सू. १।३)

ब्याख्शब्दस्य बिय् प्रथमाबहुत्वादिषु ॥ २४ ॥

स्पष्टम्। ब्यिय्। अपरे। बियन्। अपरान्। बियौ। अपरैः। अनेन बिय् आदेशे कृते व्यञ्जनान्तलिङ्गवत्साधनम्।

स्पष्ट है। बिय्-अपरे-दूसरे। बियन्-अपरान्-दूसरों को। बियौ-अपरैः-दूसरों से। इससे 'बिय्' आदेश करने पर व्यञ्जनान्तलिङ्ग की तरह साधन।

कूतुशब्द स्योपधायाः प्रथमाबहुत्वे द्वितीयाद्येक वचनादिषु चाप्रसिद्धता ॥ २५ ॥

स्पष्टम्। कूति। कियन्तः। कूतिम्। कियन्तम्। कूति। कियता।

स्पष्ट है। कूति-कियन्तः-कितने। कूतिम्-कियन्तम्-कितने को। कति-कियता-कितने से।

बहुत्वे वैत्वम् ॥ २६ ॥

कूतु शब्दस्य द्वितीयादिबहुत्वे वा ऐत्वं भवति विकल्पेनाप्रसिद्धता च। कूत्यन्। कियतः। कैत्यन्। कियतः। कूत्यौ सूतिन्। कियद्भिर्हेतुभिः। कैत्यौ सूतिन्-कियद्भिर्हेतुभिः। एवं सर्वत्र विज्ञेयम्।

'कूतु' शब्द को द्वितीयादि वहुवचन में 'ऐत्व' होता है और विकल्प से अप्रसिद्धता। कूत्यन्-कियतः-कितनों को। कैत्यन्-कियतः-कितनों को। कूत्यौ सूतिन्-कियद्भिर्हेतुभिः-कितने हेतुओं से। कैत्यौ सूतिन् कियद्भिर्हेतुभिः-कितने हेतुओं से। इस तरह सब जगह जानना।

य्यूतुत्यूतुयूतुशब्दानामीत्वमप्रथमैकवचने ॥ २७ ॥

प्रथमैकवचनं वर्जयित्वा एषां शब्दानां यूकारस्य ईत्वं भवति। यीति। यावन्तः। तीति। तावन्तः। ईति। इयन्तः। एवं सर्वत्र ज्ञेयम्।

प्रथमा के एकवचन को छोड़कर इन शब्दों के 'यू' को 'ई' होता है। यीति-यावन्तः-जितने। तीति-तावन्तः-उतने। ईति-इयन्तः-इतने। इस तरह सब जगह जानना।

मूँष् ऐत्वम् ॥ २८ ॥

मूँष् शब्दोपधायाः प्रथमावहुत्वादिषु ऐत्वं भवति। मैँष। महिष्यः। मैँषन्। महिषीः। मैँषो सूतिन्-महिषीभिः।

'मूँष्' शब्द उपधा का प्रथमा वहुवचन आदि में 'ऐत्व' होता है। मैँष-महिष्यः भैंसे। मैँषन्-महिषीः-भैन्सों को। मैँषो सूतिन्-महिषोभिः-भैन्सों से।

कूँहोऽन्त्यस्य सश्च ॥ २९ ॥

कूँह शब्दस्य उपधाया ऐत्वं भवति अन्त्याक्षरस्य च सकारो भवति। कैँसि दप्। कंचिद्वद। कैँसि दपु। केनचिदुक्तम्। कैँसि हुन्द्। कस्यचित्। इत्यादि। साधनं पूर्ववत्। कूँह् शब्दापरपर्यायस्य काँह् शब्दस्य चेत्थं बोध्यम्। किंचानयोः शब्दयोरुभयलिङ्गत्वात् द्वितीयायां स् प्रत्ययः। स्त्रियामिकारः (सू.२।१।३७) इति इकारागमः। स्लोपः स्त्रियां सर्वत्र (सू.२।१।४०) इति स् लोपः।

'कूँह्' शब्द की उपधा को 'ऐ' होता है और अन्त के अक्षर को 'सकार' होता है। कैँसि दप्-कंचिद्वद-किसी को कह। कैँसि दपु-केनचिदुक्तम्-किसी ने कहा। कैँसि हन्दु-कस्यचित्-किसी का। इत्यादि, साधन पहिले की तरह। 'कूँह्' शब्द के दूसरे पर्याय 'काँह्' शब्द को भी इसी तरह जानना और इन शब्दों में उभयलिङ्ग

होने से द्वितीया में 'स्' प्रत्यय। स्त्रियामिकारः (सू. २।१।३७) इससे 'इकार' का आगम। स्लोपः स्त्रियां सर्वत्र (सू. २।१।४०) इससे 'स्' का लोप हुआ।

केन्च् शब्दो नित्यं वहुत्वे ॥ ३० ॥

स्पष्टम्। केन्च्। केचित्। केन्चन। कांश्चित्। केन्चौ। कैश्चित्।

स्पष्ट है। केन्च्-केचित्-कई। केन्चन-कांश्चित्-किसी स्त्री को। केन्चौ-कैश्चित्-कइयों से।

काँछाह् केंछाह् शब्दावेकत्वे ॥ ३१ ॥

स्पष्टम्। काँछाह्। कश्चित्। केंछाह्-किंचित्।

स्पष्ट है। काँछाह्-कश्चित्-कोई। केंछाह्-किंचित्-कुछ।

जह् शब्दस्य दु द्वितीयादिषु ॥ ३२ ॥

द्विवाचकस्य ज़्ह् शब्दस्य द्वितीयादिविभक्तिषु दु आदेशः स्यात्। दून्। द्वौ। द्वयो सूतिन्। द्वाभ्याम्।

द्विवाचक 'ज़्ह्' शब्द के द्वितीया आदि विभक्तियों में 'दु' आदेश होता है। दून-द्वौ-दो। द्वयो सूतिन्-द्वाभ्याम्-दो से।

अयागमः स्वरे ॥ ३३ ॥

तस्मादादेशकृतात् दु शब्दात्स्वरे परे अयागमो भवति। द्वयि सूतिन्। द्वयेन। द्वयौ सूतिन्-द्वाभ्याम्। ज़ह् शब्दात् औ सूतिन् प्रत्ययः। पूर्वसूत्रेण दु आदेशः। अनेन अय् आगमः। व्यञ्जनं परेण सन्धेयम् (सू. १।३)।

उस आदेशकृत 'द्' शब्द से स्वर परे रहते 'अय्' का आगम होता है। द्वयि सूतिन्-द्वयेन-दो से। द्वयौ सूतिन्-द्वाभ्याम्-दो से। 'ज़्ह्' शब्द से 'औ सूतिन्, प्रत्यय और पूर्वसूत्र से 'दु आदेश। इससे 'अय्' का आगम। व्यञ्जन अपने से परे के साथ मिल जाते हैं (सू. १।३)

त्रिह् षहोरन्त्यलोपश्च ॥ ३४ ॥

त्रिह् षह् शब्दाभ्यां स्वरे परे अयागमो भवति। अन्त्याक्षरस्य च लोपो भवति। त्र्ययौ सूतिन्। त्रिभिः। षयौ सूतिन्। षट्भिः।

त्रिह् और षह् शब्द से स्वर परे रहते 'श्रय्' का आगम होता है और अन्त के अक्षर का लोप होता है। त्र्ययौ सूतिन्-त्रिभिः-तीनों से। षयौ सूतिन्-षट्भिः-छेग्रों से।

वा चोर्शब्दस्य न्प्रत्यये ह्रस्वश्च ॥ ३५ ॥

चोर शब्दस्य न्प्रत्ययें परे विकल्पेनान्त्याक्षरस्य लोपः श्रोकारस्य च उकारो भवति। च्वन्। चतुरः। वा। चोरन्। चतुरः। चोर-शब्दात् द्वितीयायां न् प्रत्ययः अनेन रकारलोपः ओकारस्य च उकारः। उकारो वः (सू. १।११) इति वत्वम्। व्यञ्जनं परेण संधेयम् (सू. १।३)। अन्यत्र न्प्रत्यये (सू. २।१।१२) अकारागमः।

'चोर शब्द के 'न्' प्रत्यय परे रहते विकल्प से अन्त के अक्षर का लोप और 'ओकार' को 'उकार' होता है। च्वन्-चतुरः-चतुर। वा। चोरन्-चतुरः-चतुर। चोर शब्द से द्वितीया में 'न्' प्रत्यय। इससे 'रकार' का लोप और 'ओकार' को उकार तथा 'उकारो वः' (सू. १।१२) से 'व'। व्यञ्जन को परे से मिला दो (सू. १।३)। दूसरी जगह 'न्प्रत्यये' (सू. २।१।१२) से 'अकार' का आगम।

पानशब्दादिप्रत्ययलोपः ॥ ३६ ॥

अयं शब्दो नित्यमेकवचन एव। देहार्थवाचकस्य पानशब्दस्य तु एकानेकत्वं भवति। पान। स्वयम्। पानस्। स्वम्। पान। स्वेन।

यह शब्द नित्य एकवचन ही है। देहार्थवाचक पान्' शब्द का तो एकवचन भी बहुवचन हुआ करता है। पान-स्वयम्-खुद। पानस्-स्वम्-अपने को। पान-स्वेन-अपने से।

अकारलोपोपधाह्रस्वौ चोनुञोः ॥ ३७ ॥

तस्यैव पानशब्दस्य उनु ञ् इत्येतयोः प्रत्यययोः परयोरकारस्य लोप उपधायाश्च ह्रस्वो भवति। पननु। स्वस्य पुंल्लिङ्गे। पनञ्। स्वस्य स्त्रीलिङ्गे। साधनं पूर्ववत्। देहार्थवाचकस्य पान् शब्दस्य। पानकु। देहस्य पुंल्लिङ्गे। पानचू। देहस्य स्त्रीलिङ्गे। इत्यादि स्वरूपाणि भवन्ति।

उसी 'पान' शब्द के 'उनु-ञ्' इन प्रत्ययों के परे होने पर 'अकार' का लोप और उपधा को ह्रस्व होता है। पननु-स्वस्य-

अपने का-पुंल्लिङ्ग में। पनञ्-स्वस्य - अपने का-स्त्रीलिङ्ग में। साधन पहिले की तरह। देहार्थवाचक 'पान्' शब्द का-पानकु-देहस्य-शरीर का-पुंल्लिङ्ग में। पानचू-देहस्य-शरीर का-स्त्रीलिङ्ग में, इत्यादि स्वरूप होते हैं।

अखजोरयोराहागमो निश्चयसामान्ये ॥ ३८ ॥

अख्शब्दात् द्विवाचकाज्जोरशब्दाच्च निश्चयसामान्ये गम्यमाने आह् आगमो भवति। अखाह्। एककः। जोराह्। द्विकम्। अख्-शब्दस्य प्रथमायामेव विज्ञेयम्। अपरस्य सर्वासु विभक्तिषु। अख्-शब्दग्रहणात्प्रथमैकवचनान्तेभ्यः सर्वेभ्यः शब्देभ्यो भवति। कथाह्। एक आलापः। जोराहौ सूतिन्। द्विकेन।

'अख्' शब्द से और द्विवाचक 'जोर' शब्द से निश्चयसामान्य गम्यमान में 'आह्' का आगम होता है। अखाह्-एककः-एक। जोराह्-द्विकम्-दो। 'अख्' शब्द का प्रथमा में ही जानना। दूसरे का सभी विभक्तियों में। 'अख्' शब्द के ग्रहण से प्रथमा के एकवचनान्त सभी शब्दों से होता है। कथाह्-एक आलापः-एक बात। जोराहौ सूतिन्-द्विकेन-दो से।

त्रिहस्तारादेशः ॥ ३९ ॥

निश्चयसामान्ये त्रिह् शब्दस्य तार आदेशो भवति। तार। त्रिकम्। निश्चयसामान्ये किम्। त्रिय्। त्रय एव।

निश्चयसामान्य में 'त्रिह्' शब्द को 'तार' आदेश होता है। तार-त्रिकम्-तीन। निश्चयसामान्य में क्या? त्रिय्-त्रय एव-तीन ही।

चोरश्चवमरः ॥ ४० ॥

चोर् शब्दस्य च्वमर आदेशो भवति निश्चयसामान्ये। च्वमर। चतुष्कम्। निश्चयसामान्ये किम्। चोरय्। चत्वार एव।

'चोर्' शब्द को 'च्वमर' आदेश निश्चयसामान्य में होता है। च्वमर-चतुष्कम्-चार। निश्चयसामान्य में क्या? चोरय्-चत्वार एव-चार ही।

पान्चः पँशः ॥ ४१ ॥

पान्च् शब्दस्य पँश आदेशो भवति। निश्चयसामान्ये। पँश। पञ्चकम्। निश्चयसामान्ये किम्। पान्चय्। पञ्चैव।

पान्च् शब्द को 'पँश' आदेश होता है निश्चयसामान्य में। पँश-पञ्चकम्-पांच। निश्चय सामान्य में क्या? पान्चय्-पञ्चैव-पांच ही।

षहोऽन्त्यस्य खाह्॥ ४२॥

षह् शब्दस्यान्त्याक्षरस्य खाह् आदेशो भवति निश्चयसामान्ये। षखाह्। षट्कम्। निश्चयसामान्ये किम। षय्। षडेव।

'षह्' शब्द के अन्त के अक्षर को निश्चयसामान्य में 'खाह्' आदेश होता है। षखाह्-षट्कम-छः। निश्चयसामान्य में क्या? षय्-षडेव-छः ही।

सतष्ट एठागमश्च॥ ४३॥

सत् शब्दस्यान्त्याक्षरस्य टकारो भवति एठ आगमश्च निश्चयसामान्ये। सटेठ। सप्तकम् निश्चयसामान्ये किम्। सतय। सप्तैव।

'सत्' शब्द के अन्त के अक्षर को 'टकार' और निश्चयसामान्य में 'एठ' का आगम होता है। सटेठ-सप्तकम्-सात। निश्चयसामान्य में क्या? सतय-सप्तैव-सात ही।

ऐठादिभ्योऽमरागमश्च॥ ४४॥

ऐठ आदिभ्यः संख्याभ्यो निश्चयसामान्ये अमर आगमो भवति। ऐठमर। अष्टकम्। नवमर। नवकम्। दहमर। दशकम्। निश्चयसामान्ये किम्। ऐठय्। अष्टावेव। नवय्। नवैव।

'ऐठ्' आदि संख्यावाचक शब्दों से निश्चयसामान्य अर्थ में 'अमर' का आगम होता है। ऐठमर-अष्टकम्-आठ। नवमर-नवकम्-नौ। दहमर-दशकम्-दस। निश्चयसामान्य में क्या? ऐठय्-अष्टावेव-आठ ही। नवय्-नवैव-नौ ही।

एकत्वनिर्दिष्टपरिमाणादिशब्दात्खण्डा च॥ ४५॥

एकवचनेन निर्दिष्टो यः संख्यापरिमाणादिशब्दस्तस्मान्निश्चयसामान्ये खण्डाप्रत्ययो भवति। च शब्दात् आह् आगमोऽपि भवति। अखाह् खण्डा। एकमात्रम्। चाखाह् खण्डा। चतुष्टय मात्रम्। दहाह् खण्डा। दशकमात्रम्। हथाह् खण्डा। शतमात्रम्। क्रुहाह् खण्डा। क्रोशमात्रम। द्वहाह खण्डा। दिनमात्रम। ऋथाह खण्डा।

ऋतुमात्रम् । रुपयाह् खण्डा । मुद्रिकामात्रम् । एकत्वनिर्दिष्टात्किम । तार । त्रयः । च्वमर । चत्वारः । चोराह खण्डा । इति तु न भवति । चाख् शब्दस्य त्वेकत्वनिर्देशाद्भवत्येव । परं तु यत्रैव आह् आगमो भवति तत्रैव खण्डा प्रत्ययः सस्वरः स्यात् । यत्र तु केवलः स्यात्तत्र खण्ड प्रत्ययो भवति । यथा । क्रुह् खण्ड् । क्रोशमात्रम् ।

एकवचन से निर्दिष्ट जो संख्यापरिमाणादिशब्द है, उससे निश्चय सामान्य अर्थ में 'खण्डा' प्रत्यय होता है और शब्द से 'आह्' का आगम भी होता है। अखाह् खण्डा-एकमात्रम्-एकमात्र । चाखाह् खण्डा-चतुष्टयमात्रम्-चार मात्र। दहाह् खण्डा-दशकमात्रम्-दसमात्र। हथाह् खण्डा-शतमात्रम्-सौ मात्र। क्रुहाह् खण्डा-क्रोशमात्रम्-कोस मात्र। द्वहाह् खण्डा-दिनमात्रम्। दिनमात्र। ऋथाह् खण्डा-ऋतुमात्रम्-ऋतुमात्र । रुपयाह् खण्डा-मुद्रिकामात्रम्-मुद्रिकामात्र । एकत्वनिर्दिष्टात्मक । तार-त्रयः-तीन। च्वमर-चत्वारः-चार। चोराह खण्डा-यहां नहीं होता है। 'चाख्' शब्द के एकत्वनिर्देश से होता ही है। पर यहां पर 'आह्' का आगम होता है, वहां पर ही 'खण्डा' प्रत्यय सस्वर होता है। यहां पर तो केवल हो, वहां 'खण्ड' प्रत्यय होता है। जैसे– क्रुह् खण्ड्-क्रोश-मात्रम्-कोसमात्र।

सर्वेभ्यो वहुवचनान्तेभ्यो जू ॥ ४६ ॥

वहुवचनान्तेभ्यः सर्वेभ्यः शब्देभ्यो निश्चयसामान्ये जू प्रत्ययो भवति । कटजू । मेषाः । गुरिजू । अश्वाः । रुपयजू । रूपिकाः । कञजू । शिलाः-इत्यादि ।

वहुवचनान्त सभी शब्दों से निश्चयसामान्य अर्थ में 'जू' प्रत्यय होता है । कटजू-मेषाः-भेड़ें । गुरिजू-अश्वाः-घोड़े । रुपयजू-रूपिकाः-रुपए । कञजू-शिलाः-शिलायें, इत्यादि ।

इति शारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते
लिङ्गप्रकरणे सर्वनामपादस्तृतीयः ॥ ३ ॥
समाप्तं चेदं लिङ्गप्रकरणम् ॥ २ ॥

अथ समासप्रक्रिया ॥ ३ ॥

शब्दाः संज्ञाविभक्त्यव्ययधातुभेदाच्चतुर्धा भवन्ति । तत्र विभक्तिः केवलं स्वयमर्थदानाभावात्संज्ञया संगत्य कारकार्थं जनयति । धातुना च संगत्यातीतादिकालबोधिनी क्रिया भवतीति । अव्यया हि स्वार्थ-दाने विभक्तिनिरपेक्षा इति । विभक्तियोगात्संपन्नयोः क्रिययोर्वक्ष्य-माणसमासरीतिवत्संयोगोऽसंभाव्योऽस्ति किंत्वव्ययभूतैः कृत्प्रत्ययैरे-वेति । संज्ञा तु विशेष्यपदविशेषणपदभेदाद्द्विविधा । तत्र द्वयोर्विशे-ष्यपदविशेषणपदयोः परस्परसंयोगो युक्तः विशेष्याद्विशेषणस्य बहि-रनवस्थानादिति । विशेष्ययोस्तु पदयोः संयोगः कदाचित्संभाव्यः स्यात् । संयोगसंभवे तु पदे विशेष्ये वा भवतां । विशेष्यविशेषणे वा भवतामिति तुल्यमस्ति । कदाचित्त्वसंभाव्यः । इति द्वे स्वरूपे । तयो-स्तु तुल्यातुल्यविभक्तिसंयोजनया चत्वारि स्वरूपाणि भवन्तीत्यतः समासाश्चत्वार एव भवितुमर्हन्त्येतदर्थं युक्तायुक्तेति समासलक्षणं सूत्रयति ।

संज्ञा, विभक्ति, अव्यय और धातु भेद से शब्द चार प्रकार के होते हैं । वहां विभक्ति केवल स्वयं अर्थज्ञान न करा सकने से संज्ञा के साथ मिल कर कारक-अर्थ को पैदा करती है और धातु से मिल कर अतीत आदि काल का बोध कराने वाली क्रिया होती है । अव्यय अपने अर्थ का ज्ञान कराने में विभक्ति की सहायता नहीं चाहते । विभक्ति के योग से युक्त क्रियाओं में वक्ष्यमाण समासरीति की तरह संयोग असंभावित हैं, किन्तु अव्ययभूत कृत् प्रत्ययों से ही । संज्ञा तो विशेष्य और विशेषण पदभेद से दो प्रकार की होती है । वहां दोनों विशेष्य और विशेषण पदों में परस्पर संयोग उचित है, विशेष्य से विशेषण के बाहर न होने से । विशेष्य पदों में संयोग कभी संभा-वित है । संयोग होने पर तो 'पदे विशेष्ये वा भवतां, विशेष्यविशेषणे वा भवतां' यह समान है । कभी असंभावित है । ये दो स्वरूप हैं ।

उनमें तुल्य, अतुल्य, विभक्ति और संयोजना से चार स्वरूप होते हैं, इसलिए समास चार ही हो सकते हैं, इसके लिए 'युक्ता-अयुक्ता' यह समास का लक्षण सूत्ररूप में उपस्थित है।

युक्तायुक्तपदविभक्तीनां संगतिकृत्समासः॥ १ ॥

युक्तानां योग्यानामयुक्तानामयोग्यानां पदानां विभक्तीनां च संगतिकृत्संयोगकारकः समासोऽवगन्तव्यः। तत्रायुक्तपदसमविभक्तीनां संधायको द्वन्दः। युक्तपदसमविभक्तीनां योगकारी कर्मधारयः। युक्तपदभिन्नविभक्तीनां संधायकस्तत्पुरुषः। अयुक्तपदायुक्तविभक्तीनां संयोगकारको वहुव्रीहिरिति। संबन्धसंज्ञायां समासे विशेषः। तत्र सम्बन्धसंज्ञा द्विविधा। एका सामान्यसंबन्धसंज्ञा। द्वितीया विशेषसंबन्धसंज्ञा। तत्र तदादिशब्दाः सामान्यसंबन्धसंज्ञकाः। यथैकस्मिन्नेव मनुष्ये स्वयं वक्तरि सति अहमिति संज्ञा कथ्यते। तस्मिन्नेव श्रोतृतया संनिधिस्थेन येन केनचित्प्रोक्ते त्वमिति संज्ञा। अश्रोतृतया संनिधिस्थेन प्रोक्ते अयमिति संज्ञा। असंनिधिस्थेन येन केनचित्प्रोक्ते स इति संज्ञा। द्वापरतया क इति संज्ञा। सामान्यतया य इति संज्ञा। इति सामान्यसंबन्धसंज्ञा। अत्र संबन्धषष्ठीतत्पुरुषं विना समासावाप्तिर्नावधार्येति। विशेषसंबन्धसंज्ञापि सामान्यविशेषाभ्यां द्विविधा। तत्राद्या शिल्पवशात्सूपादिसंज्ञा तस्मिन्सूपत्वशिल्पस्य समवायिसंबन्धान्न हि तदादिशब्दवदेकेन सूप् इत्युच्यते अपरेण स्वर्णकार इत्युच्यत इति विशेषत्वम्। परं तु सर्वैः सूप इत्युच्यत इति सामान्यत्वमिति। अपरा पितृपुत्रादिवत्संबन्धसंज्ञा। यथा हे पितरिति पुत्रेणैव कथ्यते पैत्रिकसंबन्धात् नान्येन। स एव सहोदरेण भ्रातेति कथ्यते समानोदर्यत्वात्। इत्यादयो विशेषसंबन्धसंज्ञकाः अत्र समासावाप्तिर्धीमद्भिरवधार्या इति।

द्वन्दोदाहरणं यथा। ताफ् गट। आतपान्धकारौ। अत्रातपेन साकं न कोऽपि ध्वान्तस्य संबन्धः किंतु सवविभक्तित्वात् द्वन्देन संबन्धः सपन्तः।

कर्मधारयोदाहरणं यथा। म्वटि गुरि सूतिन् गौव्। स्थूलघोटकेन गतः। अत्र य एव स्थूलः स एव घोटक इति युक्तपदत्वम्। स्थूलेन घोटकेन गत इति समविभक्तित्वमित्यतः कर्मधारयेण संगतिः।

तत्पुरुषोदाहरणं यथा। राज़ न्यच्युवु। राजपुत्रः। अत्र राज्ञा सह पुत्रस्य योग्यत्वेऽपि राज्ञः पुत्र इत्यनयोर्भिन्नविभक्तित्वमित्यत स्तत्पुरुषेण संगतिः।

वहुव्रीह्यु दाहरणं यथा। हूनि बुथु। श्वमुखः। अत्र श्वन्शब्द-मुखशब्दयोर्न च योग्यत्वसंबन्धः नापि श्ववन्मुखं यस्य स श्वमुख इति निरुक्त्या विभक्तिसंबन्ध इत्यतो वहुव्रीहिना संगतिः।

युक्त-योग्य, अयुक्त-अयोग्य पदों और विभक्तियों के संगतिकृत् संयोगकारक को समास जानना। वहां अयुक्तपद समविभक्तियों के संधायक को 'द्वन्द' नाम से पुकारा जाता है। युक्तपदसमविभक्तियों के योगकारी को 'कर्मधारय' कहते हैं। युक्तपदभिन्नविभक्तियों के संधायक को 'तत्पुरुष' कहते हैं। अयुक्तपद-अयुक्तविभक्तियों के संयोगकारक को 'वहुव्रीहि' कहा जाता है। संवन्धसंज्ञा में समास में विशेष है। वहां सम्बन्धसंज्ञा दो प्रकार की होती है—एक सामान्य-सम्बन्धसंज्ञा और दूसरी विशेष सम्बन्ध संज्ञा। वहां तदादिशब्द सामान्यसम्बन्धसंज्ञक हैं। जैसे एक ही मनुष्य के स्वयं वक्ता होने पर 'अहम्' यह संज्ञा कही जाती है। उसी में श्रोता के निकटस्थ होने से जिस-किसी से कहने पर 'त्वम्' यह संज्ञा होती है। अश्रोता के निकटस्थ होने से कहे जाने पर 'अयम्' यह संज्ञा होती है। निकटस्थ न होने से जिस किसी से कहे जाने पर 'स' यह सज्ञा है। द्वापर होने से 'कः' यह संज्ञा और सामान्य होने से 'यः' यह संज्ञा होती है। यह सामान्यसम्बन्धसंज्ञा है। यहां सम्बन्धषष्ठीतत्पुरुष के विना समास की प्राप्ति नहीं समझनी चाहिए। विशेषसम्बन्धसंज्ञा भी सामान्य और विशेष से दो प्रकार की होती है। वहां पहली शिल्पवश से सूपादि संज्ञा, उसमें सूपत्वशिल्प के समवायिसम्बन्ध से तदादि शब्द की तरह एक से 'सूपः' यह नहीं कहा जाता, अपर से 'स्वर्णकारः' यह कहा जाता है, यह विशेष है। परन्तु सभी से 'सूपः' यह कहा जाता है, यह सामान्य है। दूसरी पितृ-पुत्र-आदि की तरह सम्बन्ध-संज्ञा है। जैसे—'हे पितः' यह पुत्र से ही कहा जाता है, पितृसम्बन्ध से दूसरे से नहीं। वही सगे भाई से 'भ्रातः' यह कहा जाता है—समानोदर्य होने से। इत्यादि विशेषसम्बन्ध संज्ञायें हैं। यहां समास की प्राप्ति बुद्धिमान् से निश्चित कर लेना चाहिए।

द्वन्द का उदाहरण जैसे—ताफ् गट-आतपान्धकारौ-धूप और अन्धेरा। यहां धूप के साथ अन्धकार का कोई सम्बन्ध नहीं है, किन्तु समविभक्ति होने से द्वन्द के साथ सम्बन्ध है।

कर्मधारय का उदाहरण जैसे—म्वटि गुरि सूतिन् गौव्-स्थूल-घोटकेन गतः—मोटे घोड़े से गया है। यहां जो ही स्थूल है, वही घोड़ा है, यह युक्तपद है। 'स्थूलेन घोटकेन गतः।' यह समविभक्ति है, इसी लिए कर्मधारय से संगति है।

तत्पुरुष का उदाहरण जैसे—राज् न्यचुवु-राजपुत्रः-राजा का लड़का। यहां राजा के साथ पुत्र के योग्य होने पर भी 'राज्ञःपुत्रः' इनमें भिन्न विभक्ति है, इसलिए तत्पुरुष से संगति है।

वहुव्रीहि का उदाहरण जेसे—हूनि बुथु-श्वमुखः-कुत्ते का मुंह। यहां 'श्वन्' शब्द और 'मुख' शब्द का योग्यत्व सम्बन्ध नहीं है और न ही 'श्ववन्मुखं यस्य स श्वमुखः' इस निर्वचन से विभक्ति सम्बन्ध है, इसलिए वहुव्रीहि से संगति है।

समासमध्ये विभक्तिलोपो व्यञ्जनाद्यवयवस्य ॥२॥

समासे कर्तव्ये पदयोर्मध्ये या विभक्तिस्तस्या व्यञ्जनाद्यवयवस्य लोपो भवति। "एको ह्यवयवो यस्य को ऽसाववयवो भवेत्" इति कथनान्न केवलव्यञ्जनरूपप्रत्ययस्य लोपः स्यात्। छत्यौ गुर्यौं सूतिन् आव्। श्वेतघोटकैरागतः। नीलिस् गुरिस्। अत्र स् प्रत्ययस्य केवलत्वान्न लोपः। छतु शब्दाद् गुरू शब्दाच्च औ सूतिन्प्रत्ययः अनेन मध्यविभक्तेः सूतिन् इति विभक्त्यवयवस्य लोपः। प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् (पा.सू. १।१।६२) इति उवर्णान्तानामिकारः (२।१।३०) इति यत्वम्।

समास करने पर दोनों पदों के मध्य जो विभक्ति, उसके व्यज्जन आदि अवयव का लोप होता है। 'एक कोई जिसका अवयव, वह अवयवो हो' यह कहने से केवल व्यज्जन रूप प्रत्यय का लोप न हो। छत्यौ गुर्यौं सूतिन् आव्-श्वेतघोटकैरागतः-सफेद घोड़ों से आया। नीलिस् गुरिस्-यहां 'स्' प्रत्यय का केवल होने से लोप नहीं होता। 'छत्त' शब्द से और 'गुरु' शब्द से 'औ सूतिन्' प्रत्यय, इससे मध्य-

विभक्ति के 'सूतिन्' इस विभक्ति अवयव का लोप। 'प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् (पा. सू. १।१।६२) इति, 'उवर्णान्तानामिकारः' (२।१।३०)इति' 'य' हुआ।

सजातीयविभक्तिकानां विजातीयपदानामन्त्यपदविभक्त्या कथनं द्वन्द्वः ॥३॥

येषां वस्तूनां लोकेषु संयोगोऽसंभाव्योऽपि स्यात्तेष्वपि शब्देषु तुल्यविभक्तिकेषु सत्सु स्वकल्पितस्यान्त्यपदस्य विभक्त्या तेषां कथनं द्वन्दसमासो विज्ञेयः। * नभ् नख् फल्। नभोनखफलम्। एषाँ पदानां यद्यपि संयोगोऽसंभाव्योऽस्ति तथाप्यनेन संगतिः। वारि कुलि फल ज़ल पुछ्य् आव्। वाटिकावृक्षफलजलायागतः। वारु-शब्दात् कुलुशब्दात् फल्शब्दात् जलशब्दाच्च इ पुछ्य् प्रत्ययः। समासमध्ये (सू. २) इति सूत्रेण मध्यमानां पुछ्य् इति प्रत्ययावय-वानां लोपः। प्रथमयोरुवर्णान्तानामिकारः (सू. २।१।३०) इति ऊकारोकारयोरिकारः। इतो लोपः (सू. २।१।६) इति इ प्रत्ययस्य लोपः। अपरयोर्व्यञ्जनान्तत्वादिकारस्याकारः (२।१।४)। माज्य कोर्य। मातापुत्रिके। मालि् पुथर्। पितापुत्रौ। हश न्वष। श्वश्रूस्नुषे। जोम् काकञ। ननन्दाप्रजावत्यौ। पच्य कूच्य। पट्टिकादारुणी।

जिन वस्तुओं का संयोग लोकों में असंभावित भी हो, उन में भी शब्दों में तुल्यविभक्तियों के होने पर स्वकल्पित अन्त के पद की विभक्ति से उनका कहना द्वन्द समास जानना चाहिए। नभ् नख् फल्-नभोनखफलम्। इन पदों का यद्यपि संयोग असंभावित है, तो भी इस से संगति है। वरि कुलि फल जल पुछ्य् आव्-वाटिका-वृक्षफलजलायागतः। 'वारु' शब्द से, कुलु शब्द से, फलशब्द से और जलशब्द से 'इ पुछ्य्' प्रत्यय। समासमध्यें (सू. २) इस सूत्र से मध्यमों के 'पुछ्य्' प्रत्यावयवों का लोप। प्रथमयोरुवर्णान्तानामि-कारः (सू. २।१।३०) से 'ऊकार-ओकार' को 'इकार'। इतो लोपः (सू. २।१।६) से 'इ' प्रत्यय का लोप। दूसरों में व्यञ्जनान्त होने से 'इकार' को 'अकार' (२।१।४)। माज्य कोर्य-मातापुत्रिके-माँ-बेटी। मालि् पुथर्-पितापुत्रौ-बाप-बेटा। हश न्वष-श्वश्रूस्नुषे-सास-बहू।

---

* नव् नम्--मू० पा०

जोम् काकत्र-ननन्दाप्रजावत्यौ-ननद-प्रजावति । पच्य कूच्य-पट्टिका-दारुणी-पट्टिका दारुणि ।

विशेषणविशेष्ययोः पूर्वोत्तरपदस्थयोरेकपदेनाभिधानं कर्मधारयः॥४॥

विशेष्यविशेषणयोर्योग्यसंबन्धत्वाद्युक्तपदत्वं विशेष्याद्बहिर्विशेषण-स्यानवस्थानात् तयोः समविभक्तित्वमपि नित्यमेव स्यात्तयोर्विशेषणे पूर्वपदस्थे विशेष्ये उत्तरपदस्थे सति एकविभक्त्या यत् कथनं स कर्मधारयसमासो विज्ञेयः। बड्यन् द्यारन् छुह् जेनान् । महद्द्रव्या-ण्यर्जयति । म्वचि च्वचि सूतिन् । स्थूलपूपेन । त्रिछि कोरि पुछ्य् । दक्षकन्यायै । बजि लरि प्यठ । महद्गृहात् । बज्य ग्रन्जू हन्दु । महत्संख्यायाः । वडिस् गुरिस् प्यठ् । महदश्वोपरि । अत्र प्रथमान्त्य-योः न् स् प्रत्यययोः केवलत्वान्मध्येऽपि न लोपः । किन्तु न् प्रत्यये सर्वत्र (सू. २।१।१२) इति अकारागमः। उवर्णान्तानामिकारः (सू. २।१।३०) इति सर्वत्र इकारः। ऊदन्तटवर्ग (सू. २।१।२२) इत्यादि सूत्रेण क्रमेण टवर्गान्तस्य चवर्गः । शेषं पूर्ववत् ।

विशेष्यविशेषण में योग्य सम्बन्ध होने से युक्तपदत्व विशेष्य से बाहिर विशेषण के न रहने से उनमें समविभक्तित्व भी नित्य ही हो, उनमें विशेषण के पूर्वपदस्थ होने पर, विशेष्य के उत्तरपदस्थ होने पर एक विभक्ति से जो कहा जाता है, वह कर्मधारय समास जानना चाहिए। बड्यन् द्यारन् छुह् जेनान्-महद्द्रव्याण्यर्जयति-बहुत धन कमाता है । म्वचि च्वचि सूतिन्-स्थूलपूपेन-मोटे पुए से । त्रिछि कोरि पुछ्य्-दक्षकन्यायै-दक्षकन्या के लिए । बजि लरि प्यठ-महद्-गृहात्-बड़ेघर से । बज्य ग्रन्जू हन्दु-महत्संख्यायाः-बड़ी संख्या का । वडिस् गुरिस् प्यठ-महदश्वोपरि-बड़े घोड़े पर। यहां प्रथम और अन्त के 'न्-स् प्रत्यय में केवलत्व होने से मध्य में भी लोप नहीं होता है, किन्तु 'न्' प्रत्यय में सर्वत्र (सू० २।१।१२) इससे 'अकार' का आगम । उवर्णान्तानामिकारः (सू. २।१।३०) से सर्वत्र 'इकार'। ऊदन्तटवर्गः (सू. २।१।२२) इत्यादि सूत्र से क्रमपूर्वक टवर्गान्त को चवर्ग । बाकी पहिले की तरह ।

अप्रथमान्ते पूर्वपदे विभिन्नविभक्तिकयोः पदयोर्युगपत्कथनं तत्पुरुषः ॥ ५ ॥

संभाव्यसंयोगसत्ताकयोः पदयोर्मध्यात्प्रथमाविभक्तिव्यतिरिक्ते पूर्वपदस्थे सति तुल्यातुल्यप्रथमादिविभक्तिके उत्तरपदस्थे तयोर्युगपत्कथनं स तत्पुरुषसमासो बोध्यः। श्राकि खश्। छुरिकाच्छेदः। टोपि फलु। शिरस्त्रमान्तम्। सर्प वय सूतिन्। सर्पभयेन। राज न्यचिवि पुछय। राजपुत्राय। बट कोर्य हन्दु। ब्राह्मणकन्यायाः। स्वन डब अन्। स्वर्णपुटकमानय। म्यचि फ्वतु थव्। मृत्कटोलं निधेहि।

संभाव्यसंयोगसत्ताकपदों के मध्य से प्रथमाविभक्ति से व्यतिरिक्त पूर्वपद में स्थित होने पर तुल्यातुल्यप्रथमादि विभक्तिक उत्तरपदस्थ में उनका जो एक साथ कथन, वह तत्पुरुष समास जानना। श्राकि खश-छुरिकाच्छेदः-छुरी से काटना। टोपि फलु-शिरस्त्रमान्तम-शिर का कवच। सर्प वय् सूतिन्-सर्पभयेन-सांप के डर से। राज न्यचिवि पुछय्-राजपुत्राय-राजकुमार के लिए। बट कोर्य हन्दु-ब्राह्मणकन्यायाः-ब्राह्मणकन्या का। स्वन डब अन्-स्वर्णपुटकमानय-सोने का डिब्बा लाओ। म्यचि फ्वतु थव्-मृत्कटोलं निधेहि-मिट्टी के प्याले को रक्खो।

उत्तरपदस्थस्य पोञुशब्दस्य यो वः ॥ ६ ॥

समासविषये पोञुशब्द उत्तरपदस्थे सति पोञुशब्दसंबन्धिनः पकारस्य वकारः स्यात्। गंग वोञु। गङ्गाजलम्। व्यथ वोञु। वितस्ताजलम्। शीन वोञु। हिमजलम्। वुग वोञु। ओघजलम्। मार वोञु। मारीजलम्। क्रीरि वोञु। कूपपानीयम्। रूद वोञु। वर्षापानीयम्। नाग वोञु। अखातजलम्। समासे किम्। व्यथि हन्दि पाञि सूतिन्। वितस्तायाः पानीयेन।

समासविषय में 'पोञ्' 'शब्द उत्तरपद में स्थित होने पर 'पोञ्' शब्द से सम्बद्ध 'यकार' को 'वकार' होता है। गंग वोञु-गङ्गाजलम्-गङ्गा का जल। व्यथ वोञु-वितस्ताजलम्-वितस्ता का जल। शीन वोञु-हिमजलम्-बर्फ का जल। वुग वोञु-ओघजलम्-प्रवाह का जल। मार वोञु-मारीजलम्-मारी का जल। क्रीरि वोञु-कूपपानीयम्-कुएं का जल। रूद वोञु-वर्षापानीयम्-वर्षा का जल। नाग वोञु-अखातजलम्-खाई (गड्डे) का जल। समास में क्या? व्यथि हन्दि पाञि सूतिन्-वितस्तायाः पानीयेन-वितस्ता के जल से।

पूर्वपदस्थे ञस्यानुस्वारः ॥ ७ ॥

समासविषये पोञुशब्दे पूवपदस्थे सति ञकारस्यानुस्वारो भवति । पाँ त्रख् । पानीयद्रोणः । पाँ नटु । पानीयकुम्भः । समासे किम् । पाञुकु त्रख् । पानीयस्य द्रोणः ।

समास के विषय में 'पोञु' शब्द के पूर्वपद में स्थित ञकार' को अनुस्वार होता है । पाँ त्रख्-पानीयद्रोणः-पानी का दोना । पाँ नटु-पानीयकुम्भः-पानी का घड़ा । समास में क्या ? पाञुकु त्रख्-पानीयस्य द्रोणः-पानी का दोना ।

दाञशब्दस्यापि ॥ ८ ॥

समासविषये दाञशब्दे पूर्वपदस्थे सति ञकारस्यानुस्वारो भवति । दाँ खार् । धान्यखारी । दाँ फ्वतु । धान्यकटोलः । अपि-शब्दादन्येभ्योऽपि । वाँ ग्यलु । वणिक्तृणं । वाँ कूरू । वणिक्कन्या । समासे किम् । दाञचू खार् ।

समास के विषय में 'दाञ' शब्द के पूर्वपद में स्थित होने पर 'ञकार' को अनुस्वार होता है । दाँ खार-धान्यखारी-धान की खारी । दाँ फ्वतु-धान्यकटोलः-धान का बुखारा । अपि शब्द से अन्यों से भी । वाँ ग्यलु-वणिक तृणं-वणिये का घास । वाँ कूरू-वणिक् कन्या-वणिए की लड़की । समाज में क्या ? दाञचू खार् ।

पथ्र्शब्दस्य पुंलिङ्गे च ॥ ९ ॥

पथ्र्शब्दः स्वयं पुंलिङ्गः समासेऽपि पुंल्लिङ्गेन निर्देशे कर्त्तव्ये पकारस्य वकारो भवति । बोञि वथ्र् । छायावृक्षपत्रम् । पोषवथ्र् । पुष्पपत्रम् । ख्यलल वथ्र् । पद्मतृणपत्रम् । हाक वथ्र-शाकपत्रम् । पुंल्लिङ्गेन किम् । मुलि पत्र् । मूलिकापत्रम् । ग्वग्जिपत्र । इत्यादि ।

'पथ्र्' शब्द स्वयं पुंल्लिङ्ग समास में भी पुंल्लिङ्ग से निर्देश देने पर 'पकार' को 'वकार' होता है । बोञि बथ्र्-छायावृक्ष-पत्रम्-छायादार वृक्ष का पत्ता । पोप वथ्र्-पुष्पपत्रम्-फूलपत्ता । ख्यलल वथ्र्-पद्मतृणपत्रम्-कमल के तिनके का पत्ता । हाक वथ्र्-शाक-पत्रम्-साग का पत्ता । पुंल्लिङ्ग से क्या ? मुलि पत्र्-मूलिकापत्रम्-मूली का पत्ता । ग्वग्जि पत्र्-इत्यादि ।

पंचाहः समासे ॥ १० ॥

समासविषये पंचाह् शब्दस्य पकारस्य वकारो भवति। अक-वन्जाह्। द्ववन्जाह्। कुनवन्जाह्। इत्यादि।

समास के विषय में 'पंचाह्' शब्द के 'पकार' को 'वकार' होता है। अकवन्जाह्। द्ववन्जाह्। कुनवन्जाह्-इत्यादि।

शैठः शस्य हः ॥ ११ ॥

कुनहैठ्। अकहैठ्। द्वहैठ्। इत्यादि।

च्वटूशब्दस्य म्वंडू आदेशः सस्यव्यतिरिक्ते ॥ १२ ॥

सस्यव्यतिरिक्तस्य वस्तुनः अपूपार्थके च्वटूशब्दे उत्तरपदस्थे म्वंडू आदेशो भवति। टूल्-म्वंडू। अण्डापूपः। नदुरि् म्वंडू। बिसापूपः। चामञ्- वंडू। आमिक्षापूपः। अद्रक्-म्वंडू। आद्रकापूपः। सस्यव्यतिरिक्तं किम्। त्वम्ल-च्वटू। तण्डूलापूपः। कन्क-च्वटू। गोधूमापूपः। वुष्कि-च्वटू। यवापूपः। सस्येऽपि पुंल्लिङ्गनिर्देशेन म्वंडू आदेश इष्यते। त्वम्ल-म्वंडू। अव-म्वंडू। इत्यादि।

सस्य (घास-खेती) से भिन्न वस्तु के अपूप अर्थ में 'च्वटू' शब्द के उत्तरपद में स्थित होने पर 'म्वंडू' आदेश होता है। टूल्-म्वंडू-अण्डापूपः-अण्डे के पूए। नदुरि्म्वंडू-बिसापूपः-बिस के पूए। चामञ् म्वंडू-आमिक्षापूपः-पनीर के पूए। अद्रक्-म्वंडू-आद्रकापूपः-अदरक के पूए। सस्य से अतिवित क्या ? त्वम्ल-च्वटू-तण्डुलापूपः-चावल के पूए। कन्क-च्वटू-गोधूमापूपः-गन्दम के पूए। वुष्किच्वटू-यवापूपः-जौ के पूए। सस्य में भी पुंल्लिङ्गनिर्देश से 'म्वंडू' आदेश होता है। त्वम्ल-म्वंडू, अवम्वंडू। इत्यादि।

पूर्वोत्तरपदस्थभेद्यभेदकोभयविशिष्टान्यपदबोधकोवहुब्रीहि ॥१३॥

विशेष्ये पूर्वपदस्थे विशेषणे चोत्तरपदस्थे सति तदुभयेन विशिष्टस्यान्यपदस्य ज्ञानविधायको वहुब्रीहिर्विज्ञेयः। यड-बडू। वृहदुदरः। दारि-ज्यूठू। दीर्घश्मश्रुः। कन-च्वटु। छिन्नकर्णः। दु-वहरु्। द्विवार्षिकः। दु-वरिश्। द्विवार्षिकी। सत-ब्रोचु। सप्तकुटु-म्बः। पाँच-प्यतुर। पञ्चपुत्रः। ह्नि-वुथु। श्वमुखः। अत्र मध्य-पदलोपो वुद्धिमतावधार्यः।

विशेष्य के पूर्वपद में स्थित होने पर और विशेषण के उत्तरपद में स्थित होने पर उन दोनों से विशिष्ट अन्य पद का ज्ञानविधायक बहुब्रीहि जानना। यड-बड़ू-वृहदुदरः-बड़े पेट बाला। दारि-ज्यूठू-दीर्घश्मश्रुः-लम्बी दाढ़ी वाला। कन-चवटु-छिन्नकर्णः-कटे हुऐ कान बाला। दु-वहरू-द्विवार्षिकः-दुवरिश्-दो साला। द्विवार्षिकी-दुवरिश्-दो साली। सत्त-बोचु-सप्तकुटुम्ब.-सात कुटुम्ब बाला-। पाँच-प्यतुर-पञ्चपुत्रः-पांचपुत्रों बाला। ह्नि-वुथु-श्वमुखः-कुत्ते की तरह मुख बाला। यहां बुद्धिमान् पुरुष को मध्यपदलोप कर लेना चाहिए।

द्विरुक्तेन च ॥ १४ ॥

एकेनैव पदेन द्विरुक्तेन विशिष्टस्यान्यपदस्यावबोधकृच्च बहुब्रीहिर्विज्ञेयः। स च स्त्रीलिंगः। ठ्वल ठ्वल्। श्रृंगाश्रृंगि। टप टफ्। खुराखुरि। ठूंक ठूंख्। भृङ्गाभृङ्गि। चप चफ्। दन्तादन्ति।

इति श्री शारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते समासप्रक्रिया समाप्ता ॥ ३ ॥

अथ तद्धितप्रक्रिया ॥ ४ ॥

जातेरपत्यार्थे पूतु ॥ १ ॥

अपत्येऽभिधेये सति जातेर्जातिवाचकाच्छब्दात् 'पूतु' प्रत्ययो भवति । दर-पूतु । कौल-पूतु । तिकि-पूतु । इत्यादि । दर् कौल् त्युकु इति जातिवाचकाः शब्दाः । अनेन सूत्रेण पूतु प्रत्ययः । व्यञ्जनान्तानामकारागमः (सू० २।१।३६) । तृतीये युकारोपधाया इत्वम् (सू० २।१।७६) । उवर्णान्तानामिकारः (सू० २।१।३०) । एवमुत्तरत्र ज्ञेयम् । जातिशब्दग्रहणात्पशुपक्ष्यादीनां जातिर्गृह्यते । काव-पूतु । काकपोतः । पछिन्-पूतु । पक्षिपोतः । क्वकर्-पूतु । कुक्कुटपोतः । कट पूतु । मेषपोतः । म्याँ-पूतु । मेषपूतः । कोतर्-पूतु । कपोतपोतः । इत्यादि ।

अपत्य के अभिधेय होने पर जाति से वा जातिवाचकशब्द से 'पुतु' प्रत्यय होता है । दर-पूतु, कौल-पूतु, तिकिपूतु, इत्यादि । दर, कौल्, त्युकु ये जातिवाचक शब्द हैं । इस सूत्र से 'पूतु' प्रत्यय । व्यञ्जनान्तानामकारागमः (सू० २।१।३६) । तृतीये युकारोपधाया इत्वम् (सू० २।१।३६) । उवर्णान्तानामिकारः (सू० २।१।३०) । इसी तरह आगे भी जानना । जातिशब्दग्रहण से पशु-पक्षी आदि की जाति ग्रहण की जाती है । काव-पूतु-काकपोतः-कौए का बच्चा । पछिन्-पूतु-पक्षिपोतः-परिन्दे का बच्चा । क्वकर्-पूतु-कुक्कुटपोतः-कुक्कड़ का बच्चा । कट-पूतु-मेषपोतः-भेड़ का बच्चा । म्याँ-पूतु-मेषपूतः-बिल्ली का बच्चा । कोतर्-पूतु-कपोतपोतः-कबूतर का बच्चा, इत्यादि ।

न संज्ञायाः ॥ २ ॥

पित्रादिनाम्नः परः पूतु प्रत्ययो न भवतीति परिभाष्यते । पितृ-आदि नाम से परे 'पूतु' प्रत्यय नहीं होता है, ऐसी परिभाषा है ।

चूरशब्दाद्बालक्रीडायां च ॥ ३ ॥

पित्रादौ स्तनन्धयं क्रीडयति सति चूरशब्दात् पूतु प्रत्ययो भवति। च शब्दाच्चौरपुत्रेऽभिधेयेऽपि। चूर-पूतु। चौरपोतः।

पितृ-आदि में दूध पीने वाले बच्चे के खेलने के अर्थ में 'चूर्' शब्द से 'पूतु' प्रत्यय होता है, 'च' शब्द से चौरपुत्र अभिधेय में भी। चूर-पूतु-चौरपोतः-चोर का बच्चा।

मिञ्शब्दात्स्वार्थे ॥ ४ ॥

चुम्बनवाचकात् मिञ् शब्दात्-स्वार्थ एव पूतु प्रत्ययो भवति। मिञ्-पूतु। चुम्बनम्। मिञ् इत्यस्य म्वञ् च कथ्यते। तेन। म्वञ्-पूतु। चुम्बनम्। इत्यपि भवति।

चुम्बनवाचक 'मिञ्' शब्द से स्वार्थ में ही 'पूतु' प्रत्यय होता है। मिञ्-पूतु-चुम्बनम्। 'मिञ्' इसे 'म्वञ्' भी कहा जाता है, जिससे म्वञ्-पूतु-चुम्बनम्-चुम्बन, यह भी होता है।

अनादरापत्यार्थेऽधमशब्देभ्यः कठ् ॥ ५ ॥

अनादरेण क्रोधेन च अपत्ये अभिधेये इति अधमशब्देभ्यः परः कठ् प्रत्ययो भवति। चूर-कठ्। चौरपुत्रः। गान-कठ्। विटपुत्रः। पोग-कठ्। नाशपुत्रः। वाज़्-कठ्। सूदपुत्रः। रास्-कठ्। जारजः। क्व-कठ्। कुपुत्रः। सुशब्दादपि दृश्यते। स्व-कठ्। सुपुत्रः। स्वख्-कठ्। सुखपुत्रः।

अनादर से और क्रोध से अपत्य अभिधेय होने पर अधम शब्दों से परे 'कठ्' प्रत्यय होता है। चूर-कठ्-चौरपुत्रः-चोर का लड़का। गान-कठ्-विटपुत्रः-विट का पुत्र। पोग-कठ्-नाशपुत्रः-नाश का पुत्र। वाज़्-कठ्-सूदपुत्रः-रसोइए का लड़का। रास्-कठ्-जारजः—जार से पैदा हुआ। क्व-कठ्-कुपुत्रः-कुपुत्र। 'सु' शब्द से भी दिखाई देता है। स्व-कठ्-सुपुत्रः-सुपुत्र। स्वख्-कठ्-सुखपुत्रः-सुख का पुत्र।

स्वस्वकार्योद्यमेनाभिधेये कटु ॥ ६ ॥

जातिवाचकानां शिल्पवाचकानां च शब्दानां निजनिजकार्यस्योद्यमेनापत्ये अभिधेये सति कटु प्रत्ययो भवति। वट-कटु। ब्राह्मणपुत्रः। दर-कटु। दरपुत्रः। कौल-कटु। कौलपुत्रः। स्वन्र्-कटु। स्वर्णकारपुत्रः। मन्र्-कटु। शङ्खिकपुत्रः। छान-कटु। तक्षकपुत्रः।

जातिवाचक और शिल्पवाचक शब्दों के अपने-अपने कार्य के

उद्यम से अपत्य अभिधेय होने पर 'कटु' प्रत्यय होता है। वट-कटु-ब्राह्मणपुत्रः-ब्राह्मण का बेटा। दर-कटु-दरपुत्रः-दर का बेटा। कौल-कटु-कौल पुत्रः-कौल का बेटा। स्वन्र्-कटु-स्वर्णकारपुत्रः-सुनार का बेटा। मन्र्-कटु-शाङ्खिकपुत्रः-शाङ्खिक का बेटा। छान-कटु-तक्षक-पुत्रः-तक्षक का बेटा।

मूँषशब्दाच्च ॥ ७ ॥

महिषीवाचकस्य मूँष्शब्दस्यापत्ये अभिधेये कटु प्रत्ययो भवति। मेँष कटु। महिषः। मूँषशब्दात् कटु प्रत्ययः। व्यञ्जनान्तानामकारागमः (सू० २।१।३६)। मूँष ऐत्वम् (सू० २।३।२८) इति सूत्रेण ऊकारस्य ऐत्वम्।

महिषीवाचक 'मूँष' शब्द के अपत्य अभिधेय में 'कटु' प्रत्यय होता है। मेँष कटु-महिषः-भैंसा। 'मूँष' शब्द से 'कटु' प्रत्यय। व्यञ्जनान्तानामकारागमः (सू० २।१।३६)। मूँष ऐत्वम् (सू० २।३।२८) इस सूत्र से 'ऊकार' को 'ऐ'।

पित्रोः सहजापत्योयसंबन्धे पुंसि तुरु ॥ ८ ॥

पित्रोर्जनयितुर्जनन्याश्च सहजौ पितृभ्राता पितृभगिनी मातृभ्राता मातृभगिनी च तयोः पुमपत्यसंबन्धिनि संबन्धे अभिधेये सति तत्तच्छब्दात् तुरु प्रत्ययो भवति। प्वफतुरु बोयु। पैतृष्वस्रीयः। मासतुरु बोयु। मातृष्वस्रीयः। मामतुरु बोयु। मातुलपुत्रः।

जन्म देने वाले पिता और माता के सगे पिता का भाई (चाचा), पिता की बहिन (बुआ), माता का भाई (मामा) और माता की बहिन (मासी), उन दोनों में पुरुष सन्तान से सम्बद्ध संबन्ध के अभिधेय होने पर उस-उस शब्द से 'तुरु' प्रत्यय होता है। प्वफतुरु् बोयु-पैतृष्वस्रीयः-पैतृष्वस्रीय। मासतुरु् बोयु-मातृष्वस्रीयः। मातृष्वस्रीय। मामतुरु् बोयु-मातुलपुत्र-मामे का लड़का।

स्त्रियां तुर् ॥ ९ ॥

तेषामेव शब्दानां स्त्र्यपत्यसंबन्धिनि संबन्धे अभिधेये सति 'तुर्' प्रत्ययः स्यात्। प्वफतुर् व्यञ्। पैतृष्वस्रीया। मासतुर् व्यञ्। मातृष्वस्रीया। मामतुर् व्यञ। मातुलपुत्रिका।

उन्हीं शब्दों का स्त्री-सन्तान से सम्बद्ध संबन्ध के अभिधेय होने पर 'त्र्' प्रत्यय होता है। प्वफत्र् व्यञ्-पैतृष्वस्रोया-पैतृष्वस्रीया। मासत्र् व्यञ्-मातृष्वस्रीया-मातृष्वस्रीया। मामत्र् व्यञ्-मातुल-पुत्रिका-मामा की बेटी।

पित्र्शब्दात्त्र्लोपः ॥ १० ॥

स्पष्टम्। पितुरु् बोयु। पैतृव्यः। पित्र् व्यञ्। पितृव्यपुत्री। एवं प्वफत्र् बायि काकञ्। पैतृष्वस्रीयभार्या। मासत्र्-बायि काकञ्। मातृष्वस्रीयभार्या। मामत्र् बायि काकञ्। मातुलपुत्र-भार्या। पित्र् बायि काकञ्। पैतृव्यभार्या।

स्पष्ट है। पितुरु् बोयु-पैतृव्यः-चाचे का लड़का। पित्र् व्यञ्-पितृव्यपुत्री-चाचा की लड़की। इसी तरह प्वफत्र् बायि काकञ्-पैतृष्वस्रीयभार्या। मासत्र् बायि काकञ्-मातृष्वस्रीयभार्या। माम-त्र् वायि काकञ्-मातुलपुत्रभार्या। पित्र् वायि काकञ्-पैतृव्य-भार्या।

ब्यञबोयुशब्दाभ्यां पुमपत्ये थ्रन्त्ययोर्नबौ च ॥ ११ ॥

ब्यञबोयुशब्दयोः पुमपत्येऽभिधेये सति थ्र् प्रत्ययो भवति अन्त्या-क्षरयोश्च क्रमेण नकारबकारादेशौ भवतः। ब्यन थ्र्। भागिनेयः। बाव थ्र्। भ्रातृव्यः।

'ब्यञ-बोयु' शब्दों को पुरुषसन्तान में अभिधेय होने पर 'थ्र्' प्रत्यय होता है और अन्त के अक्षरों में क्रम से 'नकार-बकार' आदेश होते हैं। ब्यन थ्र्-भागिनेयः-बहिन का लड़का। बाव थ्र्-भ्रातृव्यः-भाई का लड़का।

स्त्र्यपत्ये नो नवौ च ॥ १२ ॥

तयोर्व्यञबोयुशब्दयोः स्त्र्यपत्येऽभिधेये सति ज़ प्रत्ययो भवति अन्त्याक्षरयोश्च नकारवकारौ भवतः। ब्यन्ज़। भागिनेयी। बाव्ज़। भ्रातृपुत्री।

उन ब्यञ और बोयु शब्दों में स्त्री-सन्तान के अभिधेय होने पर 'ज़' प्रत्यय होता है और अन्त के अक्षरों में 'नकार और वकार' होते

हैं। ब्यन्ज़-भागिनेयी-बहिन की लड़की। बावज़-भ्रातृपुत्री-भाई की लड़की।

द्रियुशब्दस्य द्यारादेशश्च॥ १३॥

देवरवाचकस्य द्रियुशब्दस्य पुंस्त्र्यपत्येऽभिधेये पूर्वोक्तौ प्रत्ययौ भवतः। द्रियुशब्दस्य च द्यार आदेशः स्यात्। द्यारथ्र्। देवरपुत्रः। द्यारज़। देवरपुत्री।

'देवर' वाचक 'द्रियु' शब्द के पुरुष और स्त्री सन्तान के अभिधेय होने पर पूर्वोक्त प्रत्यय हुआ करते हैं और 'द्रियु' शब्द को 'द्यार' आदेश होता है। द्यारथ्र्-देवरपुत्रः-देवर का लड़का। द्यारज़-देवरपुत्री-देवर की लड़की।

तदस्यास्तीत्यलादयः॥ १४॥

तत् अस्ति अस्य इत्यस्मिन्नर्थे वक्ष्यमाणा अलादयः प्रत्ययाः स्युः।

'वह इसका है' इस अर्थ में वक्ष्यमाण 'अल्-आदि' प्रत्यय होते हैं।

स्वमूर्तिवर्तमानद्रव्यगुणवत्त्वाभिधेयेऽल्॥ १५॥

प्राणिनोऽप्राणिनो वा निजमूर्तौ वर्तमानं यद्द्रव्यं गुणो वा तद्वत्त्वेन तस्मिन्नभिधेये सति द्रव्यशब्दाद्गुणशब्दाच्च अल् प्रप्ययो भवति न चात्र गुणशब्देन शुक्लादिगुणा गृह्यन्ते इति। दार्यल्। श्मश्रुलः। गोछल्। गुम्फवान्। डग्वल। काकपक्षवान्। बबल्। स्तनवती। कोछल्। कोष्ठवान्। ह्यङ्गल्। शृङ्गी। टूंकल्। शृङ्गाघाती। ट्वलल्। शृङ्गाघाती। चपल्। दन्ताघाती। फशल्। वेशवान्। ग्यत्रल्। वलिनः। स्यसल्। सीमावान्। प्वंदल्। क्षुतवान्। मछ्यट्यचल्। तिलकालकः। चासल्। कासवान्। व्रूंटल्। पर्दी। साधनं पूर्ववत्।

प्राणि से वा अप्राणि से अपनी मूर्ति में वर्तमान जो द्रव्य वा गुण, उससे सम्बद्ध होने से उस अभिधेय में द्रव्यशब्द और गुण शब्द से 'अल्' प्रत्यय होता है और यहां गुणशब्द से शुक्लादि गुणों का ग्रहण नहीं किया जाता। दार्यल्-श्मश्रुलः-दाढ़ी वाला। गोछल्-गुम्फवान्-गुम्फ वाला। डग्वल-काकपक्षवान्-घुंघराले बालों वाला। बबल्-स्तनवती-स्तनों वाली। कोछल्-कोष्ठवान्-कोष्ठ वाला। ह्यङ्गल्-शृङ्गी-

सींगवाला। टूंकल्-शृङ्गाघाती-सींग से प्रहार करने वाला। ट्वलल्-शृङ्गाघाती-सींग से प्रहार करने वाला। चपल्-दन्ताघाती-दान्तों से प्रहार करने वाला। फशल्-वेशवान् वेशयुक्त। ग्यत्रल्-वलिन:-वली का। स्यसल्-सीमावान्-सीमा वाला। प्वंदल्-क्षुतवान्। मछ्यट्यचल्—तिल कालक:। चासल्-कासवान्। ब्रूंटल्-पर्दी साधन पहिले की तरह।

हाचोऽभियोक्तरि ॥ १६ ॥

अभियोगकृदर्थे हाच् शब्दादल् भवति न त्वभियोज्यार्थे। हाचल्-अभियोक्ता।

अभियोगकृत अर्थ में हाच्' शब्द से 'अल्' प्रत्यय होता है, न कि अभियोज्य अर्थ में। हाचल्-अभियोक्ता।

ज्यव: सूचके ॥ १७ ॥

ज्यव् शब्दात्सूचकार्थे अल् प्रत्ययो भवति। ज्यवल्। सूचक:। न तु जिह्वावान्। किन्तु तत्र। ज्यविसस्तु, वा-ज्या विवोलु (सू० २४) इति भवति।

'ज्यव्' शब्द से सूचक अर्थ में 'अल्' प्रत्यय होता है। ज्यवल्-सूचक:-सूचक, न कि जिह्वा वाला, किन्तु वहां ज्यविसस्तु-वा-ज्या-विवोलु (सू० २४) यह होता है।

ब्यत्रकूरूशब्दाभ्यामश्लीले ॥ १८ ॥

स्पष्टम्। ब्यत्रल्। कोर्यल्। अश्लीले किम्। ब्यत्रवोलु (सू० २४)। भगिनीवान्। कोरिवोलु। कन्यावान्।

स्पष्ट है। ब्यत्रल्, कोर्यल्। अश्लील में क्या? ब्यत्र वोलु (सू० २४)। भगिनीवान्-बहिन वाला। कोरिवोलु-कन्यावान्-कन्या वाला।

दारशब्दाच्छ्मश्रौ वा ॥ १९ ॥

स्पष्टम्। दारियाल्। श्मश्रुल:।
स्पष्ट है। दारियाल्-श्मश्रुल:—दाढ़ी वाला।

क्वचिल्लदपि ॥ २० ॥

द्रव्यगुणवत्त्वऽभिधेये सति क्वचित् लद् प्रत्ययोऽपि भवति। स च प्रायो दोष एव। फकलद्। दुर्गन्धः। छ्वकलद्। विदग्धः। छ्वकलद्। व्रणी। बकलद्। भषणवान्। द्रखलद्। दुःखी। द्रागलद्। दुर्भिक्षहतः। क्वचिद्ग्रहणात्। गोछलद्। डखलद्। बचलद्। इति न भवति। किन्तु ग्यञलद्। स्यस्लद्। चासिलद्। इत्यादीनां द्वयमेव भवति।

द्रव्यगुणवत्त्व अभिधेय होने पर कहीं पर 'लद्' प्रत्यय भी होता है और वह प्रायः दोष ही। फकलद्-दुर्गन्धः-बदबू। छ्वकलद्-विदग्धः-चतुर। छ्वकलद्-व्रणी-जख्मी। बकलद्-भषणवान्। द्रखलद्-दुःखी। द्रागलद्-दुर्भिक्षहतः-दुर्भिक्ष से मारा। कहीं ग्रहण करने से। गोछलद्, डखलद्, बचलद्, यहां नहीं होता है। किन्तु ग्यञलद्, स्यस्लद्, चासिलद्, इत्यादि के दोनों ही होता है।

फश उन्मादिनि ॥ २१ ॥

फञ् शब्दादुन्मत्तस्यार्थे लद् भवति। फशलद्। उन्मत्तकल्पः। अन्यत्र-फशल्। वेशकारी।

'फञ्' शब्द से उन्मत्त के अर्थ में 'लद्' होता है। फशलद्-उन्मत्तकल्पः-उन्मत्तकल्प। और जगह 'फशल्'-वेशकारी।

पजु अपजु शब्दाभ्यां योरु ॥ २२ ॥

आभ्यां शब्दाभ्यां सहितत्वे वाच्ये योरु प्रत्ययो भवति। पज़ियोरु्। सत्यवक्ता। अपजियोरु्। असत्यवक्ता।

पजु और अपजु शब्दों से सहितत्व वाच्य में 'योरु्' प्रत्यय होता है। पज़ियोरु्-सत्यवक्ता-सच बोलने बाला। अपजियोरु-असत्यवक्ता-झूठ बोलने बाला।

मन्ज्युमशब्दाद्दूतार्थे ॥ २३ ॥

दूतस्यार्थे मन्ज्युम्शब्दात् योरु् प्रत्ययो भवति। मन्ज्युम्योरु। दूतः।

दूत के अर्थ में 'मन्ज्युम्' शब्द से 'योरु्' प्रत्यय होता है। मन्ज्युम्योरु्-दूतः-दूत।

मूर्तिबाह्यवस्तुवत्त्वे वोलुप्राकौ ॥ २४ ॥

निजमूर्तेर्भिन्नैर्वस्तुभिः सहितत्वेऽभिधेये ग्राक्वोलु प्रत्ययौ भवतः। द्यारवोलु। धनवान्। लरिवोलु। गृहवान्। शायिवोलु। स्थानवान्। कोरिवोलु। कन्यावान्। न्यचिविवोलु। पुत्रवान्। गपनवोलु। गोपशवान्। इत्यादि। एवं लरिग्राख्। इत्यादिस्वरूपाणि भवन्ति। गरशब्दस्य गृहाध्यक्षार्थेऽकारलोप इष्यते। गर्वोलु। गृहाधिपः। अन्यत्र। गरवोलु। गृहवान्।

अपनी मूर्ति से भिन्न वस्तुओं के साथ सहितत्व अभिधेय में 'ग्राक् और वोलु' प्रत्यय होते हैं। द्यारवोलु-धनवान्-धनी। लरिवोलु-गृहवान्-घर वाला। शायिवोलु-स्थानवान्-स्थान वाला। कोरिवोलु-कन्यावान्-कन्या वाला। न्यचिविवोलु-पुत्रवान्-पुत्रवाला। गपनवोलु-गोपशवान्-गोपशवाला। इत्यादि। इसी तरह 'लरिग्राख्' इत्यादि स्वरूप होते हैं। 'गर' शब्द का गृह के अध्यक्ष के अर्थ में 'अकार' का लोप होता है। गर्वोलु-गृहाधिपः-घर का स्वामी। दूसरी जगह। गरवोलु-गृहवान्-घर वाला।

जीवादिव्यथाकारिभ्यो हतु ॥ २५ ॥

यैर्यैरान्तरीयैर्बाह्यैर्वा वस्तुभिर्जीवादिनैव पीडा भुज्यते न तु देहेन तत्सहितत्वे अभिधेये सति हतु प्रत्ययः स्यात्। न्यद्रि हतु। निद्राहतः। त्रेषहतु। तृषाहतः। ब्वछहतु। बुभुक्षाहतः। क्रुदहतु। क्रोधाहतः। गुमहतु। स्वेदाहतः। तापहतु। आतपाहतः। तूरिहतु। शीताहतः। आरहतु। दयाहतः। लवहतु। जलकणाहतः। तावहतु। दाहहतः। इति द्वयमन्यस्मिन्नपि विशेषणे क्रियते। तावहचू बुतराय्। दाहहता पृथ्वी इति।

जिन-जिन अन्दरूनी वा बाहरी वस्तुओं द्वारा जीव आदि से ही पीड़ा भोगी जाती है न कि देह से, तत्सहित अभिधेय होने पर 'हतु' प्रत्यय होता है। न्यदरि हतु-निद्राहतः-नीन्द से आहत। त्रेषहतु-तृषाहतः-प्यास से आहत। ब्वछहतु-बुभुक्षाहतः—भूख से आहत। क्रुदहतु-क्रोधाहतः-क्रोध से आहत। गुमहतु-स्वदेहाहतः-अपने देह से आहत। तापहतु-आतपाहतः-धूप से आहत। तूरिहतु-शीताहतः-सर्दी से आहत। आरहतु-दयाहतः-दया से आहत। लवहतु-जलकणाहतः-जल की बूंदों से आहत। तावहतु-दाहहतः-आग की जलन से आहत। ये दो और भी जगह विशेषण के रूप में आते हैं। तावहचू बुतराय।

दाहहता पृथ्वी । आग की जलन से हृत पृथ्वी ।

मंदछमोदमानेभ्यो व्यतु ॥ २६ ॥

एभिस्त्रिभिः शब्दैः सहितत्वे ऽभिधेये व्यतु प्रत्ययो भवति । मंदछव्यतु । मन्दाक्षयुतः । मोदव्यतु । आदरयुतः । मानव्यतु । मानयतः ।

इन तीनों शब्दों से सहितत्व अभिधेय में 'व्यतु' प्रत्यय होता है । मंदछव्यतु । मन्दाक्षयुतः । मन्दाक्षयुक्त । मोदव्यतु । आदरयुतः । आदरयुक्त । मानव्यतु । मानयुतः मानयुक्त ।

बर्शशब्दादादयार्थे ॥ २७ ॥

स्पष्टम् । वर्शव्यतु । आढयः ।

स्पष्ट है । वर्शव्यतु-आढयः-अमीर ।

दग्दनस्तोरनिष्टार्थे आन् ॥ २८ ॥

दंद्नस्त् शब्दाभ्यामनिष्टार्थाभ्यां सहितत्वेऽभिधेये सति आन् प्रत्ययो भवति । दंदान् । दन्तुरः । नस्तान् । दुर्नासिकः ।

'दंद और नस्त् 'शब्दों से अनिष्ट अर्थ में सहितत्व अभिधेय में 'आन्' प्रत्यय होता है । दंदान्-दन्तुरः । नस्तान्-दुर्नासिकः-खराब नाक बाला ।

उ्वा ॥ २९ ॥

आभ्यां शब्दाभ्यां विकल्पेन उ् प्रत्ययो भवति । नस्तु । दंदु । पक्षे । नस्तूरू । दंदूरु् ।

इन शब्दों से विकल्प से 'उ्' प्रत्यय होना है । नस्तु दंदु । पक्ष में । नस्तूरू । दंदूरु् ।

यङ्शब्दाद्वृद्धावल् ॥ ३० ॥

स्पष्टम् । यडल् । तुन्दिलः । तोन्द बाला ।

जिघत्सावलोपश्च ॥ ३१ ॥

स्पष्टम् । यड्ल् । कुक्षिभरिः । पेटू ।

हर्शब्दात्ताच्छील्ये ॥ ३२ ॥

अस्माच्छब्दात्तच्छीले अर्थे अल् प्रत्ययोऽकारलोपश्च स्यात् ।

हर्ल् । कलहशीलः ।

इस शब्द से तच्छील अर्थ में 'अल्' प्रत्यय और 'अकार' का लोप होता है । हर्ल्-कलहशीलः-झगड़ालू स्वभाव वाला ।

जतुशब्दात्तद्वति ॥ ३३ ॥

स्पष्टम् । अच्ल् । रोमवान् ।

स्पष्ट है । अच्ल्-रोमवान्-रोम वाला ।

वैंसो जैवातृकेऽट् ॥ ३४ ॥

वैंस्शब्दादायुष्मत्त्वेऽभिधेये सति अट् प्रत्ययो भवति । वैंसट् । आयुष्मान् ।

'वैंस्' शब्द से आयुष्मत्त्व अभिधेय होने पर 'अट्' प्रत्यय होता है । वसट्-आयुष्मान्-दीर्घजीवी ।

रषस्ताच्छील्ये ॥ ३५ ॥

'रष्' शब्दात्ताच्छील्यार्थे अट् प्रत्ययो भवति । र्षट् । ईर्ष्यालुः ।

'रष्' शब्द से ताच्छील्य अर्थ में 'अट्' प्रत्यय होता है । र्षट्-ईर्ष्यालुः-हसद करने वाला ।

अच्छिशब्दाद्दुर्दृष्टाविट् ॥ ३६ ॥

दुर्दृष्टौ पुरुषेऽभिधेये सति अच्छिशब्दात् इट् भवति । अछीट् । दुर्दृष्टिः ।

दुर्दृष्टि में पुरुष अभिधेय होने पर 'अच्छि' शब्द से 'इट्' होता है । अछीट्-दुर्दृष्टिः-बुरी नज़र ।

रूप्लूबाभ्यामतिशये ॥ ३७ ॥

रूप्लूब्शब्दयोर्भूरिवत्त्वेऽभिधेये सति इट् प्रत्ययो भवति । रूपिट् । अतिसुन्दरः । लूबिट् । लोलुभः ।

'रूप्-लूब्' शब्दों के भूरिवत्त्व अभिधेय होने पर 'इट्' प्रत्यय होता है । रूपिट्-अतिसुन्दरः-अतिसुन्दर । लूबिट्-लोलुभः-लालची ।

ज्यवश्च ॥ ३८ ॥

ज्यविट् । सूचकः । सूचित करने वाला ।

ल्यकल्शब्दादूठ् ॥ ३९ ॥

स्पष्टम् । ल्यकलूठ् । अश्लीलदः । अश्लील कहने वाला ।

भावे ॥ ४० ॥

इत उत्तरं ये प्रत्ययास्ते भावे विज्ञेयाः । भावस्तु संज्ञाभावधातुभावभेदाद्द्विविधः । संज्ञाभावे अधिकारोऽयम् । धातुभावस्तु कृत्प्रक्रियायां निरूपयिष्यते ।

इस के बाद जो प्रत्यय हैं, वे भाव में जानने चाहिए । भाव तो संज्ञाभाव और धातुभाव भेद से दो प्रकार का होता है । संज्ञाभाव में यह अधिकार है । धातुभाव तो कृत् प्रक्रिया में निरूपित करेंगे ।

विशेष्यायत्तानामर् ॥ ४१ ॥

विशेष्यस्य भेद्यस्य अधीना ये विशेषणशब्दास्तेषां भावे अर् प्रत्ययो भवति । उदाहरणान्यग्रे सर्वत्र । र्‌तु शब्दस्य तु देहशुभतायामेव भावप्रत्ययः स्यादिति वेद्यम् ।

विशेष्य भेद्य के अधीन जो विशेषण शब्द हैं, उनके भाव में 'अर्' प्रत्यय होता है । उदाहरण आगे सब जगह । 'र्‌तु' शब्द के तो देहशुभता में ही भावप्रत्यय होता है । यह जानना ।

त्र्यक्षराधिकानामार् ॥ ४२ ॥

ते नित्यविशेष्यनिघ्नाः शब्दाश्चेत् त्र्यक्षरास्तदधिका वा स्युस्तदा आर् प्रत्ययो भवति । ब्वजज्यार् । रक्तता । म्वक्ज्यार् । मुक्तता ।

वे नित्यविशेष्यनिघ्न शब्द यदि तीन अक्षर वाले वा उस से अधिक हों, तब 'आर्' प्रत्यय होता है । ब्वजज्यार्-रक्तता-लालिमा । म्वकज्यार्-मुक्तता-स्वतन्त्रता ।

टोठोर्वाऽनागमोऽन्त्यस्वरलोपश्च ॥ ४३ ॥

टोठुशब्दाद्विकल्पेन आर् प्रत्ययः अन् आगमश्च भवति अन्त्यस्योकारस्य च लोपः स्यात् । टाठञार् । प्रियता । अत्र लिङ्गस्य अनागमव्यवहितत्वात् टवर्गान्तानां च (सू. ४९) इत्यनेन ठकारस्य छकारो न भवति, किन्तु तवर्गान्तानामप्रसिद्धः (सू. ५०) इत्यनेन नकारस्य ञकारः । पक्षे । टाछ्यर् । प्रियता ।

'टोठु' शब्द से विकल्प के साथ 'आर्' प्रत्यय और 'अन्' का

आगम होता है तथा अन्त के 'उकार' का लोप होता है। टाठञार्-प्रियता-लोकप्रिय होना। यहां लिङ्ग का अनागमव्यवहित होने से 'टवर्गान्तानां च' (सू. ४६) इससे 'ठकार' को 'छकार' नहीं होता है, किन्तु 'तवर्गान्तानामप्रसिद्धः (सू. ५०) इससे 'नकार' को 'ञकार' होता है। पक्ष में-टाछ्यर्-प्रियता।

क्वचित्पूर्वं एव ॥ ४४ ॥

त्र्यक्षराधिकानां क्वचित्स्थाने पूर्वः अर् प्रत्यय एव भवति। अपज़र्। असत्यता। कृहञर्। कार्पण्यम्। काचर्यर्। कपिलता। कावर्यर्। नीलता। कृपञर्। कार्पण्यम्। कायर्यर्। असारता। खोवर्यर्। वामता। ग्यश्याम्यर्। श्यामता। चतर्यर्। चतुरता। विसम्यर्। विषमता। इत्यादि।

तीन अक्षरों से अधिक शब्दों को कहीं स्थान में पूर्व 'अर्' प्रत्यय ही होता है। अपज़र्-असत्यता-झूठ। कृहञर्-कार्पण्यम्-कृपणता। काचर्यर्-कपिलता-भूरा। कावर्यर्-नीलता-नीला। कृपञर्-कार्पण्यम्-कंजूसी। कायर्यर्-असारता-सारहीन। खोवर्यर्-वामता-उल्टा। ग्यश्यामर्-श्यामता-सांवला। चतर्यर्-चतुरता-चतुराई। विसम्यर्-विषमता-भेदभाव। इत्यादि।

हशोऽश्लीले ॥ ४५ ॥

हश् शब्दादश्लीलेऽर्थे अर् भवति। हशर्। गालीदानेन श्वश्रूत्वम्। अश्लीले किम्। हशतोनु। श्वश्रूत्वम्। (सू० ६३) तोनु प्रत्ययः।

'हश्' शब्द से अश्लील अर्थ में 'अर्' होता है। हशर्-गालिदानेन श्वश्रूत्वम्-गाली के रूप में सास। अश्लील में क्या? हशतोनु-श्वश्रत्वम्-सास। (सू० ६३) से 'तोनु' प्रत्यय।

क्वबुगशुभ्यां वा लोपः ॥ ४६ ॥

आभ्यां शब्दाभ्यां विकल्पेन भावप्रत्ययलोपः स्यात्। क्वब्यर्। कुब्जता। गश्यर्। जाल्मता। पक्षे। क्वबु। कुब्जता। गशु। जाल्मता।

'क्वबु और गशु' शब्दों से विकल्प के साथ भावप्रत्यय का लोप होता है। क्वब्यर्-कुब्ज़ता-कुबड़ापन। गश्यर्-ज़ाल्मता-ज़ाल्मपन।

पक्ष में-क्वबु-कुब्जता-कुबड़ापन। गशु-ज़ालमता-ज़ालमपन।

कवर्गान्तानां चवर्गादेशः क्रमात् ॥ ४७ ॥

तेषां विशेष्यनिघ्नानां द्व्यक्षराणां त्र्यक्षराणां च अन्त्यस्य उकार-विशिष्टस्य कवर्गीयाक्षरस्य क्रमेण चवर्गीयाक्षरादेशो भवति। निकु। निच्यर्। क्षुद्रत्वम्। टकु। टच्यर्। तैक्ष्ण्यम्। ह्खु। ह्छ्यर्। शुष्कता। त्र्युखु। त्रिछ्यर्। दक्षता। द्रगु। द्रज्यर्। दुर्लभता। स्रवगु। स्रवज्यर्। सुलभता। निकुशब्दाद्विशेष्यायत्तानामर् (सू० ४१) अनेन ककारस्य चकारः। उवर्णान्तानामिकारः (सू० २।१।३०) यत्वम्। त्र्युखुशब्दोपधायुकारस्य इकारः (सू० २।१।७६)। सर्वत्र-यत्वम्।

उन विशेष्यनिघ्न दो अक्षरों वाले और तीन अक्षरों वाले शब्दों के अन्त में उकारविशिष्ट कवर्गीय-अक्षरों को क्रम से चवर्गीय-अक्षरों का आदेश होता है। निकु-निच्यर्-क्षुद्रत्वम्-क्षुद्रता। टकु-टच्यर्-तैक्ष्ण्यम्-तीक्ष्णता। ह्खु-ह्छ्यर्-शुष्कता-सूखापन। त्र्युकु-त्रिछ्यर्-दक्षता-चतुराई। द्रगु-द्रज्यर्-दुर्लभता-बड़ी कठिनाई से प्राप्त होने वाली। स्रवगु-स्रवज्यर-सुलभता-आसानी। निकुशब्दाद्विशेष्यायत्ता-नामर् (सू० १४) इस से 'ककार' को चकार। उवर्णान्तानाममिकारः (सू०२।१।३०) से 'य'। त्र्युखुशब्दोपधायुकारस्य इकारः (सू० २।१।७६) सब जगह 'य'।

न च्वकुखूँखुशब्दयोः ॥ ४८ ॥

च्वकुशब्दखूँखुशब्दसंबन्धिनोः ककारखकारयोश्चवर्गादेशो न भवति। च्वकु। च्वक्यर्। अम्लत्वम्। खूँखु। खूँख्यर्। अवनाट्यव-द्वचनम्।

'च्वकु' शब्द और 'खूँखु' शब्द से सम्बद्ध 'ककार और खकार' में 'चवर्ग' का आदेश नहीं होता है। च्वकु-च्वक्यर्-अम्लत्वम्-खट्टा-पन। खूँखु-खूँख्यर्। अवनाट्य की तरह वचन।

टवर्गान्तानां च ॥ ४९ ॥

टवर्गान्तानां विशेष्यनिघ्नानां शब्दानां च क्रमेण चवर्गादेशो भवति। म्वटु। म्वच्यर्। स्थौल्यम्। गटु। गच्यर्। अल्पोज्ज्वलता। द्रोंठु। द्राँछ्यर्। कठोरता। मूँठु। मैँछ्यर्। मन्दता। म्वंडु।

म्वंज्यर्। कुण्ठता। बडु। पज्यर्। महत्ता। प्रोणु। प्राञर्। पुराणता।

टवर्गान्त विशेष्यनिघ्न-शब्दों को क्रम से 'चवर्ग' का आदेश होता है। म्वटु-म्वच्यर्-स्थौल्यम्-मोटापन। गटु-गच्यर्-अल्पोज्ज्वलता-थोड़ा उजला। द्रोंठु-द्राँछ्यर्-कठोरता-कठोरपन। मूँठु-मैँछ्यर्-मन्दता-मूर्खता। म्वंडु-म्वंज्यर्-कुण्ठता-खूँडापन। बडु-पज्यर्-महत्ता-बडप्पन। प्रोणु-प्राञर्-पुराणता-पुरानापन।

तवर्गान्तानामप्रसिद्धः ॥ ५० ॥

तवर्गान्तानां विशेष्यनिघ्नानां शब्दानामन्त्याक्षरस्य क्रमेणा-प्रसिद्धश्चवर्गादेशो भवति अप्रसिद्धो दन्त्यः। ततु। तच्‌र्। तप्तता। मतु। मचर्। मत्तता। वथु। वछर्। विस्ततता। थदु। थजर्। औन्नत्यम्। मंदु। मन्ज़र्। मान्द्यम्। तनु। तञर्। तनुता। गुमनु। गुमञार्। ईषन्मालिन्यम्। तमनु। तमञार्। कार्ष्ण्यम्। तूरनु। तूरञार्। शीतता। कटमलिनु। कटमलिञार्। धूसरता। पनुनुशब्दस्या-दिस्वरस्य दीर्घ इष्यते। पानञार्। आत्मीयता।

तवर्गान्त विशेष्यनिघ्न शब्दों के अन्त के अक्षर के क्रम से अप्रसिद्ध 'चवर्ग' का आदेश होता है। अप्रसिद्ध दन्त्यवाचक है। ततु-तच्‌र्-तप्तता-ताप (गर्मी)। मतु-मच्‌र्-मत्तता-मस्ती। वथु-वछर्-विस्ततता-विस्तार। थदु-थजर्-औन्नत्यम्-उन्नति। मंदु-मन्ज़र्-मान्द्यम्-मूर्खता। तनु-तञर्-तनुता-पतलापन। गुमनु-गुमञार्-ईषन्मा-लिन्यम्-थोड़ी मलिनता। तमनु-तमञार्-कार्ष्ण्यम्-कालापन। तूरनु-तूरञार्-शीतता-सर्दी। कटमलिनु-कटमलिञार्-धूसरता-मटियाला। पनुन् शब्द के आदि स्वर को दीर्घ होता है। पानञार्-आत्मीयता-अपनापन।

अप्रसिद्धादिलोपः ॥ ५१ ॥

अप्रसिद्धाच्चवर्गात् इकारस्य लोपो भवति उदाहरणानि पूर्व-सूत्रोक्तानि अप्रसिद्धचवर्गात्परस्य इकारस्य लोपः स्वयं बुद्धिमता निर्णेयः। छ्‌वचु। छ्‌वचर्। रिक्तता। अछु। अछर्। नैर्बल्यम्। पजु। पजर्। सत्यता। अनु। अञर्। अन्धता।

अप्रसिद्ध चवर्ग से 'इकार' का लोप होता है, उदाहरण पूर्व-

सूत्र में कहे गए हैं। अप्रसिद्ध चवर्ग से परे 'इकार' के लोप का स्वयं बुद्धिमान् ने निर्णय कर लेना चाहिए।

छ्वचु-छ्वचर्-रिक्तता-खालीपन। अछु-अछर्-नैर्वल्यम्-निर्वलता। पजु-पजर्-सत्यता-सच्चाई। अनु-अन्नर्-अन्धता-अन्धापन।

लान्तानां जः ॥ ५२ ॥

लकारान्तानां विशेष्यनिघ्नानामन्त्यस्य जकारो भवति। खलु। खज्यर्। विस्तृतत्वम्। बूलु। वोज्यर्। चाञ्चल्यम्। कुमुलु। कुमज्यार्। कोमलता। एवं। ब्वजज्यार्। उज्ज्वलता। म्वकज्यार्। मुक्तता। जायज्यार्। सूक्ष्मता। पिशज्यार्। पेशलता। लान्तानां किम्। विय्यर्। पर्युषितत्वम्। चर्यर्। आधिक्यम्। फहर्यर्। पारुष्यम्। नव्यर्। नवीनता।

लकारान्त विशेषनिघ्न शब्दों के अन्त के अक्षर को 'जकार' होता है। खलु-खज्यर्-विस्तृतत्वम्-विस्तृत। बूलु-वोज्यर्-चाञ्चल्यम्-चञ्चलता। कुमुल-कुमज्यार-कोमलता। इसी तरह-ब्वजज्यार-उज्ज्वलता-उजलापन। म्वकज्यार्-मुक्तता-स्वतन्त्रता। जायज्यार्-सूक्ष्मता-बारीकी। पिशज्यार्-पेशलता-चतुरता। लकारान्तों का क्या? विय्यर्-पर्युषितत्वम्-बासापन। चर्यर्-आधिक्यम्-अधिकता। फहर्यर्-पारुष्यम्-कठोरता। नव्यर्-नवीनता-नयापन।

त्रकुरुशब्दस्य च ॥ ५३ ॥

अन्त्यव्यञ्जनस्य रकारस्य जकारो भवति। त्रकज्यार्। कठोरता। पक्षे। त्रकर्यर्।

अन्त के व्यञ्जन के 'रकार' को 'जकार' होता है। त्रकज्यार्-कठोरता। पक्ष में-त्रकर्यर्।

हान्तानां शः ॥ ५४ ॥

स्पष्टम्। हिहु। हिश्यर्। सादृश्यम्। चोहु। चाश्यर्। कटुता। हान्तानां किम्। गश्यर्। जाल्मता। चाष्यर्। कटुत्वम्। फरिग्यर्। पारुष्यम्।

स्पष्ट है। हिहु-हिश्यर्-सादृश्यम्-समानता। चोहु-चाश्यर-कटुता-कड़वा। हकारान्तों का क्या? गश्यर्-जाल्मता-जाल्मपन।

चाष्यर्-कटुत्वम्-कड़वा। फरिश्यर्-पारुष्यम्-कठोर।

साग्तानां वा छः ॥ ५५ ॥

स्पष्टम्। कूँसु। कैँछर्। कनिष्ठता। पक्षे-कैँसर्। कनिष्ठता। पवर्गान्तान्युदाहरणानि यथा। पपु। पप्यर्। पक्वता। फफु। फफ्यर्। लोहलत्वम्। ग्वबु। ग्वब्यर्। गुरुत्वम्। श्रोमु। श्राम्यर्। श्रामता। इति।

स्पष्ट है। कूँसु-कैँछर्-कनिष्ठता-छोटापन। पक्ष में-कैँसर-कनिष्ठता। पवर्गान्तों के उदाहरण जैसे—पपु-पप्यर्-पक्वता-पकापन। फफु-फफ्यर्-लोहलत्वम्-लालिमा। ग्वबु-ग्वब्यर्-गुरुत्वम्-भारापन। श्रोमु-श्राम्यर्-श्रामता-श्रम्लापन। इति।

बडुशब्दादीमी वा ॥ ५६ ॥

बडुशब्दात्परो विकल्पेन ईमी प्रत्ययो भवति। आदेशाभावश्च। बडु। बडीमी। महता। पक्षे। वज्यर्। इति।

'बडु' शब्द से परे विकल्प से 'ईमी' प्रत्यय होता है और आदेश का अभाव। बडु-बडीमी-महत्ता-बड़प्पन। पक्ष में-वज्यर्-इति।

श्रूचुछ्यदुशब्दाभ्यां यारू च ॥ ५७ ॥

आभ्यां शब्दाभ्यां पक्षे भावे यारू च भवति। श्रूचु। श्रूचियारू। शुद्धता। छ्यटु। छ्यटियारू। उच्छिष्टता। पक्षे। श्रोचर्। छ्यचर्। इति भवतः।

श्रूचु और छ्यटु शब्दों से पक्ष में और भाव में 'यारू' प्रत्यय होता है। श्रूचु-श्रूचियारू-शुद्धता-सफाई। छ्यटु-छ्यटियारू-उच्छिष्टता-झूठापन। पक्ष में-श्रोचर्-छ्यच्र्-ये होते हैं।

योरुशब्दान्ताज्ज ॥ ५८ ॥

योरुशब्दाद्भावविषये ज् प्रत्ययो भवति। मंज़िमूयार्ज्। दूतता। पज़ियार्ज्। सत्यता। अपज़ियारज्। असत्यता। यार्ज्। मित्रता। श्रूचियार्ज्। शुद्धता। छ्यटियार्ज्। अशुद्धता।

'योरु' शब्द से भावविषय में 'ज्' प्रत्यय होता है। मंजिमूयार्ज्-दूतता-दूतपन। पजियार्ज्-सत्यता-सच्चाई। अपजियार्ज्-असत्यता-झूठापन। यारज्-मित्रता-दोस्ती। श्रूचियारज-शुद्धता-सफाई। छय्-

टियार्ज्-अशुद्धता-ग़न्दगी ।

विशेष्यानाथत्तानामिल् आज् प्रत्ययौ ॥ ५९ ॥

भावे इत्यनुवर्तते स्वयं विशेष्यपदानां भावे अभिधेयें इल् प्रत्ययः आज् प्रत्ययश्च भवति । पण्डिताज् । पण्डितता । पक्षे । पण्डितिल् । छानिल् । वा । छानाज् । तक्षकता । गूरिल्-वा-गोराज्-पुरोहितता । इत्यादि ।

'भावे' इस की अनुवृत्ति की जाती है, स्वयं विशेष्य पदों के भावअभिधेय में 'इल्' और 'आज्' प्रत्यय होता । पण्डिताज्-पण्डितता-पण्डिताई । पक्ष में-पाण्डितिल्-छानिल्-अथवा-छानाज् । तक्षकता-बढईयन । गूरिल्-अथवा-गोराज्-पुरोहितता-पुरोहिताई, इत्यादि ।

क्वचिदेकतरः ॥ ६० ॥

क्वचिच्छब्दे एकतर एव प्रयुज्यते । द्रसिलाज् । लेपकता । द्रसिलिल् । इति न साधुशब्दः ।

किसी शब्द में एकतर ही प्रयुक्त होता है । द्रसिलाज्-लेपकता-लेपपन । द्रसिलिल्-यह साधु शब्द नहीं है ।

क्वचिद्युगपच्च ॥ ६१ ॥

क्वचित्स्थाने प्रोक्तौ प्रत्ययौ युगपत्प्रयुज्येते । मतिल् । वा । मतिलाज् । उन्मत्तता । अत्र मतुशब्दस्य विशेष्यनिघ्नत्वात्पूर्वं मचर्-स्वरूपे सिद्धेऽपि प्रोक्तकर्मार्थमेव पुनरुदाहृतम् । गूरिलाज् । छानिलाज् । व्रीठिलाज् । इत्यादि ।

किसी स्थान में कहे गए प्रत्यय युगपत् प्रयुक्त होते हैं । मतिल्-वा-मतिलाज्-उन्मत्तता-पागलपन । यहां 'मतु' शब्द का विशेष्य-निघ्नत्व होने से पूर्व 'मचर्' स्वरूप के सिद्ध होने पर भी कहे गए कर्म के लिए ही फिर कहा गया है । गूरिलाज्, छानिलाज्, व्रीठिलाज्, इत्यादि ।

लाँछशब्दस्योपधाया ऊत्वं वा ॥ ६२ ॥

लूँछिल् । पक्षे । लाँछिल् । नपुंसकता ।

लूँछिल्-पक्ष में-लाँछिल्-नपुंसकता-नपुंसकपन ।

संबन्धिनां तोनु ॥ ६३ ॥

नाडीसंबन्धिनां भावे अभिधेयें सति तोनु प्रत्ययो भवति । मालितोनु । पितृत्वम् । माजितोनु । मातृत्वम् । वायि तोनु । भ्रातृत्वम् । पुतरतोनु । पुत्रत्वम् । हशतोनु । श्वश्रूत्वम् । इत्यादि । कृत्रिम-

संबन्धिनां भावे तु तकारस्य चकार इष्यते। व्यसपोनु। वयस्यात्वम्। दायपोनु। धात्रीत्वम्। पाजिपोनु। नीचत्वम्। इत्यादि।

नाडीसंबन्धियों के भाव-अभिधेय होने पर 'तोनु' प्रत्यय होता है। मालितोनु-पितृत्वम्-पितापन। माजितोनु-मातृत्वम्-मातापन। वायि तोनु-भ्रातृत्वम्-भाईपन। पुत्रतोनु-पुत्रत्वम्-पुत्रपन। हशतोनु-श्वश्रूत्वम्-सासपन। इत्यादि। कृत्रिम संबन्धियों के भाव में तो 'तकार' को 'पकार' होता है। व्यसपोनु-वयस्वात्वम्-मित्रपन। दायपोनु-धात्रीत्वम्-धायापन। पाजिपोनु-नीचत्वम्-नीचपन इत्यादि।

शत्रुमित्रपितुर्ऋ बिबन्धुभ्य उत् ॥ ६४ ॥

एषां शब्दानां भावे गम्यमाने सति उत् प्रत्ययो भवति। शत्रुत्। शत्रुत्वम्। म्यत्रुत्। मित्रत्वम्। पितुरुत्। सजातीयत्वम्। ऋष्युत्। ऋषित्बम्। बन्दुत्। बन्धुत्वम्।

इन शब्दों के भाव-गम्यमान होने पर 'उत्' प्रत्यय होता है। शत्रुत्-शत्रुत्वम्-शत्रुता। म्यत्रुत्-मित्रत्वम्-मित्रता। पितुरुत्-सजातीयत्वम्-सजातीयता। ऋष्युत्-ऋषित्वम्-ऋषिपन। बन्दुत्-बन्धुत्वम्-बन्धुता।

मैत उन् ॥ ६५ ॥

शवबाचकात् मैतशब्दाद्भावे उन् प्रत्ययो भवति। मैत्। मैतुन्। शवता।

शव वाचक 'मैत्' शब्द से भाव में 'उन्' प्रत्यय होता है। मैत्-मैतुन्-शवता-मुर्दापन।

म्वंडशब्दादुस् ॥ ६६ ॥

विधवाबाचकात् म्वंड्शब्दाद्भावे उस् प्रत्ययो भवति। म्बंडुस्। वैधव्यम्।

विधवा बाचक 'म्वंड्' शब्द से भाव में 'उस्' प्रत्यय होता है। म्वंडुस्-वैधव्यम्-विधवापन।

द्रबुशब्दात्सृगार्थे ॥ ६७ ॥

स्पष्टम्। द्रबुस्। सृगः। अन्यत्र। द्रविल्। रजकता।

स्पष्ट है। द्रबुस्-सृगः। दूसरी जगह-द्रविल-रजकता-धोबीपन।

स्वन्शब्दाद्बद्‌ ॥ ६८ ॥

स्पष्टम् । स्वनबद्‌ । सापत्न्यम् ।

साफ है । स्वनबद्‌-सापत्न्यम्-सौकनपन ।

बोजुशब्दाद्बठ् च ॥ ६९ ॥

अस्माच्छब्दात् बठ् प्रत्ययो भवति पक्षे बठु प्रत्ययश्च स्यात् । बाजि बठु । साधारणता । पक्षे । बाजिबठ् । साधारणता ।

'बोजु' शब्द से 'बठ्' प्रत्यय होता है, पक्ष में 'बठु' प्रत्यय होता है । बाजिबठु-साधारणता-साधारणपन । पक्ष में—बाजिबठ्-साधारणता-साधारणपन ।

हतादिभ्यः संख्यायाम् ॥ ७० ॥

हत् आदीनां संख्यावाचकानां बटु प्रत्ययो भवति । हतबटु । शतशः । सासबटु । सहस्रशः । लछ्यबटु । लक्षशः । इत्यादि ।

'हत्' आदि संख्यावाचक शब्दों को 'बटु' प्रत्यय होता है । हतबटु-शतशः-सौ बार । सासबटु-सहस्रशः-हज़ार बार । लछ्यबटु-लक्षशः-लाख बार । इत्यादि ।

शाकादिभ्यो मुष्ट्यर्थे ॥ ७१ ॥

शाकानां मुष्टावभिधेयायां सत्यां बटु प्रत्ययो भवति । हाकबटु । शाकमुष्टिः । मुजिबटु । मूलिकामुष्टिः । ग्वगजिबटु । सर्षपशाकमुष्टिः ।

शाकों के मुष्टि अर्थ में अभिधेय होने पर 'बटु' प्रत्यय होता है । हाकबटु-शाकमुष्टिः-हाक शाक । मुजिबटु-मूलिकामुष्टिः-मूली । ग्वगजिबटु-सर्षपशाकमुष्टिः-सरसों का शाक ।

उलु ॥ ७२ ॥

अधिकारोऽयम् । इत उत्तरं वक्ष्यमाणार्थेषु उलु प्रत्ययो भवति ।

यह अधिकार है । इसके बाद वक्ष्यमाण अर्थों में 'उलु' प्रत्यय होता है ।

गाटशब्दान्निपुणे ॥ ७३ ॥

स्पष्टम् । गाटुलु-निपुणः-निपुण ।

क्वंडोऽल्पार्थे ॥ ७४ ॥

क्वंड् इति । बृहत्कुण्डं । तस्याल्पार्थे उलु प्रत्ययो भवति । क्वंडुलु । कुंडलाकृतिः ।

'क्वंड्' यह बड़े कुण्ड के अर्थ में प्रयुक्त होता है, उसके छोटे अर्थ में 'उलु' प्रत्यय होता है। क्वंडुलु-कुंडलाकृतिःकुंडल की आकृति ।

गंडो वस्तुसाकल्ये ॥ ७५ ॥

वस्तुनः साकल्ये अभिधेये ग्रन्थिवाचकाद्गंड्शब्दात् उलु प्रत्ययो भवति । गंडुलु । वस्तुसामस्त्यम् ।

वस्तु के साकल्य अर्थ में ग्रन्थिवाचक 'गंड्' शब्द से 'उलु' प्रत्यय होता है । गंडुलु-वस्तुसामस्त्यम्-वस्तुओं का समूह ।

गत्शब्दादतिशये ॥ ७६ ॥

नदीप्रवाहवाचकात् गत् शब्दादतिशयेऽर्थे उलु भवति । गतुल । बहुलम् ।

नदी के प्रवाह के वाचक 'गत्' शब्द से अतिशय अर्थ में 'उलु' होता है । गतुलु-बहुलम्-अधिक (बहुत) ।

गदश्च ॥ ७७ ॥

स्पष्टम् । गदुलु । बहुलम् ।

स्पष्ट है । गदुलु-बहुलम्-बहुत ।

टठुशब्दान्मानावपने ॥ ७८ ॥

द्रोणद्वयवाचकात् टठु शब्दात्परिमाणभाण्डार्थ उलु प्रत्ययो भवति । टठुलु । काष्ठावपनम् ।

द्रोणद्वय-वाचक 'टठु' शब्द से परिमाणभाण्ड-अर्थ में 'उलु' प्रत्यय होता है । टठुलु-काष्ठावपनम्-काठ का बना हुआ मापने बाला बर्तन ।

द्रगुप्वतुशब्दाभ्यां सादृश्ये ॥ ७९ ॥

द्रगु । मुष्टिः । प्वतु । अर्भकः । आभ्यां सादृश्यार्थे उलु प्रत्ययो भवति । द्रगुलु । पिण्डम् । प्वतुलु । शिलामयी मूर्तिः ।

द्रगु-मुष्टि-मूठमात्र । प्वतु-अर्भकः-बच्चा । इन दोनों शब्दों से समान अर्थ में 'उलु' प्रत्यय होता है । द्रगुलु-पिण्डम्-पिण्ड । प्वतुलु-

शिलामयो मूर्तिः—पत्थर को बनी मूर्ति ।

म्वल्सादोस्तद्वति ॥ ८० ॥

स्पष्टम् । म्वलुलु । बहुमूल्यम् । सादुलु । स्वादवान् ।

स्पष्ट है । म्वलुलु-बहुमूल्यम्-बहुत कीमती । सादुलु-स्वादवान्-स्वादिष्ठ ।

क्वछ् शब्दाद्भारिके ॥ ८१ ॥

स्पष्टम् । क्वछुलु । भारवाहः ।

स्पष्ट है । क्वछुलु । भारवाहः-भार ढोने बाला ।

छ्वक्शब्दात्स्पष्टतायाम् ॥ ८२ ॥

छ्वक् । शोधना । तस्मात्स्पष्टार्थे उलु प्रत्ययो भवति । छ्वकुलु । गद्गदम् ।

छ्वक्-शोधना-स्पष्टता । उससे स्पष्ट अर्थ में 'उलु' प्रत्यय होता है । छ्वकुलु-गद्गदम्-गद्गद ।

चट्शब्दाच्चौरे ॥ ८३ ॥

चट् । छदनम् । तस्माच्चौरार्थे उलु भवति । चटुलु । चौरः ।

चट्-छदनम् । उससे 'चौर' अर्थ में 'उलु' प्रत्यय हौता है । चटुलु-चौरः-चौर ।

पत्शब्दादुडुपे ॥ ८४ ॥

स्पष्टम् । पतुलु । उडुपः ।

स्पष्ट है । पतुलु-उडुपः-नक्षत्र ।

च्वत्शब्दात्स्वव्यभिचारे ॥ ८५ ॥

गुदवाचिनः च्वत्शब्दात्स्वव्यभिचारकारयितरि उलु स्यात् । च्वतुलु । स्वव्यभिचारकारयिता । गांडू ।

'गुदा' 'वाचक' 'च्वत्' शब्द से स्वयं व्यभिचार कराने वाले अर्थं में 'उलु' प्रत्यय होता है । च्वतुलु-स्वव्यभिचारकारयिता-स्वयं व्यभिचार कराने बाला (गांडू) ।

रात् दुहोस्तत्काले ॥ ८६ ॥

रात् दुहशब्दाभ्यां तत्तत्कालेऽभिधेये उलु प्रत्ययः स्यात् । रातुलु । निशाकालः । दुहुलु । दिनकालः ।

'रात् और दुह्' शब्दों से उस-उस काल के अभिधेय में 'उल्' प्रत्यय होता है। रातुल्-निशाकालः-रात का समय। दुहुल्-दिन-कालः-दिन का समय।

मूनृशब्दाद्वस्त्रे ॥ ८७ ॥

उपधाह्रस्वश्च निपात्यते। मुनुल्। औरणवासः।

उपधा-ह्रस्व का निपात किया जाता है। मुनुल्-और्णवासः-ऊन का कपड़ा।

युलु ॥ ८८ ॥

इत उत्तरं वक्ष्यमाणार्थेषु युल् भवति। अधिकारोऽयम्।

इस के अनन्तर वक्ष्यमाण अर्थों में 'युल्' प्रत्यय होता है। यह अधिकार है।

टपुजटोर्जटाधारिणि ॥ ८९ ॥

टपु शब्दात् जट्शब्दाच्च तद्धारिणोऽर्थे युल् स्यात्। टप्युल्। जटाधारी। जट्युल्। जटाधारी।

'टपु' शब्द से और 'जट्' शब्द से उनके धारण करने के अर्थ में 'युलु' प्रत्यय होता है। टप्युलु-जटाधारो-जटा धारण किए हुए। जट्युल-जटाधारी-जटाधारण किए हुए।

दाहः करुणायामुपधाह्रस्वश्च ॥ ९० ॥

स्पष्टम्। दह्युलु छुर् वदान्। सकरुणं रोदिति।

स्पष्ट है। दह्युलु छुर् वदान्-सकरुणं रोदिति-करुणा के साथ रो रहा है।

रसात्तद्वति ॥ ९१ ॥

स्पष्टम्। रस्युलु छुह् ग्यवान्। सरसं गायति।

स्पष्ट है। रस्युलु छुह् ग्यवान्-सरसं गायति-सरस गाता है।

मछ्स्निहोः स्नेहवति ॥ ९२ ॥

मछ् इति। सान्त्वनं। स्निह् इति स्नेहस्तयोः शब्दयोः युल् प्रत्ययो भवति। मछ्युल्। सस्नेहः। स्निह्युल्। सस्नेहः।

'मछ्' यह सान्त्वना अर्थ में और 'स्निह्' यह स्नेह अर्थ में 'युल्' प्रत्यय होता है। मछ्युल-सस्नेहः-स्नेहपूर्वक। स्निह्युल-सस्नेहः-

स्नेह के साथ।

मिषान्नखमांसलेशे ॥ ९३ ॥

स्पष्टम्। मिष्युलु। नखमांसलेशः।

स्पष्ट है। मिष्युलु-नखमांसलेशः-नाखूनों का लेशमात्र मांस।

स्यकः स्वादादिसादृश्ये ॥ ९४ ॥

स्यक्। सिकता। तत्सादृश्येन स्वादादावभिधेये युलु प्रत्ययः स्यात्। स्यक्युलु चूँठु। सिकतास्वादसदृशः पालोवतः। स्यकिजूबुतराथ्। सैकतिला भूमिः।

स्यक्-सिकता-रेत, उसके सादृश्य से स्वाद आदि अभिधेय में 'युलु' प्रत्यय होता है। स्यक्युलु चूँठु-सिकतास्वादसदृशः पालीवतः-सिकतास्वाद के समान…। स्यकिजू बुतराथ्-सैकतिला भूमिः-रेतीली ज़मीन।

माजूशब्दादपत्रपिष्णौ ॥९५॥

मातृवाचकात् माजूशब्दात् लज्जावदर्थे युलु प्रत्ययः स्यात्। माज्युलु। लज्जावान्।

मातृवाचक 'माजू' शब्द से लज्जा की तरह अर्थ में 'युलु' प्रत्यय होता है। माज्युलु-लज्जावान्-शर्मीला।

मलाद्यनु तद्वति ॥९६॥

मलशब्दात्तद्वदर्थे यनु प्रत्ययो भवति। मल्यनु। मलिनः।

'मल' शब्द से उस की तरह अर्थ में 'यनु' प्रत्यय होता है। मल्यनु-मलिनः-मलिन।

कूटुशब्दादल्पार्थे उनु ॥९७॥

कूटू। वृहत्काष्ठम्। तस्याल्पार्थे उनु प्रत्ययो भवति। कूटुनु। क्षुद्रकाष्ठम्।

कूटु वृहत्काष्ठम्-बड़ी लकड़ी। उसके छोटे अर्थ में 'उनु' प्रत्यय होता है। कूटुनु-क्षुद्रकाष्ठम्-छोटी लकड़ी।

दगादायुधे ॥९८॥

दग्। घातः। तस्मादायुधार्थे उनु प्रत्ययो भवति। दगनु। सृगः।
दग्-घातः-प्रहार, उस से 'आयुध' अर्थ में 'उनु' प्रत्यय होता है।

दगनु-सृगः-आयुधविशेष ।

रंग्स्वन्मन्चम् दाँद् काँदभ्यः शिल्पिनि र् ।।९९।।

एभ्यः शब्देभ्यः शिल्पिनि अर्थे र् प्रत्ययो भवति । रंग्र् । रजकः । स्वन्र्-स्वर्णकारः । मन्र् । शाङ्खिकः । चम्र् । चर्मकारः । दाँदर् । शाकविक्रयी । काँदर् । कान्दविकः ।

रंग्, स्वन्, मन्, चम्, दाँद्, काँद् इन शब्दों से शिल्पी अर्थ में 'र्' प्रत्यय होता है । रंग्र्-रजकः - धोबी । स्वन्र्-स्वर्णकारः-सुनार । मन्र्-शाङ्खिकः-शाङ्खिक । चम्र्-चर्मकारः-चमार । दाँदर्-शाकविक्रयी-शाक बेचने वाला । काँदर-कान्दविकः ।

डास्फासोर्विनाशकभेदकयोः ।।१००।।

स्पष्टम् । डास्र् । विनाशकः । नाश करने वाला । फास्र् । भेदकः । फोड़ने वाला ।

बंगात्तत्पायिनि ।।१०१।।

बंगशब्दात्तत्पायिनि अर्थे र् प्रत्ययो भवति । बंग्र् । भङ्गापः ।

'बंग' शब्द से उसके पीने के अर्थ में 'र्' प्रत्यय होता है । बंग्र्-भङ्गापः-भांग पीने वाला ।

बमोऽन्तरायिणि ।।१०२।।

बम् शब्दाद्विघ्नकारकेऽर्थे र् प्रत्ययः स्यात् । बम्र् । विघ्नकृत् ।

'बम्' शब्द से विघ्नकारक अर्थ में 'र्' प्रत्यय होता है । बम्र्-विघ्नकृत्-विघ्न डालने वाला ।

लमो विलम्बके ।।१०३।।

लमशब्दाद्विलम्बकर्त्रर्थे र् प्रत्ययो भवति । लम्र् । विलम्बकः ।

'लम' शब्द से विलम्ब करने अर्थ में 'र्' प्रत्यय होता है । लम्र्-विलम्बकः—देर करने वाला ।

लावो वार्धुषिके ।।१०४।।

लाव्शब्दात् उक्तार्थे र् प्रत्ययः स्यात् । लाव्र् । वृद्धाजीवः ।

'लाव्' शब्द से उक्त अर्थ में 'र्' प्रत्यय होता है । लाव्र्-वृद्धाजीवः-बूढ़ा आदमी ।

सालो जन्ये ।।१०५।।

साल्शब्दान्निमन्त्रितजन्यार्थे र् प्रत्ययो भवति । साल्र् । जन्याः ।

'साल्' शब्द से जन्य अर्थ में 'र्' प्रत्यय होता है। सालर्-जन्याः ।

लूटो लुण्ठके ॥१०६॥

लूट्शब्दात् लुण्ठकार्थे र् प्रत्ययः स्यात् । लूट्र् । लुण्ठकः ।

'लूट्' शब्द से लूटने के अर्थ में 'र्' प्रत्यय होता है। लूटर-लुण्ठकः-लूटने वाला ।

ब्रमो भ्रमपदे ॥१०७॥

स्पष्टम् । ब्रम्र् । भ्रमदः । बह्म देने वाला ।

लूबोऽत्यस्य दश्च ॥१०८॥

लूब्शब्दात्तद्वत्वार्थे र् प्रत्ययो भवति । अन्त्यस्य बकारस्य च दकारो भवति । लूद्र् । लोलुभः ।

'लूब्' शब्द से उसी के अर्थ में 'र्' प्रत्यय होता है और अन्त के 'बकार' को 'दकार' होता है। लूद्र्-लोलुभः- लालची ।

तौल्यपरिमिते युजु ॥१०९॥

तुलया परिमिते वस्तुनि युनु प्रत्ययो भवति । तच्च द्विधा। एकं स्वयं वस्तु कियदस्तीति द्वितीयं कियन्मितस्य वस्तुन आधारभूतमस्तीत्यनयोर्द्वयोरेव योगारम्भः। त्राक्चनु कठ्। द्रौणिको मेषः। सीर्यनु थाल्। प्रास्थिकः स्थालः। खार्यनु बोरु। खारिको भारः। त्रक्चनु नटु। द्रौणिकः कुम्भः। सीर्यनुत्रान। प्रास्थिकं भाण्डम्। अत्र त्रख् शब्दस्योपधाया दीर्घः सेरशब्दस्य एकारस्य ईकारो दृश्यते। प्रस्थवाची सीर्यनु शब्दः। पलवाची पल्शब्दापरपर्यायः पल्यनु-शब्दश्चेतरावबधार्यौ। अन्यत्र। च्वत्रोकु। चतुर्द्रौणिकः। च्वत्रा-क्यनु। चतुर्द्रौणिकः।

तराजू से तोले जाने पर वस्तु में 'युनु' प्रत्यय होता है और वह दो प्रकार का है। एक स्वयं वस्तु कितनी है और दूसरा कितना तुली हुई वस्तु का आधारभूत है। इन दोनों में ही योगारम्भ है।

त्राक्यनु कठ्-द्रौणिको मेषः-द्रोण मात्र भेड़। सोर्यनु थाल्-प्रास्थिकः-स्थालः-प्रस्थमात्र थाल। खार्यनु बोरु्-खारिको भारः-खारमात्र भार। त्राक्यनु् नटु-द्रौणिकः कुम्भः-द्रोणमात्र कुम्भ। सीर्यनु वान-प्रास्थिकं भाण्डम्-प्रस्थ मात्र बर्तन। यहां 'त्रख्' शब्द की उपधा को दीर्घ 'सेर्' शब्द के 'एकार' को 'ईकार' दिखाई देता है। प्रस्थवाचक 'सीर्यनु' शब्द, पलवाचक पल् शब्द और दूसरा पर्याय 'पल्यनु्' शब्द जानने चाहिए। दूसरी ज़गह-च्वत्रोकु्-चतुर्द्रौणिकः-चार द्रोण मात्र। च्चत्राक्यनु-चतुर्द्रौणिकः-चार द्रोणमात्र।

पाँजुवुशब्दस्य वस्य शश्च ॥ ११० ॥

द्रोणार्धवाची पाँजुवु शब्दस्तत्तौल्येनाभिहिते वस्तुनि युनु प्रत्ययो भवति वकारस्य च शकारो भवति। पाँज़शनु। अर्धद्रौणिकः।

द्रोणार्ध का वाचक 'पाँजुवु' शब्द उसके बराबर तोल से कही जाने वाली वस्तु में 'युनु' प्रत्यय होता है और 'वकार' को शकार होता है। पाँज़शनु्। अर्धद्रौणिकः-अर्धद्रोणमात्र।

षष्टयादेर्मौल्यसंख्यायां च ॥ १११ ॥

मौल्यसंख्यया वस्तुनि अभिधेये सति पष्टेः परतः यनु प्रत्ययो भवति। शीठ्यनु्। षाष्टिकः। सतत्यनु। साप्ततिकः। षष्टयादेः किम्। दहन् हन्दु् दाँद्। दशानां वृषः।

मौल्य संख्या से वस्तु के कथन पर षष्टी से परे 'यन' प्रत्यय होता है। शीठ्यनु-षाष्टिकः-साठवां। सतत्यनु्-साप्ततिकः-सत्तरवां। षष्टयादि से क्या? दहन् हन्दु दाँद्-दशानां वृषः-दसों का बैल।

सर्वनामशब्देभ्यश्च ॥ ११२ ॥

तीत्यनु। तावतिकः। यीत्यनु। यावतिकः। कूत्यनु। कियतिकः-ईत्यनु। एतावतिकः।

सर्वनामशब्दों से भी 'यनु' प्रत्यय होता है। तीत्यनु-तावतिकः-उतना। यीत्यनु-यावतिकः-जितना। कूत्यनु-कियतिकः-कितना। ईत्यनु्-एतावतिकः-इतना।

वर्षार्थे च ॥ ११३ ॥

बार्ष्यनु । वार्षिकः ।

वर्ष के अर्थ में 'यनु' प्रत्यय होता है । बार्ष्यनु-वार्षिकः-सालाना ।

संख्यायाश्च पूरणे युमु ॥ ११४ ॥

संख्यायाः पूरणेऽर्थे युमु प्रत्ययो भवति च शब्दात्सर्वनामशब्देभ्यश्च । अक्यमु । प्रथमः । दह्यमु । दशमः । बुह्यमु । विंशः । हत्यमु । शततमः । सास्यमु । सहस्रतमः । पुंस्त्रियोः कतिशब्दवाचकाभ्यां कचू कच शब्दाभ्यामपि विज्ञेयः । कच्यमु । कतमः । यीत्यमु । यतमः । तीत्यमु । ततमः । ईत्यमु । इतमः । स्त्रलिङ्गे तु युकारस्य इकारो भवति । कचिमू । कतमा । यीतिमू । यतमा । इत्यादि ।

संख्या से पूरण-अर्थ में 'युमु' प्रत्यय होता है 'च' शब्द से और सर्वनामशब्दों से । अक्यमु-प्रथमः-पहला । दह्यमु-दशमः-दसवां बुह्यमु-विंशः-बीसवां । हत्यमु-शततमः-सौवां । सास्यमु-सहस्रतमः-हज़ारवां । पुंलिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग में कति शब्द वाचक 'कचू और कच' शब्दों से भी जानना । कच्यमु-कतमः-कौन सा । यीत्यमु-यतमः-जौन सा । तीत्यमु-ततमः-तौन सा । ईत्यमु-इतमः-इतना सा । स्त्रीलिङ्ग में तो 'युकार' को 'इकार' होता है । कचिमू-कतमा-कौन सी । यीतिमू-यतमा-ज़ौन सी । इत्यादि ।

अष्टसंख्यावधि शतार्थे हत् ॥ ११५ ॥

स्पष्टम् । अख्हथ् । एकशतम् । ज़ह्ह्थ् । शतद्वयम् । त्रिहथ् । त्रिशती । इत्यादि ।

स्पष्ट है । अख्हथ्-एकशतम्-एक सौ । ज़ह्हथ्-शतद्वयम्-दो-सौ । त्रिहथ्-त्रिशती-तीन सौ, इत्यादि ।

तत्परतो ह्रस्य शः ॥ ११६ ॥

नवसंख्यामारभ्य शतार्थे हकारस्य शकारो भवति । नव्शथ् । नवशतानि । काह्-शथ् । एकादशशतानि । बाह्शथ् । द्वादशशतानि । इत्यादि ।

नौ संख्या से लेकर 'सौ' अर्थ में 'हकार' को 'शकार' होता है । नव्शथ्-नवशतानि-नौ सौ । काह्शथ्-एकादशशतानि । ग्यारह सौ । बाह्शथ्-द्वादशशतानि-बारह सौ । इत्यादि ।

देशभवे इ प्रत्ययश्च ॥ ११७ ॥

स्पष्टम् । सोव्पूरि् नाव् । सय्यपुरजा नौः । इरानि गुरु् । ईरानदेशजोऽश्वः । चीनि खोसु । चीनदेशभवः कंसः । हिन्दुस्तानि कपर् । इत्यादि ।

देश में पैदा होने पर 'इ' प्रत्यय होता है । सोव्पूरि नाव्-सय्य-पुरजा नौः-सय्यपुर से पैदा हुई नौका । ईरानि गुरु-ईरानदेशजोऽ-श्वः-ईरानदेश में पैदा हुआ घोड़ा । चीनि् खोसु्-चीनदेशभवः कंसः-चीन देश में पैदा हुआ कंस (कौल) । हिन्दुस्तानि् कपर्-हिन्दुस्तान में बना कपड़ा ।

कशीर्देशभवे उरु अन्त्यस्वरादिलोपोपधादीर्घौ च ॥ ११८ ॥

काश्मीरभाषायां कश्मीरः कशीर् इति स्त्रीलिङ्गवाची शब्दः कथ्यते । तस्या उद्भूते वस्तुनि अभिधेये सति उरु् प्रत्ययो भवति अन्त्य स्वराद्यवयवस्य लोप उपधायाश्च दीर्घो भवति । काशरु क्वंग् । काश्मीरं कुङ्कुमम् । काशरु् पश्मीन । काश्मीरं वहुमूल्यं (राङ्कवम्) । काशिरू् क्वठ् । काश्मीरं कुष्ठम् । इत्यादि ।

काश्मीरी भाषा में 'कश्मीर-कशीर्' यह स्त्रीलिङ्गवाचक शब्द कहा जाता है । वहां से पैदा हुई वस्तु के अभिधेय में होने पर 'उरु' प्रत्यय होता है । अन्त के स्वरादि अवयव का लोप और उपधा को दीर्घ होता है । काशरु् क्वंग्-काश्मीरं कुङ्कुमम्-काश्मीर का केसर । काशरु् पश्मीन-काश्मीरं वहुमूल्यं राङ्कवम्-काश्मीर का वहुमूल्य पशमीना । काशिरू् क्वठ्-काश्मीरं कुष्ठम्-काश्मीर की कुठ ।

देशकालभवे चोकु अस्त्रियाम् ॥ ११९ ॥

देशभवे कालभवे च वस्तुनि अभिधेये उकु प्रत्ययो भवति स्त्रीलिङ्गं वर्जयित्वा । कत्यकु । कुत्रत्यः । तत्यकु । तत्रत्यः । इत्यकु । इहत्यः । यत्यकु । यत्रत्यः । हुत्यकु । अत्रत्यः । गरुकु् । गृह्यः । करुकु् । किंकालिकः । रातकु् । ह्योभवः । परसुकु् परारिभवः । इत्यादि । अज़्शब्दादिकारागमश्चेष्यते । अज्युकु । अद्यतनः ।

देशज और कालज वस्तु अभिधेय में स्त्रीलिङ्ग को छोड़ कर

'उकु' प्रत्यय होता है। कत्यकु्-कुत्रत्यः-कहां का। तत्यकु्-तत्रत्यः-वहां का। इत्युकु्-इहत्यः-यहां का। यत्यकु्-यत्रत्यः-जहां का। हुत्यकु-अत्रत्यः-यहां का। गरुकु्-गृह्यः-ग्रहण करने योग्य। करुकु्-किंकालिकः-किस समय का। रातकु्-ह्यो भवः-वीते हुए कल का। परसुकु-आगे आने वाले परसों का-परारिभवः। इत्यादि। 'अज्' शब्द से 'इकार' का आगम होता है। अज्युकु-अद्यतनः-आज का।

मिलोपयुक्तात्पारिप्रत्ययान्तात्सर्वनाम्नो यमु ॥ १२० ॥

उक्तप्रत्ययो भवतीति स्पष्टम्। पार्यमु। पारदेशजः। कपार्यमु। किं पार्श्वः। तपार्यमु। तत्पार्श्वः। यपार्यमु। यत्पार्श्वः हुपार्यमु। अपारजः। इपार्यमु। एतत्पार्श्वः। अपार्यमु। पारजः। अस्त्रियां किम्। कतिचू। कुत्रत्या। एवं। पारिमू। पारजा। इत्यादि। दिग्भवे च दछिनु खोवरुशब्दौ वर्जयित्वा यमु भवति। ब्रूंठयमु। अग्रिमः। पत्यमु। पश्चिमः। होर्यमु। वा। प्यठ्यमु्। उर्ध्वः। तल्यमु। वा। ब्वन्युमु। अधरः। अन्दर्यमु्। आन्तरः। न्यबर्यमु। वाह्यः। अद्वौ प्रोक्तौ किम्। दछि्न्यकु्। दक्षिणः। खोवर्यंकु। वामः।

'यमु' प्रत्यय होता है, यह स्पष्ट है। पार्यमु-पारदेशजः-पार देश में पैदा हुआ। कपार्यमु-किं पार्श्वः-क्या पास। तपार्यमु-तत्पार्श्वः-उस के पास। यपार्यमु-यत्पार्श्वः-जिस के पास। हुपार्यमु्-अपारजः-पार में पैदा नहीं हुआ। इपार्यमु-एतत्पार्श्वः-इस के पास। अपार्यमु-पारजः-पार पैदा हुआ। पुंलिङ्ग में क्या? कतिचू-कुत्रत्या-कहां की। इसी तरह-पारिमू-पारजा-पार पैदा हुई। इत्यादि। दिग्भव में 'दछिनु खोवरु' शब्दों को छोड़ कर 'यमु' प्रत्यय होता है। ब्रूंठ्यमु-अग्रिमः-आगे का। पत्यमु-पश्चिमः-पश्चिम। होर्यमु, वा प्यठ्यमु-ऊर्ध्वः-ऊपर। तल्यमु-वा-ब्वन्युमु्-अधरः-नीचे। अन्दर्यमु-आन्तरः-भीतरी। न्यबर्यमु-वाह्यः-वाहिर का। दो को छोड़कर कहने से क्या? दछि्न्यकु्-दक्षिणः-दांया। खोवर्यंकु्-वामः-वांया।

समूहे ख्यलु ॥ १२१ ॥

स्पष्टम्। गोवूख्यलु। गोसमूहः। गुरि्ख्यलु्। अश्वसमूहः। गुपनु्ख्यलु्। गोपशुसमूहः। तीरिख्यलु। मेषादि समूहः। जनानख्यलु स्त्रैणम्। महनिविख्यलु। मानुष्यकम्। इत्यादि।

समूह में 'ख्यलु' प्रत्यय होता है। गोवूख्यलु-गोसमूहः। गायों का समूह। गुरि्ख्यलु-अश्वसमूहः-घोड़ों का समूह। गुपन्ख्यलु-गोपशुसमूहः-गाय-पशुओं का समूह। तीरिख्यलु-मेषादिसमूहः-भेड़ आदि का समूह। जनानख्यलु-स्त्रैणम्-स्त्रियों का समूह। महनिविख्यलु-मानुष्यकम्-मनुष्यों का समूह। इत्यादि।

लूक्शब्दादय् ॥ १२२ ॥

लूक्शब्दात्समूहे अय् भवति। लूकय्। जनता।

'लूक्' शब्द से समूह अर्थ में 'अय्' होता है। लूकय्-जनता-लोग।

पानशब्दादुनु उपधाह्रस्वश्च ॥ १२३ ॥

'पान' शब्द से 'उनु' प्रत्यय और उपधा को ह्रस्व होता है: पनुनु-आत्मीयः-अपना।

पर्शब्दादुदु ॥ २४ ॥

'पर्' शब्द से 'उदु' प्रत्यय होता है। परुदु-परकीयः-पराया।

तिहादिभ्यः प्रकारोक्तौ थः ॥ १२५ ॥

तिह् यिह् आदिभ्यः पञ्चभ्यः प्रकारवचने गम्यमाने थ प्रत्ययो भवति। तिथ। तथा। यिथ। यथा। क्यथ्। कथम्। इथ। इत्थम्। हुथ्।। इत्थम्,

तिह्-यिह् आदि पांचों से प्रकार वचन वा गम्यमान अर्थ में 'थ' प्रत्यय होता है। तिथ-तथा-वैसे। यिथ-यथा- जैसे। क्यथ्-कथम्-कैसे। इथ-इत्थम्-ऐसे। हुथ्-इत्थम्-ऐसे।

उपमाने थु ॥ १२६ ॥

तिह् आदिशब्दैरुपमाने वाच्ये सति थु प्रत्ययो भवति। तिथु्। तादृशः। यिथु्। यादृशः। किथु। कीदृशः। इथु। एतादृशः। हुथु्। ईदृशः। लिङ्गप्रकरणोक्तनिश्चयप्रत्ययान्ताश्च (सू. २।३।२१) यथा। तिथय्। तथैव। यिथय्। यथैव। क्यथय्। कथमेव। इथय्। इत्थमेव। हुयय्। इत्थमेव। एवं बुद्धिमता निश्चयार्थयप्रत्ययस्य सर्वत्र प्राप्तिरवधार्या।

तिह्-आदि शब्दों से उपमान वाच्य अर्थ में 'थु' प्रत्यय होता है। तिथु-तादृशः-वैसा। यिथु-यादृशः-जैसा। किथु-कीदृशः-कैसा। इथु-एतादृशः-ऐसा। हुथु-ईदृशः-ऐसा। लिङ्गप्रकरणोक्तनिश्चयप्रत्ययान्ताश्च (सू.२।३।२१) जैसे-तिथय्-तथैव-वैसे ही। यिथय्-यथैव-जैसे ही। क्यथय्-कथमेव-किसी तरह ही। इथय्-इत्थमेव-इस तरह ही। हुथय्-इत्थमेव-इस तरह ही। इस तरह बुद्धिमान् पुरुष को निश्चय अर्थ में 'य' प्रत्यय की सब जगह प्राप्ति का निश्चय कर लेना चाहिए।

तस्मात्परौ पाठ्ि पाठ्िन् वा ॥ १२७ ॥

तस्मात्प्रकारप्रत्ययान्तात् परः पाठ्ि प्रत्ययः पाटिन् प्रत्ययो वा प्रयोज्यः। तिथपाठ्। तथा। यिथपाठ्ि। यथा। क्यथ्पाठ्ि। कथम्। इथ पाठ्ि। इत्थम्। हुथपाठ्ि। इत्थम्। एवं तिथपाठिन्। यिथपाठ्िन्। इत्यादि।

उस प्रकार प्रत्ययान्त से परे 'पाठ्ि' प्रत्यय अथवा 'पाठिन्' प्रत्यय का प्रयोग करना चाहिए। तिथपाठ्ि-तथा-वैसा। यिथपाठ्ि-यथा-जैसा। क्यथ्पाठ्ि-कथम्-कैसे। इथपाठ्ि-इत्थम्-इस तरह। हुथपाठ्ि-इत्थम्-इस तरह। इसी तरह-तिथपाठ्िन्, यिथपाठ्िन्। इत्यादि।

अन्यतोऽपि च ॥ १२८ ॥

तौ पाठिपाठिन् प्रत्ययौ अन्येभ्योऽपि दृश्येते। वियपाठिन्। इतरथा। सारिय्पाठ्ि। सर्वथा। हलिपाठ्ि। वक्रप्रकारम्। इत्यादि ज्ञेयम्। एवं सम्बन्धषष्ठ्यन्तेभ्यः सर्वेभ्यः शब्देभ्यो बोध्यम्।

वे 'पाठ्ि-पाठिन्' प्रत्यय अन्यों से भी देखे जाते हैं। वियपाठिन्-इतरथा-और तरह से। सारिय्पाठि-सर्वथा-सब तरह से। हलिपाठि-वक्रप्रकारम्-टेढाप्रकार। इत्यादि।

क्याहो ह्रस्वः ॥ १२९ ॥

क्याह् शब्दस्य ह्रस्वो भवति। क्यह् पाठ्ि। कथम्। क्यथताञ्पाठ्ि। केनापि प्रकारेण।

'क्याह्' शब्द को ह्रस्व होता है। क्यह् पाठि-कथम्-किस तरह। क्यथताञ्पाठि-केनापि प्रकारेण-किसी भी प्रकार से।

प्राणिकृतादेशेभ्यो रंग च ।। १३० ।।

प्राणिनो द्वितीयादीनामेकवचनेषु (सू० २।३।५) ये तमादय आदेशाः कृतास्तेभ्यः प्रकारवचने गम्यमाने रंग प्रत्ययो भवति च शब्दादन्येभ्योऽपि । तमिरंग । तथा । यमिरंग । यथा । कमिरंग । कथम् । इमिरंग । इत्थम् । हुमिरंग । इत्थम् । अमिरंग । इत्थम् । अकिरंग । एकधा । द्वयिरंग । द्विधा । त्र्ययरंग । त्रिधा । सारिरंग । सर्वथा । यचिरंग । वा । सिठाहिरंग । वहुधा । इत्यादि ज्ञेयम् । साधनं पूर्ववत् ।

प्राणि के द्वितीयादि एकवचनों में (सू० २।३।५) से जो 'तम' आदि आदेश किए गए, उन से प्रकारवचनगम्यमान अर्थ में 'रंग' प्रत्यय होता है और अन्य शब्दों से भी यही प्रत्यय होता है। तमिरंग-तथा-वैसा। यमिरंग-यथा-जैसा। कमिरंग-कथम्-कैसा। इमिरंग-इत्थम्-इस तरह। हुमिरंग-इत्थम्-इस तरह। अमिरंग-इत्थम्-इस तरह। अकिरंग-एकधा-एक प्रकार। द्वयिरंग-द्विधा-दो प्रकार। त्र्ययरंग-त्रिधा-तीन प्रकार। सारिरंग-सर्वथा-सब तरह। यचिरंग-वा-सिठाहिरंग-वहुधा-वहुत बार। इत्यादि जानना। साधन पहिले की तरह।

प्रत्ययेषु हलोपः सर्वत्र ।। १३१ ।।

सर्वत्र लिङ्गप्रकरणे धातुप्रकरणे च प्रत्ययेषु परेषु हकारस्य लोपो भवति । क्यथ पाठिन् । कथम् । क्याह् शब्दात् थ प्रत्ययान्तात् पाठिन् प्रत्ययश्च अनेन हकारस्य लोपः । क्याहो ह्रस्वः (सू० १२९) इत्यनेनाकारस्याकारः ।

सब जगह लिङ्ग प्रकरण और धातु प्रकरण में परे के प्रत्ययों में 'हकार' का लोप होता है। क्यथ पाठिन्-कथम्-किस तरह। 'क्याह्' शब्द से 'थ' प्रत्ययान्त से 'पाठिन्' प्रत्यय और इस से 'हकार' का लोप। क्याहो ह्रस्वः (सू. १२९) इससे 'आकार' को 'अकार' हुआ।

अप्राणिभ्यः स्थाने इ प्रत्ययश्च ।। १३२।।

तेभ्यः अप्राणिकृतादेशेभ्यः सामान्यस्थाने गम्यमाने इ प्रत्ययो भवति । तत्र पञ्चम्यां प्रसिद्धता सप्तम्यां तु पूर्वस्वरस्याप्रसिद्धता ।

तति । तनि । ततः तत्र । यति । यति । यतः । यत्र । कती । कुतः । कुत्र । इति । इति । अतः । अत्र । हुति । हुति । अमुतः । अमुत्र । अत्ति । अति । अतः । अत्र ।

उन अप्राणिकृत आदेशों से सामान्यस्थान गम्यमान अर्थ में 'इ' प्रत्यय होता है । वहां पञ्चमी में प्रसिद्धता, सप्तमी में तो पूर्वस्वर की अप्रसिद्धता । तति-तनि-ततः-तत्र-वहाँ । यति-यति-यतः-यत्र-यहां । कति-कुतः-कुत्र-कहां । इति-इति-अत-अत्र-यहां । हुति-हुति-अमुतः-अमुत्र-वहां, अति-अति-अतः-अत्र-यहां ।

तस्मादनऽनसौ वा ॥ १३३ ॥

तस्मात् इ प्रत्ययान्ताच्छब्दात् अन् प्रत्ययः अनस् प्रत्ययो वा भवति । कत्यन् वा कत्यनस् । कुत्र । तत्यन् वा तत्यनस् । तत्र । यत्यन् वा यत्यनस् । यत्र । अत्यन् वा अत्यनस् । अत्र । एवमन्यत् । अनसः सकारस्य नकारोऽपि दृश्यते । यत्यनन् । यत्र । अत्यनन् । अत्र । एवमन्यत् ।

उस 'इ' प्रत्ययान्त शब्द से 'अन्' प्रत्यय वा 'अनस्' प्रत्यय होता है । कत्यन् वा कत्यनस्-कुत्र-कहां । तत्यन् वा तत्यनस्-तत्र-वहां । यत्यन् वा यत्यनस्-यत्र-यहाँ । अत्यन् वा अत्यनस्-अत्र-यहाँ । इसी तरह और । 'अनस्' के 'सकार को 'नकार' भी देखा जाता है । यत्यनन्-यत्र-यहां । अत्यनन्-अत्र-यहां । इसी तरह और ।

पञ्चम्यां प्यठान्तोऽपि ॥ १३४ ॥

स एव इ प्रत्ययान्तः शब्दः प्यठान्तो विशेषतः पञ्चमी-प्रयोगो भवति । ततिप्यठ । ततः । यतिप्यठ । यतः । कतिप्यठ । कुतः । इति-प्यठ । इतः । हुतिप्यठ । अमुतः । गरप्यठ । गृहतः । गामप्यठ । ग्रामतः । इत्यादि ।

वही 'इ' प्रत्ययान्त शब्द प्यठान्त विशेषकर पञ्चमी में प्रयुक्त होता है । ततिप्यठ-ततः-वहां से । यति प्यठ-यतः-यहां से । कति-प्यठ-कुतः-कहां से । इतिप्यठ-इतः-यहां से । हुतिप्यठ-अमुतः-वहां से । गरप्यठ-गृहतः-घर से । गामप्यठ-ग्रामतः-ग्राम से । इत्यादि ।

सप्तम्यामनन्तादी च ॥ १३५ ॥

अन् प्रत्ययान्ताच्छब्दात्सप्तम्यां विशेषत ई प्रत्ययोऽपि भवति । तत्यनी । तत्र । यत्यनी । यत्र । कत्यनी । कुत्र । इत्यनी । अत्र । हुत्यनी । अमुत्र ।

'अन्' प्रत्ययान्त, शब्द से सप्तमी में विशेषकर 'ई' प्रत्यय भी होता है । तत्यनी-तत्र-वहां । यत्यनी-यत्र-यहां । कत्यनी-कुत्र-कहां । इत्यनी-अत्र-यहां । हुत्यनी-अमुत्र-वहां ।

ओर्तुप्रत्ययौ वान्त्यलोपश्च ॥ १३६ ॥

तेभ्यः अप्राणिकृतादेशेभ्यः शब्देभ्यः सप्तम्यां ओर् प्रत्ययः तु प्रत्ययो वा भवति । अन्त्याक्षरस्य च लोपो भवति । तु प्रत्ययस्योकारान्तत्वात्पूर्वस्वरस्याप्रसिद्धता ज्ञेया । तोर् । तत्र । योर् । यत्र । कोर् । कुत्र । योर् । अत्र । होर वा ओर । अमुत्र । एवम् । ततु । यतु । कतु । इतु । हतु । अतु । विज्ञेयाः । तु प्रत्ययान्तात् त् प्रत्ययश्चेष्यते । ततुत् । यतुत् । कतुत् । इतुत् । हतुत् । अतुत् । इत्यादि । य प्रत्यये ओकारस्य ऊकार इष्यते । तूर्य । तत्रैव । यूर्य । यत्रैव । कूर्य । कुत्रैव । यूर्य । अत्रैव । ऊर्य । अमुत्रैव । एवं ततुय् । यतुय् । कतुय् । इतुय् । हतुय् । अतुय् । बोध्याः ।

उन अप्राणिकृत आदेश शब्दों से सप्तमी में 'ओर्' प्रत्यय वा 'तु' प्रत्यय होता है और अन्त के अक्षर का लोप होता है । 'तु' प्रत्यय के ऊकारान्त होने से पूर्वस्वर की अप्रसिद्धता जानना । तोर्-तत्र-वहां । योर्-यत्र-यहां । कोर्-कुत्र-कहां । योर्-अत्र-यहां । होर वा ओर-अमुत्र-वहां । इस तरह-ततु, यतु, कतु, इतु, हतु, अतु, जानना । 'तु' प्रत्ययान्त होने से 'त्' प्रत्यय होता है । ततुत्, यतुत्, कतुत्, इतुत्, हतुत्, अतुत्, इत्यादि । 'य' प्रत्यय में 'ओकार' को 'ऊकार' होता है । तूर्य-तत्रैव-वहीं । यूर्य-यत्रैव-यहीं । कूर्य-कुत्रैव-कहीं । यूर्य-अत्रैव-यहीं । ऊर्य-अमुत्रैव-वहीं । इसी तरह-ततुय्, यतुय्, कतुय्, इतुय्, हतुय्, अतुय्, जानना ।

पञ्चम्यामपर ओर् ॥ १३७ ॥

अकारः परो यस्मात्तथाविधः ओर प्रत्ययः पञ्चम्यां भवति । तोर । ततः । योर । यतः । कोर । कुतः । होर वा ओर । अमुतः । इति ।

'अकौर' परे है जिससे वैसा 'और' प्रत्यय पञ्चमी में होता है। तोर-ततः-उससे। यतः-योर-जिससे। कोर-कुतः-कहाँ से। होर वा ओर-अमुतः-वहाँ से। इति।

तिहादिभ्यः कालेऽलिः ॥ १३८ ॥

तिहादिभ्यः कालविषये अलि प्रत्ययो भवति। त्यलि। तदा। य्यलि। यदा। क्यलि। कदा। प्रत्ययस्य इदन्तत्वात्पक्षे पूर्वस्वरस्याप्रसिद्धता वोध्या। त्यलि। य्यलि। क्यलि। इति।

तिह्-आदि से कालविषय में 'अलि' प्रत्यय होता है। त्यलि-तदा-तब। य्यलि-यदा-जब। क्यलि-कदा-कब। प्रत्यय के इदन्त होने से पक्ष में पूर्वस्वर की अप्रसिद्धता जानना। त्यलि। य्यलि। क्यलि। इति।

इह्हुहोर्वुञ्व्वञादेशौ ॥ १३९ ॥

अनयोः शब्दयोः सविभक्तिकयोः वुञ् व्वञ् आदेशौ क्रमेण भवतः। वुञ्। एतर्हि। व्यञ्। अधुना।

सविभक्तिक इन शब्दों में 'वुञ् और व्वञ्' आदेश क्रम से होते हैं। वुञ्-एतर्हि-यह। व्वञ्-अधुना-अब।

क्याहः कर् ॥ १४० ॥

क्याह् शब्दस्य कालविषये कर् आदेशो भवति। कर्। कदा।

'क्याह्' शब्द को कालविषय में 'कर्' आदेश होता है। कर्-कदा-कब।

उत्वन्ताभ्यां रात्द्रह्भ्यामिः ॥ १४१ ॥

स्पष्टम्। रात्लि। नक्तम्। द्रह्लि। दिवा।

स्पष्ट है। रातलि। नक्तम्। रात्रि। द्रह्लि। दिवा। दिन।

रातः कितु च ॥ १४२ ॥

स्पष्टम्। रात्कितु। नक्तम्।

स्पष्ट है। रात्कितु-नक्तम्-रात्रि।

अन्यतोऽपि च ॥ १४३ ॥

न्यहफ्वलि। प्रभातम्। सुलि। अचिरेण। यचूकालि्। चिरेण। कालि्। कालेन। कालि्क्यथ्। परतरेद्युः। ततिकालि्क्यथ्। परतर-

तरेद्युः । कमिविज़ि । कदा । तमिविज़ि । तस्मिन्काले । यमिविज़ि । यस्मिन्काले । इत्यादयो विज्ञेयाः ।

न्यहृफ्वलि-प्रभातम्-सुवह् । सुलि-अचिरेण-जल्दी । यचूकालि्-चिरेण-देर से । कालि्-कालेन-समय से । कालिक्यथ्-परतरेद्युः-परसों । ततिकालि्क्यथ्-परत रतरेद्युः-परसों से भी परे का दिन । कमिविज़ि-कदा-कब । तमिविज़ि-तस्मिन्काले-उस समय । यमिविज़ि-यस्मिन्काले-जिस समय । इत्यादि जानना ।

कोज़ु मिम्युज़ुशब्दाभ्यां स् ।। १४४ ।।

आभ्यां शब्दाभ्यां काले गम्यमाने स् प्रत्ययो भवति । काजिस् । प्राह्णम् । मिमिज़िस्-अपराह्णम् ।

कोज़ु और मिम्युज़ु शब्दों से कालगम्यमान अर्थ में 'स्' प्रत्यय होता है । काजिस् प्राह्णम्-प्राह्ण । मिमिज़िस्-अपराह्णम्-अपराह्ण ।

शेषेभ्योऽप्यन् ।। १४५ ।।

शेषेभ्यो रात्रिदिनविभागेभ्यः अन्येभ्योऽपि अन् प्रत्ययो भवति । मन्दिञन् । मध्याह्णम् । दुपहरन् । मध्याह्णम् । कालचनन् । सायम् । बतन्यंगन् वा बतदवन् । नक्तम् । अड्रातन् । अर्धरात्रे । पतिम् पहरन् । रात्रिपश्चाद्यामे । एवमितरभाषाशब्देभ्योऽपि व्यवह्रियते : सुबहन् । प्रभातम् । शामन् । सायम् । इति ।

शेष रात-दिन के विभाग से और औरों से भी 'अन्' प्रत्यय होता है । मन्दिञन्-दुपहरन् । मध्याह्णम् । मध्याह्ण । कालचनन् । सायम् । शाम । बतन्यंगन् वा बतदवन्-नक्तम्-रात । अड्रातन्-अर्धरात्रे-आधी रात । पतिम्पहरन्-रात्रिपश्चाद्यामे-रात के पिछले पहर में । इस तरह दूसरे भाषा के शब्दों से भी व्यवहृत होता है । सुबहन्-प्रभातम्-प्रभात । शामन्-सायम्-शाम । इति ।

अः प्रत्यर्थे लिङ्गात्पूर्वः प्रथ् च ।। १४६ ।।

प्रतिशब्दस्यार्थे गम्यमाने अप्रत्ययो भवति लिङ्गात्पूर्वः प्रथशब्दश्च प्रयोज्यः । प्रथ्द्वह । प्रतिदिनम् । प्रथ्पहर । प्रतिप्रहरम् । प्रथ्वरिह्य । प्रतिवर्षम् । इत्यादि ।

द्वितीयान्तेभ्यः शब्देभ्योऽपि दृश्यते । प्रथ् अकिस् । प्रत्येकम् । प्रथ्विज़ि । प्रतिकालम् । प्रथ्महनिविस् । प्रतिपुरुषम् । प्रथ्ज़नानि । प्रतिस्त्रियम् । इत्यादि बोध्यम् ।

प्रतिशब्द के अर्थ में गम्यमान में 'अ' प्रत्यय होता है और 'प्रथ्' शब्द लिङ्ग से पूर्व प्रयुक्त करना चाहिए । प्रथ्द्वह-प्रतिदिनम्-प्रतिदिन । प्रथ्पहर-प्रतिप्रहरम्-प्रतिप्रहर । प्रथ्वरिह्य-प्रतिवर्षम् । प्रतिवर्ष । इत्यादि ।

द्वितीयान्त शब्दों से भी देखा जाता है । प्रथ् अकिस्-प्रत्येकम्-प्रत्येक । प्रथ्विज़ि-प्रतिकालम्-प्रतिकाल । प्रथ्महनिविस्-प्रतिपुरुषम्-प्रतिपुरुष । प्रथ्ज़नानि-प्रतिस्त्रियम्-प्रतिस्त्री । इत्यादि जानना चाहिए ।

द्वहः प्रथ्लोपो वा ॥ १४७ ॥

द्वहशब्दात्पूर्वस्य प्रथ्शब्दस्य लोपो भवति । द्वह । प्रतिदिनम् । 'द्वह' शब्द से पूर्व 'प्रथ्' शब्द का लोप होता है । द्वह-प्रतिदिनम्-हररोज़ ।

य प्रत्यये नित्यम् ॥ १४८ ॥

तस्मादेव द्वह् शब्दात् य प्रत्यये परे नित्यं प्रथ् शब्दस्य लोपो भवति । द्वहय् । प्रतिदिनमेव । प्रथ् द्वहय् । इति तु न भवति ।

उसी 'द्वह्' शब्द से 'य' प्रत्यय परे रहते नित्य 'प्रथ्' शब्द का लोप होता है । द्वहय्-प्रतिदिनमेव-प्रतिदिन ही । 'प्रथ्द्वहय्' यह तो नहीं होता ।

वीप्सायामाद्यात्पथन्वर्थे ॥ १४९ ॥

अनुशब्दस्यार्थे गम्यमाने वीप्सायां द्विरुक्तशब्दस्य आद्यात् पथ् प्रत्ययो भवति । द्वहपथ् द्वह । अनुदिनम् । वरिह्यपथ् वरिह्य । अनुवर्षम् । ज़निपथ् ज़नि । अनुजनम् । इत्यादि ।

'अनु' शब्द के अर्थ में गम्यमान-वीप्सा में द्विरुक्तशब्द के पूव 'पथ्' प्रत्यय होता है । द्वहपथ् द्वह-अनुदिनम्-दिन के बाद । वरिह्यपथ् वरिह्य-अनुवर्षम्-वर्ष के बाद । ज़निपथ् ज़नि-अनुजनम्-मनुष्य के बाद । इत्यादि ।

इह् ब्रोँठ्शब्दाभ्यां वर्षार्थे उस् ॥ १५० ॥

स्पष्टम् । इहस् । ऐषमः । ब्रोँठुस् । आगामिवर्षे ।

स्पष्ट है । इहस्-ऐषमः- इस । ब्रोँठुस्-आगामिवर्षे-आने वाले वर्ष में ।

पथो रकारश्च ।। १५१ ।।

पथ् शब्दात् वर्षार्थे उस् प्रत्ययो भवति अन्त्यस्य रकारादेशश्च। परुस् । परारि ।

'पथ्' शब्द से वर्ष के अर्थ में 'उस्' प्रत्यय होता है और अन्त को 'रकार' का आदेश । परुस्-परारि-आने वाला वर्ष ।

पूर्वतरार्थे प्रार्यादेशः ।। १५२ ।।

पथ्शब्दात् पूर्वतरवर्षार्थे उस् प्रत्ययो भवति । पथशब्दस्य प्रारि् आदेशश्च । प्रार्युस्, । पूर्वतरे वर्षे ।

'पथ्' शब्द से पूर्वतर 'वर्ष' के अर्थ में 'उस्' प्रत्यय होता है और 'पथ्' शब्द को 'प्रारि' आदेश । प्रार्युस्-पूर्वतरे वर्षे-पूर्वतर वर्ष में ।

पञ्चम्यन्ताद्दिगर्थे किनि ।। १५३ ।।

पञ्चमीप्रत्ययान्तेभ्यस्तदादिशब्देभ्यो दिगर्थे अभिधेये किनि प्रत्ययो भवति । (सू० १३२) । ततिकिनि । ततः । यतिकिनि । यतः । कतिकिनि । कुतः । इतिकिनि् । इतः । हुतिकिनि् । अमुतः । इत्यादि। ब्रूँठि्किनि् । अग्रतः । पति्किनि । पृष्ठतः । दछि्नि्किनि् । दक्षिणतः । खोव्रि्किनि् । वामतः । तलि्किनि् । अधरस्तात् । प्यठि्किनि् । ऊर्ध्वतः । इत्यादि ।

एवमितरपञ्चम्यन्तेभ्यो यथा (सू० १३७) । तत्र प्रत्ययाद्येकारस्याकारः अन्त्यस्य तु पूर्णता दृश्यते । तोरकनि । ततः । योरकनि । यतः । कोरकनि । कुतः । ओरकनि वा होरकनि । अमुतः । इतः ।

प्राणिकृतादेशेभ्यश्च यथा । तमिकनि । तवकनि । ततः । यमिकनि । यवकनि । यतः कमिकनि । कवकनि । कुतः । इमिकनि । इवकनि । इतः । हुमिकनि । अमिकनि । अवकनि । कुतः । इमिकनि । इवकनि । इतः । हुमिकनि । अमिकनि । अवकनि । अतः । एभ्य एव शब्देभ्योऽनन्तरत्ववाचकः पतशब्दश्च प्रयोज्यः । तमिपत । ततोऽनन्तरम् । तत्रपत । ततोऽनन्तरम् । इत्यादि बुद्धिमता स्वयं ज्ञेयम् ।

पञ्चमीप्रत्ययान्त तदादि शब्दों से 'दिक्' अर्थ में 'किनि्' प्रत्यय होता है । (सू० १३२) । ततिकिनि्-ततः-उससे । यतिकिनि्-यतः-जहाँ से । कतिकिनि् कुतः-कहाँ से । इतिकिनि्-इतः-यहाँ से । हुतिकिनि्-अमुतः-वहाँ से । इत्यादि । ब्रूँठिकिनि्-अग्रतः-आगे से । पति्-

किनि-पृष्ठतः-पीछे से। दछिनि्किनि्-दक्षिणतः-दक्षिण से। खोव्रि्-किनि्-वामतः-वाम से। तलि्किनि्-अधरस्तात्-नीचे से। प्यठि्किनि्-ऊर्ध्वतः-ऊपर से। इत्यादि।

इस तरह पञ्चम्यन्तों से जैसे (सू० १३७)। वहाँ प्रत्यय आदि के 'एकार' को 'अकार' अन्त के अक्षर की तो पूर्णता देखी जाती है। तोरकनि-ततः-उससे। योरकनि-यतः-जिस से। कोरकनि-कुतः-कहाँ से। ओरकनि वा होरकनि-अमुतः-वहाँ से, इतः-यहाँ से।

प्राणिकृत आदेशों से जैसे—तमिकनि-तवकनि-ततः-उससे। यमिकनि-यवकनि-यतः-जिससे। कमिकनि-कवकनि-कुतः-कहाँ से। इमिकनि-इवकनि-इतः-यहाँ से। हुमिकनि-अमिकनि-अवकनि-अतः-इससे। 'एभ्य एव' शब्दों से अनन्तरवाचक 'पत' शब्द का प्रयोग करना चाहिए। तमिपत-इसके बाद। तवपत-इसके बाद। इत्यादि बुद्धिमान् को स्वयं जान लेना चाहिए।

कालार्थे कालवाचिभ्यः ॥ १५४ ॥

अज़्कनि। अद्य प्रायः। पगाह्कनि। श्वः प्रायः। कालिक्य्-घकनि। परश्वः प्रायः। ऊत्रकनि। परह्यः प्रायः। दह्म्कनि। दशम्यां प्रायः। हारकनि। आषाढ़मासे प्रायः। इत्यादि।

अज़कनि-अद्यप्रायः-आज। पगाह्कनि-श्वः प्रायः-कल। कालि्-क्यथ्कनि्-परश्वः प्रायः-परसों। ऊत्रकनि-परह्यः प्रायः-बीता हुआ परसों। दह्म्कनि-दशम्यां प्रायः-दशमी में। हारकनि-आषाढ़मासे-प्रायः-आषाढ़ महीने में। इत्यादि।

अन्येभ्यः इ् केवलश्च ॥ १५५ ॥

तदादिशब्दव्यतिरिक्तेभ्यः अन्येभ्यः शब्देभ्यः केवलं इ प्रत्ययश्च भवति दिगर्थे गम्यमाने। ब्रूँठि्। अग्रतः। पति्। पृष्ठतः। खोव्रि। वामतः। दछिनि्। दक्षिणतः। तलि्। अधस्तात्। प्यठि्। ऊर्ध्वतः। इत्यादि।

तदादि शब्दों से अतिरिक्त अन्य शब्दों से 'दिग्' अर्थ-गम्यमान में केवल 'इ' प्रत्यय होता है। ब्रूँठि्-अग्रतः-आगे से। पति्-पृष्ठतः-पीछे से। खोव्रि्-वामतः-वाम से। दछिनि-दक्षिणतः-दक्षिण से। तलि्-अधस्तात्-नीचे। प्यठि-ऊर्ध्वतः-ऊपर से। इत्यादि।

सर्वेभ्यः पारि् च ॥ १५६ ॥

सर्वेभ्यः प्राणिकृतादेशतदादिभ्यः अन्येभ्योऽपि शब्देभ्यो दिगर्थे अभिधेये पारि् प्रत्ययो भवति। कमिपारि वाकपारि। कस्मात्पार्श्वतः। तमिपारि् वा तपारि्। तस्मात्पार्श्वतः। यमिपारि् वा यपारि्। यस्मात्पार्श्वतः। इत्यादि। हुमिपारि् वा हुपारि्। अमुष्यात्पार्श्वतः इमिपारि् वा इपारि्। अस्मात्पार्श्वतः। अमिपारि् वा अपारि। अमुष्यात्पार्श्वतः। ब्रूँठिपारि्। अग्रपार्श्वतः। पातिम्पारि्। पश्चात्पार्श्वतः। इत्यादि ज्ञेयम्।

सभी प्राणिकृत आदेश तदादिओं से, अन्य भी शब्दों से दिगर्थ अभिधेय में 'पारि्' प्रत्यय होता है। कमिपारि् वा कपारि्-कस्मात्पार्श्वतः-किसके पास से। तमिपारि् वा तपारि्-तस्मात्पार्श्वतः। उसके पास से। यमिपारि् वा यपारि्-यस्मात्पार्श्वतः-जिसके पास से। इत्यादि। हुमिपारि् वा हुपारि्-अमुष्यात्पार्श्वतः-उसके पास से। इमिपारि् वा इपारि्-अस्मात्पार्श्वतः-इसके पास से। अमिपारि् वा अपारि्-अमुष्यात्पार्श्वतः-उसके पास से। दछिनिपारि्-दक्षिणपार्श्वतः-दांई तरफ से। खोव्रिपारि्-वामपार्श्वतः-बांई तरफ से। ब्रूँठिपारि्-अग्रपार्श्वतः-आगे की तरफ से। पतिम्पारि्-पश्चात्पार्श्वतः-पीछे की तरफ से। इत्यादि जानना।

चोरो विश्वगर्थे च्वच्ववादेशौ च ॥ १५७ ॥

चोरशब्दात्पारि् प्रत्ययो भवति। चोरश्च च्व च्ववा आदेशौ भवतः। च्वपारि् वा च्ववापारि्। विश्वतः। विश्वगर्थे किम्। चोरिपारि्। चतुष्पार्श्वतः।

'चोर्' शब्द से 'पारि्' प्रत्यय होता है और 'चोर' शब्द को 'च्व और च्ववा' आदेश हाता है। च्वपारि् वा च्ववापारि्-विश्वतः-चारों तरफ से। विश्वक् अर्थ में क्या? चोरिपारि्-चतुष्पार्श्वतः-चारों तरफ से।

सप्तम्यन्तात्कुन् ॥ १५८ ॥

सप्तमीप्रत्ययान्तेभ्यः शब्देभ्यो दिगर्थे गम्यमाने कुन् प्रत्ययो भवति। तोर्कुन्। तस्यां दिशि। योर्कुन्। यस्यां दिशि। कोर्कुन्। कस्यां दिशि। योर्कुन्। अस्यां दिशि। हाकुन् वा ओर्कुन्। अमुष्यां

दिशि (सू० १३६)। एवं ततुकुन्। तस्यां दिशि। यतुकुन्। यस्यां दिशि। कतुकुन्। कस्यां दिशि। इतुकुन्। अस्यां दिशि। हतुकुन् वा अतुकुन्। अमुष्यां दिशि। (सू० १३६) इति। तूर्यंकुन्। तस्यामेव दिशि। इत्यादयश्चोह्याः।। उकाररहितात्प्रत्ययादपि व्यवह्रियते। तथ्कुन्। यथ्कुन्। कथ्कुन्। इथ्कुन्। हुथ्कुन्। अथ्कुन्। इति। यप्रत्ययविशिष्टाच्च यथा। तूर्यं कुन्। यूर्यं कुन्। तथ्यकुन्। यथ्य-कुन्। इत्यादयः स्वयं विचार्याः। एवं। गाम्कुन्। गरकुन्। क्वलि-कुन्। कारिकुन्। ह्यरुकुन्। ह्यूरुकुन्। व्वन्कुन्। इत्यादि। षष्ठ्यन्त-लिङ्गादपि प्रयुज्यते। मालिस् कुन्। पितुः पार्श्वे : माज्य कुन्। मातुः पार्श्वे। तमिस् कुन्। तस्य पार्श्वे। यमिस् कुन्। यस्य पार्श्वे। इत्यादि।

सप्तमीप्रत्ययान्त शब्दों से दिक् अर्थ गम्यमान में 'कुन्' प्रत्यय होता है। तोर्कुन्-तस्यां दिशि-उस दिशा में। योर्कुन्-यस्यां दिशि-जिस दिशा में। कोर्कुन्-कस्यां दिशि-किस दिशा में। योर्कुन्-अस्यां दिशि-इस दिशा में। होर्कुन् वा ओर्कुन्-अमुष्यां दिशि-इस दिशा में (सू० १३६)। इसी तरह-ततुकुन्-तस्यां दिशि-उस दिशा में। यतुकुन्-यस्यां दिशि-जिस दिशा में। कतुकुन्-कस्यां दिशि-किस दिशा में। इतुकुन्-अस्यां दिशि-इस दिशा में। हतुकुन्-वा अतुकुन्-अमुष्यां दिशि-इस दिशा में। (सू० १३६) इति। तूर्यकुन्-तस्यामेव दिशि-उसी दिशा में। इत्यादि समझ लेना। 'उकार' से रहित प्रत्यय से भी व्यवहृत होता है। तथ्कुन्, यथकुन्. इथकुन्, हुथकुन्, अथकुन्। इति। 'य' प्रत्यय विशिष्ट से जैसे-तूर्यकुन्, यूयेकुन्, तथ्यकुन् यथ्य-कुन्, इत्यादि स्वयं विचार लेना। इस तरह-गाम्कुन्, गरकुन्, क्वलि-कुन्, कारिकुन्, ह्यरुकुन्, ह्यूरुकुन् व्वनकुन्, इत्यादि। षष्ठयन्त-लिङ्ग से भी प्रयुक्त होता है। मालिस् कुन्-पितुः पार्श्वे-पिता के पास में। माज्य कुन्-मातुः पार्श्व-माता के पास में। तमिस् कुन्-तस्य पार्श्वे-उस के पास में। इत्यादि।

मयार्थे उवु ॥ १५९ ॥

तन्मयः अस्तीत्यस्मिन्नर्थे 'उवु' प्रत्ययो भवति। स्वमुवु। स्वर्ण-मयः। म्यच्युवु। मृण्मयः। काठवु। काष्ठमयः। इत्यादि।

'तन्मय है' इस अर्थ में 'उवु' प्रत्यय होता है। स्वमुवु-स्वर्णमयः-सोने का बना हुआ। म्यच्युवु-मृण्मयः-मिट्टी का बना हुआ। काठ्वु-काष्ठमयः लकड़ी का बना हुआ। इत्यादि।

अधीनार्थे बुज्य ॥ १६० ॥

तस्याधीनमित्यस्मिन्नर्थे बुज़्य् प्रत्ययो भवति। लूकबुज़्य्। लोकाधीनम्। ख्वडबुज़्य्। गर्ताधीनम्। कलयबुज़्य्। भार्याधीनम्। इत्यादि।

'उस के अधीन' इस अर्थ में 'बुज्य्' प्रत्यय होता है। लूकबुज्य्-लोकाधीनम्-लोगों के अधीन। ख्वडबुज्य-गर्ताधीनम्-गर्त के अधीन। कलयबुज्य्-भार्याधीनम्-भार्या के अधीन। इत्यादि।

अडल्यकुशब्दो विकलार्थे ॥ १६१ ॥

विकले वस्तुनि अभिधेये सति अडल्यकु शब्दो निपात्यते। अडल्यकु। विकलः। अडल्यचू कोम्। विकला क्रिया। अडल्यचू लरु। विकला शाला। इत्यादि।

विकल वस्तु अभिधेय में 'अडल्यकु' शब्द निपातित है। अडल्यचू कोम्। विकला। क्रिया-विकल क्रिया। अडल्यचू लरू। विकला शाला-विकल शाला। इत्यादि।

अभ्रधूमवातमात्रायां रिंग् ॥ १६२ ॥

एषां त्रयाणां विकलत्वे मात्रायामभिहितायां सत्यां रिंग् प्रत्ययः स्यात्। अवररिंग्। अभ्रमात्रा। द्हरिंग्। धूममात्रा। बावरिंग्। वातमात्रा। इति।

इन तीनों के विकलत्व में मात्रा के कहे जाने पर 'रिंग्' प्रत्यय होता है। अवररिंग्-अभ्रमात्रा-अभ्रमात्र। द्हरिंग्-धूममात्रा। धूममात्र। बावरिंग्-वातमात्रा-वातमात्र। इति।

प्राणप्रकाशयोर्लथ् ॥ १६३ ॥

प्राणप्रकाशयोर्मात्रायामभिहितायां ल्थ् प्रत्ययो भवति। अत्र थकार आदेशकृतोऽस्तीति ज्ञेयम्। प्राणल्थ्-प्राणमात्रा। शाहल्थ्-श्वासमात्रा। गाशल्थ्-प्रकाशमात्रा। चाँग्ल्थ्-दीपमात्रा।

प्राण और प्रकाश में मात्रा के कहे जाने पर 'लथ्' प्रत्यय होता है। यहाँ 'थकार' आदेशकृत है। यह समझना चाहिए। प्राण लथ्-

प्राण मात्रा-प्राणमात्र । शाहल्थ्-श्वासमात्रा-श्वासमात्र । गाशल्थ्-प्रकाश मात्रा-प्रकाशमात्र । चाँगिल्थ्-दीपमात्रा-दीपमात्र ।

पटस्य त्र् ॥ १६४ ॥

पटस्य वस्त्रादेर्मात्रायां त्र् प्रत्ययो भवति ।
कपर्तर् । कार्पासखण्डः । पट्ित्र् । औार्णखण्डः ।

'पट' के वस्त्र आदि की मात्रा में 'त्र्' प्रत्यय होता है । कपर्तर्-कार्पासखण्डः-कपास का खण्ड । पट्ित्र्-औार्णखण्डः-ऊन के कपड़े का खण्ड ।

छल्तिलिमावन्यतश्च ॥१६५॥

वस्त्रादेरन्यस्यापि मात्रायामभिहितायां छल् प्रत्ययः तिलिम् प्रत्ययश्च स्यात् । कप्र्तिलिम् । कार्पासखण्डः । च्वच्यतिलिम् । अपूपखण्डः । बुर्जतिलिम् । भूर्जखण्डः । इत्यादि । एवं कप्र्छल् । बुर्जछल् । च्वच्यछल् । पच्यछल् । पट्ीखण्डः । कृह्लमाज़छल् । यकृत्खण्डः । इत्यादि ।

वस्त्र आदि अन्य की भी मात्रा के कहने पर 'छल्' और 'तिलिम्' प्रत्यय होता है । कप्र् तिलिम्-कार्पासखण्डः-कार्पासखण्ड । च्वच्य-तिलिम्-अपूपखण्डः-अपूपखण्डः । बुर्जतिलिम्-भूर्जखण्डः-भूर्ज-खण्ड । इत्यादि । इसी तरह कप्र् छल् । बुर्जछल् । च्वच्यछल् । पच्यछल् । पट्ीखण्ड । कृह्लमाज़छल् । मकृलेकडे इत्यादि ।

रेम्फ अल्पकरुणयोः ॥१६६॥

अल्पस्य करुणायाश्चार्थे रेम्फ् भवति । करुणायां यथा । शरि-रेम्फ्-पोतकः । गरिरेम्फ्-अश्वकः । महनिविरेम्फ्-पुरुषकः । अल्पार्थे यथा-चूँठिरेम्फ्-क्षुद्रपालीवतः । इत्यादि ।

अल्प और करुणा के अर्थ में 'रेम्फ' होता है । करुणा में जैसे-शरि्रेम्फ्-पोतकः-बच्चा । गरिरेम्फ्-अश्वकः-घोड़ा । महनिविरेम्फ्-पुरुषकः-पुरुष । अल्प अर्थ में जैसे-चूँठिरेम्फ-क्षुद्रपा लीवतः । इत्यादि ।

रेंछ संबन्धस्य ॥१६७॥

संबन्धस्याल्पत्वे अभिधेये रेंछ प्रयुज्यते । संबन्धस्तु वस्त्रादि-कस्य वा भवतु जीवस्य वा भवत्विति । कपर्रेँछ् । कार्पासखण्डः । मातामाल रेँछ् छ्यह । म.तामहगृहसंबन्धमात्रास्ति ।

संबंध के अल्पत्व अभिधेय में 'रेँछ' प्रत्यय प्रयुक्त होता है। संबन्ध तो वस्त्रादि का वा जीव का हो। कपर्रेँछ्-कार्पासखण्डः-वस्त्र का टुकड़ा। मातामाल् रेँछ् छयह्-नाना के घर का सबन्ध मात्र है।

जंडकाञ्तलवश्च शाककाष्ठयोः ॥१६८॥

शाकानां काष्ठानां च सामान्येन मात्रायामभिहितायां सत्यां जंड् प्रत्ययः काञ् प्रत्ययो वा तलु प्रत्ययो वा भवति। च शब्दात् थोपु प्रत्ययश्च स्यात्। हांकजंड्। किंचिच्छाकः। काठजंड्। किंचित्काष्ठम्। पोषजंड्। किंचित्पुष्पाणि। हाककाञ्। पोषकाञ्। हाकतलु। काठतलु। पोषतलु। जिनितलु। सिनितलु। मुज्यतलु।

शाकों के और काष्ठों के सामान्य से मात्रा में कहे जाने पर 'जंड्' प्रत्यय, काञ् प्रत्यय वा तलु प्रत्यय होता है और 'थोपु' प्रत्यय होता है। हाँकजंड-किंचिच्छाकः-कुछ शाक। काठजंड्-किंचित्काष्टम् कुछ काठ। पोषजंड्-किंचित्पुष्पाणि-कुछ पुष्प। हाककाञ्, काठकाञ्, पोषकाञ्। हाकतलु, पोषतलु, जिनितलु, सिनितलु, मुज्यतलु।

सस्यादीनां फलु ॥२६९॥

सस्यानां मात्रायां सामान्येन वाच्यायां सत्यां फलु प्रत्ययो भवति दाँ फेलु (सू० ३।८)। किंचिद्धान्यम्। त्वम्लफलु। किंचितण्डुलः। करफलु। किंचित्कलायः। म्वंगफलु। किंचिन्मुद्गः इत्यादि। आदिशब्दादन्येभ्योऽपि। च्ञफलु। किंचिदङ्गारः बठ्फलु। किंचित्करीषः। म्यच्यफलु। किंचिन्मृत्तिका। फलुशब्दस्य वहुत्वनिर्दशतस्तेषां कणा एव निर्णीयन्ते। न तु तेषां साकल्यम्। यथा। दाँफलि्। धान्यकणाः। त्वम्लफलि्। तण्डुलकणाः इत्यादि।

सस्य (खेती) आदि की मात्रा में सामान्य से वाच्य में होने पर 'फलु' प्रत्यय होता है। दाँफलु (सू० ३।८)-किंचिद्धान्यम्-कुछ धान। त्वंमूलफलु-किंचित्तण्डुलः-कछ चावल। करफलु-किंचित्कलायः-कुछ कलाय। म्वंगफलु-किंचिन्मुद्गः-कुछ मूँग। इत्यादि। 'आदि' शब्द से दूसरों से भी। च्ञ्फलु-किंचिदङ्गारः-कुछ अङ्गारे। बठ्-फलु-किंचित्करीषः-कुछ करीष। म्यच्यफल-किंचिन्मृत्तिका-कुछ

मिट्टी। फलु् शब्द के बहुत्वनिर्देश से उन के कण ही निर्णीत किए जाते हैं न कि उनके साकल्य। जैसे-दाँफलि्-धान्यकणाः-धान के कण। त्वम्लफलि्-तण्डुलकणाः-चाबल के कण। इत्यादि।

सर्वेभ्योऽसस्येभ्यो म्वया हना वा लक्ष्यतः ॥ १७० ॥

अभ्रादिभ्यः सस्यवर्जितेभ्यः सर्वेभ्यः सामान्येन मात्रायां वाच्यायां म्वया हना वा भवति। लक्ष्यतो व्यवहारानुसारतः। अनयोराशब्दः सामान्यप्रत्ययजो ज्ञेयः। अव्रम्वया। अव्रहना। द्हम्वया। द्हहना। वावम्वया। वावहना। एवं सर्वेषाम्। हाकम्वया। हाकहना। इति पक्वस्यैव ज्ञेयः। हाकतुल्वा। इति पक्वापक्वयोरपि। एवं। पोषम्वया। पोषहना। काष्ठस्य तु न। एवं। च्ज्म्वया। च्ज्हना। म्यच्यम्वया। म्यच्यहना। असस्येभ्यः किम्। दाँम्वया। इति न भवति। किन्तु। वतफल्वा। वतम्वया। वतहना। इत्यास्मिन्सर्वे साधवः। शेषा व्यवहारतो ज्ञेयाः।

सस्यवर्जित सभी 'अभ्रादिओं' से सामान्य से मात्रा वाच्य में 'म्वया-वा-हना' प्रत्यय होता है। लक्ष्य से व्यवहारानुसार से। इन में 'आ' शब्द सामान्य प्रत्यय से पैदा हुआ जानना। अव्रम्वया। अव्रहना। द्हम्वया। द्हहना। वावम्वया। वावहना। इस-तरह सभी के लिए। हाकम्वया। हाकहना। यह पके हुए को ही जानना। हाकतुल्वा। यह पके हुए और नहीं पके हुए में भी। इस तरह पोषम्वया। पोषहना। काष्ठ के लिए तो नहीं। इस तरह। च्ज्म्वया। च्ज्हना। म्यच्यम्वया। म्यच्यहना। सस्य से अतिरिक्तों का क्या? दाँम्वया। यहाँ नहीं होता है। किन्तु-वतफल्वा। वतम्वया। वतहना। इस में सभी साधु हैं। शेष व्यवहार से जानने।

जलस्थानार्थ एव बल् ॥ १७१ ॥

बल् प्रत्ययः जलसंबन्धिस्थानस्यार्थ एव प्रयुज्यते। व्यथबल्। वितस्तास्थानम्। गंगबल्। गङ्गास्थानम्। मार्बल्। मारी (नदी) स्थानम्। व्वरवरिबल्। वापीस्थानम्। क्रूरि्बल्। कूपस्थानम्। आवरिज्बल्। चितास्थानम्। शिम्शानबल्। श्मशानस्थानम्।

'बल्' प्रत्यय जलसंबन्धिस्थान के लिए ही प्रयुक्त होता है। व्यथबल्-वितस्तास्थानम्-वितस्ता का स्थान। गंगबल्-गङ्गास्थानम्-

गङ्गा का स्थान। मार्बल्-मारीनदीस्थानम्-मारीनदी का स्थान। प्वरवरिबल्-वापीस्थानम्-बावली का स्थान। क्रूरिबल्-कूपस्थानम्-कुंएं का स्थान। ग्रावरिग्रबल्-चितास्थानम्-चिता का स्थान। शिम्शानबल्-श्मशानस्थानम्-श्मशानस्थान।

अन्यत्रापि च वलिदानस्थाने ॥ १७२ ॥

यत्र जलदेवायान्यस्मै भूदेवाय भूतादिभ्यश्च बलिः प्रदीयते तत्रापि बल्शब्दः प्रयुज्यते। सवबल्। सभास्थानम्। बरबल्। वरार्थं यत्र पाकः क्रियते। कोँदबल्। इष्टिकापाकस्थानम्। राजबल्। श्मशानस्थानम्। ग्रटबल्। जलधरस्थानम्। इत्यादि।

यहां पर जलदेवता, दूसरे पृथ्वी के देवता और भूतादि को वलि दी जाती है। वहां भी 'वल्' शब्द प्रयुक्त होता है। सवबल्-सभास्थानम्-सभास्थान। वरबल्-वरार्थं यत्र पाकः क्रियते-वर के लिए यहां खाना पकाया जाता है। कोँदबल्-इष्टिकापाकस्थानम्-ईंटों को पकाने का स्थान। राजबल्-श्मशानस्थानम्-श्मशानस्थान। ग्रटबल्-जलधरस्थानम्-बादलों का स्थान। इत्यादि।

वार्शब्दस्य स्नानस्थाने वस्य यः ॥ १७३ ॥

यत्रैव नरैः स्नानं क्रियते तत्रैव देवर्षिपितृभ्यो वारिदानं वितीर्यते, इति कश्मीरसंप्रदायः। अतो नद्यादेर्यत्र कुत्रचित्स्थाने स्नानादि क्रियते तत्र वार् शब्दात् बल् प्रत्ययो भवति वकारस्य च यत्वम्। यारबल्। स्नानस्थानम्।

यहां पर मनुष्यों से स्नान किया जाता है, वहां पर ही देव, ऋषि और पितरों को जलदान किया जाता है, यह कश्मीर का संप्रदाय है। इसलिए नदी आदि के जिस किसी स्थान में स्नान आदि किया जाता है, वहां 'वार्' शब्द से 'बल्' प्रत्यय होता है और 'वकार' को 'य'। यारबल्-स्नानस्थानम्-स्नान करने की जगह।

पैँसयुगले टूँकु ॥ १७४ ॥

'टूँकु' शब्दो निपात्यते। टूँकु। पणयुगम्।

'टूँकु' शब्द का निपात किया जाता है। टूँकु-पणयुगम्-दो पैसे।

तत्परतो हत् ॥ १७५ ॥

त्र्यादि पणानां संख्यायामभिहितायां हत् प्रत्ययः स्यात्। त्रिहथ्।

पणत्रयम् । चोहृथ् । पणचतुष्कम् । पाँच्हथ् । पणपञ्चकम् । परन्तु यथा पूर्वोक्तसूत्रेषु शतसंख्यायां नवभ्यः शत् इति व्यवह्रियते (सू. १२५) इत्यादि । तथैवात्रापि विज्ञेयम् । नव्शथ् । पणनवकम् । इत्यादि । किन्तु वणिग्जनैः पणदशकस्यापि सहस्रवाची सास्शब्दः परिभाष्यते ।

तीन आदि पणों की संख्या में कहे जाने पर 'हत्' प्रत्यय होता है । त्रिहथ्-पणत्रयम्-तीन पणक । चोहृथ्-पणचतुष्कम्-चार पणक । पाँच् हथ्-पणपञ्चकम्-पाँच पणक । परन्तु जैसे पूर्वोक्त सूत्रों में शत संख्या में नव से सौ यह व्यवहृत होता है । (सू. १२५) इत्यादि । वैसा ही यहां भी जानना । नव्शथ् । पणनवकम् । नौ पणक । इत्यादि । किन्तु वणिए दश पणक को भी सहस्रवाची 'सास् शब्द' से पुकारते हैं ।

शतावधि जनसंख्यायां जनुशब्देनैव संख्यासमासः ॥ १७६ ॥

जनसंख्यायां वाच्यायां सत्यां जनु शब्दादेव पूर्वमुत्तरं वा संख्याशब्दाः संगन्तव्याः । जनि् पंचाहमर् (सू. २।३।४४) । पञ्चाशजनाः । शेठ् जनि् षष्टिजनाः । इत्यादि ।

जनसंख्या वाच्य में होने पर 'जनु' शब्द से ही पूर्व अथवा बाद में संख्या शब्द जोड़ देने चाहिएं । जनि् पंचाहमर् (सू. २।३।४४) पचास आदमी । शेठ्जनि्-षष्टिजनाः-साठ आदमी । इत्यादि ।

लूक्शब्देन शतादिषु ॥ १७७ ॥

जनानां शतसहस्रादिसंख्यायां वाच्यायां लूक् शब्देन संख्याशब्दाः पूर्वमुत्तरं वा संघेयाः । हथ् लूक । शतं जनाः । ज़ह् हथ् लूक । जनानां द्विशती । त्रिहथ् लूक् । जनानां त्रिशती । इत्यादि । हथ् ज़नि । शतं जनाः । सास् ज़नि । सहस्रं जनाः । इति च कदाचिद्व्यवह्रियते तदल्पत्वाद्गौणमेव बोध्यम् ।

आदमियों के शतसहस्रादि संख्या-वाच्य अर्थ में 'लूक्' शब्द से संख्याशब्द पूर्व वा बाद में मिलाने चाहिए । हथ् लूक-शतं जनाः-सौ आदमी । ज़ह् हथ् लूक-जनानां द्विशती-दो सौ आदमी । त्रिह् थ लूक-जनानां त्रिशती-तीन सौ आदमी । इत्यादि । हथ् ज़नि-शतं जनाः-सौ आदमी । सास् जनि-सहस्रं जनाः-हजार आदमी । ऐसा कभी

व्यवहृत होता है, उससे थोड़ा होने पर गौण ही जानना।

त चार्थे ॥ १७८ ॥

च शब्दस्यार्थे त भवति। सुह त चूह्-स च त्वम्।

'च' शब्द के अर्थ में 'त' होता है। सुह् त च्ह्-स च त्वम्-वह और तूं।

अपि शब्दार्थे ति ॥१७९॥

स्पष्टम्। वहुवचनेषु त शब्दस्थाने ति शब्द एव प्रयुज्यते। सह् ति चह् ति सोऽपि त्वमपि। महनिवि ति गुपन् ति आय्। नराश्च पशवश्चागताः। न तु महनिवि त गुपन् त आय्। इति भवति।

'अपि' शब्द के अर्थ में 'ति' प्रत्यय होता है। वहुवचनों में 'त' शब्द के स्थान में 'ति' शब्द ही प्रयुक्त होता है। सह् ति च्ह् ति-सोऽपि त्वमपि-वह भी तूं भी। मह् निवि ति गुपन् ति आय्-नराश्च पशवश्चागताः-मनुष्य और पशु आए। न कि 'मह् निवि त गुपन् त आय्' यह होता है।

बियः पुनरपरार्थे ॥ १८० ॥

पुनः शब्दस्यार्थे बियशब्दः स्यात् अपरार्थे च। बिय करि्ज़ि पुनः कुर्याः। बिय वति। अपरमार्गेण।

पुनः शब्द के अर्थ में और अपराथ में 'बिय' शब्द होता है। बिय करि्ज़ि-पुनः कुर्याः-फिर करे। बिय वति-अपरमार्गेण-दूसरे मार्ग से।

इवार्थे ज़न् ॥ १८१ ॥

इव शब्दस्यार्थेऽत्र ज़न्शब्दो भवति। तोत ज़न् छुह् परान्। शुक इवाधीते। मालिस् ज़न् छुह् रछान्-पितेव रक्ष्यते।

'इव' शब्द के अर्थ में यहाँ 'ज़न्' शब्द होता है। तोत् ज़न् छुह्-परान्-शुक इवाधीते-तोते की तरह पढ़ता है। मालिस् ज़न् छुह् रछान्-प्तिेव रक्ष्यते पिता की तरह रक्षा करता है।

सादृश्यार्थे ह्यहु ॥ १८२ ॥

स्पष्टम्। मालिस् ह्यहु (वा हिहु)। पितृसंनिभः। समासे तु। मोलु ह्यहु छुस्। सः पितृसंनिभस्तस्यास्ति। स्वन् ह्यहु छुह् नाँपान्। स्वर्णं इव दीप्यते। इत्यादि।

'सादृश्य' अर्थ में 'ह्यहु' प्रत्यय होता है। मालिस् ह्यहु (वा हिहु)-पितृसंनिभः-पिता के समान। समास में तो-मोलु ह्यहु छुस्-सः पितृ-

संनिभस्तस्यास्ति-वह उस का पिता के समान है। स्वन् ह्यहु छुह् ताँपान्-स्वर्ण इव दीप्यते-सोने की तरह चमकता है। इत्यादि।

निर्धारणे च ॥ १८३ ॥

स्पष्टम्। बदु ह्यहु अनिज़्यन्। वृद्धमिव समानयेः। नात्र कोऽपि वृद्धसदृशो नरोऽवगम्यते, किन्तु य एव वृद्धो भवेत्तमेवानयेरित्य-वधार्यम्।

स्पष्ट है। बदु ह्यह् अनिज़्यन्-वृद्धमिव समानयेः-वृद्ध की तरह लाए। यहाँ वृद्ध के समान कोई मनुष्य नहीं जाना जाता है, किन्तु जो हो वृद्ध हो, उसे ही 'आनयेः-लाए' ऐसा जानना चाहिए।

अन्यप्राधान्ये सहार्थे सूत्य् ॥ १८४ ॥

इतरस्य प्राधान्ये सति तेनैव साकं सहार्थे अभिधेये सूत्य् प्रत्ययो भवति, वा सूतिन् शब्दो भवति। (सू० २।१।६०)। सहार्थतृती-याभ्यां विकल्पकथनात्। मालिस् सूत्य् आव्। पित्रा सहागतः। अत्र पितैव प्रधानः पुत्रस्तु तत्सहितेनैवागमनकारी।

अन्य प्रधान होने पर उसी के साथ 'सह' अर्थ अभिधेय में 'सूत्य' प्रत्यय होता है वा 'सूतिन्' शब्द होता है। (सू० २।१।६०)। सहार्थ-तृतीया से विकल्प होने से। मालिस् सूत्य् आव्-पित्रा सहागतः-पिता के साथ आया। यहां पिता ही प्रधान है, पुत्र तो उसके संपर्क से ही आया।

स्वप्राधान्ये सान् ॥ १८५ ॥

आत्मनः क्रियाप्राधान्ये सतीतरस्य सहार्थे अभिधेये सान् प्रत्ययः। मालिस् सान् आव्। सतात आयातः। अत्र पुत्र एव प्राधान्येनागम-कृत् तातस्तु गौणतया तत्सहितेनोदिष्ट इत्यादि स्वयमूह्यम्।

अपनी क्रियाप्रधान होने पर दूसरे के सहार्थ अभिधेय में 'सान्' प्रत्यय। मालिस् सान् आव्-सतात आयातः-पिता के साथ आया। यहां पुत्र ही प्रधान होने से आगमकृत्, तात तो गौण होने से उसके संपर्क से कहे गए। इत्यादि स्वयं जान लेना चाहिए।

द्वयादिभ्यः पञ्चभ्यो युगपदर्थे शवय् ॥ १८६ ॥

द्विवाचकात् ज़ह् शब्दादारभ्य पञ्चभ्यः संख्याशब्देभ्यो युगपदर्थे शवय प्रत्ययो भवति। पाँचशब्दाच्छकारलोपः। द्वशवय्। द्वावेव।

त्र्यशवय् । त्रय एव । च्वशवय् । चत्वार एव । पाँचवय् । पञ्चैव । षशवय् । षडेव ।

द्विवाचक 'ज़ह्' शब्द से लेकर पञ्च संख्यावाचक शब्दों से युगपद्-अर्थ में 'शवय्' प्रत्यय होता है । 'पाँच्' शब्द से 'शकार' का लोप । द्वशवय्-द्वावेव-दो ही । त्र्यशवय्-त्रय एव-तीन ही । च्यशवय्-चत्वार एव-चार ही । पाँचवय्-पञ्चैव-पाँच ही । षश्वय्-षडेव-छः ही ।

न वय् वापाँच्भ्यः ॥ १८७ ॥

एभ्योऽपाँच्भ्यः पाँच्शब्दवर्जितेभ्यो युगपदर्थे विकल्पेन नवय् वा प्रत्ययो भवति । द्वनवय् । द्वावेव । त्र्यनवय् । त्रय एव । च्वनवय् । चत्वार एव । षनवय् । षडेव । अपाँच्भ्यः किम् । पाँचवय् । पञ्चैव ।

इन 'पाँच' शब्दवर्जित 'अपाँच्' शब्दों से युगपद्— अर्थ में विकल्प से 'नवय्' प्रत्यय होता है । द्वनवय्-द्वावेव-दो ही । त्र्यनवय्-त्रय एव-तीन ही । च्वनवय्-चत्वार एव-चार ही । षनवय्-षडेव-छः ही । 'अपाँच्' शब्दों से क्या ? पाँचवय्-पञ्चैव-पाँच ही ।

सप्तादिभ्यो वय् ॥ १८८ ॥

सप्तादिसंख्यायाः साकल्येनार्थे गम्यमाने वय् प्रत्ययो भवति । सतवय् । सप्तैव । ऐठवय् । अष्टावेव । नववय् । नवैव । इत्यादि । अत्रेदं ध्येयम् । वय् प्रत्ययान्तेभ्यो द्वितीयायां षष्ठ्यां च नी प्रत्ययो यलोपश्च स्यात् । कर्तृतृतीयायां तु इ प्रत्ययः । वय्शब्दात्पूर्वं च विकल्पेन वकारागम इति च ।

'सप्त' आदि संख्या के 'साकल्य' अर्थ गम्यमान में 'वय्' प्रत्यय होता है । सतवय्-सप्तैव-सात ही । ऐठवय्-अष्टावेव-आठ ही । नववय्-नवैव-नौ ही । इत्यादि । यहां इस बात का ध्यान रखना चाहिए । 'वय्' प्रत्ययान्तों से द्वितीया में और षष्ठी में 'नी' प्रत्यय और 'य' का लोप होता है । कर्तृतृतीया में तो 'इ' प्रत्यय होता है और 'वय्' शब्द से पहले विकल्प से 'वकार' का आगम होता है ।

आद्यखण्डवीप्सापूर्वाः प्रथमे वा ॥ १८९ ॥

प्रथमे द्वशवय् इत्याद्याः आद्यखण्डस्य द्वश् त्र्यश् इत्यादिकस्य वीप्सापूर्वा युगपदर्थे वा कथ्यन्ते । द्वशि द्वशवय् । द्वावेव । त्र्यशि

त्र्यशवय् । त्रय एव । च्वशि च्वशवय् । चत्वार एव । पूँचि पाँचवय् । इत्यादि ।

प्रथम में 'द्वशवय्' इत्यादि आद्यखण्ड के द्वश्-त्र्यश् इत्यादि के वीप्सापूर्व युगपद् अर्थ में कहे जाते हैं । द्वशि द्वशवय्-द्वावेव-दो ही । त्र्यशि् त्र्यशवय्-त्रय एव-तीन ही । च्वशि च्वशवय्-चत्वार एव-चार ही । पूँचि पाँचवय् । इत्यादि ।

चोरश्च्वादेशो दशश्यश्च ॥ १६० ॥

चोर्शब्दस्यात्रापि दशसंख्यापरतश्च च्व आदेशो भवति । च्वशवय् । चत्वार एव । च्वदाह् । चतुर्दश । च्ववह । चतुर्विंशति । इत्यादि ।

'चोर' शब्द का यहां भी दश संख्या से परे 'च्व' आदेश होता है । च्वशवय्-चत्वार एव-चार ही । च्वदाह्-चतुर्दश-चौदह । च्ववह्-चतुर्विंशति-चौवीस । इत्यादि ।

कुनु एककार्थे ॥ १६१ ॥

केवलस्यार्थे कुनुशब्दो निपात्यते । कुनु । एककः ।

केवल के अर्थ में 'कुनु' शब्द निपात किया जाता है । कुनु-एककः-अकेला ।

हरुजोरौ युगलार्थे ॥ १६२ ॥

तत्र हरुशब्दः प्रायशो प्राणिव्यतिरिक्तवस्तुन्येव प्रयुज्यते । यथा-ड्यज्यहरु । ताटङ्कयुगलम् । दूरहरु । कर्णिकायुगम् । वालिहरु । कुण्डलयुगम् । पुलहरु । तृणपादुकायुगम् । खावहरु । काष्ठपादुका-युगम् । इत्यादि । ग्राम्यजनैस्तु । दाँदहूरि । वृषयुगम् । इति शब्दोऽपि भाष्यते । जोर्शब्दस्तु प्रायः प्राणिविषये प्रयुज्यते क्वचिदप्राणिविषये च । यथा हूरिशब्दस्तथा जूरिशब्दश्चावधार्यः । म्वक्त जूरि । मुक्तायुगम् । दाँदजूरि । वृषयुगम् । कोतर्जूरि । कपोतयुगम् । गरिजूरि । अश्वयुगम् । अख्जोर । एकं युगम् । जह्जोर । युगद्वयम् । त्र्यह्जोर । युगत्रयम् । इत्यादि । अख्हरु । एकं युगम् । ज्हहरि । युगद्वयम् । त्र्यह्हरि । युगत्रयम् । इत्यादि सर्वं बुद्धिमता स्वयमूह्यम् । त्र्यादिदशावधिसंख्यानामेकत्वेन त्रिच चाक् पंजुपक सतु ऐठि नमु दहु शब्दाः क्रमेण निपातनादेव विचार-णीयाः । चित्र । त्रयम् । चाख् । चतुष्कम् । पंजु । पञ्चकम् । षक । षट्कम् । सतु । सप्तकम् । ऐठि । अष्टकम् । नमु । नवकम् । दहु । दशकम् । इत्यादि ।

वहां 'हरु' शब्द प्रायश: प्राणि से अतिरिक्त वस्तु में ही प्रयुक्त होता है। जैसे-ड्यज्यहरु-ताटङ्कयुगलम्-दो ताटङ्क। दूरहरु-कर्णिकायुगम्-दो कर्णिका। वालिहरु-कुण्डलयुगम्-दो कुण्डल। पुलहरु-तृणपादुकायुगम्-दो पूलें। खावहरु-काष्ठपादुकायुगम्-खड़ाऊं का जोड़ा। इत्यादि। देहाती लोगों से तो-दाँदहूरि-वृषयुगम्-बैलों को जोड़ी। यह शब्द भी कहा जाता है। 'ज़ोर' शब्द तो प्रायः प्राणी के विषय में प्रयुक्त होता है और कहीं अप्राणी के विषय में। जैसे 'हूरि' शब्द और वैसे ही 'जूरि' शब्द समझना। म्वक्तजूरि-मुक्तायुगम्-दो मोती। दाँदजूरि-वृषयुगम्-बैलों की जोड़ी। कोतर-जूरि-कपोतयुगम्-कबूतरों का जोड़ा। गरिजूरि-अश्वयुगम्-दो घोड़े। अख्जोर-एकं युगम्-एक जोड़ी। ज़्ह्जोर-युगद्वयम्-दो जोड़ी। त्र्यह्जोर-युगत्रयम्-तीन जोड़ी। इत्यादि। अख्हरु-एकं युगम्-एक जोड़ो। ज़्ह्हरि-युगद्वयम्-दो जोड़ो। त्र्यह्हरि-युगत्रयम्-तीन जोड़ी। इत्यादि सब बुद्धिमान् को स्वयं समझ लेना चाहिए। तीन आदि से दश तक संख्याओं के एकत्व से त्रिच चाक् पंजु षक सतु ऐठि नमु दहु शब्द क्रम से निपातन से ही विचार लेना चाहिए। त्रिच-त्रयम्-तीन। चाख्-चतुष्कम्-चार। पंजु-पञ्चकम्-पांच। षक-षट्कम्-छः। सतु-सप्तकम्-सात। ऐठि-अष्टकम्-आठ। नमु-नवकम्-नौ। दहु-दशकम्-दश। इत्यादि।

किंचिदर्थे पहान् ॥ १६३ ॥

विशेष्यस्य वस्तुन: किंचिद्विशेषणार्थे वाच्ये पहान् शब्दः अग्रे प्रयोज्यः। बडु पहान्। किंचिन्महान्। व्यठु पहान्। किंचित्स्थूलः। वुषण पहान्। किंचिदुष्णः। इत्यादि। दिग्देशकालवाचिभ्यश्च शब्देभ्योऽग्रे प्रयोज्यः। दूर पहान्-किंचिद्दूरम्। न्यूर् पहान्। किंचित्समीपम्। ब्रोंठ पहान्-किंचित्पूर्वम्। पथ्पहान्। किंचित्पश्चात्। चीरि पहान्। किंचिच्चिरेण। काशरु पहान्। किंचित्कश्मीरदेशजः। बंगालकु पहान्। किंचिद्बंगलादेशजः। उहुर्येदु पहान्। यहुर्येदु पहान्। इत्यादि विज्ञेयम्।

विशेष्य वस्तु के कुछ विशेषण अर्थ-वाच्य में 'पहान्' शब्द आगे प्रयुक्त करना चाहिए। बडुपहान्-किंचिन्महान्-कुछ बड़ा। व्यठु पहान्-किंचित्स्थूलः-कुछ मोटा। वुषण पहान्-किंचिदुष्णः-कुछ गर्म।

इत्यादि । दिग्, देश, काल, वाचक शब्दों से आगे प्रयुक्त करना चाहिए । दूर पहान् किंचिद्दूरम्-कुछ दूर । न्यूर पहान्-किंचित्समीपम्-कुछ पास । ब्रांठ् पहान्-किंचित्पूर्वम्-कुछ पहले । पथ् पहान्-किंचित्पश्चात्-कुछ पोछे । चोरि पहान्-किंचिच्चिरेण-कुछ देर से । काशरु् पहान्-किंचित्कश्मीरदेशजः-कुछ कश्मीर देश में पैदा हुआ । बंगालकु पहान्-किंचिद्बंगलादेशजः-कुछ बंगला देश में पैदा हुआ । उहुर्येदु पहान् । यहुर्येदु पहान् । इत्यादि जानना चाहिए ।

इति श्री शारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते
तद्धितप्रक्रिया समाप्ता ।। ४ ।।

अथ अव्ययप्रक्रिया ।। ५ ।।

क्रियासंबन्धिनोऽव्यया नित्यम् ।। १ ।।

ये अव्ययशब्दास्ते नित्यं क्रियासंबन्धिनो भवन्ति । यद्वनै करख् । यदि कुर्याः ।

जो अव्यय शब्द हैं, वे नित्य क्रिया से सम्बद्ध होते हैं । यद्वने करख्-यदि कुर्याः-यदि तू करे ।

धातुभ्य आनव्यये ।। २ ।।

क्रियासंबन्धिनि अन्यधात्वर्थे अभिधेये सति तस्माद्धातोः आन् प्रत्ययो भवति स चाव्ययः । व्यठान् आन्-स्थूलमागतः । स्थूलं यथा स्यात्तथा आगत इत्यर्थः ।

क्रिया से सम्बद्ध अन्य धात्वर्थ अभिधेय होने पर उस धातु से 'आन्' प्रत्यय होता है और वह अव्यय है । व्यठान् आव्-स्थूलमागतः-मोटा हो गया । स्थूल (मोटा) जैसा हो वैसा आया, यह अर्थ है ।

वीप्सया वा ।। ३ ।।

स्पष्टम् । व्यठान् व्यठान् गौव् । स्थूलं स्थूलं गतः । बहुत मोटा हो गया ।

स्वरान्ताद्वान् ।। ४ ।।

स्वरान्ताद्धातोरव्यये वान् प्रत्यय इष्यते । ख्यवान् ख्यवान् । खादन् खादन् ।

स्वरान्त धातु से अव्यय होने पर 'वान्' प्रत्यय होता है । ख्य-वान् ख्यवान्-खादन् खादन्-खाता खाता हुआ ।

लिङ्गाभीक्ष्ण्येन च ।। ५ ।।

यस्यैव विशेषणरूपस्य लिङ्गस्य क्रियासंबन्धः स्यात्तस्य शब्दस्य आभीक्ष्ण्येन द्विरुक्तेन क्रियासंबन्धो अव्ययः स्यात् च शब्दात्केवलेनापि । चतुर् चतुर् । शीघ्रं शीघ्रं । ल्वतु ल्वतु । मन्दं मन्दं । पक्ष ल्वति ल्वति । ग्वबु ग्वबु छुह् पकान् । गुरु गुरु चलति । केवलेनापि यथा । चतुर् ख्यवान् छुह् । चतुरमत्ति । ल्वतु करान् छुह् । लघु करोति । ग्वबु पकान् छुह् । गुरु गच्छति ।

जिस भी विशेषणरूप लिङ्ग का क्रिया से संबन्ध हो, उस शब्द का आभीक्ष्ण्य दो बार कहने से और केवल से भी क्रिया से सम्बद्ध अव्यय होता है। चतुर् चतुर्-शीघ्रं शीघ्रं-जल्दी-जल्दी। ल्वतु ल्वतु-मन्दं मन्दं-धीमे धीमे। पक्ष में-ल्वति ल्वति। ग्ववु ग्ववु छुह् पकान्-गुरु गुरु चलति-भारी भारी चलता है। केवल से भी जैसे-चतुर् ख्यवान् छुह्-चतुरमत्ति-जल्दी खाता है। ल्वतु करान् छुह्-लघु करोति-धीमे करता है। ग्ववु पकान् छुह्-गुरु गच्छति-भारी चलता है।

इति श्री शारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते
अव्ययप्रक्रिया समाप्ता ॥ ५ ॥

अथ स्त्रीप्रत्ययप्रकरणम् ॥ ६ ॥

स्त्रियाम् ॥१॥

अत्राधिकारे ये वक्ष्यमाणाः प्रत्ययास्ते स्त्रियामेवेत्यधिक्रियंते ।

यहां अधिकार में जो वक्ष्यमाण प्रत्यय हैं, वे स्त्रीलिङ्ग में ही अधिकृत किए जाते हैं ।

मनुष्यजातेः सर्वत्र बाय् ॥ २ ॥

जातिर्द्विविधा एका साम्प्रदायिका अन्या शिल्पवशात्स्वर्णकाराद्या जातिर्लोके प्रोच्यते । न चात्र पशुपक्ष्यादीनां जातिर्गृह्यते मनुष्यशब्दस्य सूत्रे नियमात् । तयोर्द्वयोरेव जात्योः स्त्रीशब्दे अभिधेये सति बाय प्रत्ययो भवति । दरबाय् । कौलबाय् । इत्यादि । वटबाय् । आर्यस्त्री । स्वनर्बाय् । स्वर्णकारस्त्री । खारबाय् । लोहकारस्त्री । इत्यादि । मनुष्यजातेः किम् । कोतर्बाय् । कोतर् नाम्नी जातिस्तत्संबन्धिनी स्त्री । न तु कपोतस्त्री तत्र। कोत्रू् इति भवति ।

जाति दो प्रकार की होती है—एक साम्प्रदायिका, दूसरी शिल्प के अनुसार स्वर्णकार आदि जाति लोक में कही जाती है । यहां पशु-पक्षी आदि की जाति नहीं ली जातो है, सूत्र में 'मनुष्य' शब्द का नियम होने से । उन दोनों ही जातियों के स्त्रीशब्द के अभिघेय होने पर बाय' प्रत्यय होता है । दरबाय्-कौलबाय्-इत्यादि । वटबाय्-आर्य-स्त्री-आर्य की स्त्री । स्वनर्बाय्-स्वर्णकारस्त्री-सुनार की स्त्री । खार-बाय्-लोहकारस्त्री-लुहार की स्त्री । इत्यादि । मनुष्य जाति का क्या ? कोतर्बाय्-'कोतर' नाम की जाति विशेष है, उससे सम्बद्ध स्त्री । 'कबूतर की स्त्री' यहां नहीं समझना, 'कोत्रू्' यह होता है ।

अनादरार्थे क्वलय् ॥ ३ ॥

मनुष्यजातिवाचकाच्छब्दादनादरेण स्त्रीशब्दे अभिधेये क्वलय् प्रत्ययो भवति । बटकलय् । ब्राह्मणस्त्री । छानकलय् । तक्षकस्त्री । अत्र यद्यपि क्वलय् शब्दो भार्यार्थवाची वर्तते परन्तु समासेनादरार्थोऽवगम्यते ।

मनुष्यजातिवाचकशब्द से अनादरपूर्वक स्त्रीशब्द अभिधेय में 'क्वलय्' प्रत्यय होता है। बटकलय्-ब्राह्मणस्त्री-ब्राह्मण की स्त्री। छानकलय्-तक्षकस्त्री-तरखान की स्त्री। यहां यद्यपि 'क्वलय्' शब्द 'भार्या' अर्थवाचक है, परन्तु संक्षेप में 'अनादर' अर्थ में जाना जाता है।

सर्वेषामुकारान्तानामूकारादेशः ॥ ४ ॥

सर्वेषां विशेष्यशब्दानां विशेषणशब्दानां चोकारान्तानां स्त्रीलिङ्गविषये ऊमात्रादेशो भवति। पटु। पटू। पट्टिका। म्वटु। म्वटू। स्थूला। गरु। गरू। कठिना। गरु। गरू। अश्वा। द्रबु। द्रबू। रजकी। वोवरु। वोवरू। (सू० ८) तन्तुवाया। गगरु। गग्रू (सू० ८) मूषका। पक्षे-मनुष्यजातेः। द्रविबाय्। वोव्रिबाय्।

सभी विशेष्य और विशेषण शब्दों के तथा उकारान्तों के स्त्रीलिङ्गविषय में 'ऊ' मात्र आदेश होता है। पटु-पटू। पट्टिका-फट्टी। म्वटु-म्वटू-स्थूला-मोटी। गरु-गरू-कठिना-कठिन। गरु-गरू-अश्वा-घोड़ी। द्रबु-द्रबू-रजकी-धोबिन। केवरु-वोव्रू-(सू० ८) तन्तुवाया-जुलाही। गगरु-गगरू-(सू० ८)-मूषका-चूही। पक्ष में मनुष्य जाति के-द्रविबाय्। वोव्रिबाय्।

वा छदुशब्दात् ॥ ५ ॥

स्पष्टम्। छ्वटु। छ्वटू। ह्रस्वा। पक्षे छ्वटिञ्। इति मनुष्य जातेरेव।

स्पष्ट है। छ्वटु-छ्वटू-ह्रस्वा-ठिंगना। पक्ष में-छ्वटिञ्-यह मनुष्य जाति का हो।

खरश्च ॥ ६ ॥

खर्शब्दात्स्त्रीलिङ्गविषये विकल्पेन ऊमात्रागमो भवति। खरू। खरी। पक्षे। खरिञ्।

'खर्' शब्द से स्त्रीलिङ्गविषय में विकल्प से 'ऊ' मात्र आगम होता है। खरू-खरी-पक्ष में-खरिञ्।

लान्तानां नः ॥ ७ ॥

उकारविशिष्टानां लकारान्तानां लकारस्य नकारादेशो भवति। वोलु। वाजू। (ऊर्मिका) कुण्डलिका। डुलोऽन्त्यात् लि आगमःइष्यते। डुलु। डुलिजि्। कुण्डलिका।

'उकार' विशिष्ट लकारान्तों के 'लकार' को 'जकार' आदेश होता है। वोलु-वाजू-(ऊर्मिका) कुण्डलिका। डुल के अन्त के अक्षर से 'लि' आगम होता है। डुलु-डुलुजि्-कुण्डलिका।

त्र्यक्षरादीनामुलोप उलोश्च ॥ ८ ॥

त्र्यक्षरादिकानां शब्दानां उलु प्रत्ययसंबन्धिन उपधाया उकारस्य लोपो भवति। गाटुलु। गाट्जू। दक्षा। फुटुलु। फुट्जू। पोटलिका। चक्लु। चक्जू। चक्रिका। पतुलु। पत्जू। उडुपिका। ग्वगुलु। ग्वग्जू। रक्तालुः। च्वतुलु। च्वतुजू। व्यभिचारिणी। वातुलु। वात्जू। चण्डाली। टठुलु। टठ्जू। काष्ठपात्रिका। त्र्यक्षरादिकानां किम्। गरू। अश्वा। गूरु्। गूरू्। गोपालिका। खरु्। खलतिः। खरू्। रोगविशेषः। उलोः किम्। त्रोलू। त्राजू। मोलू। माजू। गूलु्। गूजू।

तीन अक्षरों वाले शब्दों के 'उलु' प्रत्यय से संबद्ध उपधा के 'उकार' का लोप होता है। गाटुलु-गाट्जू-दक्षा-चतुर। फुटुलु-फुट्जू-पोटलिका-पोटली। चक्लु-चक्जू-चक्रिका—चक्र बाली। पतुलु-पत्जू-उडुपिका-नक्षत्रों बाली। ग्वगुलु-ग्वग्जू-रक्तालुः-शलगम। च्वतुलु-च्वत्जू-व्यभिचारिणी-व्यभिचार कराने बाली। वातुलु-वात्जू-चण्डाली-चण्डालिन। टटुलु-टठ्जू-काष्ठपात्रिका-लकड़ी का छोटा वर्तन। त्र्यक्षरादि का क्या ? गरु्-अश्वा-घोड़ी। गूरु्-गुरू्-गोपालिका-ग्वालिन। खरु्। (खलतिः) खरू्-रोगविशेषः-विशेष रोग। उलु से क्या ? त्रोलु-त्राजू। मोलु-माजू। गूलु-गूजू।

कवर्गान्तानां चवर्गः ॥ ९ ॥

उकारविशिष्टानां केवलानां च कवर्गान्तानां पुंल्लिङ्गानां स्त्रीलिङ्गविषये चवर्गादेशो भवति। बतकु। बत्चू। वर्तिका। ह्खु। ह्छु। शुष्का। ड्ँयूगु। डोँजू। सूत्रादिगुटिका।

उकारविशिष्ट केवल और कवर्गान्त पुंल्लिङ्गों के स्त्रीलिङ्ग विषय में 'चवर्ग' आदेश होता है। बतकु-बत्चू-वर्तिका-बत्ती। ह्खु- ह्छु-शुष्का-सूखी। ड्ँयूगु-डीँजू-सूत्रादिगुटिका।

न खूंखुच्वक्वोः ॥ १० ॥

स्पष्टम्। खूंखु। खूंखू। अवटीटा। च्वकु। च्वकू। अम्ला।

तवर्गन्तानामप्रसिद्धः ॥ ११ ॥

स्पष्टम् । मतु । मचू । उन्मत्ता । क्वथु । क्वछू । भारिका । व्वरुदु । व्वरजू । पुनर्भूः । वन् । वञ् । वन्या । मान् । माञ् । वैश्या । छान् । छाञ् । तक्षकी । हूनु । हूञ् । शुनी । एवं सर्वत्र ।

स्पष्ट है । मतु-मचू-उन्मत्ता-पागल । क्वथु-क्वछू-भारिका-भार ढोने वाली । व्वरुदु-व्वर्जू-पुनर्भू । वन्-वञ्-वन्या-जंगली । मान्-माञ्-वैश्या । छान्-छाञ्-तक्षकी-तरखानिन । हूनु-हूञ्-शुनी-कुतिया । इसी तरह सब जगह ।

कंगोऽल्पार्थेराकारश्च ॥ १२ ॥

कंग् वृहदङ्गारधानिका । तस्मादल्पाथ र् प्रत्ययो भवति आकारश्च भवति । काँग्र् । हसन्तिका ।

'कंग्' बहुत से अङ्गारों को रखने का पात्र । उससे 'थोड़े' अर्थ में 'र्' प्रत्यय और 'आकार' होता है । काँग्र्-हसन्तिका-काँगड़ी ।

चासः कृत्रिमे सस्य च खः ॥ १३ ॥

चास् सहजकासस्तस्मात्कृत्रिमेऽर्थे र् प्रत्ययः सकारस्य च खकारो भवति । चाख्र् । कृत्रिमकासः ।

'चास्' स्वाभाविक खाँसी, उससे कृत्रिम अर्थ में 'र्' प्रत्यय और 'सकार' को 'खकार' होता है । चाख्र्-कृत्रिमकासः-कृत्रिम खाँसी ।

त्रकस्तुलायाम् ॥ १४ ॥

तुलाया अर्थे त्रक्शब्दात् र् प्रत्ययो भवति । त्रख् । द्रोणः । त्रक्र् तुला ।

'तराजू' अर्थ में 'त्रक् शब्द से 'र्' प्रत्यय होता है । त्रख्—द्रोणः-मापविशेष । त्रक्र्-तुला-तराजू ।

म्वंडुशब्दस्यान्त्यस्वरलोपः ॥ १५ ॥

म्वंडु वृहत्काष्ठम् । तस्मादल्पस्यार्थे र् प्रत्ययो भवति । अन्त्यस्वरस्य च लोपो भवति । म्वंडु । म्वंड्र् । अल्पकाष्ठम् ।

म्वंडु-बड़ा काठ का टुकड़ा । उससे 'छोटे' अर्थ में 'र्' प्रत्यय होता है और अन्त के स्वर का लोप होता है ।

फ्वतुशब्दस्य च ॥ १६ ॥

र् प्रत्ययान्त्यस्वरलोपौ भवतः फ्वतु । फ्वत्र् । कटोलिका ।

'र्' प्रत्यय और अन्त के स्वर का लोप होता है फ्वतु-फ्वत्र्-कटोलिका ।

लटोश्च ॥ १७ ॥

लट्ट पुच्छस्तस्मादल्पस्यार्थे र् प्रत्ययान्त्यस्वरलोपो भवत:। लट्ट। लट्र्। पुच्छिका। तत्सादृश्येऽपि व्यवह्रियते। कूटि लट्र्। क्षुद्रकाष्ठम्।

'लट्ट' पूँछ को कहते हैं, उससे 'थोड़े' अर्थ में 'र्' प्रत्यय और अन्त के स्वर का लोप होता है। लट्ट-लट्र्-पुच्छिका-छोटी पूँछ। तत्सादृश्य में भी व्यवहृत होता है। कूटि लट्र्-क्षुद्र काष्ठम्-छोटी लकड़ी।

मक्शब्दाच्चप्रत्यय: ॥ १८ ॥

मख् परशुस्तस्मादल्पार्थे च प्रत्ययो भवति। मक्च्। परश्वधिका।

अल्पार्थे कृत्रिमार्थे च स्त्रीलिङ्गोद्देशकेऽपि च।
सादृश्ये स्वविशेषेऽर्थे स्त्रीलिङ्ग प्रत्यया: खलु॥

अल्पार्थे यथा। कतुरू। कपाल:। कत्रू। कपालिका। कृत्रिमार्थे यथा। चाखर्। कृत्रिमकास:। वस्तुन: सजीवस्य निर्जीवस्य वा स्त्रीलिङ्गेनोद्देशे कर्तव्ये सति स्त्रीप्रत्ययो भवति। म्वंगुरु-छागपोत:। म्वंग्रू-छागपोता। बछु। वत्स:। बछ्र्। वत्सा। न चात्र वत्सस्य स्त्रीवत्सा इत्यवगम्यते, किन्तु बछु शब्दस्य पुंल्लिगस्य स्त्रीलिङ्गेन निर्देश:। सादृश्ये यथा। क्वथु। क्वछु ततुरु-पीड़ा। तत्रू। कोपपीड़ा स्व-विशेषेऽर्थे यथा। नरु्। वस्त्रभुज:। नरू्। भुज:। अत्र नरूशब्दस्य स्वयं स्त्रीलिङ्गत्वान्नाल्पत्वाद्यर्थग्रह:, किन्तु वस्त्रभुजस्याधारार्थेऽत्र स्त्रीलिङ्गोद्देश: यद्वा परस्परं विनिमयोपशमाद्यत्राद्य: शब्द: पुंल्लिङ्गोभवति तत्र तत्संबन्धिनोऽन्यशब्दस्य स्त्रीलिङ्गेनोद्देश: क्रियते। यत्र तु स्त्रीलिङ्गस्तत्र पुंल्लिङ्गोद्देश:। नरु। नरू। खेरु। खरू। खलति:।

'मख्' कुल्हाड़ा, उससे 'थोड़े अर्थ में 'च' प्रत्यय होता है। मक्च्-परश्वधिका-कुल्हाड़ी।

अल्प अर्थ में, कृत्रिम अर्थ में, स्त्रीलिङ्ग-उद्देशक में, सादृश्य में और स्वविशेष अर्थ में स्त्रीलिङ्ग प्रत्यय होते हैं।

अल्पार्थ में जैसे—कतुरु-कपाल: -खोपड़ा। कत्रू—कपालिका—खोपड़ी।

कृत्रिम अर्थ में जैसे—चाख्र्-कृत्रिमकासः—कृत्रिम खांसी। सजीव वा निर्जीव वस्तु के स्त्रीलिङ्ग से उद्देश करने पर स्त्री-प्रत्यय होता है। म्वंगरु—छागपोतः—बकरे का बच्चा। म्वंगरू-छागपोता—बकरे की बच्ची। बछु-वत्सः-बछड़ा। बछूर्-वत्सा-बछड़ी। यहां बछड़े को स्त्री बछड़ी नहीं समझी जाती, किन्तु 'बछु' शब्द पुंल्लिङ्ग का स्त्रीलिङ्ग से निर्देश है।

सादृश्य में जैसे—क्वथु-क्वछु। ततुरु-पीड़ा-दर्द। तत्रू-कोप-पीड़ा-क्रोध से पीड़ा।

स्वविशेष अर्थ में जैसे-नरु-वस्त्रभुजः-कपड़े की भुजा। नरू—भुजः-भुजा। यहां 'नरू' शब्द के स्वयं स्त्रीलिङ्ग होने से न कि अल्पत्व से अर्थग्रहण होता है, किन्तु वस्त्र की भुजा के आधार अर्थ में यहां स्त्रीलिङ्ग उद्देश है। अथवा परस्पर विनिमय के उपशम से यहां आद्य शब्द पुंल्लिङ्ग होता है। वहां उससे सम्बद्ध अन्य शब्द का स्त्रीलिङ्ग से उद्देश किया जाता है। यहां स्त्रीलिङ्ग है, वहां पुंलिङ्ग उद्देश है। नरु, नरू, खरु, खरू खलतिः।

हस्तुशब्दान्नित्यमिञ् ॥१९॥

उकारान्तत्वात् ऊमात्रादेशनिवृत्यर्थं नित्यमिञ् प्रत्ययो भवति। हस्तिञ। हस्तिनी।

उकारान्त होने से 'ऊ' मात्र आदेश निवृत्ति के लिए नित्य 'इञ्' प्रत्यय होता है। हस्तिञ-हस्तिनी-हथिनी।

काव्नाग्वूंट्भ्यश्च ॥२०॥

एभ्यः शब्देभ्यो नित्यमिञ् भवति। काविञ्। काकी। नागिस्-नागा। वूंटिञ्। उष्ट्रा।

इन शब्दों से नित्य 'इञ्' प्रत्यय होता है। काविञ्-काकी-छोटी लड़की। नागिस्-नागा-नागिन। बूंटिञ्-उष्ट्रा-ऊंटिनी।

अन्यतोऽपि पशुजातेः ॥ २१ ॥

स्पष्टम्। खरिञ्-खरी-गदही।

व्यठुगूठ्भ्यां निन्दार्थे ॥ २२ ॥

स्पष्टम्। व्यठिञ्। स्थूला। गूठिञ्। स्थूला। निन्दायां किम् व्यठू। स्थूला।

स्पष्ट है। व्यठिञ्-स्थूला-मोटी। गूठिञ्-स्थूला-मोटी। निन्दा में क्या? व्यठू-स्थूला-मोटी।

ब्वटशब्दात्स्त्रियाम् ॥ २३ ॥

स्त्रीलिङ्गविषये इञ् भवति न निन्दार्थे। ब्वटिञ्। बटिञ्। ब्वटजातिः स्त्री। पक्षे। ब्वटबाय्।

स्त्रीलिङ्गविषय में 'इञ्' होता है, निन्दा अर्थ में नहीं। ब्वटिञ्-बटिञ्-ब्वटजातिः स्त्री-ब्वट जाति की स्त्री, पक्ष में, ब्वटबाय्।

बुगिय्शब्दाद्यलोपश्च ॥ २४ ॥

बुगिय् स्वामी तस्मादिञ् प्रत्ययो भवति। यकारस्य च लोपो भवति। बुगिञ्। स्वामिनी।

'बुगिय्' स्वामी, उससे 'इञ्' प्रत्यय होता है और 'यकार' का लोप होता है। बुगिञ्-स्वामिनी-मालकिन।

जलात्पादनिदाघे ॥ २५ ॥

जलशब्दात्पादस्वेदार्थे इञ् भवति। जलिञ्। पादस्वेदः।

'जल' शब्द से पाँओं के पसीने' के अर्थ में 'इञ्' होता है। जलिञ्-पादस्वेदः-पाँओं का पसीना।

गराद्गृहसंस्कारे ॥ २६ ॥

गृहसंस्कारेऽभिधेये गरशब्दात्स्त्रियामिञ् भवति। गरिञ्। गृहसंस्कारिणी। अन्यत्र। गर्वाज्यञ्। गृहिणी।

गृहसंस्कार-अभिधेय में 'गर' शब्द से स्त्रीलिङ्ग में 'इञ्' होता है। गरिञ्-गृहसंस्कारिणी-घर का संस्कार करने वाली। दूसरी जगह-गर्वाज्यञ्-गृहिणी-घर वाली।

द्वबुशब्दादायुधे ॥ २७ ॥

स्पष्टम्। द्वविञ्। सृगरूपो रजकायुधः। अन्यत्र। द्वबू वा द्वबिवाय्। रजकस्त्री।

स्पष्ट है। द्वविञ्-सृगरूपो रजकायुधः-सृग रूप धोबी का आयुध-विशेष। दूसरी जगह-द्वबिवाय्-रजकस्त्री-धोबी की स्त्री।

मनुष्यजातेरञ् ॥ २८ ॥

मनुष्यजातिवाचकाच्छब्दादञ् प्रत्ययो भवति। बटञ्। ब्राह्मणी। मुसलमानञ्। म्लेच्छानी। हाकग्राकञ्। शाकविक्रेत्री-चाञ्यञ्-वणिक्स्त्री।

मनुष्य जाति वाचक शब्द से 'अञ्' प्रत्यय होता है। बटञ्-ब्राह्मणी-ब्राह्मणस्त्री। मुसलमानञ्-म्लेच्छानी-म्लेच्छस्त्री। हाक ग्राकञ्-शाक

विक्रेत्री-शाक बेचने वाली। चाञ्यत्र्-वणिक्स्त्री-वणिए की स्त्री।

वोलुप्रत्ययान्तान्नित्यम् ॥ २९ ॥

स्पष्टम्। गर्वाज्यत्र्। गेहिनी। न तु गर्वोलुशब्दस्य उकारान्तत्वात् ऊमात्रादेशः स्यान्नित्यग्रहणात्। प्रत्ययान्तान्नित्यम् वोलु। वाजू।

स्पष्ट है। गर्वाज्यत्र्-गेहिनी-घर वाली। वोलुशब्द के उकारान्त होने से 'ऊ' मात्र आदेश हो नित्य ग्रहण से। प्रत्ययान्त से नित्य। वोलु-वाजू।

प्रत्ययादेर्यो रान्तेभ्यः ॥ ३० ॥

रकारान्तेभ्यः शब्देभ्यः प्रत्ययादिवर्णस्य यकारो भवति। सालर्यंत्र्। अतिथिस्त्री। प्वहर्यंत्र्। गृहागता। रंगर्यंत्र्। रजकस्त्री। स्वनर्यंत्र्। स्वर्णकारस्त्री। दाँदर्यंत्र्। शाकविक्रेत्री। काँदर्यंत्र्। आपूपिकी। स्वञ्यत्र्। पुत्रश्वश्रूः। महार्यंत्र्। महाराजस्त्री। राज्यर्यंत्र्। राजस्त्री।

रकारान्त शब्दों से प्रत्ययादिवर्ण को 'यकार' होता है। सालर्यंत्र्-अतिथिस्त्री-अतिथि की स्त्री। प्वहर्यंत्र्-गृहागता-घर आई। रंगर्यंत्र्-रजकस्त्री-धोबी की स्त्री। स्वनर्यंत्र्-स्वर्णकारस्त्री-सुनार की स्त्री। दाँदर्यंत्र्-शाकविक्रेत्री-शाक बेचने वाली। काँदर्यंत्र्-आपूपिकी-......। स्वञ्यत्र्-पुत्रश्वश्रूः- बेटे की सास। महार्यंत्र्-महाराजस्त्री-महाराज की स्त्री। राज्यर्यंत्र्-राजस्त्री-राजा की स्त्री।

पण्डितगुजरयोरा ॥ ३१ ॥

आभ्यां शब्दाभ्यां प्रत्ययादिवर्णस्य अप्रसिद्ध आकारो भवति। पंडितात्र्। पण्डितस्त्री। गुजरात्र्। जाबालस्त्री।

'पण्डित' और 'गुजर' शब्दों से प्रत्ययादि वर्ण को अप्रसिद्ध 'आकार' होता है। पण्डितात्र्-पण्डितस्त्री-पण्डितानी। गुजरात्र्-जाबालस्त्री-गुजरी।

इति श्रीशारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते
स्त्रीप्रत्ययप्रक्रिया समाप्ता ॥ ६ ॥

अथाख्यातप्रक्रियायाम् ॥७॥

धातुपाठः ॥१॥

धातवोऽन्योन्यसांकर्यात्कथ्यन्ते दोषसंज्ञया ।
ते दोषज्ञेन शोध्यन्ते सांकर्याच्च विकीर्णनात् ॥ १॥
तथा गिरं प्रणम्यादौ शारदाक्षेत्रधातवः ।
संकीर्णाश्चविकीर्णाश्च ग्रथ्यन्ते यत्नतो मया ॥ २ ॥

तत्र येषां धातूनामतीतकाले केवलं कर्मप्रयोगाः केवलं भावप्रयोगा एव संपद्यन्ते तेषां संकेतो यथा (अक) (अभा) । शेषा धातवोऽतीतकालेऽपि कर्तृप्रयोगिनो भवन्ति ।

वहां जिन धातुओं का अतीत काल में केवल कर्म में प्रयोग, केवल भाव में प्रयोग ही हुआ करता है, उनका संकेत जैसे—(अक) (अभा) । बाकी धातुएं अतीतकाल में भी कर्ता में प्रयुक्त हुआ करती हैं ।

धातुपाठः

अकाराद्याः

	धातुः	अर्थः	हिन्दी
	अच	प्रवेशे	प्रवेश में
	अछ	दौर्बल्ये	दुर्बलता में
	अड	नैर्बल्येऽभियोगे च	निर्बलता और अभियोग में
	अदर	आर्द्रीभवने	गीला होने में
अक	अद्राव्	आर्द्रीकरणे	गीला करने में
अक	अन, आन इति केचित्	आनयने	लाने में
अक	अन्ज़्र	समापने	समापन में
अक	अन्ज़्राव	च	और
	अन्द	अवसाने	अवसान में
अक	अवस,	वेष्टने	वेष्टन में
	अबसाव	च	और

अक	कतर	मेधाविर्भावे	मेधा के आविर्भाव में
अक	अबराव्	च	और
अक	अर्ज	अर्जने	कमाने में
अक	अर्पाव	पातने	गिराने में
	अल	अध्रुवीभावे	अनिश्चय भाव में
अक	अलर	चेष्टादाने कम्पने च	चेष्टा देने और कम्पन में
अक	अलराव	च	और
अक	अस	हसने	हंसने में
अक	अहल	मानने	मानने में

आकाराद्याः

अक	आछन	परिचयने	चुनने में
अक	आज़्र	तत्परतायाम्	तत्परता में
अक	आँट्र	कोपाद्विचारणे	गुस्से से विचार करने में
अक	आड्र	मिश्रणे पिण्डीकरणे	मिलने में और पिण्ड बनाने में
	आडराव्	च	और
अक	आपर	हस्तेन परमुखार्पणे	हाथ से दूसरे के मुख में देने में
अक	आपराव	च	और
	आमन	वैवर्ण्ये	रंग के बिगड़ने में
अक	आयव	सम्य...	...
अक	आरद	आराधने	आराधना में
अक	आरव	परुषीकरणे	कठोर करने में
अक	आलव	ऊर्ध्वभ्रामणे नौकापरिवर्तने च	ऊपर घुमाने में और नौका परिवर्तन में
अक	आवर	व्यापने आवरणे च	व्यापन में और ढकने में
अक	आवराव	च	और
	आवस	विशरणे	विशरण में
	आस	सत्तायाम्	सत्ता में

इकाराद्याः

अक इछ	इच्छायाम्	इच्छा में

ईकाराद्याः

ईर	ऊर्ध्वभ्रमणे	ऊपर भ्रमण में

ककाराद्याः

अक कड	निष्कासने	निकालने में
अक कत	यन्त्रवेष्टने	यन्त्र के वेष्टन में
अक कतर	कृन्तने	काटने में
अक कन्ज	पक्षिभर्जने	पक्षिभर्जन में
अभा कन्ज़्र	निर्द्रव्यीभवने	द्रव्यरहित होने में
अभा कन्ज़राव	च	और
अक कपट	कृन्तने	काटने में
अक कपटाव	च	और
अक कमव	अर्जने	कमाने में
अक कमनाव	च	और
अक कर	करणे	करने में
कल	मूकीभावे	चुप हो जाने में
अभा कश	कण्डूयने	खुज़लाने में
अक कस	तैलादिपचने	तैल आदि के पकने में
कह्र	पारुष्ये	कठोरता में
काच्चर	पिङ्गलीभवने	पीला होने में
अक काँछ	काङ्क्षायाम्	काङ्क्षा में
अक काँट	अप्रत्यक्षहरणे	पीठ पीछे हरण करने में
काठ	कर्कशीभावे	कठोर होने में
कान	काणीभवने पराभवे च	काणा होने में और तिरस्कार में
काम्प	कम्पने	कांपने में
अक काय	आलस्ये	आलस्य में
कायर	निःसारीभावे	निःसार होने में
अक कार	क्वथने	कढ़ने में
कावर्	श्यामीभवने	काला होने में

अक	कास	मुण्डनोपनयनयोः	मुण्डन और उपनयन में
	क्यन्न	क्लेदने	क्लिन्न होने में
	कुठ	वृत्तिसंकोचे	वृत्ति के संकोच में
	कुप	कोपे	क्रोध में
	क्वब	कुब्जीभवने	कुबड़ा होने में
	कुमल	कोमलीभवने	कोमल होने में
अक	कुह	निष्कर्षे	निष्कर्ष में
अक	कूर	निष्कर्षमूलशिथिलीकरणयोः	निष्कर्ष और मूल के शिथिल करने में
	कूर	क्रूरत्वे	क्रूरता में
	कृट, क्रट	कार्श्ये	कृशता में
अक	कृप	कर्तने	काटने में
	कृह्न	कृष्णीभवने	काला होने में
अक	कोंकव	गुणप्रशंसायाम्	गुण प्रशंसा में
	कोल	लौहित्ये	लाल रंग में
	क्त्र	आर्द्रीभवने	गीला होने में
अक	क्चव	आर्द्रीकरणे	गीला करने में
अक	क्न	विक्रीणने	बेचने में
अक	क्राव	करणे	करने में
	क्रेट	कार्कश्ये	कर्कशता में
अभा	क्रेश	गृध्नुतायाम्	गृध्नुता में

खकाराद्याः

अक	खट	गोपने	छिपाने में
अक	खण्ड्र	विभाजने	विभाग करने में
अक	खण्ड्राव	च	और
अक	खन	अवदारणे	अवदारण में
अभा	खप	व्यभिचारे	व्यभिचार में
अभा	खम	उच्छ्वासनिःश्वासे	सांस-निःश्वास में
	खर	अप्रीतौ	अप्रीति में
	खल	विस्तारे	विस्तार में
अक	(खर च)	(व्ययीकरणे)	खर्च करने में

	खस	आरोहे	आरोह में
अक	खह	चित्रीकरणे	चित्रित करने में
अक	खार	आरोहणे	चढ़ने में
अक	खि	खादने	खाने में
अभा	खिष्क	दम्भगतौ	दम्भगति में
	खखर	निःसारतायाम्	निःसारता में
अक	खखलाव	वस्तुनो जलावगाहने	वस्तु के जलावगाहन में
अक	खुत	अधः खनने	नीचे खोदने में
अक	खून्ज़्	तनूरुहकर्षणे	वृक्ष के खींचने में
	खोच	भये	भय में
	खोर	भये	भय में
	खोल	उद्घाटने	खोलने में
अक	ख्स	तनूरुहकर्षणे	वृक्ष के खींचने में

गकाराद्याः

	गछ्	गतौ युक्तीभवने च	गति में और युक्तीभवन में
अक	गण्ड	ग्रन्थे	ग्रन्थ में
	(गन)	(घनीभवने)	घना होने में
अक	गन्ज़्र	संख्याने	संख्यान में (गिनती)
अक	गन्ज़्राव	च	और
अक	गर	घट्टने	घट्टन में
	गर्म	घर्मीभवने	गर्म होने में
	गल	नाशे	नाश में
	गाँगल	परैश्चाञ्चल्ये	दूसरों से चञ्चलता करने पर
	ग्राँगल	च	और
अक	गार	प्रसादे अन्वेषणे च	प्रसाद में और खोज में
अक	गाल	नाशने	नाश में
अक	गिन्द	क्रीडायां	खेल में
	ग्यमट्	कृशीभवने	कृश होने में
अक	गिलव	अपहरणे भ्रामणे च	अपहरण और घुमाने में

अक ग्यव	गीतौ	गीति में
गीर	भ्रमणे	घूमने में
अभा गुज़राव	उपेक्षायाम्	उपेक्षा में
अभा गुन्द	उपालम्भे	उलाहने में
अक गुप	गोपने	छिपाने में
ग्वब	गौरवे	गौरव में
गुमन	धूसरे (धूसरतायाम्)	धूसरता में
गुरट	गौरे (गौरतायाम्)	गौरता में
अक गुलव	मुखलाडने	मुख लाडन में
चमक	दीप्तौ	दीप्ति में
अक ···	आवरणे	आवरण में
गेल	वियोगे (उपहासे च)	वियोग में और उपहास में
अक गोर	विलापे	विलाप करने में
गोवर	निद्राहतत्वे	निद्राभङ्ग होने में
ग्रक	चाञ्चल्यपाकातिशययोः	चञ्चलता और अधिक पकाने में
अभा ग्रज	गर्जने	गर्जना में
अक,भा ग्राश्र	ग्रहणे वृष्टिबन्धे च	ग्रहण में और वृष्टि बांधने में
अक,भा ग्राश्राव	च	और
ग्वच	पात्रस्थजलादिचेष्टायाम्	पात्र में स्थित जल आदि चेष्टा में
अक ग्ह	घर्षणे	घिसने में

चकाराद्याः

अक चताव	स्तुतौ	स्तुति में
चमक	दीप्तौ	चमकने में
अक चार	बलाद्बन्धने	जबरदस्ती बांधने में
अक चाव	पायने	पिलाने में
अक चि	पाने	पीने में
अक चीर	निष्पीडने	पीड़न करने अर्थ में

अक	चुकाव	मूल्यनिश्चयीकरणे	मूल्य निश्चित करने में
अभा	चुम	दीनतायाम्	दीनता में
	चौंखर	संकोचने	संकोच करने में

छकाराद्याः

अक	छक	कीर्णने	कीर्णन में
अक	छक्र	अवकीर्णने	अवकीर्णन में
अक	छक्राव	च	और
अक	छच्राव	श्वेतीकरणे	सफ़ेद करने में
	छत	श्वैत्यें	सफेदी में
	छन	पाते	गिराने में
अक	छप	वृष्टिकालयोः क्षेपे	वृष्टि और काल विताने में
अभा	छर	पुरीषोत्सर्गे	शौच करने में
अक	छल	क्षालने	धोने में
अक	छान	उत्पवने शातने च	उत्पवन और शातन में
अक	छाँट	क्रोधाद्गुह्याविष्करणे	क्रोध से गुह्य बात प्रकट करने में
अक	छाव	उपभोगे क्षेपणे च	उपभोग और फैंकने में
अभा	छिक	सेचने प्रमेहने च	सींचने और प्रमेहन में
अक	छिन्द्र	मोहने	मोहित करने में
	छिव	मदे	मद में
अक	छिव्राव	मादने	मस्ती पैदा करने में
	छ्वकल	संघट्टाभावे	संघट्ट (समूह) न होने में
अक	छ्वकव	जलावगाहने	जल में स्नान करने में
अक	छ्वञ्र	ऊनी करणे	ऊनीकरण में
अक	छ्वञ्राव	च	और
	छ्वन्न	अपचये	घटने में
अक	छ्वप्र	व्ययीकरणे	खर्च करने में
अक	छ्वप्राव	च	और
अक	छ्वम्ब	कर्णमर्दने	कान मसलने में
अक	छेर	अधिक्षेपे	अधिक्षेप में
अक	छोर	त्यागे	त्याग में

जकाराद्याः

अभा जख	सेवायाम्	सेवा में
अक जर	उट्टङ्कने	उट्टङ्कना करने में
अभा जूर	उपसेवायाम्	उपसेवा में

अप्रसिद्धचकाराद्याः

अक चट	छेदने	काटने में
चम	अल्पीभवने संगते च	थोड़ा होने में और इकट्ठा होने में
चमठ	पर्युषितत्वे	बासा होने में
चर	उपचये	वृद्धि में
चर	अन्तः कोपे(स्त्री भा)	भीतरी गुस्सा में
अक चर्च	चारक्रियायाम्	चारक्रिया में
चल	चलने	चलने में
अभा चस	अतिहासे	अति हंसने में
अक चान	प्रवेशने	प्रवेश करने में
अक चाप	अदने	खाने में
अक चार	चयने	चुनने में
अक चाल	सहने	सहन करने में
अभा च्यखल	सोत्प्राशे	सोत्प्राश में
अभा च्यङ्ग	हर्षे	हर्ष में
अभा च्यत्र	उपेक्षयेव प्रेक्षणे	उपेक्षा से ही देखने में
अक च्यल्ल	वलात्प्रवेशने (वलात्प्रवेशेनान्यस्य पीडने)	जबरदस्ती प्रवेश करने में (वलपूर्वक प्रवेश से दूसरे के तंग करने में)
अक चीअ्र	संज्ञापने	संज्ञापन में
अक चीअ्राव	च	और
च्वक्	क्रोधेऽम्लीभवने च	क्रोध में और खट्टा होने में
अकभा च्वक्र	कोपने	गुस्सा करने में
अकभा च्वक्राव	च	और
अक च्वग्नाव	चतुर्गुणीकरणे	चौगुना करने में
च्वच	वृत्तिसंकोचे	वृत्ति के संकोच में

अक च्वम्ब	वेधने	बींधने में
अक च्वम्राव	अल्पीकरणे संगतीकरणे च	थोड़ा करने में और इकट्ठा करने में
अकभा चुव	कलहे	झगड़ा करने में
अभा चूंट	अध: शब्दे (अपान शब्दे)	अधोवायु शब्द के साथ निकलने में
अक चूर	योन्याघाते	योनि-प्रहार में
अक चेट	कुट्टने	कूटने में
अकभा चेन	चेतने	होश में
अक च्ह	चूषे	चूसने में

अप्रसिद्धछकाराद्या:

अक छट	उत्क्षेपणे	ऊपर फेंकने में
छर	रिक्तीभवने	खाली होने में
अ(क)छल	छलने	छल करने में
अक छाड़	अन्वेषणे	खोजने में
अक छाँड	च	और
अक छण्ड	च	और
छाँछन	लघ्वीभवने	छोटा होने में
छ्यट	अशुद्धिभवने	अशुद्धि होने में
अक छ्यट्र	अशुद्धिकरणे	अशुद्ध करने में
अक छ्यटराव	च	और
छ्यन्न	छेदे	सुराख में
छ्यव	शमे	शान्ति में
अक छ्यव्र	शामने	शान्त करने में
अक छ्यव्राव	च	और
छ्वच	नि:सारीभवने	नि:सार होने में
छ्वट	ह्रस्वीभवने	ठिगना होने में
अक छ्वटर	ह्रस्वीकरणे	छोटा करने में
अक छ्वटराव	च	और
अक छुन	पातने	गिराने में

अप्रसिद्धजकाराद्याः

अक	ज्‌जर	तक्षणे	तक्षण में
अक	जप	जपने	जप करने में
अक	जर	सहने	सहन करने में
	जल	जलवत्स्वादावगमे	जल की तरह स्वाद की प्रतीति होने में
अभा	जाग	प्रतिजागरे	प्रतिजागर में
अक	जान	अवबोधने	जानने मे
अक	जाल	दाहे	जलाने मे
	जि	जनने	पैदा करने में
	जिङ्गर	विक्ललीभवने	व्याकुल होने में
अक	जीठ्र	दीर्घीकरणे	लम्बा करने में
अक	जीठ्राव	च	और
	ज्वङ्गर	वैकल्ये	व्याकुलता में
	ज्वज्र	जर्जरत्वे	जीर्ण होने में
	जुव	जीवने	जीवन में
अक	जुव्र	सजीवीकरणे	सजीव करने में
अक	जुव्राव	च	और
अभा	ज्वस्	कासे	खांसी में
	जेठ	आयतीभवने	चौड़ा होने में
अक	जेन	जये	जय में
	जोत	दीप्तौ	चमकने में
अक	जोवर	उत्पादने	पैदा करने म
अक	जोव्राव	च	और
अक	ज्‌ख	सहने	सहन करने में
अक	जल्	तक्षणे	तक्षण में

टकाराद्याः

अक	टक	शब्दवद्दन्तैश्छेदने	शब्द के साथ दान्तों से काटने में
अभा	टप	परोक्षपरिभाषणे	पीठ पीछे बात करने में
	टल	परिवर्ते	परिवर्त में

अभा	टाँग	घोरवाशिते	घोरवाशित में
अभा	टाल	उपेक्षागमने	उपेक्षा से जाने में
	ट्यठ	तिक्तीभवने	तीखा होने में
अक	ट्यप	संघट्टे	समूह में
	ट्यम्ब	लोपे	लोप में
अक	टुक	आखुवच्छेदने	चूहे की तरह काटने में
शक	ट्वकव	कूटाघाते	कपट से प्रहार करने में
	ट्वट	वृत्तिसंकोचे	वृत्ति के संकोच में
अक	टुव	संकोचने	संकोच करने में
	टोठ	प्रसादे	प्रसाद में
अभा	ट्क	धावने	दौड़ने में
अक	ट्स	अन्तर्नयने	भीतर ले जाने में
अक	ट्सन	च	और

ठकाराद्याः

	ठग	छलने	छलने में
अक	ठगाव	शाठ्ये	शठता में
	ठहर	संस्थाने	ठहरने में
अक	ठाक	उत्खनने (निरोधने)	खोदने में (रोकने में)
अक	ठास	उत्खनने	खोदने में
	ठीक	स्थितौ	स्थिति में
अक	ठुक	उत्खनने	खोदने में

डकाराद्याः

अक	डक	शब्दवत्पाने	शब्द के साथ पीने में
अक	डखव	दण्डवदाधारीकरणे	दण्ड की तरह बनाने म
अक	डख्र	आधारीकरणे	आधार बनाने में
अक	डख्राव	च	और
	डर	भये	भय में
	डल	उल्लङ्घने	उल्लङ्घन में
अकभा	डाँट	विद्वेषे	विद्वेष में
अक	डाल	परिवर्तने	परिवर्तन में
	ड्यल	शैथिल्ये	शिथिलता में
	ड्वक	देहानार्जवे	देहानार्जव में

	डुब	मज्जने	डूबने में
अक	डुलनाव	गोलवद्भ्रामणे	गोले की तरह घुमाने में
अक	डुलव	च	और
अक	डुव	संमार्जने	बुहारी फेरने में
	ड्वस	देहानार्जवे	देहानार्जव में
अक	डेष	प्रेक्षणे	देखने में
	डोल	अपरिचयने	नहीं चुनने में
	ड्वल, इत्यपरे	,,	,,

तकाराद्याः

	तग	तज्ज्ञतायाम्	तज्ज्ञता में
	तङ्ग	संकोचे	संकोच में
अक	तच्र	तापने	तपाने में
अक	तच्राव	च	और
अभाक	तछ	तक्षणे	तक्षण में
अक	तञ़र	विरलीकरणे	विरला करने में
अक	तञराव	च	और
	तत	तप्तीभवने	गर्म होने में
	तन	विरलीभवने	विरला होने में
अक	तप	औष्ण्योपादाने	गर्मी लेने में
	तम्बल	चाञ्चल्ये	चञ्चलता में
	तर	तरणे	तैरने में
अक	तल	स्नेहपाके	तैल-घी के भीतर पकाने में
अक	तव	भर्जने	भूनने में
अक	ताड	कोपाद्विचारणे	गुस्सा से विचार करने में
अक	तार	तारणे	तारने में
अक	ताल	उत्थापने	उठाने में
अक	ताव	तापने	तापने में
	त्यग्ब	दृक्चाञ्चल्ये	नेत्रों की चञ्चलता में
अक	तीज़्र	निशाने	निशान में
अक	तीज़्राव	च	और

	तीलन	स्निग्धपूतीभावे	तल-घी आदि में पवित्र होने में
	तुन्द	तीक्ष्णीभवने	तेज़ होने में
अक	त्वम्ब	तूलवद्विवरणे	तूलवत् विवरण में
अक	तुल	उत्थापने	उठाने में
	तूर	शीतीभवने	ठण्डा होने में
	तूरण	च	और
	तेज़	तीक्ष्णीभवने	तेज़ होने में
	तेल	विस्फोटादिदंशे	विस्फोट आदि दंश में
अक	तोल	तुलने	तोलने में
अक	तोवर	क्रूरदृष्टौ	क्रूरदृष्टि में
अक	तोवराव	च	और
	तोष	तोषे	सन्तोष में
	त्रकर	कर्कशीभवने	कर्कश होने में
अक	त्रकराव	कर्कशीकरणे	कठोर करने में
अक	त्रग्नाव	त्रिगुणीकरणे	तीन गुना करने में
	त्रच्	भये	भय में
अक	त्रच्राव	त्रासने	डरने में
अक	त्राव	त्यागे	त्याग में
अक	त्रुक	कणशश्छेदने भक्षणे च	कणशश्छेदन और भक्षण में
अक	त्र्वप्र	आच्छादने	ढकने में
अक	त्र्वम्ब	सूचीघाते	सुई से सुराख़ करने में
अक	त्र्वम्बव	च	और
	त्र्वश	कठिनीभवने	कठिन होने में
अक	त्र्वश्राव	कठिनीकरणे	कठिन करने में
	त्रोर	विस्फोटादिकार्कश्ये	विस्फोद आदि कार्कश्य में

थकाराद्याः

	थक	श्रमे	थकावट में
अक	थज्र	उच्चैः करणे	...
अक	थज्राव	च	और
	थद	उन्नतीभवने	ऊँचा होने में

	थम	अवष्टम्भे	ठहराने में
	थर	कम्पने	कांपने में
अक	थल	शाखाच्छेदने	टहनी काटने में
अक	थव	स्थापने	स्थापित करने में
अक	थाव, इति केचित्	"	"
	थाँथर	(सभयं) त्वरायाम्	(डर के साथ) जल्दी में
सकभा	थ्यक	श्लाघायाम्	श्लाघा में
अभा	थिप	ताडने	मारने में
अभा	थ्वक	निष्ठीवने	थूकने में
अक	थुर	घटने	घटने में

दकाराद्याः

अक	दग	घातने	मारने में
	दज़	भस्मीभवने	राख होने में
अक	दद्राव	क्षीणीकरणे	क्षीण करने में
अक	दप	आज्ञायां कथने च	आज्ञा में और कहने में
अभा	दबव	भूमिक्षेपे	भूमि पर फेंकने में
अभा	दम	वाताग्निशब्दयोः	वायु और आग के शब्द में
	दर	स्थैर्याविस्मृति-वर्षनिरोधेषु	स्थैर्याविस्मृति वर्ष निरोधों में
अक	दर॑	स्थिरीकरणे	स्थिर करने में
अक	दल	विदारेण	फाड़ने में
अभा	दव	शीघ्रगतौ	शीघ्रगति में
अक	दस	घातने	मारने में
अक	दाऽर	ध्याने	ध्यान में
अक	दाऽराव	च	और
अक	दार	धारणोद्धारयोः	धारण और उद्धार में
अक	दाव	दाप ने	दिलाने में
अक	दि	दाने	देने में
अक	द्वगव	अवखण्डने	अवखण्डन में
अक	द्वग्नाव	द्विगुणीकरणे	दुगुना करने में
	द्वदर	जीर्णीभवने।	जीर्ण होने में

अक द्वदराव	जीर्णीकरणे	जीर्ण करने में
अक द्वब्र	भूमिक्षेपे	जमीन पर फेंकनेमें
अक द्वब्राव	च	और
अक द्वय	दोहने	दोहने में
द्वष	च्यवने	च्यवन में
अक दून्छर	पृथक्पृथक्करणे	अलग अलग करने में
अक दून्छ्राव	च	और
दूर	दूरीभवने	दूर होने में
अक दोन	पिचुवद्विवरणे	पिचुवत् विवरण में
दोर	गतिचातुर्ये	गति की चतुराई में
अक द्न	वस्त्रादिरजोपहरणे	वस्त्र आदि रजोपहरण म
अक द्नव	च	और
अभा द्य	वैमनस्ये	वैमनस्य में
अभा द्वक	क्रीडायाम्	खेल में
द्वग	मूल्यातिशये	अधिक कीमत में
अक द्वग्राव	दुर्मूल्यीकरणे	खराब कीमत डालने में
द्रें ठ	कार्कश्ये	कर्कशता में
अक द्षाव	दोषदाने	दोष देने में

नकाराद्याः

अभा नच्	नर्तने	नाचने में
अक नग्र्	नग्नीकरणे	नंगा करने में
अक नग्राव	च	और
नट	कम्पे	कांपने में
अक नट्राव	कम्पने	काँपने में
नन	नग्नीभवने	नंगा होने में
अभा नप	उत्कोचदाने (उत्कोच-ग्रहणे)	रिश्वत देने (लेने) में
नम	नम्रीभवने	नम्र होने में
नव	अतिशयीभवने नूतनतायां च	अधिक होने में और नूतनता में
नश	अदर्शने	दर्शन न होने में

अक	नहाव	क्रियाघाते	क्रियाघात में
	नाँठ	निष्फलीभवने	निष्फल होने में
	नाँप	दीप्तौ	चमकने में
अक	नाव	शोधने	शोधन में
अक	नाश्‌र	नाशने	नाश में
अक	नाश्‌राव	च	और
अक	नि	हरणे	हरण करने में
	निक	अल्पीभवने	थोड़ा होने में
अक	निक्‌र	खण्डशःकरणे	टुकड़े करने में
अक	निक्‌राव	च	और
अक	न्यङ्गल	निगरणे	निगलने में
अक	न्यत	पशुरोमकृन्तने	पशु के बाल काटने में
अक	न्यवाज़	निवेदने	निवेदन में
	नील	हरितीभवने	हरा होने में
अक	न्वम्‌र	नम्रीकरणे	नम्र करने में
अक	न्वम्‌राव	च	और
अक	न्वव्‌र	अतिशयीकरणे	अधिक करने में
अक	न्वव्‌राव	च	और
अक	नेछ्व	ख्यातीकरणे	प्रसिद्धि करने में
	नेर	निर्गमने	निकलने में
अक	नोम्‌र	संक्षेपीकरणे	संक्षेप करने में
अक	नोम्‌राव	च	और
अक	न्याव	हरणे	हरण में

पकाराद्याः

	पक	गतौ	जाने में
	पच्	ऋणविश्वासे	ऋणविश्वास में
अकभा	पछ्ताव	पश्चातापे	पश्चाताप में
अक	पछान	उपलक्षणे	उपलक्षण में
	पज़	युक्तीभवने सत्याविर्भावे च	युक्त होने में और सत्य के आविर्भाव में

अक	पज़्र	आवेष्ट्य सीचने	बेंठन देकर सींचने में
अक	पज़्राव	च	और
अक	पज़्र	सत्याविष्करणे	सत्य के प्रकट करने में
अक	पज़्राव	च	और
	पट	प्राप्तौ	प्राप्ति में
अभा	पटाव	गतौ	गति में
	पठ	सिद्ध्याम्	सिद्धि में
अक	पठ्र	संस्कारे मीनादिशोधने च	संस्कार में और मछली आदि के साफ करने में
अक	पठ्राव	संस्करणे साधने च	संस्करण और साधन में
अभा	पद	कुत्सिते शब्दे	कुत्सित शब्द में
	पप	परिणामे	परिणाम में
अक	पय	धात्वादिपाके	धातु आदि के पकाने में
अक	पर	पठने	पढ़ने में
अक	परखोव	परीक्षायाम्	परीक्षा में
अक	पर्ज़न	उपलक्षणे	उपलक्षण में
अक	पर्ज़नाव	च	और
अक	पल	गुप्तदाने	गुप्त दान में
	पलज़	उपसेवायाम्	उपसेवा में
	पलट	द्रवीभवने	पिघलने में
अभा	पश	विषादे	विषाद में
	पष्प	क्षरणे	खरने में
	पाकन	विस्फोटादिपाके	फोड़ा आदि पकाने में
अक	पाकव	पचने	पकने में
अक	पाज़	निःसारणे	निकालने में
	पाथ	सद्भावे	सद्भाव में
	पार	केशवेणीकरणे पणस्थापने च	केशों की चोटी बाँधने में और पणस्थापन में
अक	पाल	रक्षणे	रक्षा करने में
अक	पाव	पातने	गिराने में
अभा	पास्र	धिक्करणे	धिक्कार करने में

अक	पास्राव	च	और
	पि	पतने	गिरने में
अभा	पिट	परिदेवने	रोने में
अक	पिट्राव	दीनीकरणे	दीनता पैदा करने में
अक	प्यतर	पालने	पालन करने में
	प्यद	वृत्तज्ञतायाम्	वृत्तज्ञता में
	पिल	प्राप्तौ	प्राप्ति में
अक	पिलन	प्रापरो	प्राप्त करने में
अक	पिलनाव	च	और
अभा	प्यव	पाकार्थमग्न्यारम्भे	पकाने के लिए आग के आरम्भ में
	पिशल	पेशलीभवने	पेशलीभवन में
	पिस	पाकेन बहिर्निःसरणे	पाक से बाहिर निकलने में
अक	पिह	संचूर्णन	संचूर्णन में
	पीट	खेदात्समीक्षणे	खेदपूर्वक देखने में
अभा	पीठ्र	सशिक्षं प्रतिक्षेपणे	सशिज्ञ प्रतिक्षेपण में
अभा	पीठ्राव	च	और
अक	पीनव	प्रसावने	प्रसावन में
	पीर	मेदुरतायाम्	मेदुरता में
अक	पुच़न	पुष्पादिखण्डशः करणे	पुष्प आदि के टुकड़े २ करने में
	पुन	शापसाफल्ये	शाप की सफलता में
अभा	प्वन्द	क्षुते	क्षुत में
	प्लव	नैर्बल्ये	निर्बलता में
अक	पुश्र	अर्पणे	अर्पण करने में
अक	पुश्राव	च	और
अक	पूज़	पूजायाम्	पूजा में
अक	पूठ्र	स्थूलीकरणे	मोटा करने में
अक	पूठ्राव	च	और
अक	पूर	पूरणे	भरने में
	पेड़	निर्यासे	निर्यास में

	पोठ	स्थूलीभवने	मोटा होने में
	पोर	पर्याप्त्यनार्द्रतयोः	पर्याप्ति एवं अनार्द्रता में
अभा	पोर व	बाधने	रुकावट में
	पोष	पर्याप्ततायाम्	पर्याप्तता में
	प्रख़्ट	प्रकटने	प्रकट करने में
अक	प्रज़न	उपलक्षणे	उपलक्षण में
अक	प्रज़नाव	च	और
	प्रज़ल	प्रज्वलने	प्रज्वलन में
	प्रन	नैर्मल्ये	निर्मलता में
	प्रय	प्रीणने	प्रीति में
	प्रस	प्रसवे	प्रसव में
अक	प्राट	खनने	खोदने में
	प्राण	पुराणीभवने	पुराना होने में
	प्रार	समीक्षणे	समीक्षा करने में
अक	प्राव	प्राप्तौ	प्राप्ति में
अक	प्रिछ	पृच्छायाम्	पूछने में
अक	प्रिण	उपालम्भे	उलाहने में
अक	प्रिन्ज़	प्रेरणे	प्रेरणा करने में

फकाराद्याः

अक	फक	सक्त्वादिभक्षणे (दारिद्र्याविष्कारे च)	सत्तू आदि के खाने में और दरिद्रता के आविष्कार में
	फट	काष्ठभेदाङ्कुरोद्भेदयोर्जलनिमज्जनादिषु च	काष्ठभेद और अङ्कुर फूटने एवं जल में निमज्जन आदि करने में
	फब	प्रशस्तीभवने	प्रशंसा होने में
	फर	स्तेये	चोरी में
अक	फर्काव	अर्थोपसर्जने	अर्थोपसर्जन में
	फल	वस्त्रजीर्णनसाफल्यविभागयोश्च	वस्त्रजीर्णन एवं साफल्य विभाग में
	फस	बद्धीभवने	बंधे होने में

अक	फस्र	बद्धीकरणे	बांधने में
	फह्‌र	पारुष्ये	कठोरता में
अभा	फाँग	शिशुमार्जाररोदने	बिल्ले के बच्चे के रोने में
अक	फान	निःशेषीकरणे	निःशेषीकरण में
	फाँफल	क्रियायोग्यीभवने	क्रियायोग्यीभवन में
अक	फालव	काष्ठभेदने	लकड़ी तोड़ने में
अक	फास्र	बद्धीकरणे	बांधने में
अक	फास्राव	च	और
	फिच	विस्मरणे	भूलने में
अक	फ्यचव	अप्रत्यक्षहरणे	पीठ पीछे हरण में
अक	फिर	पुस्तककथाभाण्डानां परिवर्तने	पुस्तक-कथा-भाण्ड आदि के परिवर्तन में
अक	फिख	भ्रामणे	घुमाने में
अक	फ्यश	ओष्ठादिलेहने	होंठ आदि के चाटने में
अक	फुक	अङ्गारप्रदीपने	अंगारों के प्रदीप्त करने में
अक	फुकार	कोपालापे	क्रोध की बातचीत में
	फुट	भङ्गे	टूटने में
अक	फुट्र	भञ्जने	तोड़ने में
	फुट्राव	च	और
	फ्वल्ल	विकसने	विकसित होने में
	फुश (फ्वश्)	अन्तः कोपे (स्त्री भा)	भीतरी क्रोध में
	फुह	च	और
अक	फूंक	आघ्राणे	सूंघने में
	फेर	भ्रमणविस्त्रीभवन-पश्चातापवैलोम्येषु	भ्रमणविस्त्रीभवनपश्चाताप वैलोम्य में
अक	फेश	ओष्ठादिलेहने	होंठ आदि के चाटने में
	फोर	स्फुरणे	फड़कने में
अक	फ्यार	रसनिष्कासने	रस निकालने में
अभा	फ़क	उच्छ्वासनिःश्वासयोः	उच्छ्वास-निःश्वास में

बकाराद्याः

अकभा	बक	भाषणे	बोलने में
अक	बगार	अक्षणे	अक्षण में
	वच	अनाहततायाम्	अनाहतता में
अक	वचराव	भयादिरक्षणे	भय आदि से रक्षा करने में
अक	बज	सेवायां स्नेहने च	सेवा में और स्नेह करने में
	बड	गतिवृद्धचोः	गति और वृद्धि में
अक	बडाव	गतिशमनयोः	गति और शान्त करने में
अक	बड्र	वर्धने	बढ़ाने में
अक	बड्राव	च	और
अक	बद्राव	पूपाङ्गारपाके	पूपाङ्गारपाक में
	बन	भवने	भवन में
अक	बन्ज़्र	विभाजने	विभाग करने में
अक	बन्ज़्राव	च	और
अकभा	बर	पूरणे वियोगदैन्ये च	भरने में और विरह की दीनता में
अक	बर्काव	पातने	गिराने में
	बल	आरोग्ये प्राणने च	आरोग्य में और प्राण-सञ्चार में
अक	बल्र	आरोग्यीकरणे	आरोग्य करने में
अक	बल्राव	च	और
	बस	निवासे	निवास में
	बसन	पीतीभवने	पीला होने में
	बहर	शूरतायाम्	शूरता में
	बाखन	बुद्धिभ्रंशे	बुद्धि भ्रष्ट होने में
अक	बाग्र	विभाजने	विभाग करने में
अक	बाग्राव	च	और
अक	बाज़्र	च	और
अक	बाज़्राव	च	और
	बाद (वाद)	प्रबलीभवने	प्रबल होने में
	बाँबर	त्वरायाम्	उतावलेपन में

अक	बाव	अभिप्रायाविष्करणे देवार्पणे च	अभिप्राय प्रकट करने में और देवता के अर्पण करने में
	बावज़	रोचने	अच्छा लगने में
अक	बाप	उच्चारणे	उच्चारण करने में
	बास	भासने	चमकने में
	बिगर	विकारे	विकार में
अक	ब्यत्र्‌र	विवरणे भिन्नीकरणे च	विवरण में और अलग करने में
अक	ब्यत्र्‌राव	च	और
	ब्यन्न	भिन्नीभवने	अलग होने में
	बिय	पर्युषितत्वे	बासा होने में
	ब्यह	उपवेशने	बैठने में
अक	बुछ	दंशक्रियायाम्	डसने की क्रिया में
अक	बुज़	भर्जने	भूनने में
	ब्वड	निमज्जने	डूबने में
	बुड	स्थविरीभवने	बूढ़ा होने में
	ब्वव	उत्पत्तौ	उत्पत्ति में
अक	बूग	भोगे	भोग में
अभा	बेछ	भिक्षायाम्	भिक्षा में
अक	बोज़	निशामने	सुनाने में
अक	बोल	पक्षिशब्दे	पक्षी के शब्द में
अक	ब्रक	दंष्ट्राघातकोपयोः	दान्त की चोट और क्रोध में
	ब्रज़	दीप्तौ	चमकने में
	ब्रम	भ्रान्तौ	वहम में
अक	ब्रम्‌र	बुद्धिहरणे	बुद्धि के हरने में
अक	ब्रम्‌राव	च	और
अक	ब्रश	दंष्ट्राघातकोपयोः	दान्त की चोट और क्रोध में
अक	ब्रिछ	परिदेवने	रोने में
	ब्रेठ	मूर्खीभवने	मूर्ख होने में

मकाराद्या:

अक मङ्ग	याचने	मांगने में
अक मच्राव	उन्मादने	पागलपन में
अक मठार	समीकरणे सान्त्वने च	अच्छा करने में और तसल्ली देने में
अक मण्ड	वस्त्रमर्दनालंकरणयो:	वस्त्र मसलने और सजाने में
मत	उन्मादे	पागलपन में
अक मथ	मर्दने	मसलने में
अक मनव	कोपापनयने	गुस्सा दूर करने में
अक मन्ज़र्	विकलीकरणे	व्याकुल करने में
अक मन्ज़राव	च	और
अक मन्द	मन्थने	मथने में
मन्दछ	मन्दाक्षे	कमज़ोर नज़र में
ममल	निश्चैतन्ये	जड़ में
अक मर	मरणसंधापनयो:	मरण और संधापन में
मर्च	अन्त: कोपे	भीतरी गुस्से में
अक मर्दाव	विस्फोटादिमर्दने	विस्फोट आदि के मर्दन में
अक मल	मर्दने	मसलने में
मष	विस्मृतौ	विस्मृति में
अक मष्र	विस्मारणे	भुलाने में
अक मष्राव	च	और
अक महार	कणश: करणे	कण-कण करने में
अक माज़	तत्परतायां शोधने च	तत्परता में और शोधन में
अक माँज	धातुनिर्मलीकरणे	धातु को साफ करने में
अक मार	मारणे	मारने में
अक मिलव	संयोजने	मिलाने में
अक मिलनाव	च	और
म्वकल	मुक्तौ	मुक्ति में
म्वच्	अवशेषे	अवशिष्ट में
अक मुचर	उद्घाटने	उद्घाटन में
अक मुचराव	च	और

अक मुछ	व्रतादित्यागे	व्रत आदि के त्याग में
म्वट	स्थूलीभवने	मोटा होने में
अक म्वट्र	स्थूलीकरणे	मोटा करने में
अक म्वट्राव	च	और
म्वण्ड	कुण्ठीभवने	कुण्ठित होने में
अक म्वण्ड्र	कुण्ठीकरणे	कुण्ठित करने में
अक म्वड्राव	च	और
म्वद्र	मधुरीभवने	मधुर होने में
अक म्वद्राव	मधुरीकरणे	मधुर करने में
अक मुन	धान्यखण्डने	धान तोड़ने में
अक म्वलव	मूल्यनिश्चयीकरणे	मूल्य निश्चित करने में
अक मुष	मोषणे	मोषण में
अक मुस	असम्यग्भक्षणे	अच्छी तरह न खाने में
अक मुसर	उद्घाटने	उद्घाटन में
अक मुसराव	च	और
अक मुह	मोहने	मोहन में
अभा मून्छ्र	समीक्षणे	समीक्षा करने में
अभा मून्छराव	च	और
अक मूंत्र	मन्त्रायत्ती (करणे) भवने	मन्त्र के अधीन होने वा करने में
अक मूर	त्वचो निष्कर्षे भक्षणे च	त्वचा के निष्कर्ष में और खाने में
मेठ	मधुरी भवने	मधुर होने में
अक मेन	मापने	मापने में
मेल	संगमे	संगम में
मोर	शमे	शान्ति में
अक मोरव	पीड़ासहने	पीड़ा सहन करने में

यकाराद्याः

अक यतर	शक्तौ	शक्ति में
अक यत्राव	च	और
याप	व्याप्तौ	व्याप्ति में

अक	यार	संख्याने	गिनती में
	यि	आगमने	आने में
अक	येर	तन्तुसंताने	तन्तुओं के समूह में

रकाराद्याः

अक	रङ्ग	रञ्जने	रंगने में
अक	रछ	रक्षायाम्	रक्षा में
अक	रछ्र	सम्यक्संस्करणे	अच्छी तरह संस्कार करने में
अक	रछ्राव	च	और
अक	रट	ग्रहणे	ग्रहण करने में
अक	रन	पाके	पकाने में
	रन्ज़	प्रीतौ रागे च	प्रीति और अनुराग में
अक	रन्ज़नाव	प्रीणने	प्रसन्न करने में
अक	रन्ज़व	च	और
	रम्ब	शोभायाम्	शोभा में
	रस	सरसीभवने	सरस होने में
	राव	नष्टीभवने	नष्ट होने में
अक	रावर	नष्टीकरणे	नष्ट करने में
अक	रावराव	च	और
अभा	रिन्ज़व	छद्मगतौ	कपट की चाल में
अभा	रिव	अलंकरणतत्परतायाम्	अलंकरण तत्परता में
अक	रुव	रोपणे	लगाने में
	रोच	रोचने	अच्छा लगने में
	रोज़	स्थितौ	स्थिति में
	रोट	अवष्टम्भे	अवष्टम्भ में
	रोष	रुष्टौ	क्रोध में
अक	र्‌कव	भूसंगानयने	भूसंगानयन में
	र्‌ड	रूढीभवने	रूढि होने में
	र्‌त	साध्वीभवने	साधु होने में
	र्‌ण	जीर्णीभवने	जीर्ण होने में
अभा	र्‌स	गमने	जाने में

लकाराद्याः

अक	लख	अन्तर्नयने	भीतरी नेत्र में
	लग	सङ्गे पीडायां सामञ्जस्ये च	सङ्ग में, पीडा में और सामञ्जस्य में
अभा	लङ्ग	पङ्गवीभवने	लंगड़ा होने में
	लज्ञ	योग्यतायाम्	योग्यता में
अभा	लटाव	गमने	जाने में
अभा	लड	युद्धे	युद्ध में
अक	लडाव	संप्रहारणे	प्रहार करने में
अक	लतव	लताघाते	लताप्रहार में
अक	लतार	अधिक्षेपे	अधिक्षेप में
अक	लद	वस्तुप्रेषणे गृहादि निर्माणोर्ध्वान्तरीकरणयोः सूत्रादि कर्मणि च	वस्तु भेजने में गृह आदि निर्माण आदि ऊर्ध्वान्तरी करने में और सूत्रादि कर्म में.
अक	लव	प्राप्तौ	प्राप्ति में
अक	लम	आकर्षणे	आकर्षण में
	लय	अर्घणे	अर्घण में
अक	ललव	अङ्कपालने	अङ्कपालन में
	लस	सम्यग्जीवने	अच्छी तरह जीने में
	लहन	नाडीशिथिलीभवने	नाडी के ढीला होने में
अक	लाग	अनुकरणधारण-कृषिसंपर्चनेषु	अनुकरण-धारण एवं कृषिसंपर्चन में
अक	लाय	आघाते प्रक्षेपे च	आघात और प्रक्षेप में
अक	लार	स्पर्शानुगमन-स्निग्धीकरणेषु	स्पर्श-अनुगमन एवं स्निग्धीकरण में
अक	लिख	लेखने	लिखने में
	ल्यच	निर्बलीभवने	निर्बल होने में
	ल्यड	पराजयीभवने	पराजयी होने में
अक	लिथव	मर्दने	मसलने में
	ल्यद्र	पीतीभवने	पीला होने में
अक	ल्यद्राव	पीतीकरणे	पीला करने में

अक	लिव	लेपने	लेप करने में
अक	ल्यव	लेहने	चाटने में
	लिस	प्रसन्नतायाम्	प्रसन्नता में
	ल्वत	लाघवे	हल्का होने में
अभा	ल्वल	उपक्रीडायाम्	उपक्रीडा में
अक	लूक्राव	क्षुद्रीकरणे	क्षुद्रीकरण में
अक	लूट	लुण्ठने	लूटने में
	लूब	लोभने	लालच करने में
अक	लूर	विनष्टीकरणे निपातने च	नष्ट करने और गिराने में
अक	लेख	लेखने	लिखने में
	लोक	क्षुद्रीभवने	क्षुद्र होने में
अक	लोन, ल्वन, इति केचित्	लवणे	नमक में
	लोर	वैकल्ये	घबराहट में
	लोस	श्रमे	थकावट में
	ल्य	सम्यक्पर्याप्तौ	अच्छी तरह पर्याप्ति में
	ल्ह	च	और
	ल्हन	पाकविकारे	पकाने के विकार में

वकाराद्याः

अक	वखन	व्याख्याने	व्याख्यान में
अभा	वज्र	वाद्यस्वने	बाज़े की आवाज़ में
अक	वज़व	सार्द्रीकरणे	गीला करने में
अक	वट	वेष्टने	बेठने में
अक	वड्र	निक्षेपे	फेंकने में
अक	वड्राव	च	और
अक	वथर	आस्तरणे	बिछाने में
अक	वथराव	च	और
अभा	वद	रोदने	रोने में
अक	वन	भाषणे	भाषण करने में
अक	वनव	स्त्रीणामेकस्वनगाने	स्त्रियों के एक स्वर से गाने में

अक	वन्द	उपहारे	भट देने में
	वय	पथ्यीभवने	पथ्य लेने में
अक	वर	वरणे	वरण में
अक	वल	आच्छादने	ढकने में
अक	वव	वापने	वापन में
अक	वष	वर्षणे	वर्षा होने में
	वस	अवरोहणे	अवरोह में
अक	वहार	विस्तारणे मक्षिकाद्यपवारणे च	विस्तार करने में और मक्खी आदि के हटाने में
अक	वहाराव	च	और
अभा	वाँच	वञ्चने	ठगने में
अक	वाट	संघापने	संघापन में
	वात	प्रापणे	प्राप्त करने में
अक	वाम	मक्षिकाद्यपवारणे	मक्खी आदि के हटाने में
अक	वाल	अवतारणेवृष्टिपाते च	उतारने में और वर्षा होने में
	विगल	विगलने	विगलन में
अक	विचार	विचारे	विचार में
	व्यच	संभवे	संभव होने में,
अक	व्यछन	विवरणे	विवरण में
अक	व्यज्र	ज्ञातीकरणे	ज्ञातीकरण में
अक	व्यज्राव	च	और
अक	व्यञ्र	पृथक्पृथक्करणे	अलग-अलग करने में
अक	व्यञ्राव	च	और
	व्यठ	स्थूलीभवने	मोटा होने में
अक	व्यठ्र	स्थूलीकरणे	मोटा करने में
अक	व्यठ्राव	च	और
	व्यद्र	शैथिल्ये	शिथिलता में
अक	व्यद्राव	शिथिलीकरणे	शिथिल करने में
अक	व्यन्द	आचरणे	आचरण में
	व्यप	संभवे	संभव होने में

अक	व्यप्र	संभावने	संभावना में
अक	व्यप्राव	च	और
	व्यलर	अस्वास्थ्ये	अस्वस्थता में
अक	व्यव	विकीर्णने	बिखेरने में
अक	व्यव्र	च	और
अक	व्यव्राव	च	और
	व्वतल	ऊर्ध्वीभवने	ऊपर होने में
	व्वथ	उत्थाने	उठाने में
अक	व्यथर	अवमार्जने	बुहारने में
अक	व्यथराव	च	और
	वुद	जागरणे	जागरण में
	वुदर	वियोगखेदे	वियोग के दुःख में
	वुन	दैवानार्जवे	दैवानार्जव में
	व्वन्नत	उन्नतीभावे	उन्नत होने में
	वुप	अन्तर्दाहे	भीतरीजलन में
	व्वपज़	उत्पत्तौ	उत्पत्ति में
	वुफ	विहायसागतौ	पक्षी की चाल में
अक	व्वफर	शैथिल्ये	शिथिलता में
	व्वबर	समाप्तौ	समाप्ति में
	व्वबस	वहुलीभवने	बहुत होने में
	व्वम	सीमानधिगमे	सीमा के प्राप्त न होने में
	वुय	पर्याप्तौ	पर्याप्ति में
अक	वुर	उम्भपटप्रच्छादन-निपातनेषु	उम्भपटप्रच्छादन एवं निपातन में
अक	व्वलङ्ग	उल्लंघने	उल्लंघन में
	व्यसर	विशीर्णने	विशीर्णन में
	विस	प्रसन्नीभवने	प्रसन्न होने में
	व्वक	दोषादिचेष्टायाम्	दोष आदि की चेष्टा में
	वुक्र	वक्रीभवने	टेढा होने में
अक	वुक्राव	वक्रीकरणे	टेढा करने में
अक	व्वखर	ऊर्ध्वाधरीकरणे	ऊपर-नीचे करने में
अक	व्वखराव	च	और
	(व्वगन	उत्तानीभवने)	ऊपर होने में

अक	वुग्राव	ऋणप्रतिग्रहणे	कर्जा लेने में
अक	वुङ्ग	श्वरवे	कुत्ते की आवाज़ में
	वुच	दग्धीभवने	जलने में
अक	वुछ	प्रेक्षणे	देखने में
	वुज	जागरणे जलादिव्य-क्तीभवने च	जागरण और जलादि व्यक्त होने में
	व्वजल	रक्तीभवने	लाल होने में
	व्वट	प्लवगतौ	प्लव गति में
अक	वुठ	वेष्टने	वेठने में
	वड	उड्डयने	उडने में
अक	वुडाव	नाशने चालने	नाश करने में और चलाने में
	व्वनल	अलंकरणे	सजाने में
	व्वलस	उल्लसने	उल्लसित होने में
	व्वशल	लौहित्ये	लाल रंग में
	वुष्ण	उष्णीभवने	गर्म होने में
	व्वस	वाहुल्ये	वहुलता में
अक	वुसर	उद्घाटने	उद्घाटन में
अक	वुसराव	च	और
	वुह	अनिर्वाणे	अनिर्वाण में
अभा	व्वहव	शापे	शाप में
अक	वोन	तन्तुवायकर्मणि	जुलाहे के कार्य्य में
अभा	वोर	भाषणे विस्मृत्यालापे च	बोलने एवं विस्मृति के भीतर आलाप करने में
	वोल	चञ्चलीभवने	चञ्चल होने में
अक	वोव्र	धातूनां तक्षणे	धातुओं के काटने में
अक	वोव्राव	च	और

शकाराद्याः

अक	शश्नाव	षड्गुणीकरणे	छः गुना करने में
	शम	उपशमे	शान्ति में

अकभा शष	सहने	सहन करने में
शहल	शीतिभवने	ठण्डा होने में
अभा शाश	उच्छ्वासनिःश्वासे	उच्छ्वास-निःश्वास में
(शिग्न्	परेर्ष्यादाने)	दूसरे से ईर्ष्या करने में
शिठ	शीनीभवने	शीनी होने में
श्रिठ	च	और
श्वङ्ग	शयने	सोने में
श्वद्ध	शोधने	शोधन में
शूब	शोभायाम्	शोभा में
अक शूब्र	शोभने	अच्छा लगने में
अक शूब्राव	च	और
अकभा शेंक	शङ्कायाम्	शङ्का में
अक शेर	संस्करणे	संस्करण में
श्रप	जीर्णने	जीर्ण होने में
अभा श्र्वक	क्रन्दने	चीखने में
अक श्रुत	शब्दवत्पाने	शब्द के साथ पीने में
श्रोच	शुद्धौ	शुद्धि में

सकाराद्याः

सखर	प्रस्थाने	प्रस्थान करने में
अक सगव	वृक्षादिसिञ्चने	वृक्ष आदि के सींचने में
अक सगनाव	च	और
अक सग्र	अगाधीकरणे	गहरा करने में
अक सग्राव	च	और
अभा सताव	बाधने	बाधा डालने में
सन	अगाधीभवने	गहरा होने में
अक सन्ज़्र	सज्जीकरणे	तय्यार करने में
अक सन्दर	संधुक्षणं	जलने में
अक सन्दराव	च	और
अक सन्दार	प्राणस्वास्थ्ये	प्राणों की स्वस्थता में
सपज़	सिद्धौ	सिद्धि में
सपद	च	और

	सपन	च	और
	सम	साम्ये	समता में
	समख	समक्षीभवने	सामने होने में
अक	संवाल	संस्करणे	संस्करण में
अक	सर	स्मरणे	याद में
अकभा	सह्	सहने	सहन करने में
	साँगर	विशरणे	विशरण में
अक	साद	संराद्धौ	संराद्धि में
अक	सार	स्वारैकत्रीभवनक्रमानयनेषु	स्वारैकत्रीभवनक्रमानयनों में
अक	साव	शायने	सुलाने में
अक	स्यज्र	ऋज्वीकरणे	सीधा करने में
अक	स्यज्राव	च	और
अक	स्यत्राव	अदृढीकरणे	दृढ न करने में
	स्यद	सिद्ध्यृज्वीभवनयोः	सिद्धि और सीधा होने में
	स्यन्द्र	अरुणीभवने	लाल होने में
	स्यन्त	अकर्कशीभवने	कठोर न होने में
अक	सिव	सेवने पाकविशेषे च	सेवन में और पाक विशेष में
	सीर	भ्रमणे	भ्रमण में
अक	सुक	व्यभिचारे (अन्तरावेशने)	व्यभिचार में
अक	स्वखव	मृडने	मृडन में
अक	स्वखनाव	च	और
	स्वग	मूल्याल्पतायाम्	कम कीमत में
अक	स्वग्राव	सुमूल्यीकरणे	अच्छा मूल्य करने में
अक	स्वच्राव	शामने	शान्त करने में
	स्वत	शमने	शान्त होने में
अक	स्वम्ब्र	समीकरणैकत्रीकरणयोः	उचित और इकट्ठा करने में
अक	स्वर	स्मरणे	याद में

अक	सुख	भाजनभस्मशुद्धौ	पात्रों को शुद्ध करने वाली भस्म में
अक	स्वर्श	हस्तादिशुद्धौ	हाथ आदि की शुद्धि में
अक	सुलव	अङ्कपालने	गोदी में पालने अर्थ में
अक	सुव	सूचीकर्मणि	सुई के कार्य में
	स्वसर	काष्ठादिजीर्णने	काठ आदि के जीर्ण होने में
अक	सोज़	प्राणिप्रेषणे	प्राणी के भेजने में
	सोर	अवसाने	समाप्ति में
अकभा	स्त	संघने	संघन में
स्रव		क्षरणे	क्षरण में
स्वगराव		सुमूल्यीकरणे	अच्छा मूल्य करने में
अभा	सूस	अपानवायौ	अपान वायु में

हकाराद्याः

	हकर	कार्कश्ये	कर्कशता में
अभा	हग हट	पुरीषोत्सर्गे	शौच करने में
		क्षीणीकरणे	क्षीण करने में
अक	हट्र	क्षीणीकरणे	क्षीण करने में
अक	हट्राव	च	और
	हन्द्र	शीतीभवने	ठण्डा होने में
अक	हन्द्राव	शीतीकरणे	ठण्डा करने में
	हप	कार्श्ये	कृश होने में
	हम	शमने	शान्त होने में
	हर	क्षरणपतनयोः	क्षरण और पतन में
	हल	वक्रतायाम्	वक्रता में
अक	हहर	विवाहकर्मणि	विवाहकार्य में
	हाँकल	शीतसंकोचने	सर्दी से सुकड़ने में
	हाँठ	नैष्फल्ये	निष्फलता में
अक	हाँठ्राव	निष्फलीकरणे	निष्फल करने में
	हान	शैत्ये	सर्दी में
	हामन	शीतलापाके (श्यामीभवने)	शीतला के पकने में (श्याम होने में

अकभा	हार	पराजयनिपातयोः	पराजय और निपात में
अक	हाव	दर्शने	दर्शन में
अक	हि	ग्रहणक्रीणनधारणेषु	लेना, खरीदना और धारण-करने में
अक	ह्यक	शक्तौ	शक्ति में
अक	ह्यछ	शिक्षायाम्	शिक्षा में
अभा	ह्यड	परिभाषणे	परिभाषण में
	हिल	प्रवलीभवने	प्रवल होने में
	ह्वख	शोषे	सूखने में
अक	ह्वख्र्	शोषणे	शोषण करने में
अक	ह्वख्राव	च	और
	ह्वच	विस्त्रीभवने	विस्त्री होने में
अक	ह्वच्राव	विस्त्रीकरणे	विस्त्रीकरण में
अक	ह्वब्र	पराजयने	पराजित करने में
अक	ह्वब्राव	च	और
अक	हुम	होमे	हवन में
अक	ह्वम्र	शामने	शान्त करने में
अक	ह्वम्राव	च	और
	होन	उत्कटीभवने	उत्कट होने में
अक	होर	प्रतिदाने	प्रतिदान में
	ह्न	शोथे	शोथ में
	ह्र	उपचये	वृद्धि में
	ह्न	प्रसवारम्भे	प्रसव के शुरू में
अक	ह्सव	श्वादिसूचनायाम्	कुत्ते आदि की सूचना में
अक	ह्सनाव	च	और

इति श्री शारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते धातुपाठ-प्रक्रिया समाप्ता ॥ ७१ ॥

अथ परिशिष्टनामधातवो लिख्यन्ते ॥२॥

अग्य-लगुन्	अग्नाविव रिप्वादिषु संमुखीभवनम्	आग की तरह शत्रु आदि में सामने होना
अगादि-गछुन्	निष्कारणं क्रोधाविष्कारः	विना कारण क्रोध का आविष्कार
खख्‌र्-दिञ्	जन्तुनो भूमौ भ्रामणम्	जन्तु का भूमि पर घुमाना
छित-करुन्	तिरस्करणम्	तिरस्कार करना
जीरू-दिञ्	क्रोधाविष्काराय प्रेरणम्	क्रोध के आविष्कार के लिए प्रेरणा
डाल-मारञ्	उपेक्षाकरणम्	उपेक्षा करना
ड्यम्ब्‌ड्यम्ब् करून्	अन्तः सुषिरस्य शब्दानुकरणम्	अन्तः सुषिर के शब्द का अनुकरण
तो्थ्-करञ्	अहंकारपूर्वकं भर्त्सनम्	अहंकार पूर्वक डाँटना
दाम्-च्युन्	स्तन्यवत्पानम्	स्तनों के दूध की तरह पीना
दारिथ्-च्युन्	प्रपातनम्	गिराना (झरना)
निन-युन्	अनवधानता	असावधानता
न्यूरु्-युन्	समीपागमनम्	नज़दीक आना
पाय्-करुन्	उपायकरणम्	उपाय करना
फूह्-करुन्	कोपपूर्वकं चोदनम्	क्रोध से प्ररित
फश्-च्युन्	विनष्टीकरणम्	नाश करना
वर्-गछुन्	अनादरेण रोषणम्	अनादर के साथ गुस्सा करना
मान्मान्-करञ्	स्पर्धाकरणम्	स्पर्धा करना
रथि-खारुन्	सफलीकरणम्	सफल करना
वनु-च्युन्	स्मृतिपूर्वकमन्वेषणम्	याद से ढूंढना

वस्य-प्यनु	हृदयंगमीभवनम्	हृदयंगम होना
वोडाल-करुन्	उपेक्षाकरणम्	उपेक्षा करना
सर-करुन्	निर्णयीकरणम्	निर्णय करना
स्वर-करुन्	ईषच्चेष्टाकरणम्	थोड़ी चेष्टा करना
ह्‌क-युन्	शीघ्रागमनम्	जल्दी आना

(अन्येऽपि यथायोग्यं बोध्या: ।)

इति श्रीशारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते-धातुप्रक्रियाया: परिशिष्टे नामधातव: समाप्ता: ॥ ७२ ॥

अथाख्यातप्रक्रियायाम् ॥ ८ ॥

वर्तमानपादः ॥ १ ॥

अथ शब्दो मङ्गलार्थः ।

कालत्रयतद्विशेषक्रियाकर्मकर्त्रवबोधकृदाख्यातः ॥ १ ॥

कालत्रयस्य भूतभविष्यद्वर्तमानरूपस्य तद्विशेषाणां विध्यादीनां क्रियाकर्मणोः कर्मकर्तरि तथा विभक्तिस्वरूपेष्वप्रयुक्ततच्छब्दादिकर्तृषु क्रियाकर्त्रोश्चावबोधकृत्सम्यग्वोधकारक आख्यातो विज्ञेयः ।

भूतभविष्यवर्तमानरूप तीनों कालों की विशेष विधि आदि के क्रिया-कर्म का कर्म-कर्ता में तथा विभक्तियों के स्वरूपों में अप्रयुक्त उनके शब्द आदि कर्ताओं में क्रिया और कर्ता का ज्ञान कराने वाला अच्छी तरह ज्ञान कराने वाला 'आख्यात' जानना ।

आरब्धानारब्धसमापितक्रियाकाला वर्तमानभविष्यद्भूतसंज्ञाः ॥ २ ॥

आरब्धक्रियाकालो वर्तमानसंज्ञः । अनारब्धक्रियाकालो भविष्यत्संज्ञा । समापितक्रियाकालोऽतीतसंज्ञो भवति

आरब्धक्रियाकाल वर्तमान, अनारब्धक्रियाकाल भविष्यत् और समापित क्रियाकाल अतीत नाम से पुकारा जाता है ।

अश्रोतृश्रोतृवक्तृभेदात्प्रथममध्यमोत्तमाः ॥ ३ ॥

तेषु कालत्रयेषु तद्विशेषेषु च प्रत्येकस्मिन् अश्रोता प्रथमपुरुषः । श्रोता मध्यमपुरुषः । वक्ता उत्तमपुरुषो बोध्यः । अश्रोतेति लक्षणात्संनिधानेऽपि पुरुषे अयं करोतीति श्रोतारं वदेत्त्वमपि कुर्विति किमुतासंनिधाने इति निर्णयम् ।

उन तीनों कालों और उसके विशेषों में हर एक में 'अश्रोता' प्रथम पुरुष, 'श्रोता' मध्यम पुरुष और 'वक्ता' उत्तमपुरुष जानना चाहिए । 'अश्रोता' इस लक्षण से संनिधान भी पुरुष में 'यह करता है' यह 'श्रोता' को कहे 'तू भी कर' यह क्या नजदीक न होने पर- यह निर्णय लेना चाहिए ।

एकानेकाभ्यां द्वे द्वे वचने ॥ ४ ॥

तेषु त्रिषु पुरुषेषु प्रत्येकस्मिन्नेकवचनबहुबचनभेदाद्द्वेद्वे वचने भवतः। सुह् छुह् परान्। सः पठति। तिम् छिह् परान्। तौ पठतः वा ते पठन्ति।

उन तीनों पुरुषों में हर एक में एक वचन-वहुवचन भेद से दो वचन होते हैं। सुह् छुह् परान्-सः पठति-वह पढ़ता है। तिम् छिह् परान्-तौ पठतः-वे दो पढ़ते हैं वा ते पठन्ति-वे पढ़ते हैं।

युगपदुक्तौ वाचकासन्नो मुख्यः ॥ ५ ॥

द्वयोस्त्रयाणां वा पुरुषाणां युगपत्क्रियाया उक्तौ सत्यां वाचकासन्नः पुरुष एव मुख्यो विज्ञेयः। तद्यथा तच्छब्दयुष्मच्छब्दयोर्युगपद्वचने वाच्ये वाचकासन्नो युष्मच्छब्द एव मुख्यः संमुखत्वात्। एवं युष्मच्छब्दास्मच्छब्दयोर्युगपद्वचने वाच्ये वाचकस्यात्मैवासन्नतरः। अतस्तत्रास्मच्छब्दस्य मुख्यत्वम्। एवं तच्छब्दास्मच्छब्दयोस्त्रयाणामप्यवधार्यः। सुह् त च्ह् परिव्। स च त्वं पठतम्। च्ह् त ब्वह् परव्। त्वं चाहं पठाव। सुह् त ब्वह् परव्। स चाहं पठाव। सुह त च्ह् त ब्वह् परव्। स च त्वं चाहं पठाम।

दोनों वा तीनों पुरुषों की एक साथ क्रिया की उक्ति में वाचक के नजदीक का पुरुष ही मुख्य जानना चाहिए। सो जैसे 'तत्' शब्द और 'युष्मद्' शब्द के एक साथ कहने पर वाच्य में वाचक के नजदोक का 'युष्मद्' शब्द ही मुख्य है-संमुख होने से। इसी प्रकार 'युष्मद्' शब्द और 'अस्मद्' शब्द के एक साथ कहने पर वाच्य में वाचक की आत्मा ही नजदीकतर है। इस लिए वहां 'अस्मद्' शब्द की मुख्यता है। इसी तरह 'तत्' शब्द और 'अस्मद्' तथा तीनों को ही समझ लेना चाहिए। सुह् त च्ह् परिव-स च त्वं पठतम्-वह और तूं पढ़ो। च्ह् त ब्वह् परव्-त्वं चाहं पठाव। तूं और में पढ़ूं। सुह् त च्ह् त ब्वह् परव्-स च त्वं चाहं पठाम-वह और तूं और में पढ़ूं।

धातोः परे प्रत्ययाः ॥ ६ ॥

कालत्रयसंबन्धिविभक्तिप्रत्यया धातोः परे भवन्तीति परिभाष्यते। परान् छुह्। पठति। परुन्। अपठत्। परि। पठिष्यति।

तीनों कालों से सम्बद्ध विभक्ति-प्रत्यय धातु से परे होते हैं, ऐसा कहा जाता है। परान् छुह्-पठति-पढ़ता है। परुन्-अपठत्-पढ़ा। परि-पठिष्यति-पढ़ेगा।

तद्दा त्वारब्धे वर्तमाना ॥ ७ ॥

तत्काले आरब्धे कर्मणि धातोर्वर्तमाना विभक्तिर्भवति। पकान् छुह। गच्छति। परान् छुह। पठति।

उस समय शुरु किए कार्य में धातु से वर्तमान विभक्ति होती है। पकान् छुह्-गच्छति-जाता है। परान् छुह्-पठति-पढ़ता है।

नैर्यन्तरारब्धे च ॥ ८ ॥

यस्याः क्रियायाः कदाचिदपि उच्छित्तिर्न स्यात्तत्कर्म निरन्तरारब्धम् तस्मिन्नपि वर्तमाना विभक्तिर्भवति। ईश्वर जगतस् रछान् छुह्। ईश्वरो जगद्रक्षति। पान पानस् रछान् छुह्। आत्म (ना)-त्मानं पालयति।

जिस क्रिया की कभी भी उच्छित्ति न हो, वह कर्म निरन्तर शुरु हो, उसमें भो वर्तमान विभक्ति होती है। ईश्वर जगतस् रछान् छुह्-ईश्वरो जगद्रक्षति-ईश्वर संसार की रक्षा करता है। पान पानस् रछान् छुह्-आत्मनात्मानं पालयति-अपने से अपने को पालता है।

नियमारब्धे च ॥ ९ ॥

प्रतिकुम्भं गङ्गायाः स्नानं करिष्यामीत्यादिनियमेन या या क्रिया आरब्धा स्यात्तस्यां वाच्यायां सत्यां तत्र वर्तमाना विभक्तिर्भवति। व्याकरण् परान् छुह् लवकटु। व्याकरणमधीते बालः। गंगाय गछान् छुह्-प्रथ् कुम्बस्। गङ्गां गच्छति प्रतिकुम्भम्।

हर कुम्भ में गङ्गा का स्नान करूंगा, इस नियम से जो जो क्रिया शुरू की जाए, उसके वाच्य होने पर वहां वर्तमान विभक्ति होती है। व्याकरण् परान् छुह् लवकटु-व्याकरणमधीते बालः-बालक व्याकरण पढ़ता है। गंगाय गछान् छुह् प्रथ् कुम्बस्-गङ्गां गच्छति प्रतिकुम्भम्-हर कुम्भ में गङ्गा जाता है।

अनेककार्यवित्कर्तृसत्तायां तत्तत्क्रिया धातुभ्यश्च ॥ १० ॥

एकाधिककार्यज्ञस्य कर्तुः सत्तायां देहपाताभावे सति तत्संबन्धिषु कर्मस्वभिधेयेषु सत्सु धातुभ्यो वर्तमाना विभक्तिर्भवति। एककार्यज्ञस्य तु नियमारम्भतो वर्तमानाप्राप्तिरासीदिति। क्याह् छुह् मुचं,

करान् । किं मूर्तीः कुर्वन्नस्ति क्याह् छुह् जान् लेखान्। किं साधु लिखन्नस्ति क्याह् छुह् रतु ग्यवान् । किं साधु गायन्नस्ति । कथनसमकालमेव यदि प्रोक्तक्रियाविदो देहपातः स्यात् तदातीतावाप्तिर्भवेन्न तु वर्तमानाप्राप्तिरित्यादिविशेषा बुद्धिमद्भिः स्वयमूह्याः। किं च वर्तमानस्य केवलं न संप्रतिकालीनक्रियातो वर्तमानसंज्ञास्ति किन्तु वर्तमानकर्तृसत्वे एव प्रायशो वर्तमानसंज्ञास्तीति ।

एक से अधिक कार्य को जानने वाले कर्ता की सत्ता में देहपाताभाव होने पर उससे सम्बद्ध कर्म अभिधेय होने पर धातुओं से वर्तमान विभक्ति होती है। एक कार्य जानने वाले का तो नियमारम्भ से वर्तमान की प्राप्ति नहीं थी । क्याह् छुह् मुर्च् करान्-क्या मूर्तियों को कर रहा है—किं मूर्तीः कुर्वन्नस्ति । क्याह छुह् जान् लेखान्-किं साधु लिखन्नस्ति-क्या अच्छा लिख रहा है। क्याह् छुह् रतु ग्यवान्-किं साधु गायन्नस्ति-क्या अच्छा गा रहा है। कहने के साथ ही यदि उक्त क्रिया जानने वाले का देहपात हो जाए, तब अतीत की प्राप्ति हो, न कि वर्तमान की प्राप्ति, यह विशेष बुद्धिमान् पुरुषों को स्वयं समझ लेना चाहिए। वर्तमान की न केवल संप्रतिकालीन क्रिया से वर्तमान संज्ञा है, किन्तु वर्तृमानकर्तृसत्व में ही प्रायशः वर्तमान संज्ञा है ।

वर्तमानायां छुह् छिह् छुख् छिव् छुस् छिह् पुंसि ।। ११ ।।

छ्यह् छ्यह् छ्यख् छ्यव छ्यस् छ्यह् स्त्रियाम् ।। १२ ।।

पुंकर्तरि यथा । करान् छुह् । सः करोति । करान् छिह् । ते कुर्वन्ति । करान् छुख् । त्वं करोषि । करान् छिव् । यूयंकुरुथ । करान् छुस् । अहं करोमि । करान् छिह् । वयं कुर्मः । स्त्रीलिङ्गे यथा । करान् छ्यह् । सा करोति । करान् छ्यह् । ताः कुर्वन्ति । करान् छ्यख् । त्वं करोषि स्त्री० । करान् छ्यव । यूयं कुरुथ स्त्री करान् छ्यस् । अहं करोमि स्त्री० ।

करान् छ्यह् । वयं कुर्मः स्त्री० । कर करणे । छुह् आदयः प्रत्ययाः । धातोरानागमः (सू. १९) इति आम् । व्यञ्जनं परेण संधेयम् (सू० १/३) ।

पुंल्लिङ्ग कर्ता में जैसे-करान् छुह्-सः करोति-वह करता है। करान् छिह्-ते कुर्वन्ति-वे करते हैं। करान् छुख्-त्वंकरोषि-तूं करता है। करान् छिव-यूयं कुरुथ-तुम सब करते हो। करान् छुस्-अहं करोमि-मैं करता हूं। करान् छिह् वयं कुर्मः--हम करते हैं। स्त्रीलिङ्ग में जैसे-करान् छ्यह्-सा करोति- वह करती है। करान् छ्यह्-ताःकुर्वन्ति-वे करती हैं। करान् छ्यख्-त्वं करोषि स्त्री०-तूं करती है। करान् छ्यव यूयं कुरुथ स्त्री०--तुम सब करती हो। करान् छ्यस्-अहं करोमि स्त्री०--मैं करती हूं। करान् छ्यह्-वयं कुर्मः स्त्री०--हम सब करती हैं 'कर' करने अर्थ में, 'छुह्' आदि प्रत्यय हैं। धातोराननागमः (सू-१९) से 'आन्' प्रत्यय। व्यञ्जन अपने से परे के साथ मिला देना चाहिए (सू-१।३)।

क्रियाऽभावे नपराः ॥ १३ ॥

क्रियाया अभावे अभिधेये सति ते प्रत्यया नपरा नकारः परो येभ्यस्तथा स्युः। करान् छुन। न करोति। करान् छिन। न कुर्वन्ति। करान् छ्यन। सा न करोति। करान् छ्यख्न। त्वं न करोषि। कर करणे। छुह् प्रत्ययस्तस्मान्न प्रत्ययः। धातोरानागमः (सू०-१९)। प्रत्ययेषु हलोपः सर्वत्र (सू-४।१३१) इति हकारलोपः। एवं सर्वेषाम्।

क्रिया के अभाव अभिधेय होने पर वे प्रत्यय-नकार परे है जिन से, वैसे हों। करान् छुन-न करोति-नहीं करता है। करान् छिन-न कुर्वन्ति-नहीं करते हैं। करान् छ्यन्-सा न करोति-वह नहीं करती है। करान् छ्यख्न-त्वं न करोषि-तूं नहीं करता है। 'कर' करने अर्थ में। 'छुह्' प्रत्यय, उस से 'न' प्रत्यय। धातोरानागमः (सू०-१९)। प्रत्ययेषु हलोपः सर्वत्र (सू०४।१३१) से 'हकार' का लोप। इस तरह सभी के।

कामप्रवेदने आपराः ॥ १४ ॥

क्रियायाः कामप्रवेदने सति विभक्तिप्रत्यया आपरा आकारः परो येभ्यस्तथा स्युः। क्रियाभावस्य कामप्रवेदने सति न प्रत्यय आपरो भवति। करान् छ्वा। स किं नु करोति। करान् छ्या। सा किं नु करोति। कर करणे। छुह् छ्ह् प्रत्ययौ आपरौ। प्रत्ययेषु हलोपः सर्वत्र (सू४।१३१) इति ह लोपः। धातोरानागमः

(सू-१९) । छु इत्यस्य उकारो वः (सू०१।५) व्यञ्जनं परेण संधेयम् । (सू१/३) । एवं करान् छुना । किं न करोति । करान् छ्यना । सा किं न करोति । अत एव निर्देशाद्यथा नकारान्तस्याऽऽप्रत्ययः स्यात्तथा तिप्रत्ययान्तस्यापि बोध्यः (सू०४।-१७९) । करान् छुत्या । अपि किं करोषि । कर्यौन् त्या । अपि किं चकार । करित्या । अपि किं करिष्यति ।

क्रिया के कामप्रवेदन होने पर विभक्तिप्रत्यय 'आकार' परे है जिस से, वैसे हों । क्रियाभाव के कामप्रवेदन होने पर 'आ' परे होने पर 'न' प्रत्यय होता है । करान् छ्वा—स किं नु करोति-वह क्या करता है । करान् छ्या—सा किं नु करोति—वह क्या करती है । 'कर' करने में । छुह्—छ्यह् प्रत्यय 'आ' परे रहते । प्रत्ययेषु हलोपः सर्वत्र (सू० ४।१३१) से 'ह' का लोप । धातोरानागमः (सू० १९) । छु इत्यस्य उकारो वः (सू० १।११) इससे 'व' करने पर । दूसरी जगह—स्वरः सवर्ण दीर्घपरलोपौ (सू० १।५) व्यञ्जनं परेण सन्धे-यम् (सू० १।३) । इस तरह—करान् छुना—कि न करोति—क्या नहीं करता है । करान् छ्यना—सा किं न करोति—वह क्या नहीं करती है । इस लिए ही निर्देश से जैसे नकारान्त को प्रत्यय न हो, वैसे ति प्रत्ययान्त के लिए भी जानना । (सू० ४।१७९) करान् छुत्या-अपि किं करोति-क्या करता है । कर्यौन् त्या-अपि किं चकार-क्या किया । करित्या-अपि किं करिष्यति-क्या करेगा ।

मध्यमैकत्वादित्रये ऽपरा वा ॥ १५ ॥

कामप्रवेदने सति मध्यमैकत्वानेकत्वयोरुत्तमैकत्वे च अपरा अकारः परो येभ्यस्तथा वा विकल्पेन स्युः । न क्रियाभावकामप्रवेदने नकारस्य स्वयमकारान्तत्वात् । किं चादरवत्सु संबोधनप्रत्ययेषु चायमेव मुख्यः । प्रथमस्तु । आ प्रत्ययः कनिष्ठनीचयोः (सू० २।२।७) इति लिङ्गप्रकरणोक्तसूत्रेण तयोरेवावगन्तव्यः । करान् छुख । वा । करान् छुखा । किं त्वं करोषि । करान् छिव । वा । करान् छिवा । किं यूयं कुरुथ । करान् छुस । वा । करान् छुसा । किमहं करोमि । साधनं पूर्ववत् ।

कामप्रवेदन होने पर मध्यम पुरुष के एक वचन और वहुवचन में तथा उत्तम पुरुष के एक वचन में 'अकार' परे है जिससे, वैसे

'वा' विकल्प से हो। क्रियाभावकामप्रवेदन में 'नकार' के स्वयं अकारान्त होने से नहीं। आदर वाले संबोधनप्रत्ययों में यह ही मुख्य है। पहले तो-'आ प्रत्ययः कनिष्ठनीचयोः (सू० २।२।७) यह लिङ्ग-प्रकरण में कहे गए सूत्र से उन दोनों में ही जानना। करान् छुख-वा-करान् छुखा-किं त्वं करोषि-तू क्या करता है। करान् छिव-वा-करान् छिवा-किं यूयं कुरुथ-तुम सब क्या करते हो। करान् छुस-वा- करान् छुसा-किमहं करोमि-मैं क्या करता हूं। साधन पहले की तरह।

अपरा अय्परा वा स्त्रियां मध्यमे ॥ १६ ॥

स्त्रियाः सकाशात्कामप्रवेदने कर्तव्ये मध्यमपुरुषे प्रत्यया अकार-परा अय्परा वा भवन्ति। अत्रापि अय् प्रत्ययः। कनिष्ठनीचयोः (सू० २।२।७) इत्यर्थे लिङ्गप्रकरणोक्तसूत्रानुसारतो बोध्यः। करान् छ्यख्। वा। करान् छचखय्। किं त्वं करोषि स्त्री०। करान् छचव। वा। करान् छचवय्। किं यूयं कुरुथ स्त्रियः। करान् छचख्ना। वा। करान् छचख्नय्-किं त्वं न करोषि। करान् छचवना। वा। करान् छचवनय्। किं यूयं न कुरुथ।

स्त्री के पास से कामप्रवेदन करने पर मध्यमपुरुष में प्रत्यय अकार परे वा अय् परे होते हैं। यहां भी 'अय्' प्रत्यय। कनिष्ठ-नीचयोः (सू० २।२।७) इस अर्थ में लिङ्ग प्रकरण में कहे सूत्र के अनुसार जानना। करान् छचख-वा-करान् छचखय्-किं त्वं करोषि स्त्री०-तूं क्या करती है। करान् छचव-वा करान् छचवय्-किं यूयं कुरुथ स्त्रियः-तुम स्त्रियो क्या करती हो। करान् छचख्ना। वा। करान् छ्यख्नय्-किं त्वं न करोषि-तूं क्या नहीं करते हो। करान् छचवना-वा करान छचवनय्-किं यूयं न कुरुथ-तुम सब क्या नहीं करते हो।

उत्तमैकत्वे पंस्त्रियोः क्रमात् ॥ १७ ॥

पुरुषाय स्त्रिया कामप्रवेदने वाच्ये सति अकारपरो भवति। स्त्रियै स्त्रिया वाच्ये सति अय्परो भवति। करान् छचस्। किमहं करोमि। करान् छचसय्। किमहं करोमि।

पुरुष के लिए स्त्री से कामप्रवेदन वाच्य में होने पर अकार परे होता है। स्त्री के लिए स्त्री से वाच्य में होने पर 'अय्' परे होता है।

करान् छचस-किमहं करोमि-मैं क्या करता हूं। करान् छचसय्-किमहं करोमि-मैं क्या करता हूं।

वहुत्वे आ अय्पराः ॥ १८ ॥

पुरुषाय वाच्ये आपराः स्त्रिये वाच्ये अय् परा भवन्ति। प्रथम-पुरुषप्रत्यययोरुत्तमानेकत्वछ्यह् प्रत्ययेन सादृश्यात्तयोरपीत्थं विज्ञेयम्। करान् छचा स्वह। सा किं नु करोति। करान् छचा तिम। ताः किं नु कुर्वन्ति। करान् छचा असि। वयं किं नु कुर्मः। करान् छचय्। किं नु वयं कुर्मः। एवमन्ययोरपि।

पुरुष के लिए वाच्य में 'आ' परे, स्त्री के लिए वाच्य में 'अय्' परे होते हैं। प्रथमपुरुष प्रत्ययों में उत्तमपुरुष बहुवचन 'छ्यह्' प्रत्यय से समानता होने से उन दोनों में भी ऐसा जान लेना चाहिए। करान् छचा स्वह-सा किं नु करोति—वह क्या करती है। करान् छचा तिम-ताः किं नु कुर्वन्ति-वे क्या करती हैं। करान् छचा असि-वयं किं नु कुर्मः-हम क्या करते हैं। करान् छचय्—किं नु वयं कुर्मः-हम क्या करते हैं। इसी तरह दूसरों में भी।

धातोरानागमः ॥ १९ ॥

वर्तमानाया विषये धातोः पर आन् आगमो भवति। करान् छुह्। करोति। साधितमेव।

वर्तमान के विषय में धातु से परे 'आन्' आगम होता है। करान् छुह्-करोति- करता है। साधित ही है।

इकारान्ताद्वपूर्वः ॥ २० ॥

इकारान्ताद्धातोरान आगमो वकारपूर्वो भवति अर्थात् वान् आगमः स्यात्। मिषान् छुह्। हरति। दिवान् छुह्।-ददाति। यिवान् छुह्। आयाति। नि हरणे। दि दाने। यि आगमने। वर्तमानायां पुंसि छुह् प्रत्ययः। अनेन वान् आगमः। ख्यवान् छुह्-खादति। च्यवान् छुह्। पिवति। खि खादने। चि पाने। छुह् प्रत्ययः। अनेन वान् आगमः। सर्वत्राकारागमोऽनिदियिवर्जितात् (सू.८।२।११) इति सूत्रेण धातुस्वरादकारागमः। इकारो ऽसवर्णे योऽपरलोपः (सू. १।१०) इति सूत्रेण इकारस्य यत्वम्। व्यञ्जनं परेण सन्धेयम्।

इकारान्त धातु से 'आन्' आगम् वकार पूर्व होता है अर्थात् वान् आगम होता है। मिषान् छुह्-हरति-हरता है। दिवान् छुह्-ददाति-

देता है। यिवान् छुह्-आयाति-आता है। नि-हरण अर्थ में, दि-दान अर्थ में, यि-आने अर्थ में। वर्तमान पुंल्लिङ्ग में 'छुह्' प्रत्यय होता है, इससे 'वान्' का आगम हुआ। सर्वत्राकारागमोऽनिदियिवर्जितात् (सू. ८। २। ११) इस सूत्र से धातुस्वर से 'अकार' का आगम। इकारोऽसवर्णे योऽपरलोपः (सू. १।१०) इस सूत्र से 'इकार' को 'य', व्यंजन को परले से जोड दे।

आसो लोपो धातोश्च ॥ २१ ॥

आस सत्तायामित्यस्माद्धातोरान् प्रत्ययस्य लोपो भवति। आसधातोश्च लोपः स्यात्। छुह्। अस्ति। छिह्। सन्ति। इत्यादि। आस सत्तायां। वर्तमानायां छुह् प्रत्ययः। धातोरानागमः (सू. १९) अनेन लोपः आस धातोश्च।

'आस' सत्ता में, इस धातु से 'आन्' प्रत्यय का लोप होता है और 'आस' धातु का लोप होता है। छुह्-अस्ति-है। छिह्-सन्ति-हैं। इत्यादि। आस- सत्ता में। वर्तमान में 'छुह्' प्रत्यय। धातोरा-नागमः (सू.१९) इससे 'आस' धातु का लोप।

वाक्येष्वऽस्य प्रयोगो मुख्यः ॥ २२ ॥

सर्वषां वाक्यानां लालित्ये अयम् अस्त्यर्थकः छुह् प्रयोगो मुख्योऽवधार्यः। वत छुह् सुह् ख्यवान्। भक्तमस्ति सः खादन्। वत सुह् ख्यवान् छुह्। भक्तं स खादति। इति गौणः

सभी वाक्यों के लालित्य में 'यह है' इस अर्थ में 'छुह्' प्रयोग मुख्य समझना चाहिए। वत छुह् सुह् ख्यवान्-भक्तमस्ति सः खादन्-भात है वह खाता हुआ। वत सुह् ख्यवान् छुह्- भक्तं सः खादति-भात वह खाता है। यह गौण है

वाक्यारम्भपदात्परो मुख्यः ॥ २३ ॥

वाक्यारम्भस्य यदारम्भपदं स्यात्तस्मान्मुख्यः प्रयोगः प्रयोज्यः। तव पत छुह् आसनस् प्यठ् विहिथ् पूजा करान्। ततः अस्ति आसनोपरि निविश्य पूजां कुर्वन्।

वाक्यारम्भ का जब आरम्भ पद हो, उससे मुख्य प्रयोग प्रयुक्त करना चाहिए। तव पत छुह् आसनस् प्यठ् विहिथ् पूजा करान्-ततः अस्ति आसनोपरि निविश्य पूजां कुर्वन्-इसके बाद आसन पर बैठ कर पूजा कर रहा है।

वाक्यान्ते गौणः ॥ २४ ॥

गौणो वर्तमानायाः क्रियास्वरूपं वाक्यान्ते प्रयोज्यम् । तव पत आसनस् प्यठ् विहिथ् पूजा करान् छुह् । तत आसनोपरि निविश्य पूजां करोति । यद्यपि प्रथमोत्तरे वाक्ये एकार्थके स्तः परं तु वाग्लालित्ये प्रथममेव ज्यायः । किं चात्र वाक्ये स्पष्टं प्रतीयते । ईश्वर छुह् आसान् काशिय अन्दर् । ईश्वरः अस्ति भवत्-काश्याम् । एवमतीतादिषु च निश्चीयत इति ।

गौण वर्तमान क्रिया का क्रिया स्वरूप वाक्य के अन्त में प्रयुक्त करना चाहिए । तव पत आसनस् प्यठ् विहिथ् पूजा करान् छुह्-तत आसनोपरि निविश्य पूजां करोति-इसके बाद आसन पर बैठ कर पूजा करता है । यद्यपि प्रथमोत्तर वाक्य एकार्थ में हैं, परन्तु वाणी के लालित्य में पहले ही बड़ा । और इस वाक्य में स्पष्ट प्रतीत होता है । ईश्वर छुह् आसान् काशिय अन्दर-ईश्वरः अस्ति भवत्-काश्याम्-आप की काशी में ईश्वर है । इस तरह अतीत आदि में निश्चित किया जाता है ।

क्रियायाः किमादिशब्दस्वरूपेभ्यो वा सन प्रत्ययः शङ्कायाम् ॥ २५ ॥

कामप्रवेदनस्य शङ्कायामभीप्सितायां क्रियायाः परः किमादि-शब्दस्वरूपेभ्यो वा परः सन प्रत्ययो भवति । यत्र वाक्ये सार्वनामिकं ककारादिशब्दस्वरूपं स्यात्तत्रावश्यं तस्मात्पर एव भवति । यत्र तु न भवेत्तत्र क्रियायाः पर एव भवति । ख्यवान् छ्वासन । किं नु खादति । क्यासन ख्यवान् छ्वा । किं नु खादति । बट कैत्यासन आसान् छिह् । किं नु ब्राह्मणाः कतिचन भवन्ति । कर्सना वागि यिवान् छुह् । कस्मिन्दिनरात्रिभागे आयाति । अत एव ज्ञापकाद्यथा सन प्रत्ययो भवति तथा संप्रश्नेऽपि किमादिस्वरूपेभ्यः संबोधनमुख्य-प्रत्ययाश्च भवन्तीति । कैत्यासा लूख् आसि । कियन्तो लोका आसन् ।

कामप्रवेदन की शङ्का-अभीप्सित में क्रिया से परे वा क्रियादि-शब्दस्वरूपों से परे 'सन' प्रत्यय होता है । जिस वाक्य में सार्वनामिक ककारादिशब्दस्वरूप हो, वहां अवश्य उससे परे ही होता है । यहां न हो, वहां क्रिया से परे ही होता है । ख्यवान् छ्वासन-किं नु खादति-क्या खाता है । क्यासन ख्यवान छ्वा-किं नु खादति-क्या खाता है ।

क्यासन ख्यवान छ्वा-किं नु खादति-क्या खाता है। बट कैत्यासन आसान् छिह्-किनु ब्राह्मणाःकतिचन भवन्ति-क्या ब्राह्मण कितने हैं। कर्सना वागि यिवान् छुह्-कस्मिन्दिनरात्रिभागे आयाति-किस दिन-रात के भाग में आता है। इस लिए ही ज्ञापक से जैसे 'सन' प्रत्यय होता है वैसे संप्रश्न में भी किमादि स्वरूपों से संबोधन-मुख्यप्रत्यय होते है। कैत्यासा लूख् आसि-कियन्तो लोका आसन्-कितने लोग थे।

तेभ्यस्ताञ्ताञतौ स्वाज्ञातायाम् ॥ २६ ॥

तेभ्यः सार्वनामिकककारादिस्वरूपेभ्यः परस्ताञ् प्रत्ययस्ताञत् प्रत्ययो वा भवति आत्मनोऽज्ञातायामाशङ्कायां विवक्षितायां सत्याम्। क्याह् ताञ् वनुन्। वा-क्याह् ताञत् वनुन्। किंचिदुक्तम्। एवं। कर् ताञ् आव्। कस्मिंश्चित्काले आगतः। कूतु ताञ् दितुन्। कियन्मितं दत्तम्। इत्यादि। अत्र प्रत्ययञ्कारस्य विकल्पेन मकारो भवति। तत्र-क्याह् ताम् वनुन्। (किंचिदुक्तम्)। इत्यादि स्यात्।

उन सार्वनामिकककारादिस्वरूपों से परे 'ताञ्' प्रत्यय अथवा 'ताञत्' प्रत्यय होता है अपनी अज्ञात-आशङ्का विवक्षित होने पर। क्याह् ताञ् वनुन्-वा-क्याह् ताञत् वनुन्-किंचिदुक्तम्-कुछ कहा। इस तरह-कर् ताञ् आव् -कस्मिंश्चित्काले आगतः-किस समय आया। कूतु ताञ् दितुन्-कियन्मितं दत्तम्-कितना दिया। इत्यादि। यहां प्रत्यय 'ञ्कार' को विकल्प से 'मकार' होता है। वहां-क्याह् ताम् वनुन्-किंचिदुक्तम्-कुछ कहा, इत्यादि हो।

ड्यठातिशये पूर्वं च ॥ २७ ॥

तेभ्यः सार्वनामिकककारादिस्वरूपेभ्यः पूर्वं ड्यठशब्दः प्रजोज्यः तत्तत्स्वरूपस्यातिशयार्थे गम्यमाने। ड्यठ कर् आव्। वा-ड्यठ कन आव्। चिरादागतः। ड्यठ वयाह्। (अतिशयः)। ड्यठ कूति। (अनल्पाः)। ड्यठकनि। (चिरेण)। इत्यादि।

उन सार्वनामिकककारादिस्वरूपों से पूर्व 'ड्यठ' शब्द प्रयुक्त करना चाहिए उस-उस स्वरूप के अतिशय अर्थ गम्यमान में। ड्यठ कर् आव्-वा-ड्यठ कन आव्-चिरादागतः-चिरकाल से आया। ड्यठ वयाह्-अतिशयः-अधिक। ड्यठ कूति-अनल्पाः-अधिक। ड्यठकनि-चिरेण-चिरकाल से। इत्यादि।

आपरो वा ॥ २८॥

स सन प्रत्यय आकारः परो यस्मात्तथा वा भवति। क्यासना ख्यवान् छुह्। किं वस्तु नु खादति। कर्सना यियि। कदा नु आगच्छेत्। कूतिसना आसहान्। कतिचन स्युः। कतिसना ओसु। कुत्र नु आसीत्।

वह 'सन्' प्रत्यय 'आकार' परे रहते वैसा ही रहता है। क्यासना ख्यवान् छुह्-किं वस्तु नु खादति-क्या वस्तु खाता है। कर्सना यियि-कदानु आगच्छेत्-कब आए। कूतिसना आसहान-कतिचन स्युः-कितने हों। कतिसना ओसु-कुत्र नु आसीत्-कहां था।

माशब्द आदावन्ते वा ॥ २९ ॥

आशंकायां सत्यां क्रियायाः पूर्वं पश्चाद्वा माशब्दः प्रयोज्यः। करान् मा छुह्। (करोति मा स्वित्)। मा छुह् करान्। (मास्वित्करोति)। मा करान् छुह्। (मा करोति स्वित्)। कर्योन्मा। (मा कार्षीत्स्वित्)। सुह् मा करि। (करिष्यति मा स्वित्)। ब्वह मा कर। (अहं मा स्वित् करिष्यामि)।

आशंका होने पर क्रिया से पूर्व वा पश्चात् 'मा' शब्द प्रयुक्त करना चाहिए। करान् मा छुह्-करोति मा स्वित्-मत करता है। मा छुह् करान्-मा स्वित्करोति-मत करता है। मा करान् छुह्-मा करोति स्वित्-मत करता है। कर्योन्मा-मा कार्षीत्स्वित्-मत किया। सुह् मा करि-करिष्यति मा स्वित्-मत करेगा। ब्वह मा कर-अहं मा स्वित् करिष्यामि-मैं मत करूंगा।

वाद्यः पाद्यो वाऽऽनुप्रासिकशब्दः ॥ ३० ॥

यस्य कस्यचिच्छब्दस्यानुकरणशब्दे कर्तव्ये तस्यैव शब्दस्याक्षरं वकारेण पकारेण वा विपर्ययस्य आनुप्रासिकशब्द उच्चारणीयः। करान् वरान् छुह्। करोतीत्यादि। द्यार् व्यार् अनिन्। धनादिकमानयतु। वत वत ख्ययिन्। भक्तादि भक्षयतु। अन् वार् वन्वार्। (क्रमप्राप्तिः)। अन्वार् पनवार्।

जिस किसी शब्द के अनुकरण शब्द करने पर उसी शब्द के अक्षर को वकार से वा पकार से विपर्यय का आनुप्रासिक शब्द उच्चारण करना चाहिए। करान् वरान् छुह्-करोति-करता है। इत्यादि। द्यार व्यार अनिन्-धनादिकमानयतु-धनादि लाओ। वत वत

ख्ययिन्-भक्तादि भक्षयतु-भात आदि खाओ। अन्वार वन्वार्-क्रमप्राप्तिः-क्रम से प्राप्ति। अन्वार् पनवार्।

तयोरेकतराद्ये तदितरः ॥ ३१ ॥

तयोर्वकारपकारयोर्मध्यात् एकतरे शब्दस्य आद्याक्षरे सति तस्मादितरः प्रयोज्यः वकाराद्ये पकारः पकाराद्ये वकार इति। पर् वर्। पठेत्यादि। पेंस वेंस दितिन्। पणाद्यदात्। वाँगन् पाँगन् अन। वृन्ताकाद्यानय। वाज़ पाज़ छिह्। सूदादयः सन्ति। व्यचु शब्दस्य पोचु शब्द आनुप्रासिको बोध्यः। व्यचु पोचु। संग्रह इत्यादि।

उन वकार-पकार में मध्य से एकतर शब्द के आदि अक्षर होने पर उससे इतर वकारादि में 'पकार' पकारादि में 'वकार' प्रयुक्त करना चाहिए। पर् वर्-पठ-पढ़। इत्यादि। पेंस वेंस दितिन्-पणाद्यदात्-पण आदि दिया। वाँगन् पाँगन् अन-वृन्ताकाद्यानय-वृन्ताक आदि लाओ। वाज़ पाज़ छिह्-सूदादयः सन्ति-पाचक आदि हैं। 'व्यचु' शब्द का 'पोचु' शब्द आनुप्रासिक जानना। व्यचु पोचु-संग्रहः-संग्रह। इत्यादि।

अन्येनापि क्वचित् ॥ ३२ ॥

स आनुप्रासिकशब्दोऽन्येन वर्णेन विपर्ययस्य क्वचिद्व्यवह्रियते सार्थकशब्देन वा। निकु सुकु। संभारादि। म्यंड़ु ठ्यंडु। ग्रासादि। हलु कलु। वक्रादि। हलु वलु। परिकरादि। हान्जू गान्जू। नाविकादि। फलु फ्यतु। भूषणादि। ओन्तु वोन्तु। उत्तानादि।

वह आनुप्रासिक शब्द अन्य वण के साथ विपर्यय वा सार्थकशब्द के साथ कहीं व्यवहृत होता है। जिकु सुकु—संभारादि-संभार (सामग्री) आदि। म्यंड़ु ठ्यंडु-ग्रासादि-ग्रास आदि। हलु कलु-वक्रादि-वक्र (टेढ़ा) आदि। हलु वलु-परिकरादि-परिकर आदि। हान्जू गान्जू-नाविकादि-नाविक आदि। फलु-फ्यतु-भूषणादि-आभूषण-आदि। ओन्तु वोन्तु-उतानादि-उत्तान आदि।

तच्छब्दस्यैकत्वेनक्रियासंबन्धेऽस् ॥ ३३ ॥

कर्तायां क्रियां तस्यार्थं विदधाति तस्याः क्रियायाः परः अस् प्रत्ययः सर्वत्र स्यात्। करान् छुस्। तस्यार्थ करोति। करान् छिस्। तस्यार्थं कुर्वन्ति। करान् छुसस्। तस्यार्थं करोमि। करान् छिस्

तस्यार्थं कुर्मः। कर करणे। वर्तमानायां प्रथमैकवहुत्वे पुंसि छुह्, छिह् प्रत्ययौ घातोरानागम (सू० १६) इति आन्। अनेनान्ते अस् प्रत्ययः। प्रत्ययेषु हलोपः सर्वत्र (सू० ४।१३१) इति हकार लोपः। अस् प्रत्ययस्य स्वरादल्लोपः (सू-३६) इत्यकारलोपः। एवमन्यत्।

कर्ता जिस क्रिया को उसके लिए करता है, उस क्रिया से परे 'अस्' प्रत्यय सर्वत्र होता है। करान् छुस्-तस्यार्थं करोति-उसके लिए करता है। करान् छिस्-तस्यार्थं कुर्वन्ति-उसके लिए करते हैं। करान् छुसस्-तस्यार्थं करोमि-उसके लिए करता हूं। करान् छिस्-तस्यार्थं कुर्मः-उसके लिए करते हैं। 'कर' करने में। वर्तमान-प्रथमा-एकवचन-वहुवचन पुँल्लिंग में 'छुह-्छिह्' प्रत्यय। घातोरानागमः (सू० १६) इससे आन्। इससे अन्त में 'अस्' प्रत्यय। प्रत्ययेषु हलोपः सर्वत्र (सू० ४।१३१) में 'हकार' का लोप। स्वरादल्लोपः (सू० ३६) इससे 'अस्' प्रत्यय के 'अकार' का लोप हुआ। इस तरह और।

कर्मण्यन् ॥ ३४ ॥

तच्छब्दस्यैकत्वे कर्मणि सति क्रियायाः परः अन् प्रत्ययो भवति सर्वत्र। करान् छुहन्। तं करोषि। ख्यवान् छुहन्। तं खादसि।

'तत्' शब्द के एकवचन-कर्म में होने पर क्रिया से परे 'अन्' प्रत्यय होता है सब जगह। करान् छुहन्-तं करोषि-तूं उसे करता है। ख्यवान् छुहन्-तं खादसि-तू उसे खाता है।

वहुत्वेनाख् ॥ ३५ ॥

तेषामर्थे यां क्रियां निवर्तयेत्तच्छब्दस्य वहुत्वे वा कर्मणि सति क्रियायाः परः अख् प्रत्ययः स्यात् सर्वासु विभक्तिषु। करान् छुख्। तेषामर्थे करोति। करान् छिख्। तेषामर्थं कुर्वन्ति। करान् छुसख्। तेषामर्थे करोमि। करान् छिख्। तेषां 'अर्थे' कुर्मः। साधनं पूर्ववत्।

उनके अर्थ में जिस क्रिया को निवर्त करे, 'तत्' शब्द के वहुवचन में वा कर्म में होने पर क्रिया से परे सभी विभक्तियों में 'अख्' प्रत्यय होता है। करान् छुख्-तेषामर्थे करोति-उन के लिए करता है। करान् छिख्-तेषामर्थे कुर्वन्ति-उनके लिए करते हैं। करान् छुसख्-तेषामर्थे करोमि-उनके लिए करता हूं। करान् छिख्-तेषामर्थे कुर्मः—उनके लिए करते हैं। साधन पहले की तरह।

त्वच्छब्दे कर्मणि भूते च ॥ ३६ ॥

अतीतकालिकक्रियायास्त्वच्छब्दे कर्मणि सति क्रियायाः परः अख् प्रत्ययः स्यात् । कर्योनख् । तेन चक्रुषे । करुमख् । मया चकृषे ।

अतीतकालिक क्रिया के 'त्वत्' शब्द-कर्म में होने पर क्रिया से परे 'अख्' प्रत्यय होता है। कर्योनख्-तेन चक्रुषे-उसने किया। करुमख्-मया चक्रुषे-मैंने किया।

भविष्यद्वर्तमानोत्तमेष्वथ् ॥ ३७ ॥

त्वच्छब्दे कर्मणि सति भविष्यन्त्या वर्तमानाया उत्तमपुरुषेऽपि क्रियायाः परः अथ् प्रत्ययः स्यात् । करथ् । त्वां करिष्यामि । करोथ् । त्वां करिष्यामः । करान् छुसथ् । त्वां करोमि । करान् छिथ् । त्वां कुर्मः ।

'त्वत्' शब्द कर्म में होने पर उत्तम पुरुष में भी भविष्यत् और वर्तमान क्रिया से परे 'अथ्' प्रत्यय होता है। करथ्-त्वां करिष्यामि-तुझे करूँगा। करोथ्-त्वां करिष्यामः-तुझे करेंगे। करान् छुसथ्-त्वां करोमि-तुझे करता हूं। करान् छिथ्-त्वां कुर्मः-तुझे करते हैं।

प्रत्यये प्रत्ययखकारस्य हः ॥ ३८ ॥

तत्संबन्धादिप्रत्ययेषु परेषु प्रत्ययसंबन्धिनः खकारस्य हकारो भवति । करान् छुहस् । तस्यार्थे करोषि । करान् छुहख् । तेषामर्थे करोषि । कर् करणे । वर्तमानायां मध्यमैकत्वे छुख् । आन् आगमः (१९) सूत्रेण तच्छब्द (सू० ३३।३५) इत्यादिना अस् अख् प्रत्ययौ । अनेन खकारस्य हकारः । व्यञ्जनं परेण सन्धेयम् (सू० १।३) ।

तत्संबन्धादि प्रत्ययों के परे प्रत्यय से सम्बद्ध 'खकार' को 'हकार' होता है। करान् छुहस्-तस्यार्थे करोषि-तूं उसके लिए करता है। करान् छुहख्-तेषामर्थे करोषि-तूं उनके लिए करता है। 'कर्' करने अर्थ में। वर्तमान मध्यमपुरुष के एकवचन में 'छुख्'। आन् आगमः (१९) सूत्र से और 'तच्छब्दः' (सू० ३३।३५) से 'अस्-अख्' प्रत्यय। इससे 'खकार' को 'हकार' व्यञ्जन को परले से मिला दो (सू० १।३)।

स्वरादल्लोपः ॥ ३९ ॥

प्रत्ययस्वरात्परस्य अकारस्य लोपो भवति । करान् छुस् । तस्मै करोति । करान् छिस् । तस्मै कुर्वन्ति । करान् छिवस् । तस्मै कुरुथ ।

करान् छिवख् । तेभ्यः कुरुथ । प्रथमयोर्हकारस्य लोपे कृते अनेन अकारलोपः । शेषं स्पष्टम् ।

प्रत्ययस्वर से परे 'अकार' का लोप होता है । करान् छुस्-तस्मै करोति-उसके लिए करता है । करान् छिस्-तस्मै कुर्वन्ति-उसके लिए करते हैं । करान् छिवस्-तस्मै कुरुथ-उसके लिए तुम करो । करान् छिवख्-तेभ्यः कुरुथ-उनके लिए तुम करो । प्रथम दो में 'हकार' का लोप करने पर इससे 'अकार' का लोप । शेष स्पष्ट है ।

त्वच्छब्देनाय् ॥ ४० ॥

युष्मच्छब्दकवचननियतेन त्वच्छब्देन सह क्रियासंबन्धे सति क्रियायाः परः अय् प्रत्ययो भवति सर्वासु विभक्तिषु । करान् छुय् । तुभ्यं करोति । करान् छिय् । तुभ्यं कुर्वन्ति । करान् छुसथ् । तुभ्यं करोमि । करान् छिय् । तुभ्यं कुर्मः ।साधनं पूर्ववत् ।

'युष्मद्' शब्द एकवचन में नियत 'त्वत्' शब्द के साथ क्रिया-संबन्ध होने पर क्रिया से परे सभी विभक्तियों में 'अय्' प्रत्यय होता है । करान् छुय्-तुभ्यं करोति-तुम्हारे लिए करता है । करान् छिय्-तुभ्यं कुर्वन्ति-तुम्हारे लिए करते हैं । करान् छुसथ्-तुभ्यं करोमि-तुम्हारे लिए करता हूं । करान् छिय्-तुभ्यं कुर्मः-तुम्हारे लिए करते हैं । साधन पहले की तरह ।

युष्मदाऽवः ॥ ४१ ॥

युष्मच्छब्देन क्रियासंबन्धे सति क्रियायाः परः सर्वत्र अव प्रत्ययो भवति । करान् छुव । बः करोति । करान् छिव । वः कुर्वन्ति । करान् छुसव् । वः करोमि । करान् छिव । वः कुर्मः । क्वचित्संबोधनवत्प्रोक्तौ प्रत्ययौ भवत इति ।

'युष्मद्' शब्द से क्रियासंबन्ध होने पर क्रिया से परे सर्वत्र 'अव' प्रत्यय होता है। करान् छुव-वः करोति-तुम्हें करता है । करान् छिव-वः कुर्वन्ति-तुम्हें करते हैं । करान् छुसव्-वः करोमि-तुम्हें करता हूं । करान् छिव्-वः कुर्मः-तुम्हें करते है । कहीं संबोधन की तरह कहे गए प्रत्यय होते हैं ।

मच्छब्देनाऽम् ॥ ४२ ॥

अस्मच्छब्दैकत्वनियतप्रयोगेण मच्छब्देन सह संबन्धे सति क्रिया-परः अम् प्रत्ययः स्यात् । करान् छुम् । मां (वा) मे करोति । करान्

छिम् । मां (वा) मे कुर्वन्ति । करान् छुहम् । मे करोषि । करान् छिवम् । मां (वा) मे कुरुथ । साधनमुक्तवत् ।

'अस्मद्' शब्द एक वचन में नियत प्रयोग होने से 'मत्' शब्द के साथ संबन्ध होने पर क्रिया से परे 'अम्' प्रत्यय होता है । करान् छुम्-मां (वा) मे करोति-मुझे वा मेरे करता है । करान् छिम्-मां वा मे कुर्वन्ति-मुझे वा मेरे करते हैं । करान् छुहम्-मे करोषि-तूं मेरे करता है । करान् छिवम्-मां वा मे कुरुथ-मुझे वा मेरे तुम करो । साधन कहे की तरह ।

कर्मण्यस् भूते ॥ ४३ ॥

मच्छब्दे कर्मणि सति अतीतकाले क्रियायाः परः अस् प्रत्ययः स्यात् । कर्योनस् । तेनाहं चक्रे । कर्योयम् । त्वयाहं चक्रे ।

'मत्' शब्द के कर्म में होने पर अतीतकाल में क्रिया से परे 'अस्' प्रत्यय होता है । कर्योनस्-तेनाहं चक्रे-उससे मैं किया । कर्योयम्-त्वयाहं चक्रे-तुझ से मैं किया ।

बहुत्वेऽस्मत्प्रयोगसंबन्ध एव च ॥ ४४ ॥

अस्मच्छब्देन क्रियासंबन्धे सति क्रियायाः परः पूर्वं वा अस्मच्छब्दानेकत्वप्रयोग एव प्रयोज्यः । करान् छुह् अस्य । नः करोति । करान् छिह् अस्य । नः कुर्वन्ति । अस्य करान् छुख् । नः करोषि । अस्य करान् छिव । नः कुरुथ । एवं स्त्रीलिङ्गनियतप्रत्ययेषु च त्वच्छब्दादिसंबन्धप्रत्यया अवगन्तव्याः । तेभ्यश्च कामप्रवेदनतदभावादिप्रत्ययाश्च स्वयमेवावधार्याः । विस्तृतिभयान्नोदाहृताः ।

'अस्मद्' शब्द के साथ क्रियासंबन्ध होने पर क्रिया से परे वा पूर्व 'अस्मद्' शब्द का अनेकत्व प्रयोग ही करना चाहिए । करान् छुह् अस्य-नः करोति-हमें करता है । करान् छिह् अस्य । नः कुर्वन्ति । हमें करते हैं । अस्य करान् छुख्-नः करोषि-हमें तूं करता है । अस्य करान् छिव-नः कुरुथ-तुम हमें करो । और इस तरह स्त्रीलिङ्ग में नियत प्रत्ययों में 'त्वत्' शब्दादि से सम्बद्ध प्रत्यय जानने चाहिए तथा उनसे कामप्रवेदनतदभावादिप्रत्यय स्वयमेव जान लेना । विस्तार के भय से उदाहरण नहीं दिए जा रहे है ।

चरपवशफुहमर्चवुचफिचां नित्यं संबन्धप्रत्ययाः ॥ ४५ ॥

चर अन्तःकोपे । पवश फुह अमर्ष । मर्च अन्तः कोपे । वुच

दग्धीभवने । फिच विस्मरणे । एषां प्रोक्तसंबन्धप्रत्यया नित्यं भवन्ति । चरान् छ्यस् । (अन्तः कोपोऽस्य भवति) । फ्वशान् छ्यस् । फुहान् छ्यस् । (असहनमस्यास्ति) । मर्चान् छ्यस् । अन्तः कोपोऽस्य भवति । वुचान् छ्यस् । (अन्तर्दाहो भवत्यस्य) । फिचान् छ्यस् । (विस्मृतिर्भवत्यस्य) । साधनं सुगमम् । एषां धातुपाठे नित्यस्त्रीलिङ्ग-कथनात्स्त्रीलिङ्गप्रत्यय एव ।

'चर' भीतरीक्रोध में । फ्वश-फुह-नहीं सहन करने में । मर्च-भीतरी क्रोध में । वुच-जलने में । फिच-भूलने में । इन्हें कहे गए संबन्थ प्रत्यय नित्य होते हैं । चरान् छ्यस्-अन्तःकोपोऽस्य भवति-इसे भीतरी क्रोध हुआ करता है । फ्वशान छ्यस् फुहान् छ्यस्-असहन-मस्यास्ति-इसे असहनशीलता है । मर्चान् छ्यस्-अन्तः कोपोऽस्य भवति-इसे भीतरी क्रोध होता है । वुचान् छ्यस्-अन्तर्दाहो भवत्यस्य-इसे भीतरी जलन होती है । फिचान् छ्यस्-विस्मृतिर्भवत्यस्य-इसे विस्मृति हो जाती है । साधन आसान है । इन्हें धातुपाठ में नित्य स्त्रीलिङ्ग कहे जाने से स्त्रीलिङ्ग प्रत्यय ही ।

षष्ठी कर्तरि सर्वत्र ।। ४६ ।।

एषां धातूनां सर्वासु विभक्तिषु षष्ठीकर्तरि भवति । तमिस् चरान् छ्यह् । एषां सर्वेषां यत्र कर्तरि प्रयुज्यमाने सति तत्र संब-न्धिप्रत्ययानामनित्यता बोध्येति ।

इन धातुओं को सभी विभक्तियों में षष्ठी कर्ता में होती है । तमिस् चरान् छ्यह् । इन सभी के, यहां कर्ता में प्रयुक्त होने पर, बहां संबन्धिप्रत्ययों की अनित्यता जानना ।

गछोऽपि योग्यार्थेत्र ।। ४७ ।।

गछ गतौ सामञ्जस्ये । इत्यस्य योग्यार्थविषये अत्र षष्ठी कर्तरि भवति । तमिस् गछान् छुह् ज़ि परहा । (तस्याभीष्टमहं योग्योऽस्मि पठेयमिति) ।

'गछ' गति और सामञ्जस्य अर्थ में । इसे योग्यार्थविषय में यहां षष्ठी कर्ता में होती है । तमिस् गछान् छुह् ज़ि परहा-तस्याभी-ष्टमहं योग्योऽस्मि पठेयमिति-उसकी इच्छानुसार मैं योग्य हूं, पढ़ूं ।

(४७ योग्यार्थ इत्यत्र अभीष्टार्थेऽपि चरितार्थता ।)

प्रथमैकानेकत्वे च ।। ४८ ।।

तस्यैव धातोरत्र वर्तमानविभक्तौ नित्यं प्रथमपुरुषस्य एकत्व-बहुवचनप्रत्ययावेव भवतः न तु मध्यमपुरुषादयः । किंतु ते संबन्धिप्रत्ययैर्विविच्यन्ते । गछान् छुस् । गछान् छुख् । गछान् छुय् । गछान् छुव् । गछान् छुम् । । गछान् छुह् ।

उसी धातु से यहां वर्तमान विभक्ति में नित्य प्रथमपुरुष के एकवचन और बहुवचन प्रत्यय ही होते हैं, न कि मध्यमपुरुष आदि। किन्तु वे संबन्धिप्रत्ययों से युक्त होते हैं ।

सर्वत्रानः सकर्मकेभ्यः कर्मकर्तरि ।। ४९ ।।

सर्वत्र सर्वेषु कालेषु सकर्मकेभ्यो धातुभ्यः परः कर्मकर्तरि अन प्रत्ययो भवति ।

सब जगह सभी कालों में सकर्मक धातुओं से परे कर्मकर्ता में 'अन' प्रत्यय होता है ।

पूर्वे परे वा यिधातुरूपतः ।। ५० ।।

स अन प्रत्यययुक्तो धातुः पूर्वं वा परे यि आगमने इत्यस्य धातोः स्वस्वकालीनप्रयोगान्तर्वर्ति यद्रूपं स्यात्तस्मात्प्रयोज्यः ततः कर्मकर्तृप्रयोगा भवन्ति । रनन यिवान् छुह् बत । भक्तं पच्यते । बत छुह् रनन यिवान् । भक्तं पच्यते । पानय् छुह् यिवान् करन । स्वयं क्रियते । अर्थात् कृतं भवति । रन पाके पूर्वसूत्रेण (४९) अन प्रत्ययः। यि धातोः यिवान् छुह् इति रूपात्पूर्वं रनन इति प्रयुक्तः । अपरत्र वर्तमानापरस्वरूपे यिवान् इत्यस्मात्पूर्वं प्रयुक्तः । तृतीये तु परः ।

वह 'अन्' प्रत्यययुक्त धातु पहले वा परे 'यि' आने अर्थ में इस धातु का अपने-अपने समय के प्रयोग के भीतर जो रूप हो, उससे प्रयुक्त करना चाहिए । इसके बाद कर्म-कर्तृ प्रयोग होते हैं । रनन-यिवान छुह् बत-भक्तं पच्यते-भात पकाया जाता है । बत छुह् रनन यिवान्-भक्तं पच्यते-भात पकाया जाता है। पानय् छुह् यिवान् करन-स्वयं क्रियते-खुद किया जाता है । अर्थात् कृतं भवति-किया होता है । 'रन' पकाने अर्थ में, पूर्वसूत्र से (४९) 'अन' प्रत्यय । 'यि' धातु से 'यिवान् छुह्' इस रूप से पूर्व 'रनन' यह प्रयुक्त हुआ । दूसरी जगह वर्तमानापरस्वरूप में 'यिवान्' इससे पूर्व प्रयुक्त हुआ । तीसरे में तो पर ।

वाऽकर्मकेभ्यः ॥ ५१ ॥

अकर्मकेभ्यो धातुभ्यः प्रोक्ता क्रिया वा विकल्पेन भवति। किंच विभक्तिप्रयोगा अपि स्वयं कर्मकर्तृप्रयोगा भवन्ति। ज़ोतान् छुह्। वा। ज़ोतन यिवान् छुह्। दीप्यते। दज़ान् छुह्। वा। दज़न यिवान् छुह्। दह्यते। ज़ोत दीप्तौ। दज़ भस्मीभवने। शेषं पूर्ववत्।

अकर्मक धातुओं से कही गई क्रिया विकल्प से होती है और विभक्तिप्रयोग भी स्वयं कर्मकर्तृप्रयोग होते हैं। ज़ोतान् छुह-वा-ज़ोतन् यिवान् छुह्-दीप्यते-चमकाया जाता है। दज़ान् छुह्-वा-दज़न यिवान् छुह्-दह्यते-जलाया जाता है। 'ज़ोत' चमकने में। 'दज़' राख होने में। बाकी पहले की तरह।

वोजः कर्मकर्ता चाक्षुषज्ञान एव नित्यम् ॥ ५२ ॥

वोज़ निशामने इति धातोः कर्मकर्तृस्वरूपं नित्यं चाक्षुषज्ञान एव भवति न तु श्रवणज्ञाने। वोज़न यिवान् छुह्। स्वयं दृष्टं भवति। वोज़न आव्। दृष्टिमागतः। वोजन यियि। दृष्टिमागमिष्यति। श्रवणज्ञाने तु। वोज़ान् छुह्। शृणोति। न तु दृश्यते। वोज़नस् अन्दर् यिवान् छुह्। श्रवणमागच्छतीति कर्मकर्तृस्वरूपं सेत्स्यति।

'वोज़' सुनाने अर्थ में, इस धातु से कर्मकर्तृस्वरूप नित्यचाक्षुष-ज्ञान में ही होता है, न कि श्रवण ज्ञान में। वोज़न यिवान् छुह्-स्वयं दृष्टं भवति-स्वयं दृष्ट होता है। वोज़न आव्-दृष्टिमागतः-नज़र आया। वोज़न यियि-दृष्टिमागमिष्यति-नज़र आएगा। श्रवणज्ञान में तो-वोजान् छुह्-शृणोति-सुनता है, न कि देखा जाता है। वोज़नस् अन्दर यिवान् छुह्-श्रवणमागच्छति-सुना जाता है, यह कर्मकर्तृ-स्वरूप को सिद्ध करेगा।

गरः काठिन्ये च ॥ ५३ ॥

गर घट्टने इत्यस्य कर्मकर्तृस्वरूपं काठिन्ये भवति च शब्दात्स्वार्थे च। गरन यिवान् छुह्। कठिनीभवति। घटितं च भवति।

'गर' घट्टन अर्थ में, इस का कर्मकर्तृस्वरूप काठिन्य में होता है और शब्द से स्वार्थ में। गरन यिवान् छुह्-कठिनीभवति-कठिन होता है। और घटित होता है।

डषोऽनो लोपो द्रे॑ठादेशश्च ॥ ५४ ॥

डेष प्रेक्षणे इत्यस्मात् अन प्रत्ययस्य लोपो भवति डेषश्च द्रे॑ठ् आदेशो भवति। द्रे॑ठ् यिवान् छुह्। दृष्टिमायाति। डेषन यिवान् छुह्। इति न साधुशब्दः।

'डेष' देखने में, इससे 'अन' प्रत्यय का लोप और 'डेष' को 'द्रे ठ्' आदेश होता है। द्रे॑ठ् यिवान् छुह्-दृष्टिमायाति-नज़र आता है। डेषन यिवान् छुह्-यह साधु शब्द नहीं है।

नेश्चाञ्चल्येऽपि ॥ ५५ ॥

नि हरणे इत्यस्य कर्मकर्ता चाञ्चल्ये भवति-अपिशब्दात्स्वार्थेऽपि। निन यिवान् छुह्। चञ्चलो भवति। वा। हृतो भवति। अत्र स्वरादल्लोपः (सू०३९) इत्यकारलोपः।

'नि' हरण अर्थ में, इसका कर्म-कर्ता चाञ्चल्य में होता है, 'अपि' शब्द से स्वार्थ में भी। निन यिवान् छुह्-चञ्चलो भवति-चञ्चल होता है-वा-हृतो भवति-अपहृत होता है। यहां 'स्वरादल्लोपः (सू० ३९) से 'अकार' का लोप।

हेर्बन्धनेऽपि ॥ ५६ ॥

हि ग्रहणादिषु इत्यस्य कर्मकर्ता व्यवहारबन्धे भवति अपि शब्दात्स्वार्थेऽपि। ह्यन यिवान् छुह्। बद्धो भवति। क्रीतश्च भवति। धातोरकारागमे (८।२।११) सूत्रेण कृते। अकारादकारलोपः (सू० ३९)।

'हि' ग्रहण आदि अर्थ में, इसका कर्मकर्ता व्यवहारबन्ध में और स्वार्थ में भी होता है। ह्यन यिवान छुह्-बद्धो भवति-बद्ध होता है-क्रीतश्च भवति-और क्रीत होता है। धातु से 'अकार' का आगम (८।२।११) सूत्र से करने पर, अकार से 'अकार' का लोप (सू० ३९)।

भावशब्देभ्यो हेर्भूतप्रयोगा वर्तमानबोधकाः ॥ ५७ ॥

भावशब्देभ्यः पूर्वं परे वा हि ग्रहणे इत्यस्य धातोर्भूतप्रयोगा वर्तमानकालस्य बोधका भवन्ति। करुन् ह्यतुन्। कर्तुं प्रवृत्तः। ह्यतुख् परुन्। पठितुं प्रवृत्ताः। संप्रतिकाले करोति पठन्ति चेत्यर्थतोऽवगम्यते।

भावशब्दों से पूर्व वा परे 'हि' ग्रहण अर्थ में, इस धातु के भूतप्रयोग वर्तमानकाल के बोधक होते हैं। करुन् ह्यतुन्-कर्तुं प्रवृत्तः-

करने के लिए प्रवृत्त हुआ । ह्यतुख् परुन्-पठितुं प्रवृत्ताः-पढ़ने के लिए प्रवृत्त हुए । इस 'समय-करता है और पढ़ते हैं, यह अर्थ से जाना जाता है ।

ज़ानो भविष्यन्त्याश्च ॥ ५८ ॥

ज़ान अवबोधने इत्यस्य धातोर्भविष्यन्तीप्रयोगा भावशब्देभ्यः पूर्वे वा परे प्रयुक्ता वर्तमानकालबोधका भवन्ति । च शब्दात्केवलाः प्रयोगाश्चेति । करुन् ज़ानि । करणं जानाति । परुन् ज़ानि । पठनं जानाति । लेखुन् ज़ानन् । लेखनं जानन्ति । ज़ोनुन् जानन् । अर्जनं जानन्ति । च शब्दादन्यतोऽपि च । स्यठाह् ज़ानि । वहु जानाति । विद्या ज़ानि । विद्यां जानाति । इत्थमेवातीतप्रयोगा भविष्यदर्थे क्वचिद्व्यवह्रियन्ते । यथा । तमिस् ल्यूखुथ् सोनु नमस्कार् । तस्मै नो नमस्कारो लेख्यः । अत्र ल्यूखुथ् इति भूतकालप्रयोगो भविष्यदर्थे ।

'ज़ान' जानने में, इस धातु के भविष्यन्तीप्रयोग भावशब्दों से पूर्व वा परे प्रयुक्त वर्तमानकालबोधक होते हैं । 'च' शब्द से केवल प्रयोग । करुन् ज़ानि-करणं जानाति।करना जानता है । परुन् ज़ानि-पठनं जानाति-पढ़ना जानता है । लेखुन् ज़ानन्-लेखनं जानन्ति-लिखना जानते हैं । ज़ेनुन् जानन्-अर्जनं जानन्ति-कमाना जानते हैं । 'च' शब्द से अन्य से भी । स्यठाह् ज़ानि-वहु जानाति-बहुत जानता है । विद्या ज़ानि-विद्यां जानाति-विद्या जानता है । इसी तरह ही अतीत प्रयोग भविष्यद् अर्थ में कहीं व्यवहृत किए जाते हैं । जैसे-तमिस् ल्यूखुथ् सोनु नमस्कार्-तस्मै नो नमस्कारो लेख्यः-उसके लिए हमारा नमस्कार लिखना । यहां 'ल्यूखुथ्' यह भूतकाल प्रयोग भविष्यत् अर्थ में है ।

पाथो नित्यम् ॥ ५९ ॥

पाथ सद्भावे इत्यस्य भविष्यन्तीप्रयोगा नित्यं वतमानार्थे भवन्ति तस्य वर्तमानप्रयोगदर्शनाभावात् । पाथि । सन्नस्ति । पाथन् । सन्तः सन्ति । पाथख् । सन्नसि । पाथिव् । सन्तः स्थ । पाथ । सन्नस्मि । पाथव् । सन्तः स्मः । किं चास्य धातोरतीतप्रयोगादर्शनाच्चापूर्णभूतप्रयोगा अतीते भवन्ति । पाथिहे । (आसीत्) । पाथहान् । (आसन्) । पाथहाख । (आसीः) । पाथिहीव । (आस्त) । इत्यादि ।

तथा पाथि हेहय् इत्यादयश्च साधवो भवन्ति । तथा चास्य धातोः कृदन्त-स्वरूपाणि च न सेत्स्यन्तीति बोध्यम् ।

'पाथ' सद्भाव में, इसके भविष्यन्तीप्रयोग नित्य वर्तमान अर्थ में होते हैं, उसके वर्तमान प्रयोग न देखे जाने से । पाथि-सन्नस्ति-होता हुआ है । पाथन्-सन्तः सन्ति-होते हुए हैं । पाथख्-सन्नसि-तू होता हुआ है । पाथिव्-सन्तः स्थ-तुम होते हुए हो । पाथ-सन्नस्मि-होता हुआ हूँ । पाथव्-सन्तः स्मः-होते हुए हैं । और इस धातु के अतीत-प्रयोग न देखने से अपूर्णभूतप्रयोग अतीत में होते हैं । पाथिहे-आसीत्-था । पाथहान्-आसन्-थे । पाथहाख्-आसोः-तू था । पाथिहीव्-आस्त-तुम थे । इत्यादि । वैसे-पाथि हेहय्-इत्यादि साधु होते हैं । और वैसे इस धातु के कृदन्तस्वरूप सिद्ध नहीं होंगे, यह जान लेना चाहिए ।

इति शारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते आख्यात-प्रक्रियायां वर्तमानपादः प्रथमः ।। ८।१ ।।

अथाख्यातप्रक्रियायाम् ।। ८ ।।

भविष्यत्पादः ।। २ ।।

अनारब्धाक्रिया भविष्यत्कालः ।। १ ।।

वर्तमानासन्नोत्तरकालादुत्तरः सर्वः कालः भविष्यत्कालसंज्ञो भवति । तत्कालस्य सर्वाः क्रिया अनारब्धा एव भवन्ति ।

वर्तमान के नज़दीक उत्तरकाल से उत्तर सब काल भविष्यत्-काल नाम से पुकारे जाते हैं। उस काल की सभी क्रियायें अनारब्ध ही हुआ करती हैं।

विध्याशीर्भविष्यन्त्यपूर्णभूतार्थभेदाच्चतुर्विधः ।। २ ।।

स भविष्यत्कालो विधिः, आशीः, भविष्यन्ती, अपूर्णभूतार्था नाम क्रियातिपत्तिः, इति भेदतश्चतुष्प्रकारो भवति । क्रियातिपत्तेरत्रापूर्ण-भूतार्थकथनादतीतकालेऽपि भवति ।

वह भविष्यत्-काल विधि, आशी, भविष्यन्ती और अपूर्णभूतार्था नाम क्रियातिपत्ति, इस भेद से चार प्रकार का होता है। क्रियाति-पत्ति के यहां अपूर्णभूतार्थ कहने से अतीतकाल में भी होता है।

आसन्नदूराभ्यां विधिर्द्विविधः ।। ३ ।।

वर्तमानकालान्निकटकाल आसन्नविधिः दूरकालो दूरविधि-रिति द्विविधो भवति । तत्र वक्तुरुत्तमपुरुषस्य स्वस्मिन्विधि-निषेधाभावाच्चत्वार एव प्रथमपुरुषैकत्वानेकत्वमध्यमैकत्वानेकत्व-प्रत्ययाः प्रयुज्यन्ते ।

वर्तमानकाल से निकटकाल आसन्नविधि, दूरकाल दूरविधि; इस प्रकार दो भेद हुआ करते हैं। वहां वक्ता-उत्तमपुरुष के अपने में विधि-निषेध के न होने से चार ही प्रथमपुरुष के एकवचन-वहु-वचन, मध्यमपुरुष के एकवचन-वहुवचन प्रत्यय प्रयुक्त किए जाते हैं।

मुख्यगौणाभ्यां निकटविधिर्द्विधा ।। ४ ।।

अवश्यं करणीयाज्ञा मुख्यनिकटविधिः तदितरो गौणनिकटविधि-रिति द्विप्रकारो भवति ।

अवश्यं करणीयाज्ञा मुख्यनिकटविधि, उससे इतर गौण निकटविधि, दो प्रकार का होता है।

निकटविधौ इन् इन् हि इव् प्रत्ययाः ॥ ५ ॥

स्पष्टम्। करिन्। करोतु। करिन् तिम्। कुर्वन्तु। कर्। कुरु। करिव्। कुरुत। हि प्रत्ययस्य इकार उच्चारणार्थः। व्यञ्जनान्ताद्धलोपः (सू० ६) इति हकारस्य लोपः।

स्पष्ट है। करिन्-करोतु-वह करे। करिन् तिम्-कुर्वन्तु-वे करें। कर्-कुरु-तूं कर। करिव्-कुरुत-तुम करो।'हि'प्रत्यय का 'इकार' उच्चारणार्थ है। व्यञ्जनान्ताद्धलोपः (सू० ६) से 'हकार' का लोप।

व्यञ्जनान्ताद्धलोपः ॥ ६ ॥

व्यञ्जनान्ताद्धातोर्हिप्रत्ययहकारस्य लोपो भवति। कर्। कुरु। कर करणे मध्यमैकत्वे हि इकार उच्चारणार्थः अनेन हकार लोपः। व्यञ्जनान्तात्किम्। दिह्। देहि। निह्। हर्। दि दाने। निह् हरणे। हि प्रत्ययः। इकार उच्चारणार्थः।

व्यञ्जनान्त धातु से 'हि' प्रत्यय के 'हकार' का लोप होता है। कर्-कुरु-करो। कर-करने अर्थ में, मध्यमपुरुष के एकवचन में 'हि' इकार उच्चारणार्थ है, इससे 'हकार' का लोप। व्यञ्जनान्त से क्या ? दिह्-देहि-दो। निह्-हर्-हरण कर। 'दि'-दान अर्थ में, 'निह्' हरने अर्थ में। 'हि' प्रत्यय है। 'इकार' उच्चारणार्थ है।

ओदेदुपधाया उदीतौ ॥ ७ ॥

धातोरुपधाभूतस्य ओकारस्य एकारस्य च क्रमेण ऊकार-ईकारौ भवतः। रूज़िन्। तिष्ठतु। तूलिन्। तोलयतु। पूठिन्। पुष्यताम्। रोज़ स्थितौ। तोल। तुलने। पीठ। स्थूलीभवने। अनेन उपधाया ओकारस्य ऊकारः। नीरिन्। निर्गच्छत शींकिव्। शङ्कताम्। पीडिन्। निष्पीड्यताम्। नेर निर्गमने। शेंक शङ्कायाम्। पेड निर्यासे। अनेन उपधाया एकारस्य ईकारः।

धातु के उपधाभूत 'ओकार' और 'एकार' को क्रम से 'ऊकार' और 'ईकार' होते हैं। रूज़िन्-तिष्ठतु-ठहरो। तूलिन्-तोलयतु-तोलो। पूठिन्-पुष्यताम्-पुष्ट हो। 'रोज' स्थिति अर्थ में। 'तोल' तुलने अर्थ में। 'पीठ'–मोटे होने अर्थ में। इससे उपधा के 'ओकार' को 'उकार' होता है। नीरिन्-निर्गच्छतु-निकलो। शींकिव-शङ्कताम्-शङ्का करो।

पीडिन् निष्पी डयताम्-पीडन करो। नेर-निर्गमने-निकलने अर्थ में। शेंक-शङ्कायाम्-शङ्का अर्थ में। पेड-निर्यासे-निर्यास में। इस से उपधा के 'एकार' को 'ईकार' होता है।

न हौ ॥ ८ ॥

हि प्रत्यये परे उपधाया ओदेतोरूकारेकारौ न भवतः। रोज़्। तिष्ठ। तोल्। तोलय। नेर्। निर्गच्छ। शेंक्। शङ्कस्व। साधनं सुगमम्।

'हि' प्रत्यय परे रहते उपधा के 'ओ' और'ए'। से 'ऊ' और 'ए' नहीं होते हैं। रोज़्-तिष्ठ-ठहर। तोल्-तोलय-तोल। नेर्-निर्गच्छ-निकल। शेंक-शङ्का-शङ्का कर। साधन आसान है।

चरादीनामिन्प्रत्ययसंबन्धप्रत्ययैर्विधिः ॥ ९ ॥

चर अन्तः कोपे इत्यादीनां धातूनां प्रथमपुरुषस्य इन् प्रत्ययेन तच्छब्दादिसंबन्धे विधीयमाने सति सर्वप्रत्ययानां बोधो भवति स एवात्र विधिः। चरिनस्। चरिनख्। चरिनय्। चरिनव। एवं शेषाणामपि ज्ञेयम्।

'चर' भीतरी कोप में, इत्यादि धातुओं के प्रथम पुरुष के 'इन्' प्रत्यय से 'तत्' शब्दादि संबन्ध होने पर सभी प्रत्ययों का बोध होता है, वही यहां विधि है। चरिनस्, चरिनय्, चरिनव। इस तरह बाकी के भी जानना।

स्वरान्ताद्यागम इकारे ॥ १० ॥

स्वरान्ताद्धातोरिकाकारे परे यकारागमो भवति। दियिव्। दत्त। नियिव। हरत। दि दाने। नि हरणे। मध्यमानेकत्वे इव् प्रत्ययः अनेन यकारागमः।

स्वरान्त धातु से 'इकार'। परे 'यकार' का आगम होता है। दियिव्-दत्त-दो। नियिव्-हरत-हरो। दि-दाने-दान अर्थ में। नि-हरणे-हरण अर्थ में। मध्यमपुरुष के बहुवचन में 'इव्' प्रत्यय, इससे 'यकार' का आगम हुआ।

सर्वत्राकारागमो निदियिवर्जितात् ॥ ११ ॥

स्वरान्ताद्धातोः सर्वत्र सर्वासु विभक्तिषु अकारागमो भवति। नि हरणे। दि दाने। यि आगमने। एतान्वर्जयित्वा। ह्यह। क्रीणीहि। ख्यह्। खाद। च्यह्। पिब। हि क्रीणनग्रहणधारणषु। खि

खादने । च्चि पाने । मध्यमैकत्वे हि प्रत्ययः अनेनाकारागमः । इकारोऽसवर्णे योऽपरलोपः (सू. १।१०) इति यत्वम् । व्यञ्जनं परेण अंधेयम् (सू. १।३) । निदिर्यिर्वजितात्किम् । निह् । हर । दिह् । देहि । यिह् । एहि । साधितचरा एव ।

स्वरान्त धातु से सर्वत्र सब विभक्तियों में 'अकार' का आगम होता है । नि-हरणे-हरने अर्थ में । दि-दाने-दान अर्थ में । यि-आगमने-आने अर्थ में । इन्हें छोड़ कर । ह्यह-क्रीणोहि-खरीद । ख्यह्-खाद-खा । च्यह्-पिव-पी । हि-खरीदना, ग्रहण करना और धारण करने अर्थ में । खि-खादने-खाने में । चि-पाने-पीने में । मध्यमपुरुष के एकवचन में 'हि' प्रत्यय और इससे 'अकार' का आगम । इकारोऽसवर्णे योऽपरलोपः (सू. १।१०) से 'य' । व्यञ्जन को अपने से परे के साथ मिला देना चाहिए (सू. १।३) । निदियि, इन्हें छोड़ने से क्या । निह्-हर-हरण कर । दिह्-देहि-दो । यिह्-एहि-इधर आओ । साधन पहले हो चुका हुआ है ।

येर्व्वलादेशो वा ॥ १२ ॥

यि-आगमने इत्यस्य विधौ विषये व्वल आदेशो वा भवति । व्वलिन्-आयातु । व्वल-एहि । व्वलिव् । एत । साधनं पूर्ववत् ।

यि-आगमने-आने अर्थ में, इस की विधि वा विषय में 'व्वल' आदेश होता है । व्वलिन्-आयातु-आओ । व्वल-एहि-इधर आ । व्वलिव्-एत-तुम आओ । साधन पहिले की तरह ।

व्वब इनि यो वा ॥ १३ ॥

व्वब उत्पत्तौ इत्यस्य इन्प्रत्यये परे वकारस्य यकारो वा भवति । व्वयिन् । भवतु । पक्षे । व्वबिन् । एवमाशीर्यन्प्रत्ययेऽपि ज्ञेयः ।

व्वब-उत्पत्तौ-उत्पत्ति में, इस के 'इन्' प्रत्यय परे रहते 'वकार' को 'यकार' विकल्प से होता है । व्वयिन्-भवतु-हो । पक्ष में-व्वबिन् । इसी तरह आशीर्यन् प्रत्यय में भी जानना ।

गौणे प्रत्ययस्वरात्तः ॥ १४ ॥

गौणविधिरपि द्विविध एक उपेक्ष्याज्ञापनं द्वितीय आक्षेपतः कथनम् । तयोर्द्वयोरेव विध्योः प्रत्ययस्वरात्परस्तकारागमे भवति । करितन् । करोतु नाम । कुरितन् । कुर्वन्तु नाम । करितव् । कुरुत

नाम। कर करणे निकटविधौ इन् इन् हि एव प्रत्ययाः (सू. ५)। अनेन इकारात्परस्तकारः धातुस्वरस्य चाप्रसिद्धता विज्ञेया। खारितन्। आरोहयतु नाम। वालितन्। अवरोहयतु नाम। साधनं सुगमम्।

गौणविधि भी दो प्रकार की होती है—एक-उपेक्ष्याज्ञापन, दूसरा-आक्षेपतः कथन। उन दोनों विधियों में प्रत्ययस्वर से परे 'तकार' का आगम होता है। करितन-करोतु नाम-करिए। करितन्-करोत् नाम-करिए। करितन-कुर्वन्तु नाम-आप करो। करितव्-कुरुत नाम-तुम करो। कर-करने अर्थ में, निकटवि निकटविधि में 'इन् इन् हि एव प्रत्ययाः (सू० ५) इससे 'इकार' से परे 'तकार' और धातुधौ-स्वर को अप्रसिद्धता जाननी चाहिए। खारितन्-आरोहयतु नाम-चढ़िए। वालितन्-अवरोहयतु नाम-उतरिए। साधन सरल है।

हौ धातोरेव ॥ १५ ॥

हि प्रत्यये परे धातोरेव तकारागमो भवति। कर्त। कुरु नाम। दित। देहि नाम। कर करणे। दि दाने। हि प्रत्ययः व्यञ्जनान्ताद्धलोपः (सू० ५)। प्रत्ययलक्षणाद् (पा० १।१।६२)। अनेन कर् दि इत्याभ्यां परस्तकारागमः। कर्तन्। तं कुरु। करितोन्। तं कुरुत।

'हि' प्रत्यय परे रहते धातु से ही 'तकार' का आगम होता है। कर्त-कुरु नाम-कर। दित-देहि नाम-दे। कर-करणे-करने में। दि-दाने-दान में। 'हि' प्रत्यय-व्यञ्जनान्त होने से 'ह' का लोप (सू० ५)। प्रत्ययलक्षणाद् (पा० १।१।६२)। इससे 'कर्-दि' इन दोनों से परे 'तकार' का आगम होता है। कर्तन्-तं कुरु-उसे कर। करितोन्-तं कुरुत-उसे करो।

व्यञ्जनान्तात्संबन्धप्रत्ययादेरुकारः ॥ १६ ॥

व्यञ्जनान्तं धातुस्वरूपं मध्यमैकत्व एव भवति तस्मात्तच्छब्दादिसंबन्धप्रत्ययसंबन्धिन आदिस्वरस्य उकारो भवति। करुस्। तस्मै कुरु। करुख्। तेभ्यः कुरु। करुम्। मे कुरु। व्यञ्जनान्तात्किम्? दिस्। तस्मै देहि। निस्। तस्माद्धर। दि दाने। नि हरणे। हि प्रत्ययः। इकार उच्चारणार्थः। ततः दिह् स्वरूपात् अस् प्रत्ययः। प्रत्ययेषु हलोपः सर्वत्र (सू० ४।१३१) इति हलोपः। स्वरादल्लोपः (सू० ८।१।३९) इति अकारलोपः। एवं। कर्तस्। तस्मै कुरु। पर्तस्।

तस्मै पठ। अत्र तकारागमात्स्वरान्तत्वे सिद्धे प्रोक्तसूत्रावाप्तिर्न भवति।

व्यञ्जनान्त धातुस्वरूप मध्यमा के एकवचन में ही होता है, उससे 'तत्' शब्द से सम्बद्धप्रत्यय से सम्बद्ध आदि स्वर को 'उकार' होता है। करुस्-तस्मै कुरु-उसके लिए कर। करुख्-तेभ्यः कुरु-उनके लिए कर। करुम्-मे कुरु-मेरे कर। व्यञ्जनान्त से क्या? दिस्-तस्मै देहि-उसके लिए दे। निस्-तस्माद्धर-उस से हरण कर। दि दाने-दान अर्थ में। नि-हरणे-हरण अर्थ में। 'हि' प्रत्यय है। इकार उच्चारणार्थक है। इसके बाद 'दिह्' स्वरूप से 'अस्' प्रत्यय। प्रत्ययेषु हलोपः सर्वत्र (सू० ४।१३१) से 'ह्' का लोप। स्वरादल्लोपः (सू० ८।१।३९) से 'अकार' का लोप। इस तरह-कर्तस्-तस्मै कुरु-उस के लिए कर। पर्तस्-तस्मै पठ-उसके लिए पढ़। यहां 'तकार' के आगम से स्वर का अन्तत्व सिद्ध होने पर उक्त सूत्र की प्राप्ति नहीं होती है।

वकारात्सपूर्व ऊकारः ॥ १७ ॥

वकारात्परः संबन्धप्रत्ययादिस्वरः पूर्ववर्णेन सह ऊकारो भवति। कर्यूस्। कुरुत तस्मै। दिय्यूस्। तस्मै दत्त। करिव् दियिव् इति स्वरूपाभ्यामस् प्रत्ययः अनेन वकारेण सह अकारस्य ऊकारः यत्वम्।

'वकार' से परे संबन्धप्रत्ययादिस्वर पूर्ववर्ण के साथ 'ऊकार' होता है। कर्यूस्-कुरुत तस्मै-उसके लिए तुम करो। दिय्यूस्-तस्मै दत्त-उसके लिए दो। करिव्-दियिव्-इन स्वरूपों से 'अस्' प्रत्यय, इस वकार के साथ 'अकार्' को 'ऊकार' तथा 'य'।

तकारादोकारः ॥ १८ ॥

तकारात्परयोस्तयोर्वकारअकारयोरोकारो भवति। करितोन् तं कुरुत नाम। करितोस्। तस्य कुरुत नाम। करितोख्। तेषां कुरुत नाम। करितोम्। मे कुरुत नाम। साधनं पूर्ववत्।

'तकार' से परे उन दोनों 'वकार-अकार' में 'ओकार' होता है। करितोन्-तं कुरुत नाम-उसे तुम करो। करितोस्-तस्य कुरुत नाम-उस के तुम करो। करितोख्-तेषां कुरुत नाम-उनके करो। करितोम्-मे कुरुत नाम-मेरे तुम करो। साधन पहले की तरह।

मो निषेधार्थोऽत्रैव ॥ १६ ॥

निषेधार्थको मकारः अत्रैव विभक्तिविशेषे क्रियायाः पूर्वे वा परे प्रयोज्यो नान्यत्र। शेषे विभक्तिसमुदाये माशब्द आशङ्कार्थो भवति विध्याशिषोरेव निषेधार्थको भवतीति ज्ञेयम्। म करिन्। मा करोतु। म कर्। मा कुरु। म करिव्। मा कुरुत। साधनं सुगमम्। अत्रैव किम्। करान् छुन। न करोति। करुन् न। नाकरोत्। करिज़ि न। न कुर्यात्। करिज़्यन् न। तं न कुर्यात्। करिन। न करिष्यति।

निषेधार्थक 'मकार' यहीं विभक्तिविशेष में क्रिया से पूर्व वा परे प्रयुक्त करना चाहिए, अन्य किसी जगह नहीं। शेष विभक्ति-समुदाय में 'मा' शब्द आशङ्का के अर्थ में होता है और विधि तथा आशी अर्थ में ही निषेधार्थक होता है, यह समझना चाहिए। म करिन्-मा करोतु-मत कर। म कर्-मा कुरु-मत कर। म करिव्-मा कुरुत-मत करो। साधन सरल ही है। यहां ही क्या ? करान् छुन-न करोति-नहीं करता है। करुन् न-नाकरोत्-किया नहीं। करिज़ि न-न कुर्यात्-न करे। करिज़्यन् न-तं न कुर्यात्-उसे न करे। करि न-न करिष्यति-करेगा नहीं।

संबुद्धिगौणप्रत्यया मात्परा अपि ॥ २० ॥

लिङ्गप्रकरणोक्तोत्तमादिसंबोधनप्रत्यया गौणविधिप्रत्ययाश्च मकारात्पराः प्रयोज्याः। अपि शब्दात् गौणप्रत्ययः पूर्ववदप्यत्रापि प्रयोज्यः। अत एव निर्देशान्नकारात्परा अपि प्रयोज्याः। मा कर्। मा कुरु। मवा कर्। मा कुरु। मसा कर्-मा कुरु। एवं स्त्रीसंबोधनप्रत्ययाश्च। मत करितन्। मा करोतु नाम। मत कर्त। मा कुरु नाम। मत करितव्। मा कुरुत नाम। मत वा कर्त। मा कुरु नाम। मतसा कर्त। मा कुरु नाम। मता कर्त। मा कुरु नाम। इत्यादयः।

लिङ्गप्रकरण में कहे उत्तमादि संबोधन प्रत्यय और गौणविधि-प्रत्यय मकार से परे प्रयुक्त करने चाहिए। अपि शब्द से गौण प्रत्यय पहले की तरह यहां भी प्रयुक्त करना। 'अत एव' निर्देश से 'नकार' से परे भी प्रयुक्त करने चाहिए। माकर-मा कुरु-मत-कर। मवा कर्-मा कुरु-मत-कर। मसा कर्-मा कुरु-मत-कर। इस तरह स्त्री संबोधन प्रत्यय। मत करितन्-मा करोतु नाम-मत करे। मत

कर्त-मा कुरु नाम- तूं मत कर। मत करितव्-मा कुरुत नाम-तुम मत करो। मत वा कर्त-मा कुरु नाम-तूं मत कर। मतसा कर्त-मा कुरु नाम-तूं मत कर। मता कर्त-मा कुरु नाम-तूं मत कर। इत्यादि।

विधितद्वतिपत्तिभेदाद्दूरविधिर्द्विविधः ॥ २१ ॥

एक आगामिकाले कर्मप्रेरणम् अपरस्तस्य कर्मणः अनिष्पत्ति-कथनमिति दूरविधिर्द्विधा भवति।

एक आगामिकाल में कर्म प्रेरणा और दूसरा उस कर्म का अनिष्पत्तिकथन, इस प्रकार दूरविधि दो प्रकार की हुआ करती है।

दूरविधौ ज़िप्रत्ययः सर्वेषु ॥ २२ ॥

सर्वेषु वचनेषु 'ज़ि' प्रत्यय एक एव ज्ञेयः स च तच्छब्दादिकर्तृ-प्रयोगेण भिद्यते।

सभी वचनों में 'ज़ि' प्रत्यय एक ही जानना और वह 'तत्' शब्दादिकर्तृ प्रयोग से विदीर्ण हो जाता है।

तद्वतिपत्तौ हेपरः ॥ २३ ॥

हे शब्दः परो यस्मादेवंविधो 'ज़ि' प्रत्ययस्तदतिपत्तौ प्रत्ययो भवेत्। चरादीनां तु युष्मदि हेपर इति किन्त्वाक्षेपादतीतकालोऽपि भवतीति बोध्यम्।

हे शब्द है परे जिससे ऐसा 'ज़ि' प्रत्यय, उस को अतिपत्ति में प्रत्यय हो। चरादिओं के तो युष्मद् में 'हे पर' यह और आक्षेप से अतीतकाल भी होता है, यह जानना।

व्यञ्जनान्तादिचागमो ज़ौ ॥ २४ ॥

व्यञ्जनान्ताद्धातोर्ज़ि प्रत्यये परे इच् आगमो भवति, चकार उच्चारणार्थः। करिज़ि। कुर्यात्। कर करणं दूरविधौ ज़ि प्रत्ययः (सू. २२)। अनेन इच् चकारलोपः अयमेव प्रयोगः सर्वेषु वचनेषु विज्ञेयः। सुह करिज़ि। सः कुर्यात्। तिम् करिज़ि। ते कुर्युः। चह् करिज़ि। त्वं कुर्याः। त्वहि करिज़ि। यूयं कुर्यात। व्यञ्जनान्तात्किम्। दिज़ि। दद्यात्। ख्यज़ि। खादेत्। तदतिपत्तिप्रयोगाश्च यथा। करिज़िहे। कुर्वीत नाम।

व्यञ्जनान्त धातु से 'ज़ि' प्रत्यय परे रहते 'इच्' आगम होता है, चकार उच्चारणार्थ है। करिज़ि-कुर्यात्-करे। कर-करणे-करने में

दूरविधौ-दूरविधि में 'ज्ञि' प्रत्यय (सू० २२) इससे 'इच्' चकारलोप; यही प्रयोग सभी वचनों में जानना। सुह् करिज्ञि-सः कुर्यात्-वह करे। तिम् करिजि-ते कुर्युः-वे करें। चह् करिजि-त्वं कुर्याः तू करे। त्वहि करिज्ञि-यूयं कुर्यात-तुम सब करें। व्यञ्जनान्त से क्या। दिज्ञि-दद्यात्-दे।खज्ञि-खादेत्-खाए। उसके प्रतिपत्ति प्रयोग जैसे-करिज्ञि-हि-कुर्वीत नाम-करे।

नासमोर्लोपो जेः ॥२५॥

अस् अम् इत्येतयोः प्रत्यययोः स्वरादल्लोप (सू० ८।१।३९) इति प्राप्तो लोपो ज्ञि प्रत्ययात् न भवति। करिज्यम्। तस्य कुर्याः। असमोः किम्। करिज्ञिय्। ते कुर्यात्। जेः किम्। करिज्ञिहेम्। तस्य कुर्वीत नाम। अत्र अस् प्रत्ययस्य स्वरादल्लोप (सू० ८।१।३९) इत्यकारलोपः।

'अस्-अम्' इन दोनों प्रत्ययों में 'स्वरादल्लोपः (सू० ८।१।३९) से प्राप्त लोप 'ज्ञि' प्रत्यय से नहीं होता है। करिज्यम्-तस्य कुर्याः-उसके करे। असम का क्या? करिजिय्-ते कुर्यात्-वे करे। जि का क्या? करिज्ञिहेम्-तस्य कुर्वीत नाम-उस का करे। यहां 'अस्' प्रत्यय का 'स्वरादल्लोपः (सू० ८।१।३९) से 'अकार' का लोप।

आशिषि यन् यन् यख् इव् प्रत्ययाः ॥ २६ ॥

स्पष्टम्। तत्रास्या विभक्तेर्लोकेऽत्यल्पप्रसिद्धतया तत्स्वरूप-साधनसूत्राणि नाभिहितानि। परन्तु पूर्णभूते ये आदेशा वक्ष्यन्ते, तेऽत्रापि धीमद्भिरवधार्याः। येषां च धातूनां क्रिया लोके प्रचारितास्ति ते उदाहृतिद्वारा व्यक्तीक्रियन्ते। कर्यन्। क्रियात्। लश्यन्। जीव्यात्। रब्यन्-पच्यात्। जेब्यन्-जीयात्। आपूयन्-भूयात्। अत्रैव सकारान्तस्य शकारो दृश्यते। नान्तानां तु पूर्णभूतप्रक्रियया (८।३।७३)। सूत्रेण नकारस्य जकारः। लश्यनय्। ते जीव्यात्। पोष्यनय्। ते पर्याप्यात्। लस सम्यग्जीवने। पोश पर्याप्तनायाम्। शेषं पूर्ववत्। एवं। ब्वय्यन्। भूयात्। म ब्वय्यन्। मा भूयात्।

स्पष्ट है। वहां इस विभक्ति के लोक में अत्यल्प प्रसिद्ध होने से उस के स्वरूप को सिद्ध करने वाले सूत्र नहीं कहे गए हैं। परन्तु पूर्ण-

भूत होने पर जो जो आदेश कहे जाते हैं, वे यहां भी बुद्धिमान् पुरुषों को निश्चय कर लेना चाहिए और जिन धातुओं की क्रियालोक में प्रचारित है, वे उदाहरण द्वारा व्यक्त की जाती हैं। कर्यन-क्रियात्-करे। लश्यन्-जीव्यात्-जीता रहे। रञ्यन्-पच्याम्-पकावे। जेञ्यन्-जीयात्-जय प्राप्त करे। आश्यन्-भूयात्-होवे। यहां हो सकारान्त को 'शकार' देखा जाता है। 'नान्तानां तु पूर्णभूतप्रक्रियवत्' (८।३।७३) सूत्र से 'नकार' को ञकार। लश्यनय्-ते जीव्यात्-वे जिएं। पोष्यनय्-ते पर्याप्यात्-वे पर्याप्त होवें। लस-सम्यग्जीवने-अच्छी तरह जीवन में। पोष-पर्याप्ततायाम्-पर्याप्तता में। बाकी पहले की तरह। इस तरह-ब्वय्यन्-भूयात्-होवे। म ब्वय्यन्-मा भूयात्-मत होवे।

छावो यखि यो वा ॥ २७ ॥

छाव उपभोगे। इत्यस्य यख् प्रत्यये परे वकारस्य यकारो भवति वा विकल्पेन। छाय्यख्। निर्विश्याः। पक्षे। छाव्यख्। निर्विश्याः।

छाव-उपभोग में, इसके 'यख्' प्रत्यय परे रहते 'वकार' को 'यकार' विकल्प से होता है। छाय्यख्-निर्विश्याः-प्रवेश करना चाहिए। पक्ष में-छाव्यख्-निर्विश्याः-प्रवेश करना चाहिए।

भविष्यन्ती इ अन् अख् इव् अ अव प्रत्ययाः ॥ २८ ॥

सुगमम्। करि। करिष्यति। करन्। करिष्यन्ति। करख्। करिष्यसि। करिव्। करिष्यथ। कर। करिष्यामि। करव्। करिष्यामः।

सुगम है। करि-करिष्यति-करेगा। करन्-करिष्यन्ति-करेंगे। करख्-करिष्यसि-तू करेगा। करिव्-करिष्यथ-तुम करोगे। कर-करिष्यामि-मैं करूंगा। करव्-करिष्यामः-हम करेंगे।

स्वरान्तानामुत्तमे मागमः ॥ २९ ॥

स्वरान्तानां धातूनामुत्तमपुरुषे मकारागमो भवति। दिम। दास्यामि। दिमव्। दास्यामः। दि दाने उत्तमपुरुषैकत्वानेकत्वयोः अ अव् प्रत्ययौ अनेन मागमः। उत्तमे किम्। दियि। दास्यति। दिन्। दास्यन्ति। दिख्। दास्यसि। दियिव्। दास्यथ। दि दाने। इ अन् अख् इव् प्रत्ययाः। स्वरान्ताद्यागम इकारे (सू० १०) इत्यनेन इकारागमः। अपरत्र स्वरादल्लोपः (सू० ८।१।३९) इत्यकारलोपः।

तच्छब्दादिसंबन्धप्रयोगाश्च यथा। कर्यंम्। तस्य करिष्यति। (अस्यां विभक्तौ प्रथमपुरुषकर्तृसंबन्धार्थे स्वरादल्लोपः (८।१।३९) कार्य-मनित्यं ज्ञेयम्)। करनस्। करिष्यन्ति तस्य। कर्यूस्। करिष्यथ तस्य। करस्। करिष्यामि तस्य। करन्। करिष्यामि तम्। करोस्। करिष्यामस्तस्य। करोन्। करिष्यामस्तम्। पूर्वं साधितानि। चरादीनां तु विधिवदत्रापि विधिर्ज्ञेयः।

स्वरान्त धातुओं के उत्तमपुरुष में 'मकार' का आगम होता है। दिम-दास्यामि-दूंगा। दिमव्-दास्यामः-हम देंगे। 'दि' दान अर्थ में, उत्तमपुरुष के एकवचन और वहुवचन में 'अ-अव्' प्रत्यय, इससे 'म' का आगम। उत्तमपुरुष में क्या। दियि-दास्यति-देगा। दिन्-दास्यन्ति-देंगे। दिख्-दास्यसि-तूं देगा। दियिव्-दास्यथ-तुम दोगे। 'दि' दान अर्थ में। इ अन् अख् इव् प्रत्यय। स्वरान्ताद्यागम इकारे (सू० १०) इस से 'इकार' का आगम। दूसरी जगह स्वराद-ल्लोपः (सू० ८।१।३९) से 'अकार' का लोप। 'तत्' शब्दादि से सम्बद्ध प्रयोग जैसे-कर्यस्-तस्य करिष्यति-उसका करेगा। इस विभक्ति में प्रथमपुरुषकर्ता के संबन्धार्थ में स्वरादल्लोपः (सू० ८।१।३९) कार्य अनित्य जानना। करनस्-करिष्यन्ति तस्य-उसका करेंगे। करहन्-करिष्यसि तम्-तूं उसे करेगा। करहस्-करिष्यसि तस्य-तूं उसका करेगा। कर्यूस्-करिष्यथ तस्य-तुम उसका करोगे। करस्-करिष्यामि तस्य-मैं उसका करूंगा। करन्-करिष्यामि तम्-उसे मैं करूंगा। करोस्-करिष्यामस्तस्य-उसका हम करेंगे। करोन्-करिष्यामस्तम्-हम उसे करेंगे। पहले साधित हैं। चरादि की तो विधिवत् यहां भी विधि जानना।

अपराः प्रत्ययाः संप्रश्ने ॥ ३० ॥

ते भविष्यन्तीप्रत्यया अपरा अकारः परो येभ्यस्तथा संप्रश्ने प्रत्ययाः स्युः।

वे भविष्यन्ती प्रत्यय 'अकार' परे होने पर संप्रश्न में होते हैं।

प्रथमोत्तमैकत्वे दीर्घः ॥ ३१ ॥

तस्य अकारस्य प्रथमैकवचने उत्तमैकवचने च दीर्घो भवति। ते प्रत्ययाश्च यथा। या अन अख इव आ अव भवन्ति। उदाहरणानि।

कर्या । किं कुर्यात् । करन-किं कुर्युः । करख्-किं कुर्याः । करिव-किं कुर्यात । करा-कुर्याम् किं । करव् । किं कुर्याम । साधितचराण्येव ।

उस 'अकार' का प्रथम-एकवचन और उत्तम-एकवचन में दीर्घ होता है । वे प्रत्यय जैसे—या, अन, अख, इव, आ, अव होते है। उदाहरण—कर्या-किं कुर्यात्-क्या करे। करन-किं कुर्युः-क्या करें। करख्-किं कुर्याः- तू क्या करे। करिव-किं कुर्यात-तुम क्या करें। करा- किं कुर्याम्-मैं क्या करूं। करव्-किं कुर्याम-हम क्या करें । साधित ही हैं ।

क्रियातिपत्तिः इहे अहान् अहाख् इहीव अहा अहाव् प्रत्ययाः ॥३२॥

स्पष्टम् । करिहे । अकरिष्यत् । करहान् । अकरिष्यन् । करहाख् । अकरिष्यः । करिहीव-अकरिष्यत । करहा-अकरिष्यम् । करहाव्-अकरिष्याम । स्वरान्तधातूनां यथा । च्ययिहे । अपास्यत् । च्यहान् । अपास्यन् । च्यहाख् । अपास्यः । च्ययिहीव् । अपास्यत । च्यमहा । अपास्यम् । च्यमहाव् । अपास्याम । चि पाने स्वरान्ताद्यागम इकारे (सू० १०) इति यकारागमः । सर्वत्राकारागमो निदियिवर्जितात् (सू० ११) इति धातोरकारागमः । स्वरादल्लोपः (सू० ८।१।३६) इत्यकारस्य लोपः । स्वरान्तानामुत्तमे मागमः (सू. २६) इति मकारागमः । सर्वत्र यत्वम् ।

स्पष्ट है । करिहे-अकरिष्यत्-करेगा । करहान्-अकरिष्यन्-करेंगे। करहाख्-अकरिष्यः-तू करेगा । करिहीव्-अकरिष्यत-तुम करोगे। करहा-अकरिष्यम्-मैं करूंगा । करहाव्-अकरिष्याम-हम करेंगे । स्वरान्त धातुओं के जैसे—च्ययिहे-अपास्यत्-पिएगा । च्यहान्-अपास्यन्-पिएंगे । च्यहाख्-अपास्यः-तूं पिएगा । च्ययिहीव्-अपास्यत-तुम पिओगे । च्यमहा-अपास्यम्-मैं पिऊंगा । च्यमहाव्-अपास्याम-हम पिएंगे । 'चि' पीने में 'स्वरान्ताद्यागम इकारे (सू. १०) इस से 'यकार' का आगम । सर्वत्राकारागमो निदियिवर्जितात् (सू. ११) से धातु को 'अकार' का आगम । स्वरादल्लोपः (सू. ८।१।३६) से 'अकार' का लोप । स्वरान्तानामुत्तमे मागमः (सू. २६) से 'मकार' का आगम । सब जगह 'य' ।

कौतुके सर्वे प्रत्यया हयुपराः ॥ ३३ ॥

कौतुकेन क्रियातिपत्तावभिहितायां सत्यां सर्वे प्रोक्तप्रत्ययास्तच्छब्दादिसंबन्धप्रत्ययाश्च हय् परा हयुशब्दः परो येभ्यस्तथा प्रयोज्याः ।

करिहे इय् । चेदकरिष्यत् । करहान् हय् । चेदकरिष्यन् । करिहेस् हय् । चेत्तथाकरिष्यत् । करहानस् इय् । चेत्तथाकरिष्यन् ।

कौतुक से क्रियातिपत्ति में कहे जाने पर सभी उक्त प्रत्यय और 'तत्' शब्दादि से सम्बद्ध प्रत्यय 'हय्' शब्द परे होने पर वैसे प्रयुक्त करने चाहिए । करिहे इय्-चेदकरिष्यत्-यदि करेगा । करहान् हय्-चेदकरिष्यन्-यदि करेंगे । करिहेस् हय्-चेत्तथाकरिष्यत्-यदि वैसा करेगा । करहानस् इय्-चेत्तथाकरिष्यन्-यदि वैसा करेंगे ।

आक्षेपेऽपि नय्पराः ॥ ३४ ॥

आक्षेपेण क्रियातिपत्तावभिहितायां सत्यां ते प्रत्यया नय्परा भवन्ति । अपिशब्दाद्धेतुमद्भावेऽपि । करिहे नय् । चेन्नाकरिष्यत् । वा । खलु नाकरिष्यत् । करहान् नय् । चेन्नाकरिष्यन् ।

आक्षेप से क्रियातिपत्ति में कहे जाने पर वे प्रत्यय 'नय्' हैं परे जिन से, ऐसे होते हैं । अपिशब्द से हेतुमद्भाव में भी । करिहे नय्-चेन्नाकरिष्यत्-यदि न करेगा । वा-खलु नाकरिष्यत्-नहीं करेगा । करहान् नय्-चेन्नाकरिष्यन्-यदि न करेंगे ।

कर्तुः परौ वा ॥ ३५ ॥

स हय् प्रत्ययः नय् प्रत्ययश्च कर्तुः परौ वा भवतः । सुहय् करिहे । स चेदकरिष्यत् । तिम् हय् करान् । ते चेदकरिष्यन् । सुनय् करिहे । स चेन्न कुर्यात् । तिम् नय् करहान् । ते चेन्न कुर्युः । सुय्-करिहे । इति निश्चयप्रत्ययेन स्वरूपं विवेच्यम् । अत्र प्रत्ययेषु हलोपः सर्वत्र (सू० ४।१३१) इति सुह् शब्दहकारस्य लोपः । शेषं साधनं पूर्ववत् । चरादीनां तु प्रोक्तवद्बोध्यम् ।

वह 'हय्' प्रत्यय और 'नय्' प्रत्यय कर्ता से परे होते हैं । सुहय्-करिहे-स चेदकरिष्यत्-वह यदि करेगा । तिम् हय् करान्-ते चेदकरिष्यन्-वे यदि करेंगे । सुनय् करिहे-स चेन्न कुर्यात्-वह यदि न करे । तिम् नय् करहान्-ते चेन्न कुर्युः-वे यदि न करें । सुय् करिहे । यहां निश्चय प्रत्यय से स्वरूप की विवेचना करनी चाहिए । यहां प्रत्ययों में हलोपः सर्वत्र (सू० ४।१३१) से 'सुह्' शब्द के 'हकार' का लोप । बाकी साधन पहले की तरह । चरादि के तो कहे की तरह जानना ।

इति शरदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते
आख्यातप्रक्रियायां भविष्यत्पादो द्वितीयः ॥ ८।२ ॥

अथाख्यातप्रक्रियायाम् ॥ ८ ॥

समापितक्रियाकालो भूतकालः ॥ १ ॥

स्पष्टम् । समाप्तक्रियाकाल को 'भूतकाल' कहते हैं ।

भूतसामान्यपूर्णापूर्णभेदाच्चतुर्विधः ॥ २ ॥

सोऽतीतकालः भूतसामान्यभूतपूर्णभूत-अपूर्णभूतभेदैश्चतुष्प्रकारो विज्ञेयः ।

वह अतीत काल भूतसामान्य, भूतपूर्णभूत, भूतअपूर्ण और भूत भेदों से चार प्रकार का जानना ।

भावकर्मिणां भूते उन् उख् उथ् उव उम् उ प्रत्ययाः ॥ ३ ॥

भावधातूनां येषां धातुपाठे अतीतप्रयोगा भावे पठिताः । भावप्रयोगस्तु यत्र तृतीया कर्तृस्थाने स्यात् । कर्मिणां धातूनां च येषां धातुपाठे अतीतकालप्रयोगाः कर्मणि अभिहिताः । कर्मप्रयोगस्तु यत्र तृतीया कर्तृस्थाने प्रथमा कर्मस्थाने स्यात् । तेषामुभयेषां धातूनां भूते उन् आदि प्रत्यया बोध्याः । अत्र शब्दशास्त्रे भावकर्मिणां धातूनामतीतकाले कर्तृप्रयोगाभावः । अकर्मकाणां तु कर्मप्रत्ययाभावः । कर्तृप्रयोगस्तु यत्र प्रथमा कर्तृस्थाने स्यादिति । भावे यथा । असुन् । अहस्यत । नचुन् । अनृत्यत । चसुन् । व्यहस्यत । अस हसने । नच नर्तने चस अतिहासे । अनेन उन् । कर्मणि यथा । करुन् । तेन तया वा कृतम् । करुख् । तैस्ताभिर्वा कृतम् । करुथ् । त्वया कृतम् । करुव । युष्माभिः कृतम् । करुम् । मया कृतम् । करु । अस्माभिःकृतम् । कर करणे अनेन उन् आदिप्रत्ययाः ।

जिन भावधातुओं के धातुपाठ में अतीत प्रयोग भाव में पढ़े गए हैं । भावप्रयोग तो यहां तृतीया कर्ता के स्थान में हो और जिन कर्मिधातुओं के धातुपाठ में अतीतकाल प्रयोग कर्म में कहे गए हैं । कर्मप्रयोग तो यहां तृतीया कर्ता के स्थान में, प्रथमा कर्मस्थान में हो । उन दोनों धातुओं के भूत में 'उन्' आदि प्रत्यय जानने । यहां शब्दशास्त्र में भावकर्मिधातुओं के अतीतकाल में कर्तृप्रयोग का अभाव है । अकर्मकों के तो कर्म प्रत्यय का अभाव । कर्तृ प्रयोग तो यहां प्रथमा कर्तृस्थान में हो । भाव में जैसे—असुन्-अहस्यत-हंसा

गया। नचुन्-अनृत्यत-नाचा गया। चसुन्-व्यहस्यत-अति हंसा गया। असि-हसने में। नच-नाचने में। चस-अतिहास में। इससे 'उन्'। कर्म में जैसे—करुन्-तेन तया वा कृतम्-उस (पुरुष) ने वा उस (स्त्री) ने किया। करुख्-तैस्ताभिर्वा कृतम्-उन (पुरुषों) ने वा उन (स्त्रियों) ने किया। करुथ्-त्वया कृतम्- तूं ने किया। करुव-युष्माभिः कृतम्-तुमने किया। करुम्-मया कृतम्-मैंने किया। करु-अस्माभिः कृतम्-हमने किया। कर-करने में, इससे 'उन्' आदि प्रत्यय।

कर्मणि पुंवहुत्वे इदाद्यस्वरस्य ॥ ४ ॥

कर्मिणां धातूनां पुंल्लिङ्गस्य वहुवचने कर्मणि सति सर्वेषां प्रत्ययानामादिस्वरस्य इकारो भवति। लीखिन्। तेन अलिख्यन्त। लीखिख्। तैर्लिखिताः पुं०। लीखिथ्। त्वया लिखिताः पुं०। लीखिव। युष्माभिर्लिखिताः। लीखिम्। मया लिखिताः पुं०। लीखि। अस्माभिर्लिखिताः। लेख लेखने। भावकर्मिणां भूत (सू० ३) इति उन् आदिप्रत्ययाः। अनेनादिस्वरस्य इकारः। पुंस्येकारस्य यूदीतौ (सू०२१) इत्यनेन सूत्रेण एकारस्य ईकारः।

कर्मि धातुओं के पुंल्लिङ्ग के वहुवचन कर्म में होने पर सभी प्रत्ययों के आदि स्वर को 'इकार' होता है। लीखिन्-तेन अलिख्यन्त-उससे लिखे गयें। लीखिख्-तैर्लिखिताः पुं०-उन से लिखे गये। लीखिथ्-त्वया लिखिताः पुं०-तुझ से लिखो गयो। लीखिव-युष्माभिर्लिखिताः-तुम से लिये गये। लीखिम्-मया लिखिताः पु०-मुझ से लिखे गये। लीखि-अस्माभिर्लिखिताः-हम से लिखे गये। लेख-लिखने अर्थ में। 'भावकर्मिणां भूते (सू० ३) से उन् आदिप्रत्यय। इससे आदि स्वर को 'इकार', पुंस्येकारस्य यूदीतौ (सू. २१) इस सूत्र से 'एकार' को ईकार।

स्त्रियां यत् ॥ ५ ॥

सकर्मकाणां धातूनां स्त्रीलिङ्गस्य वहुत्वे कर्मणि सति प्रत्ययादिस्वरस्य यकारो भवति। कर्यन्। तेन ताः कृताः। कर्यख्। तैस्ताः कृताः। लेछ्यन्। तेन ताः लिखिताः। रछ्यन्। तेन ता रक्षिताः। कर करणे। लेख लेखने। रछ रक्षायाम्। उन उख् प्रत्ययौ अनेन उकारस्य यत्वम्। स्त्रियामीदेतौ सर्वत्र (सू० २३) इति उपधाया एकारः। कवर्गस्यैकत्वेऽपि (सू० ७१) इत्यनेन लेखः खकारस्य छकारः।

सकर्मक धातुओं के स्त्रीलिङ्ग के वहुवचन कम में प्रत्ययादि स्वर को 'यकार' होता है। कर्यन्-तेन ताः कृताः-उसने वे कीं। कर्यख्-तैस्ताः कृताः-उन्होंने वे कीं। लेछ्यन्-तेन ता लिखिताः-उसने वे लिखीं। रछ्यन्-तेन ताः रक्षिताः-उसने उनकी रक्षा की। कर-करने में। लेख-लिखने में। रछ-रक्षा में। उन्-उख् प्रत्यय। इससे 'उकार' को 'य'। स्त्रियामीदेतौ सर्वत्र (सू० २३) से उपधा को 'एकार'। कवर्गस्यैकत्वेऽपि (सू० ७१) इस से लेख 'खकार' को छकार।

इकारान्तादेकत्वेऽपि ॥ ६ ॥

इकारान्ताद्धातोरेकत्वे कर्मणि च प्रत्ययादिस्वरस्य यकारो भवति। ख्ययन्। तेन सा भुक्ता। च्ययन्। तेन सा पीता। नियन्। तेन सा नीता। खि खादने। चि पाने। नि हरणे। उन् प्रत्ययः, अनेनोकारस्य यत्वम्। सर्वत्राकारागमो निदियिवर्जितात् (सू० ८।२।११) इति सूत्रेण प्रथमयोः अकारागमः।

इकारान्त धातु से एकवचन कर्म में प्रत्ययादि स्वर को 'यकार' होता है। ख्ययन्-तेन सा भुक्ता-उसने वह खाई। च्ययन्-तेन सा पीता-उस ने वह पी। नियन्-तेन सा नीता-उसने वह ली। खि-खाने में। चि-पीने में। नि-हरण में। उन् प्रत्यय, इस से 'उकार' को 'य'। सर्वत्राकारागमो निदियिवर्जितात् (सू० ८।२।११) इस सूत्र से प्रथम दोनों में 'अकार' का आगम।

ह्दिोरत् ॥ ७ ॥

हिग्रहणक्रीणनधारणेषु। दि दाने। इत्यनयोः स्त्रीवहुत्वे कर्मणि सति आदिस्वरस्य अकारो भवति। चानुकृष्टं नानुवर्तत इति एकत्वे कर्मणि न ज्ञेयः। ह्यचन्। तेन ता धृताः। दिचन्। तेन ताः दत्ताः। उन् प्रत्ययः प्रथमस्य सर्वत्राकारागमो निदियिवर्जितात् (सू० ८।२।११) इत्यकारागमः। ह्दिोस्तकारागमः (सू० ३२) इति तकारागमः। अनेन प्रत्ययादिस्वरस्य अकारः। तवर्गस्याप्रसिद्ध (सू० ७२) इत्यप्रसिद्धचकारादेशः। ह्दिोः किम्। ख्ययन्। सा भुक्ता। च्ययन्। सा पीता। नियन्। सा नीता। पूर्वं साधितान्येव।

'हि' ग्रहण करने, खरीदने और धारण करने अर्थ में। दि-दान करने अर्थ में। इन दोनों के स्त्रीलिङ्ग-वहुवचन कर्म में होने पर

आदि स्वर को 'अकार' होता है। 'चानुकृष्टं नानुवर्तते' के अनुसार एकवचन कर्म में नहीं जानना। ध्रचन्-तेन ता धृता:-उसने वे धारण कीं। दिचन्-तेन ताः दत्ताः-उसने वे दीं। उन् प्रत्ययः प्रथमस्य सर्वत्राकारागमो निर्दियिर्वर्जितात् (सू० ८।२।११) से 'अकार' का आगम। हिद्योस्तकारागमः (सू० ३२) से 'तकार' का आगम। इस से प्रत्ययादि स्वर को अकार। तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) से अप्रसिद्ध चकार आदेश। हि-द्यु का क्या ? ख्ययन्-सा भुक्ता-वह खाई गई। च्ययन्-सा पीता-वह पी गई। नियन्-सा नीता-वह ली गई। पहले सिद्ध किए जा चुके हैं।

एकत्वे ऊमात्रादेशः ॥ ८ ॥

सकर्मकाणां धातूनां स्त्रीलिङ्गस्यैकत्वे कर्मणि सति प्रत्ययादि-स्वरस्य ऊमात्रादेशो भवति ऊमात्रान्तत्वे सिद्धे पूर्वोक्तलिङ्गप्रकरण-प[1]रिभाषया पूर्ववर्णस्वरस्याप्रसिद्धतावधार्या । करून्। सा कृता। मारूथ्। त्वया सा हता। खारूम्। मया सा रोहिता। कर करणे। मार मारणे। खार आरोहणे। उन् उथ् उम् प्रत्ययाः। अनेनादि-स्वरस्य ऊमात्रादेशः।

सकर्मक धातुओं के स्त्रीलिङ्ग के एकवचन कर्म में होने पर प्रत्ययादिस्वर को 'ऊ' मात्र आदेश होता है। ऊमात्रान्तत्व सिद्ध होने पर पूर्वोक्त लिङ्गप्रकरण की परिभाषा से पूर्व वर्णस्वर को अप्रसिद्धता जानना। करून्-सा कृता- वह की। मारूथ्-त्वया सा हता-तूने वह मारी। खारूम्-मया सारोहिता-मैंने वह चढ़ी। कर-करने अर्थ में। मार-मारने अर्थ में। खार-चढ़ने अर्थ में। उन् उथ् उम् प्रत्यय। इससे आदि स्वर को 'ऊ' मात्र आदेश।

च़ुवमोरवयोर्नित्यम् ॥ ९ ॥

च़ुव कलहे। मोरव पीडासहने। इत्यनयोरेकत्वे कर्मणि नित्यं प्रत्ययादिस्वरस्य ऊमात्रादेशः स्यात्। तयोः पुंलिङ्गकर्माभाव-त्वान्नित्यपदग्रहणम्। च़ुवून्। तेन युद्धम्। मोरवून्। सोढा। एकत्वे किम्। च़ुव्यन्। युद्धाः। मोरव्यन्। सोढाः। भावकर्मिणाम् (सू०

---

1. (ऊदन्तत्वेसिद्धे पूर्वस्वरस्याख्याततता ज्ञेयेति २।१।७ सूत्रे द्रष्टव्यम्।)

३) इति उन् । स्त्रियां यत् (सू० ५) इति उकारस्य यकारः ।

चुव-कलह अर्थ में । मोरव-पीडा सहन करने अर्थ में । इन दोनों में एकवचन कर्म में नित्य प्रत्ययादिस्वर को 'ऊ' मात्र आदेश होता है । उन दोनों में पुंल्लिङ्गकर्माभावत्व से नित्यपदग्रहण है । चुवून्-तेन युद्धम्-उसने युद्ध किया । मोरवून्-सोढाः-सहन कीं । एकत्व में क्या । चुव्यन्-युद्धाः-युद्ध (बहुत) । मोरव्यन्-सोढाः-सहन कीं । भावकर्मिणाम् (सू० ३) से उन् । स्त्रियां यत् (सू० ५) से 'उकार' को 'यकार' ।

पुंकर्तृप्रत्ययोकारस्य स्त्रियां ॥ १० ॥

पुंल्लिङ्गस्य यः कर्तृसंबन्धी उकारस्तस्य स्त्रीलिङ्गविषये ऊमात्रादेशः स्यात् । वोतु । प्राप्तः । वाचू । प्राप्ता ।

पुंल्लिङ्ग का जो कर्तृसंबन्धी 'उकार' है, उसे स्त्रीलिङ्ग विषय में 'ऊ' मात्र आदेश होता है । वोतु-प्राप्तः-पाया । वाचू-प्राप्ता-पाई ।

इकारस्य यत् ॥ ११ ॥

पुंल्लिङ्गस्य यः कर्तृसंबन्धी इकारस्तस्य यकारो भवति स्त्रीलिङ्गविषये । थकि । श्रान्तास्ते । थच्य । श्रान्तास्ताः ।

पुंल्लिङ्ग का जो कर्तृसंबन्धी 'इकार' है, उसे स्त्रीलिङ्गविषय में 'यकार' होता है । थकि-श्रान्तास्ते-वे थके । थच्य-श्रान्तास्ताः-वे थकीं ।

अप्रसिद्धचवर्गादकारः ॥ १२ ॥

अप्रसिद्धचवर्गात्परस्य स्त्रीलिङ्गकर्तृसंबन्धिनो यकारस्य अकारो भवति । वाच । प्राप्तास्ताः । [1]खछ आरूढास्ताः । दज़-दग्धास्ताः ।

अप्रसिद्ध चवर्ग से परे स्त्रीलिङ्गकर्तृसंबन्धी 'यकार' को 'अकार' होता है । वाच-प्राप्तास्ताः-वे प्राप्त हुईं । खछ-आरूढास्ताः-वे सवार हुईं । दज़-दग्धास्ताः-वे जलीं ।

सकाराच्च ॥ १३ ॥

सकारात्परस्य प्रत्यययकारस्य अकारो भवति । आस । आसत्ताः । वस । निवसितास्ताः । लोस । श्रान्तास्ताः । पक्षे । लोछ् ।

---

१. खछ इति छकारस्थाने खच इति चकारेणोच्चार्यते ।

'सकार' से परे प्रत्यय 'यकार' को 'अकार' होता है। आस-आसन्‌ ता:-वे थीं। वस-निवसितास्ता:-वे रहीं। लोस-श्रान्तास्ता:-वे थकीं। पक्ष में-लोछ्।

सामान्यभूते ओन् ओख् ओथ् ओव् ओम् ओव् प्रत्ययाः पुंसि ।। १४ ।।

भावकर्मिणां धातूनां सामान्यभूते ओन् आदिप्रत्ययाः पुंल्लिङ्गैकत्वे कर्मणि बोध्याः। कर्योन्। तेनाकारि। कर्योख्। तैरकारि। कर्योथ्। त्वयाकारि। कर्योव। युष्माभिरकारि। कर्योम्। मयाकारि। कर्योव्। अस्माभिरकारि। कर करणे सामान्यभूते ओन् आदि-प्रत्ययाः। यागमः सर्वेषु सामान्यपूर्णेषु च (सू० ४६) इति यकारागमः।

भावकर्मिधातुओं के सामान्यभूत होने पर 'ओन्' आदि प्रत्यय पुंल्लिङ्ग एकवचन कर्म में जानने। कर्योन्-तेनाकारि-उसने किया। कर्योख्-तैरकारि-उन्होंने किया। कर्योथ्-त्वयाकारि- तूने किया। कर्योव-युष्माभिरकारि-तुमने किया। कर्योम्-मयाकारि-मैंने किया। कर्योव्-अस्माभिरकारि-हमने किया। कर-करने अर्थ में सामान्य-भूत में ओन् आदि प्रत्यय। यागमः सर्वेषु सामान्यपूर्णेषु च (सू० ४६) से 'यकार' का आगम।

बहुत्वे एकारः ।। १५ ।।

पुंल्लिङ्गस्य बहुत्वे कर्मणि सति प्रत्ययादिस्वरस्य एकारो भवति। कर्येन। तेनाकृषत। कर्येख्। तैरकृषत। कर्येथ्। त्वयाकृषत। कर्येव। युष्माभिरकृषत। कर्येम्। मयाकृषत। कर्येय्। अस्माभिरकृषत। साधनं पूर्ववत्। अनेन प्रत्ययोकारस्य एकारः।

पुंल्लिङ्ग के बहुवचन कर्म में होने पर प्रत्ययादि स्वर को 'एकार' होता है। कर्येन्-तेनाकृषत-उसने किया। कर्येख्-तैरकृषत-उन्होंने किया। कर्येथ्-त्वयाकृषत-तूं ने किया। कर्येव-युष्माभिरकृषत-तुमने किया। कर्येम्-मयाकृषत-मैंने किया। कर्येय्-अस्माभिरकृषत-हम ने किया। साधन पहले की तरह। इस से प्रत्यय 'ओकार' को 'एकार' होता है।

स्त्रियामेयादेशः सर्वत्र ।। १६ ।।

सर्वत्र सामान्यपूर्णभूते एकत्वबहुत्वयोः कर्मणि च प्रत्ययादिस्वरस्य एय आदेशो भवति स्त्रीलिङ्गे एव । कर्येयन् । तेन साकारि । कर्येयन् । तेन ता अकृषत । कर्येयख् । तैः साकारि । कर्येयख् । तैस्ता अकृषत । कर करणे । ओन् ओख् प्रत्ययौ । अनेन ओकारस्य एयादेशः । यागमः सर्वेषु सामान्यपूर्णेषु च (सू० ४६) इति यागमः ।

सब जगह सामान्यपूर्णभूत में एकवचन और बहुवचन में तथा कर्म में प्रत्ययादि स्वर को स्त्रीलिङ्ग में ही 'एय' आदेश होता है । कर्येयन्-तेन साकारि-उसने वह की । कर्येयन्-तेन ता अकृषत-उसने उन्हें की । कर्येयख्-तैः साकारि-उन्होंने वह की । कर्येयख्-तैस्ता अकृषत-उन्होंने उन्हें की । कर-करने अर्थ में । ओन्-ओख् प्रत्यय । इससे 'ओकार' को 'एय' आदेश । यागमः सर्वेषु सामान्यपूर्णेषु च (सू० ४६) से 'य' आगम ।

अप्रसिद्धचवर्गादायः ।। १७ ।।

स्त्रीलिङ्गस्य सर्वत्र सामान्यपूर्णभूते एकत्वबहुत्वयोः कर्मणि च अप्रसिद्धचवर्गात्परस्य प्रत्ययादिस्वरस्य आय आदेशो भवति । ह्यचायन् । सा प्रत्यग्राहितेन । दिचायन् । सा तेनादायि । हिद्योस्तकारागमः (सू० ३२) हेरकारागमः (८।२।११) सूत्रेण 'तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) इति चत्वम् । अनेन आयादेशः । मचायिस् । अस्य नित्यं संबन्धप्रत्ययत्वात् तस्यैवादिस्वरस्य आयादेशः । तत्रालुप्तयकारेभ्यः कर्तृधातुभ्यः (४९ सूत्रस्थेभ्यः) आयादेशो विकल्पेन विज्ञातव्यः । थोचाय । वा । थोचेय । शुद्धीबभूव सा । तेजाय । वा । तेजेय । तीक्ष्णीबभूव सा । वावजाय । वा । वावजेय (रुरुचे सा) । इत्यादि । खोचाय । बिभाय सा । पचाय । प्रतीयाय । रोचाय । रुरुचे सा । व्वछाय । उत्तस्थौ सा । वछाय । अवरुरोह सा । खछाय । आरुरोह सा । दजाय । देहे सा । रोजाय । तस्थौ सा । बुजायन् । बभ्रज्ज ताम् । खोच् भये । पच ऋणादिविश्वासे । रोच् रोचने । व्वथ उत्थाने । वस अवरोहणे । खस आरोहे । दज् भस्मीभवने । रोज़ स्थितौ । बुज़ भर्जने । ओवावादयः सामान्यपूर्णयोः (सू० ७८) इत्युक्त्या स्त्रियां एय प्रत्ययः । तस्य एकारस्य अनेन आयादेशः । खसवसोस्थः सर्वत्र

(सू० ६६) इति सकारस्य थकारः। तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) इति थकारस्य छकारः। बुज भर्जने इत्यस्य उन् प्रत्ययः। शेषं पूर्ववत्।

स्त्रीलिङ्ग के सर्वत्र सामान्यपूर्णभूत एक वचन और वहुवचन में तथा कर्म में अप्रसिद्ध 'चवर्ग' से परे प्रत्ययादिस्वर को 'आय' आदेश होता है। ह्यचायन्-सा प्रत्यग्राहि तेन-उस ने वह ग्रहण की। दिचायन्-सा तेनादायि-उसने वह दी। ह्यिदोस्तकारागमः (सू.३२) हेरकारागमः (८।२।११) सूत्र से, तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू. ७२) से 'च'। इस से 'आय' आदेश। मर्चायस्। इसे नित्य संबन्धप्रत्ययत्व से उसी आदि स्वर को 'आय' आदेश। वहां 'आलुप्तयकारेभ्यः कर्तृ-धातुभ्यः (४९ सूत्रस्थेभ्यः) 'आय' आदेश विकल्प से जानना चाहिए। थोचाय-वा-योचेय-शुद्धोवभूव सा-वह शुद्ध हुई। तेज़ाय-वा-तेज़ेय-तीक्ष्णोबभूव सा-वह तेज़ हुई। वावजाय-वा-वावज़ेय-रुरुचे सा-वह अच्छी लगी। 'इत्यादि। खोचाय-विभाय सा-वह शोभित हुई। पचाय-प्रतीयाय-गई। रोचाय-रुरुचे सा-वह अच्छी लगी। व्वछाय-उत्तस्थौ सा-वह उठी। वछाय-अवरुरोह सा-वह सवार हुई। खछाय-आरुरोह सा-वह सवार हुई। दज़ाय-देहे सा-वह देह में। रोज़ाय-तस्थौ सा-वह ठहरी। बुज़ायन्-वभ्रज्ज ताम्-उसे (स्त्री)भूना। खोच-भय में। पच-ऋणादि विश्वास में। रोच-अच्छा लगने में। व्वथ-उठाने में। वस-नीचे उतरने में। खस-चढ़ने में। दज़-राख होने में। रोज़-स्थिति में। बुज़-भूनने में। ओवावादयः सामान्यपूर्णयोः (सू० ७८) इस उक्ति से स्त्रीलिङ्ग में एय प्रत्यय। उस 'एकार' को इस से 'आय' आदेश। खस-वसोस्थः सर्वत्र (सू. ६६) से 'सकार' को 'थकार'। तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू.७२) से 'थकार' को 'छकार'। बुज़-भर्जन अर्थ में, इसे 'उन्' प्रत्यय। बाकी पहले की तरह।

एयश्च पुंसि ॥ १८ ॥

अप्रसिद्धचवर्गात्परस्य एय् प्रत्ययस्य पुंल्लिङ्गविषये आय आदेशो भवति। यकारोऽस्वरः। लाछाय्। जिजीवुः। खछाय्। आरुरुहुः। लस सम्यग्जीवने। खस आरोहे। पुंकर्तरि (सू. ३९) इति एय् प्रत्ययः। लसश्च (सू. २९, ३३, ६७, ७२) इति। खसवसोस्थ (६६) इति सकारस्य थकारे कृते अनेन एय प्रत्ययस्य आय् आदेशः। एयः किम्। लाछाय्। जिजीवुः। सामान्यपूर्णयोः आय् (सू० ४०)।

शेषमुक्तवत् ।

अप्रसिद्ध 'चवर्ग' से परे 'एय्' प्रत्यय को पुंल्लिङ्ग विषय में 'आय' आदेश होता है । यकार स्वर रहित है । लाछाय्-जिजीवु:-जीना चाहने वाला । खछाय्-आरुरुहु:-सवारी की इच्छा करने वाला । लस-अच्छी तरह जीने अर्थ में । खस-चढ़ने में । पुंकर्तरि (सू. ३९) से 'एय्' प्रत्यय । लसश्च (सू. २९, ३३, ६७, ७२) । खसवसोस्थ: (६६) से 'सकार' को 'थकार' करने पर, इससे 'एय्' प्रत्यय को 'आय्, आदेश । एय का क्या ? लाछाय्-जिजीवु:-जीना चाहने वाला । सामान्यपूर्णयो: आय् (सू. ४०) । बाकी कहे की तरह ।

इदुदूद्युतानां पूर्ववर्णस्वराप्रसिद्धता ॥ १९ ॥

इकारतन्मात्रायुतानामुकारतन्मात्रायुतानामूकारतन्मात्रायुतानां च वर्णानां तत्पूर्ववर्णसंवन्धिनः स्वरस्य अप्रसिद्धता अवधार्या सा चावर्णस्यैव । वाति । प्राप्ता: । तारिन् । तारिता: । पकु । गत: । वाचू । प्राप्ता । मारून् । हता । वात प्रापणे । अकर्मिणां भूते कर्तरि एय् (३९) सूत्रेण । वातस्तात् (सू. ८६) इत्यनेन छिह आदेश: छकारहकारयोर्लोप: । तार तारणे उन् प्रत्यय: । कर्मणि पुंवहुत्वे इदाद्यस्वरस्य (सू. ४) इत्युकारस्य इकार: । पक गतौ । थकपको-रोवादीनां पुंवर्तमानादेशाश्छहोर्लोपश्च भूते (सू. ७७) इत्यनेन छुह् आदेश: छहोर्लोपौ । पुंकर्तृ प्रत्ययोकारस्य स्त्रियां च (सू. १०) इत्युकारस्य ऊमात्रादेश: । तवर्गस्याप्रसिद्ध: (सू. ७२) इति चत्वम् । अनेन पूर्ववर्णस्वरस्याप्रसिद्धता । मार् मारणे उन् प्रत्यय: । एकत्वे ऊमात्रादेश: (सू. ७) । अनेनोपधाया अप्रसिद्धता ।

इकार तन्मात्रायुक्त, उकार तन्मात्रायुक्त और ऊकार तन्मात्रा-युक्त वर्णों के उस से पूर्व वर्ण से सम्बद्ध स्वर की अप्रसिद्धता जानना चाहिए और वह 'अ' वर्ण की ही । वाति-प्राप्ता:-प्राप्त हुए । तारिन्-तारिता:-तार दिए गए । पकु-गत:-गया । वाचू-प्राप्ता-प्राप्त हुई । मारून्-हता-मारी गई । वात-प्राप्त करने अर्थ में । अकर्मिणां भूते कर्तरि एय् (३९) सूत्र से, वातस्तात् (सू. ८६) इससे 'छिह्' आदेश, छकार और हकार का लोप । तार-तारने अर्थ में 'उन्' प्रत्यय । कर्मणि पुंवहुत्वे इदाद्यस्वरस्य (सू. ४) से 'उकार' को 'इकार' । पक-गति अर्थ में । थकपकोरोवादीनां पुंवर्तमानादेशाश्छहोर्लोपश्च

भूते (सू. ७७) इससे 'छुह्' आदेश और 'छ और ह' का लोप। पुंकर्तृ प्रत्ययोकारस्य स्त्रियां च (सू. १०) से 'उकार' को 'ऊ' मात्र आदेश। तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू. ७२) से 'च'। इससे पूर्ववर्णस्वर की अप्रसिद्धता। मार्-मारने अर्थ में 'उन्' प्रत्यय। एकत्वे ऊमात्रा-देशः (सू. ७), इस से उपधा की अप्रसिद्धता।

उद्युतस्योपधाया आत ओत्वम् ॥ २० ॥

उकारयुतस्य वर्णस्य य उपधाभूत आकारस्तस्य ओत्वं भवति। तोकन्। तारितः। वोतु। प्राप्तः। तार तारणे उन्। व्यञ्जनं परेण सन्धेयम् (सू. ११३) हकारस्य उपधाया आकारस्य ओकारः। वात प्रापणे। अर्कमिणामिति (३९) सूत्रेण) ओव्। वातस्तात् (सू. ८६) इति छुह् आदेशः छहोर्लोपश्च। तकारस्य उकारान्तत्वे सिद्धे अनेन उपधाकारस्य ओकारः। ओसु। आसीत्। आस सत्तायाम्-उक्तवत् छुह् आदेशः। अनेन उपधाकारस्य ओकारः। उद्युतस्य किम्। तारिन्। तारितास्ते। पूर्वं साधितम्।

'उकार' युक्त वर्ण का जो उपधाभूत 'आकार' उसे 'ओ' होता है। तोकन्-तारितः-तार दिया। वोतु-प्राप्तः-पाया। तार-तारने अर्थ में उन्। व्यञ्जनं परेण सन्धेयम् (सू. ११३) 'हकार' को उपधा के 'आकार' को 'आकार' होता है। वात-प्राप्त करने अर्थ में। अर्कमिणामिति (३९) सूत्र से ओव्'। वातस्तात् (सू. ८६) से 'छुह्' आदेश और छ तथा ह का लोप। 'तकार' का उकारान्तत्व सिद्ध होने पर, इससे उपधा के 'अकार' को 'ओकार'। ओसु-आसीत्-था। आस सत्ता में, कहे की तरह 'छुह्' आदेश। इससे उपधा के 'अकार' को 'ओकार'। उद्युत का क्या? तारिन्-तारितास्ते-वे तारे गए। पहले सिद्ध किए जा चुके हैं।

पुंस्येकारस्य यूदीतौ कर्मकत्वानेकत्वे ॥ २१ ॥

पुंल्लिङ्गस्य एकवहुत्वे कर्मणि सति उपधाभूतस्य एकारस्य क्रमेण यूदीतौ भवतः भूतविषये एकत्वे यूकारः वहुत्वे ईकारः। ल्यूखन्। लिखितम्। लीखिन्। लिखिताः। पूर्वं साधितम्। च्यूटन्। कुट्टितः। चीटिन्। कुट्टिताः। चेट कुट्टने उन्। कर्मणि पुंवहुत्वे (सू.४) इत्यादिना उकारस्येकारः। अनेन क्रमादुपधाया यूकार ईकारौ॥

पुंल्लिङ्ग के एकवचन-वहुवचन कर्म में होने पर उपधाभूत 'एकार' को क्रम से 'यू और ई' होते हैं। भूतविषय एकवचन में

'यूकार' और बहुवचन में 'ईकार' होता है। ल्यूखन्-लिखितम्-लिखा। लीखिन्-लिखिताः- लिखे। पहले सिद्ध किए जा चुके हैं। च्यूटन्-कुट्टितः-कूटा। चोटिन्-कुट्टिताः-कूटे। चेट-कुट्टन अर्थ में 'उन्'। कर्मणि पुंबहुत्वे (सू. ४) इससे 'उकार' को एकार'। इससे क्रमपूर्वक उपधा के यूकार और ईकार'।

फेरब्यहमेलां च। २२॥

एते धातवः कर्तर्येव नित्यं भवन्ति। एषां धातूनामुपधाया यूकार-ईकारौ भवतः भूतविषये। फ्यूरु्। परिवर्तितः। फीरि। परिवर्तिताः। ब्यूठु। आसितः। वीठि। आसिताः। म्यूलु। संगतः। मीलि। संगताः। फेर भ्रमणविस्त्रीभवनपश्चातापवैलोम्येषु। ब्यह उपवेशने। मेल संगमे। पुंकर्तरि (सू. ३९) इति ओव् एय् प्रत्ययौ। खरतरफरमरमोरां रात् (सू. ६१) इति। ब्यहोहात् (सू. ६७) इति। गलचलडलडोलफलफ्वलमेलां लात् (सू. ६३) इति सूत्रैः छुह् छिह् आदेशौ छहोर्लोपश्च। ब्यहः डेषव्यहरोपमपां ठ (सू. ६२) इति हस्य ठः। अनेन सर्वत्र क्रमात् यूदोतौ। प्रोक्तानां धातूनां किम्। मेठ्यौव्। मधुरीवभूव। पेड्यौव। प्रसृतीवभूव। ब्रेठ्यौव्। मूर्खीवभूव। मेठ मधुरीभवने। पेड नियासे। ब्रेठ मूर्खीभवने। पुंकर्तरि (सू. ३९) इति औव्। यागमः सर्वेषु सामान्यपूर्णेषु च (सू. ४६) इति यकारागमः।

ये धातु कर्ता में ही नित्य होते हैं। इन धातुओं की उपधा के 'यूकार-ईकार' भूतविषय में होते हैं। फ्यूरु्-परिवर्तितः-बदल दिया। फीरि्-परिवर्तिताः-बदल दिए। व्यूठु-आसितः-बिठाया। वीठि्-आसिताः-बिठाए। म्यूलु-संगतः-मिला। मीलि-संगताः-मिले। फेर भ्रमण- विस्त्रीभवन-पश्चाताप-वैलोम्य में। ब्यह-उपवेशने-बैठने में। मेल-संगमे -संगम में। पुंकर्तरि (सू० ३९) से 'ओव् और एय् प्रत्यय। खरतरफरफ़ेरमरमोरां रात् (सू० ६१) इति। ब्यहोहात् (सू० ६७) इति। गलचलडलडोलफलफ्वलमेलां लात् (सू० ६३) इन सूत्रों से 'छुह्-छिह्' आदेश और 'छ' तथा 'ह' का लोप। ब्यहः डेषव्यहरोपमपां ठ (सू० ६२) से 'ह' को 'ठ'। इस से सब जगह क्रम से 'यू' और 'ई'। प्रोक्त धातुओं का क्या ? मेठ्यौव्-मधुरीवभूव-मीठा हुआ। पेड्योव्-प्रसृतीवभूव-फैलाव हुआ। ब्रेठ्यौव्-मूर्खीवभूव-

मूर्ख हुआ। मेठ-मोठा होने में। पेड-निकालने में। ब्रेठ-मूर्ख होने में। पुंकर्तरि (सू० ३९) से 'ओव्'। यागमः सर्वेषु सामान्यपूर्णेषु च (सू० ४६) से 'यकार' का आगम।

स्त्रियामीदेतौ सर्वत्र ॥ २३ ॥

सर्वत्र एकत्ववहुत्वे कर्मणि कर्तरि च स्त्रीलिङ्गविषये उपधायाः क्रमात् ईकार-एकारौ भवतः। एकत्वे ईकारः वहुत्वे एकारः भूतविषये। चीटून्। कुट्टिता। चेंच्यन्। कुट्टिताः। चेट कुट्टने उन्। एकत्वे ऊमात्रादेशः (सू० ८) अपरत्र। स्त्रियां यत् (सू० ५) इति उकारस्य यकारः। स्त्रियां भूतानेकत्वकर्मणि च (७० सूत्रेण) इति टकारस्य चकारः। अनेन क्रमादीदेतौ। फीरू। भ्रान्ता सा। फेर्य। भ्रान्ताः। पीठू। निविष्टा। पेछ्य। निविष्टाः। मोजू। मिलिता। मेज्य। मिलिताः। फेर। भ्रमणे। ब्यह। उपवेशने। मेल। संगमे। पुंकर्तरि (सू० ३९) इति ओव् एय्। पूर्ववत् छुह् छिह् आदेशः छहोर्लोपः। पुंकर्तृप्रत्ययोकारस्य स्त्रियां च (सू० १०) इति एकत्र ऊमात्रादेशः। अपरत्र इकारस्य यत् (सू० ११) इति यः। ब्यहः डेषब्यहरोपमपांठ (सू० ६२) इति ह्स्य ठः। सादेशकर्तृभूतानेकत्वे च (सू० ७०) इति ठकारस्य छकारः। लान्तस्य जः (७४) इति लकारस्य जकारः। अनेन सर्वत्र क्रमादोकार-एकारौ।

सब जगह एकवचन-वहुवचन कर्म और कर्ता में स्त्रीलिङ्गविषय में उपधा को क्रम से ईकार और एकार होते हैं। एक वचन में ईकार, वहुवचन में एकार भूतविषय में। चीटून्-कुट्टिता-कूटी गई। चेंच्यन्-कुट्टिताः-कूटी गईं। चेट-कूटने अर्थ में 'उन्'। एकवचन में 'ऊ' मात्र आदेश (सू० ८) दूसरी जगह—स्त्रियां यत् (सू० ५) से 'उकार' को यकार। स्त्रियां भूतानेकत्वकर्मणि च (७०) सूत्र से 'टकार' को 'चकार'। इस से क्रमपूर्वक 'ई-ए'। फीरू-भ्रान्ता सा-वह भ्रान्त हुई। फेर्य-भ्रान्ताः-भ्रान्त हुईं। पीठू-निविष्टा-प्रविष्ट हुई। पेछ्य-निविष्टाः-प्रविष्ट हुईं। मोजू-मिलिता-मिली। मेज्य-मिलिताः-मिलीं। फेर-भ्रमण में। ब्यह-बैठने में। मेल-संगम में। पुंकर्तरि (सू० ३९) से ओव्-एय्। पहले की तरह छुह्-छिह् आदेश और 'छ-ह' का लोप। पुंकर्तृप्रत्ययोकारस्य स्त्रियां च (सू० १०) से एक जगह 'ऊ' मात्र आदेश। दूसरी जगह 'इकारस्य यत् (सू० ११) से 'य'। ब्यहः डेष-

ब्यहृरोपमपां ठ (सू० ६२) से 'ह' को 'ठ'। सादेशकर्तृभूतानेकत्वे च (सू० ७०) से 'ठकार' को छकार। लान्तस्य जः (७४) से 'लकार' को 'जकार'। इससे सब जगह क्रमपूर्वक ईकार और एकार।

ओकारस्योकारः सादेशपुंकर्तरि च ॥ २४ ॥

सर्वस्मिन्नेकत्ववहुत्वे पुंकर्मणि प्रत्ययादेशयुते सर्वस्मिन्पुंकर्तरि च उपधाभूतस्य ओकारस्य ऊकारो भवति भूतविषये। बूजुन्। श्रुतः। बूजिन्। श्रुताः। बूलुन्। भाषितम्। बूलिन्। भाषिताः। बोज्। निशामने। बोल पक्षिशब्दे च। उन् वहुत्वे उकारस्य इत् (४ सूत्रेण) अनेनोपधाया ऊत्वम्। कर्तरि यथा। रूठ्। रुष्टः। रूठि। रुष्टाः। रोष रुष्टौ। पुंकर्तरि (सू० ३९) इति ओव् एय्। द्वषपोषमपरोवां पात् (सू० ६५) इति छुह् छिह् आदेशौ छहो-र्लोपश्च। डेषव्यहृरोपमपां ठ (सू० ६२) इति यस्य ठत्वम्। अनेन उपधाया वकारः। सादेशकर्तरि किम्। पोठ्यौव्। पुष्टं तेन। पोयौंव्। पर्याप्तम्। पोठ।···लीभवने। पारे पर्याप्त्यनार्द्रत्वयोः। पुंकर्तरि (सू० ३९) इति ओव्। यागमः (सू ४६)।

सभी एकवचन-वहुवचन-पुंकर्म में प्रत्ययादेशयुक्त होने पर और सभी पुंकर्ता में उपधाभूत 'ओकार' को भूत विषय में 'ऊकार' होता है। बूजुन्-श्रुतः-सुना। बूजिन्-श्रुताः-सुने। बूलुन्-भाषितम्-भाषण दिया। बूलिन्-भाषिताः-भाषण दिए। बोज्-निशामने-सुनाने में। बोल-पक्षी के शब्द में। उन् वहुत्वे उकारस्य इत् (४ सू०) इससे उपधा को 'ऊ' हुआ। कर्ता में जैसे --रूठ्-रुष्टः-नाराज़ हुआ। रूठि-रुष्टाः-नाराज़ हुए। रोष-नाराज़ होने में। पुंकर्तरि (सू० ३९) से 'ओव्-एय्। द्वषपोषमपरो वां पात् (सू० ६५) से छुह्-छिह् आदेश और 'छ-ह' का लोप। डेषव्यहृरोपमपां ठ (सू० ६२) से 'प' को 'ठ'। इस से उपधा का 'वकार'। सादेशकर्ता में क्या ? पोठ्यौव-पुष्टं तेन-उस ने पुष्ट किया। पोयौंव्-पर्याप्तम्-पर्याप्त। पोठ···होने में। पारे पर्याप्तनार्द्रत्वयोः पुंकर्तरि (सू० ३९) से 'ओव्'। 'य' का आगम (सू० ४६)।

स्त्रियामूदोतौ ॥ २५ ॥

सर्वस्मिन्नेकत्ववहुत्वे कर्मणि प्रत्ययादेशयुते एकत्ववहुत्वे स्त्री-कर्तरि च उपधाभूतस्य ओकारस्य ऊकार-ओकारौ भवतः भूतविषये।

बूजून्-श्रुता तेन । बोज़न्-श्रुतास्तेन । कर्तरि यथा । रूठ् । रुष्टा सा । रोछ्य । रुष्टास्ताः । एवमन्येषां बोध्यम् ।

सभी एकवचन-वहुवचन कर्म में प्रत्ययादेश युक्त होने पर और एकवचन-वहुवचन स्त्रीकर्ता में उपधाभूत 'ओकार' को भूतविषय में । 'ऊकार-ओकार' होते हैं । बूजून-श्रुता तेन-उसने (स्त्री) सुना । बोज़न्-श्रुतास्तेन-उस ने सुने । कर्ता में जैसे-रूठ्-रुष्टा सा-वह रूठी । रोछ्य-रुष्टास्ताः-वे रूठीं । इस तरह अन्य का भी जानना ।

मरश्च पुंसि ॥ २६ ॥

मर मरणे इत्यस्य धातोः सर्वस्मिन्कर्तरि पुंल्लिङ्गविषये उपधाया ऊत्वं भवति भूतविषये । मूदु । मृतः । मूदि । मृताः । मर मरणे । पुंकर्तरि (सू० ३९) इति ओव्-एय् । खरतर (सू० ९१) इत्यादिना छुह् छिह् आदेशः छहोर्लोपः । मरश्च मरणे (सू० ६५) इति रस्य दत्वम् । अनेन उपधाया ऊत्वम् ।

मर-मरने अर्थ में, इस धातु से सभी कर्ता पुंल्लिङ्गविषय में उपधा को 'ऊ' होता है भूत विषय में । मूदु-मृतः-मर गया । मर-मरने अर्थ में । पुंकर्तरि (सू० ३९) इस से 'ओव्-एय्' । खरतर (सू० ९१) से 'छुह्-छिह्' आदेश और 'छ-ह' का लोप । मरश्च मरणे (सू० ६५) से 'र' को 'द' । इस से उपधा का 'ऊ' ।

लसश्च ॥ २७ ॥

लस सम्यग्जीवने इत्यस्य पुंल्लिङ्गे उपधाया ऊकारो भवति । तत्रैकत्वे ख्यातो वहुत्वे अप्रसिद्ध इति ज्ञेयम् । लूस्तु । जीवितः । लूस्ति । जीविताः । लूस्तुख् । जीवितस्त्वम् । लूस्तिव । जीविता यूयम् । लूस्तुम् । जीवितोऽहम् । लूस्ति । जीविता वयम् । लस सम्यग्-जीवने । पुंकर्तरि (सू० ३९) इति ओव् एय् ओख् एव ओस् एय् प्रत्ययाः । आसखसफस (सू० ९६) इत्यादिना छुह् छिह् छुख् छिव छुम् छिह् क्रमादादेशाः छहोर्लोपश्च । लसश्च पुंभूते (सू० ३३) इति तकारागमः । अनेन उपधाया ऊत्वम् ।

लस-अच्छी तरह जीने के अर्थ में, इसे पुंल्लिङ्ग में उपधा को 'ऊकार' होता है । वहां एकवचन में प्रसिद्ध, वहुवचन में अप्रसिद्ध, ऐसा जानना । लूस्तु-जीवितः-जिन्दा हो गया । लूस्ति-जीविताः-जिन्दा हो गए । लूस्तुख्-जीवितस्त्वम्-तू जीवित है । लूस्तिव-जीविता

यूयम्-तुम जीते हो। लूस्तुम्-जीवितोऽहम्-मैं जीवित हूं। लूस्ति-जीविता वयम्-हम जीते हैं। लस-अच्छी तरह जीने में। पुंकर्त्तरि (सू० ३९) से ओव्, एय्, ओख्, एव, ओस्, एय् प्रत्यय। आसखसफस (सू० ९६) से छुह्, छिह् छुख् छिव, छुम्, छिह् क्रम से आदेश और 'छ-ह्' का लोप। लसश्च पुंभूते (सू० ३३) से 'तकार' का आगम। इस से उपधा को 'ऊ'।

स्त्रियामेकत्वानेकत्वे ऊदातावप्रसिद्धौ ॥ २८ ॥

लस सम्यग्जीवने इत्यस्य स्त्रीलिङ्गस्य एकवचन-बहुवचनयोः क्रमात् उपधाया अप्रसिद्धौ ऊकार-आकारौ भवतः।
अत्रापि पूर्ववद्बहुत्वे एवाप्रसिद्धतास्तीत्यवधेयम्।) लूछ़। जीविता। लाछ़। जीविताः। लूछ़ख्। जीविता त्वम्। लाछ़व। जीविता यूयम्। लूछ़स्-जीविताहम्। लाछ-वयं जीविताः। लस धातोः ओव् आदयः प्रत्ययाः (३९ सूत्रेण) तेषां छुह् आदय आदेशाः छहोर्लोपश्च (९६ सूत्रेण) पुंकर्तृ प्रत्ययोकारस्य स्त्रियां च (सू० १०)। इति उकारस्य ऊमात्रादेशः। इकारस्य यत् (सू० ११) इति यः। लसश्च स्त्रियाम् (सू० ६७) इति सकारस्य थकारः। तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७१) इति थकारस्य छकारः। अप्रसिद्धचवर्गादकारः (सू० १२) इति सूत्रेण प्रत्यययकारस्याकारः। अनेन उपधायाः क्रमात् अप्रसिद्धौ ऊकार-आकारौ।

लस-अच्छी तरह जीने में, इस स्त्रीलिङ्ग का एकवचन और बहुवचन में क्रम से उपधा के अप्रसिद्ध 'ऊकार-आकार' होते हैं। यहां भी पहले की तरह बहुवचन में ही अप्रसिद्धता है, यह जानना। लूछ़-जीविता-जिन्दा है (स्त्री०)। लाछ़-जीविताः-वे जिन्दा हूं (स्त्री०)। लूछ़ख्-जीविता त्वम्-तू जीवित है (स्त्री०)। लाछ़्व-जीविता यूयम्-तुम जीवित हो (स्त्री०)। लूछ़स्-जीविताहम्-मैं जीवित हूं (स्त्री०) लाछ-वयं जीविताः-हम जीवित हैं (स्त्री०)। लस धातु से 'ओव्' आदि प्रत्यय (३९) सूत्र से, उन्हें छुह् आदि आदेश और 'छ-ह' का लोप (९६) सूत्र से। कर्तृ प्रत्ययोकारस्य स्त्रियां च (सू० से १० से 'उकार' को 'ऊ' मात्र आदेश। इकारस्यय यत् (सू० ११) से 'य'। लसश्च स्त्रियाम् (सू० ६७) से 'सकार' को 'थकार'। तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) से 'थकार' को 'छकार'। अप्रसिद्धचवर्गादकारः

(सू० १२) से प्रत्यय 'यकार' को 'अकार'। इससे उपधा को क्रम से अप्रसिद्ध 'ऊकार-अकार'।

सामान्यपूर्णयोरन्तिमः सर्वत्र ॥ २९ ॥

सर्वत्र पुंलिङ्गे स्त्रीलिङ्गे च एकत्वे वहुत्वे च सामान्यभूतपूर्णभूतयोर्विषये अन्तिमः अप्रसिद्धाकारादेश एव उपधाया भवति। पुंलिङ्गे यथा। लाछोव्। अजीवीत्। लाछाय्। अजीविषुः। लाछाव्। जिजीव। लाछाय्। जिजीवुः। स्त्रीलिङ्गे यथा। लाछाय्। जिजीव सा। लाछाय। जिजीवुः। साधनं पूर्ववत्।

सर्वत्र पुंलिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग में, एकवचन और वहुवचन में सामान्यभूत और पूर्णभूत के विषय में अन्तिम-अप्रसिद्ध 'अकार' का आदेश ही उपधा को होता है। पुंलिङ्ग में जैसे—लाछोव्-अजीवीत्-जी चुका। लाछाय्-अजीविषुः-जी चुके। लाछाव्-जिजीव-जीवित हुआ। लाछाय्-जिजीवुः-जीवित हुए। स्त्रीलिङ्ग में जैसे-लाछाय्-जिजीव सा-वह जी उठी। लाछाय-जिजीवुः-वे जी उठीं। साधन पहले की तरह।

मरो वकारः ॥ ३० ॥

मर मरणे इत्यस्य सर्वत्र पुंलिङ्गे स्त्रीलिङ्गे च एकत्ववहुत्वयोश्च सामान्यभूतपूर्णभूतयोर्विषये उपधाया वकारो भवति। म्वयोव्। अमृत। म्ययाव्। मम्रे। म्वयेय्। अमृषन्त। म्वयाय्। मम्रिरे। स्त्रीलिङ्गे यथा-म्वयेय। अमृत सा। म्वया। सा मम्रे। मर मरणे। पुंकर्तरि (सू. ३९) इति ओव् आव् एय् आय्। यागमः सर्वेषु सामान्यपूर्णेषु च (सू. ४६) इति यकारागमः। अनेनोपधाया वत्वम्। मरश्चापुंभूते (सू. ५९) इति रकारलोपः।

मर-मरने अर्थ में, इसे सर्वत्र पुंलिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग में तथा एकवचन और वहुवचन में सामान्यभूत-पूर्णभूत के विषय में उपधा का 'वकार' होता है। म्वयोव्-अमृत-मर गया। म्वयाव्-मम्रे-मर चुका। म्वयेय्-अमृषन्त-मर चुका। म्वयाय्-मम्रिरे-मर गया। स्त्री लिङ्ग में जैसे-म्वयेय-अमृत सा-वह मर गई। म्वयाय्-सा मम्रे-वह मर चुकी। मर-मरने अर्थ में। पुंकर्तरि (सू. ३९) से ओव्, आव्, एय् और आय्। यागमः सर्वेषु सामान्यपूर्वेषु

च (सू. ४६) से 'यकार' का आगम। इससे उपधा को 'व'। मरश्चापुंभूते (सू. ५९) से 'रकार' का लोप।

स्त्रियां भूतेऽपि ॥ ३१ ॥

मर मरणे इत्यस्य स्त्रीलिङ्गे विषये भूतेऽपि उपधाया वकारो भवति। म्वय। मृता। मरधातोः ओव्। तस्य छ्यह् आदेशः छ्होर्लोपश्च। अनेनोपधाया वत्वम्। मरश्चापुंभूते (सू. ५९) इति रकारलोपः। स्त्रियां किम्। मूद्। मृतः। पूर्वं साधितम्।

मर-मरने अर्थ में, इसका स्त्रीलिङ्ग विषय में भूत में भी उपधा का 'वकार' होता है। म्वय-मृता-मर गई। मर धातु से 'ओव्'। उसे 'छ्यह्' आदेश और '-छ्ह' का लोप। इससे उपधा का 'व'। मरश्चा पुंभूते (सू. ५९) से 'रकार' का लोप। स्त्रीलिङ्ग में क्या? मूद्-मृतः-मर गया। पहले सिद्ध किए जा चुके हैं।

ह्दिोस्तकारागमः ॥ ३२ ॥

हि ग्रहणक्रीणनधारणेषु। दि दाने। इत्यनयोर्भूतादिषु सर्वत्र तकारागमो भवति। ह्यतुन्। प्रतिगृहीतः। दितुन्। दत्तः। ह्यचोन्। प्रत्यग्रहीत्। दिचोन। अदात्। ह्यचान। प्रतिजग्राह। दिचान। ददौ। भूते उन् (३ सूत्रेण)। सामान्यभूते ओन् (१४ सूत्रेण)। भूतविशेषे आन् (३५ सूत्रेण) अनेन तकारागमः। हेरकारागमः (८।२।११) सूत्रेण तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू. ७२) इति तकारस्य चत्वम्।

'हिं' ग्रहण, खरीदना और धारण करने में। दि-दान अर्थ में इन दोनों में भूतादिओं में सर्वत्र 'तकार' का आगम होता है। ह्यतुन्-प्रतिगृहीतः-ग्रहण किया। दितुन् दत्तः-दिया। ह्यचोन्-प्रत्यग्रहीत्-ग्रहण किया। दिचोन-अदात्-दिया। ह्यचान-प्रतिजग्राह-ग्रहण किया। दिचान्-ददौ-दिया। भुते उन् (३) सूत्र से। सामान्यभूते ओन् (१४) सूत्र से। भूतविशेषे आन् (३५) सूत्र से। इस से 'तकार' का आगम। हेरकारागमः (८।२।११) सूत्र से। तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू.७२) से 'तकार' को 'च'।

लसश्च पुंभूते ॥ ३३ ॥

लस सम्यग्जीवने इत्यस्य पुंल्लिङ्गविषये भूते तकारागमो भवति। लूस्तु। जीवितः। लूस्ति। जीविताः। साधितचरम्। पुंलिङ्गे किम्। लूछ्। जीविता सा। भूते किम्। लाछाव्। जिजीव। पूर्वं साधितानि।

लस-अच्छी तरह जीने में, इस के पुंल्लिङ्ग विषय भूत में 'तकार' का आगम होता है। लूस्तु-जीवितः-जीविता है । लूस्ति-जीविताः-जीवित हैं। सिद्ध किए जा चुके हैं। पुंल्लिङ्ग में क्या? लूछ्र-जीविता सा-वह जीवित है (स्त्री.) । भूत में क्या ? लाछाव्-जिजीव-जी उठी। पहले साधित हैं।

नेरूदीतौ प्रत्ययोकारेकारयोः ॥ ३४ ॥

नि हरणे। अस्माद्धातोः प्रत्ययसंबन्धिनोरुकार-इकारयोः क्रमात् ऊकार-ईकारौ भवतः । न्यून। हृतः । नीन्-हृता निधातोः उन्। कर्मणि पुम् (सू. ४) इत्यादिना अपरत्रोकारस्य इकारः। अनेन ऊकार ईकारौ क्रमात्। पूर्वत्र यत्वम्। अपरत्र स्वरः सवर्णे दीर्घ-परलोपौ (सू० ११५)

'नि' हरने अर्थ में, इस धातु से प्रत्यय से सम्बद्ध 'उकार' और 'इकार' को क्रम से 'ऊकार-ईकार' होते हैं। न्यून-हृतः-हरण किया। नीन्-हृताः-हरण किए गए। 'नि' धातु से 'उन्'। कर्मणि पुम् (सू.४) से दूसरी जगह 'उकार' को 'इकार'। इससे क्रमपूर्वक ऊकार-ईकार। पहले 'य' फिर सवर्ण परे रहते स्वर को दीर्घ और पर का लोप (सू. ११५)।

पूर्णभूते आन् आख आथ आव आम आव् प्रत्ययाः पुमेकत्वे ॥ ३५ ॥

भावकर्मिणां धातूनां पूर्णभूते पुंल्लिङ्गस्य एकत्वे कर्मणि सति आन् आदयः प्रत्ययाः स्युः। बोजान्। तेनशुश्रुवो। बोजाख्। तैः शुश्रुवे। बोजाथ शुश्रुवे त्वया बोजाव। युष्माभिः शुश्रुवे। बोजाम्। मया शुश्रुवे। बोजाव्। अस्माभिः शुश्रुवे। बोज निशामने। पूर्णभूते आन् आदयः प्रत्ययाः। यागमः सर्वषु सामान्यपूर्णषु च (सू. ४६) इति यकारागम। तस्य अप्रसिद्धचवर्गाल्लोपः (सू. ४७) इति लोपः।

भावकर्मी धातुओं के पूर्णभूत होने पर पुंल्लिङ्ग के एकवचन में कर्म में होने पर 'आन्' आदि प्रत्यय होते हैं। बोजान्-तेन शुश्रुवे-उसने सुना। बोजाख्-तैः शुश्रुवे-उन्होंने सुना। बोजाथ्-शुश्रुवे त्वया-तुझ से सुना गया। बोजाव्-अस्माभिः शुश्रुवे-हम से सुना गया। बोज-सुनाने में। पूर्णभूत में 'आन्' आदि प्रत्यय। यागमः सर्वेषु सामान्य-पूर्णेषु च (सू. ४६) से 'यकार' का आगम। उसका अप्रसिद्ध-चवर्गाल्लोपः (सू. ४७) से लोप।

धातोरे वहुत्वे ॥ ३६ ॥

पूर्णभूते वहुत्वे कर्मणि सति धातोः पर एकारः प्रयोज्यः। करेयेन् । तेन चक्रिरे । करेयेख् । तैश्चक्रिरे । करेयेथ । त्वया चक्रिरे । करेयेव । युष्माभिश्चक्रिरे । करेयेम् । मया चक्रिरे । करेयेय् । अस्माभिश्चक्रिरे । कर करणे । पूर्णभूते आव् आदयः । वहुत्वे एकारः (सू. १५) इत्यकारस्य एकारः । यकारागमः (४६) सूत्रेण । अनेन धातोः पर एकारः ।

पूर्णभूत वहुवचन कर्म में होने पर धातु से परे 'एकार' प्रयुक्त हुआ । करेयेन्-तेन चक्रिरे-उसने किया । करेयेख्-तैश्चक्रिरे-उन्होंने किया । करेयेथ्-त्वया चक्रिरे-तू ने किया । करेयेव्-युष्माभिश्चक्रिरे-तुम लोगों से किया गया । करेयेम्-मया चक्रिरे-मैंने किया । करेयेय्-अस्माभिश्-चक्रिरे-हम लोगों ने किया । कर-करने में । पूर्णभूत में 'आन्' आदि । वहुत्वे एकारः (सू. १५) से 'अकार' को 'एकार' (४६) सूत्र से 'एकार' का आगम । इस से धातु परे 'एकार' हुआ ।

अप्रसिद्धचवर्गादा ॥ ३७ ॥

अप्रसिद्धचवर्गान्ताद्धातोरप्रसिद्ध आ प्रयोज्यः । बोजायेन । तेन शुश्रुविरे । ह्यचायेन । प्रतिजगृहिरे । साधितचरम् ।

अप्रसिद्ध चवर्गान्त धातु से अप्रसिद्ध 'आ' प्रयुक्त करना चाहिए । बोजायेन-तेन शुश्रुविरे-उसने सुना । ह्यचायेन-प्रतिजगृहिरे-ग्रहण किया । पहले सिद्ध कर चुके हैं ।

सामान्यवत्स्त्रीकर्मणि ॥ ३८ ॥

पूर्णभूते स्त्रीलिङ्गस्य एकत्वादिके कर्मणि सति सामान्यभूतवत्-स्वरूपाणि भवन्ति । एकत्ववहुत्वयोरेकरूपाणीत्यवधार्यम् ! उदाहरणानि सामान्यभूते विशदकृतानि ।

पूणभूत स्त्रीलिङ्ग के एकत्वादिक कर्म मैं होने पर सामान्यभूत की तरह स्वरूप होते हैं । एकवचन-वहुवचन में एक रूप हो समझना चाहिए । उदाहरण सामान्यभूत में दिए गए हैं ।

पुंकर्तरि ओव् एय् ओख् एव ओस् एय् भूते प्रत्ययाः ॥ ३९ ॥

अतीतकाले कर्तरि नियतानां धातूनां पुंल्लिङ्गे कर्तरि सति भूते ओव् आदयः प्रत्ययाः स्युः । ओव् प्रत्ययस्य क्वचित् औव् इति च

व्यवह्रियत इति ज्ञेयम् । वुफ्योव् । वा वुफ्योव् । उड्डीनः । वुफ्येय् । उड्डीनाः । ईर्योख् । उद्भ्रान्तस्त्वम् । ईर्येव । यूयमुद्भ्रान्ताः । ग्वव्योस् । गुर्वीभूतोऽहम् । प्रार्येय् । समीक्षिता वयम् । वुफ विहायसा गतौ । ईर ऊर्ध्वंभ्रमणे । ग्वव गौरवे । प्रार समीक्षणं । अनेन ओव् आदि प्रत्ययाः । यागमः (४६) सूत्रेण)

अतीतकाल कर्ता में नियत धातुओं के पुंल्लिङ्ग कर्ता में होने पर भूत में 'ओव्' आदि प्रत्यय होते हैं । 'ओव्' प्रत्यय के कहीं पर 'औव्' यह व्यवहृत होता है । ऐसा समझना चाहिए । वुफ्योव्-वा-वुफ्यौव्-उड्डीनाः-उड गए । इर्योख्उभ्रदान्तस्त्वम्-तू पागल हो गया । ईर्येव-यूयमुद्भ्रान्ताः-तुम पागल हो गए । ग्वव्यौस्-गुर्वीमूतोऽहम्-मैं भारी हुआ । प्रार्येय्-समीक्षिता वयम्-हम समीक्षित हुए । वुफ-पक्षी की चाल में । ईर-ऊपर घूमने में । ग्वव-गौरव में । प्रार-समीक्षण में । इससे 'ओव्' आदि प्रत्यय । (४६) सूत्र से 'य' का आगम ।

सामान्यपूर्णयोः आव् आय् आख् आव आस् आय् प्रत्ययाः ।४०।।

अतीतकाले कर्तृ नियतानां धातूनां पुंल्लिङ्गे कर्तरि सति सामान्यपूर्णभूतयोर्विषये आव् आदयः प्रत्यया अवधार्याः । सामान्ये यथा । वुफ्याव् । उड्डिड्ये । वुफ्येय् । उड्डिड्यरे । इत्यादीनि स्वरूपाणि । साधनं पूर्ववत् । पूर्णभूते यथा । म्वकलियाव् । मुमुचे सः । म्वकलियेय् । मुमुचिरे ते । म्वकलियाख् । मुमुचिषे । म्वकलियाव । मुमुग्ध्वे । म्वकलियास् । मुमुचेऽहम् । म्वकलियाय् । मुमुचिमहे । म्वकल मुक्तौ । सामान्यपूर्णयोः आव् आदयः प्रत्ययाः । यागमः सर्वेषु सामान्यपूर्णेषु च (सू. ४६) इति यागमः । व्यञ्जनान्तानां पूर्णे यात्पूर्वं इजनादेशप्रत्ययानाम् (सू. ५०) इति इच् आगमः । चकारः स्वरार्थः ।

अतीतकाल में कर्तृ नियत धातुओं के पुंल्लिङ्गकर्ता में होने पर सामान्य और पूर्णभूत के विषय में 'आव्' आदि प्रत्यय जानने चाहिए । सामान्य में जैसे-वुफ्याव्-उड्डिड्ये-उड़ गया । वुफ्येय्-उड्डिड्यरे-उड़ गए । इत्यादि रूप । साधन पहले की तरह । पूर्णभूत में जैसे-म्वकलियाव्-मुमुचे सः-वह छोड़ा गया । म्वकलियेय्-मुमुचिरे ते-वे छोड़े गए । म्वकलियाख्-मुमुचिषे-तूं छोड़ा गया । म्वकलियाव-मुमुचिध्वे-तुम छोड़े गए । म्पकलियास्-मुमुचेऽहम्-मैं

छोड़ा गया। म्वकलियाय्-मुमुचिमहे-हम छोड़े गए। म्वकल-मुक्ति अर्थ में। सामान्य और पूर्ण में 'आत्' आदि प्रत्यय। यागमः सर्वेषु सामान्यपूर्णेषु च (सू.४६) से 'य' का आगम। व्यञ्जनान्तानां पूर्णे यात्पूर्व इजनादेशप्रत्ययानाम् (सू. ५०) से 'इच्' का आगम। 'चकार' स्वरार्थ है।

संबन्धिप्रत्ययेषु वयोर्लोपः ॥ ४१ ॥

सर्वत्र पुंलिङ्गकर्तृभूतसामान्यपूर्णभूतयोर्विषये संबन्धिप्रत्ययेषु परेषु प्रत्ययसंबन्धिनोर्वकारयकारयोर्लोपो भवति। स च सस्वरस्य न विज्ञेयः किन्तु व्यञ्जनयोर्वयोरेव। कुमल्योस्। कोमल्यभूत्तस्य। कुमल्येस्। कोमल्यभूवंस्तस्य। कुमल कोमली भवने। पुंकर्तरि (सू. ३९) इति ओव्-एय् प्रत्ययौ। तच्छब्द (सू.८।१।३३) इत्यादिना अस् प्रत्ययः। यागमः। अनेन वयोर्लोपः। आस। तमागतः। आस्। तमागताः। आहस्। तमागतस्त्वम्। आसस्। तमागतोऽहम्। आस्। तमागता वयम्। व्यञ्जनान्तयोः किम्। कुमल्येवस्। कोमल्यभूत तस्य। आवस्। तमागता यूयम्।

सब जगह पुंल्लिङ्ग कर्तृभूत और सामान्यपूर्णभूत के विषय में संबन्धी प्रत्ययों के परे रहते प्रत्यय से संबद्ध 'वकार और 'यकार' का लोप होता है और वह सस्वर का न जानना, किन्तु व्यञ्जन 'व-य' का ही। कुमल्योस्-कोमल्यभूत्तस्य-उस के कोमली हुआ। कुमल्येस्-कोमल्यभूवंस्तस्य-उस के मैं कोमली हुआ। कुमल-कोमली होने में। पुंकर्तरि (सू. ३९) से 'ओव्-एय् प्रत्यय। तच्छब्दः (सू.८। १।३३) से 'अस्' प्रत्यय। 'य' का आगम। इससे 'व-य' का लोप। आस-तमागतः-उसे आया। आस्-तमागताः-उसे आए। आहस्-तमागतस्त्वम्-तूं उसे आया। आसस्-तमागतोऽहम्-मैं उसे आया। आस्-तमागता वयम्-हम उसे आए। व्यञ्जनान्तों का क्या? कुमल्येवस्-कोमल्यभूत तस्य-उसे कोमली हुआ। आवस्-तमागता यूयम्-तुम उसे आए।

तयोः पूर्वाकार ओदप्रसिद्धत्वे ॥ ४२ ॥

तयोर्वकारयकारयोः पूर्वो य आकारः स क्रमेण ओकारमप्रसिद्धतां चाप्नोति, वकारात्पूर्वं ओकारं यकारात्पूर्वः अप्रसिद्धतामिति। (अयं विधिस्त्वच्छब्दसंबन्धविहिताय प्रत्ययसद्भाव एव बोध्यः)। ओय्।

आगतस्ते । आय् । आगतास्ते । द्रोय् । निर्गतस्ते । द्राय् । निर्गतास्ते । चोय् । प्रविष्टस्ते । चाय । प्रविष्टास्ते ।

उन 'वकार-यकार' में पूर्व जो आकार' वह क्रम से 'ओकार और अप्रसिद्धता को प्राप्त होता है । 'वकार' से पूर्व 'ओकार' को 'यकार' से पूर्व अप्रसिद्धता को । (यह विधि 'त्वत्' शब्द से सम्बद्ध विहित के लिए प्रत्ययसद्भाव ही जानना ।) ओय्-आगतस्ते-वे आया । आय्-आगतास्ते-वे आए । द्रोय्-निर्गतस्ते-वे निकला । द्राय्-निर्गतास्ते वे निकले । चोय्-प्रविष्टस्ते-वे प्रविष्ट हुआ । चाय्-प्रविष्टास्ते-वे प्रविष्ट हुए ।

ओदतौ वत्वाप्रसिद्धत्वे ॥ ४३ ॥

तयोर्वकारयकारयोः पूर्वौ ओकार-अकारौ क्रमेण वकारमप्रसिद्धतां च प्राप्नुतः । ग्वय् । गतस्ते । गय् । गतास्ते । प्य्वय् । पतितस्ते । प्यय् । पतितास्ते ।

उन 'वकार-यकार' में पूर्व 'ओकार-अकार' क्रम से 'वकार' को और 'अप्रसिद्धता' को प्राप्त होते हैं । ग्वय् गतस्ते-वे गया । गय्-गतास्ते-वेगए । प्य्वय्-पतितस्ते-वे गिरा । प्यय्-पतितास्ते-वे गिरे ।

स्त्रियाम् एय एथ एयख् एव एयस् एथ प्रत्ययाः ॥ ४४ ॥

स्त्रीलिङ्गे कर्तरि सति भूतादिषु प्रोक्ताः प्रत्यया विज्ञेयाः । तत्र सामान्यपूर्णयोरेकरूपत्वमिति च ध्येयम् । भूते यथा । व्यठ्येय । स्थूलाभूत्सा । लार्येयख् । त्वं स्पृष्टा । नव्येव । नव्या अभूत् । वड्येयस् अवर्धि । पाँवर्येय । चञ्चलीभूता वयम् । व्यठ स्थूलीभवने । पार स्पर्शानुगमनपेशलीकरणेषु । नव अतिशयीभवने नूतनतायां च । वड गतिवृद्ध्योः । बाँबर त्वरायाम् । अनेन एयादयः प्रत्ययाः । यागमः (सू. ४६) लारः स्पर्शानुगमनयोरेवकर्तृप्रत्ययत्वम् पेशलीकरणे तु कर्मप्रत्ययत्वमित्यनुसंधेयम् । सामान्यपूर्णभूतयोर्यथा । व्यठियेय । स्थूलीवभूव । लारियेयख् । पस्पर्शिथ । नवियेव । नूतना वभूव यूयम् । वडियेयस् । ववृधेऽहम् । बाँवरियेव । चञ्चलीवभविम । पूर्ववत् धातुप्रत्ययाः । यागमः (सू. ४६) । व्यञ्जनान्तानां पूर्णे यात्पूर्वं इजनादेशप्रत्ययानाम् (सू. ५०) इति इच् आगमः । चकारः स्वरार्थः ।

स्त्रीलिङ्ग कर्ता में होने पर भूतादिओं में उक्त प्रत्यय जानने चाहिए । वहां सामान्य-पूर्ण में एकरूपत्व, यह समझना । भूत में

जैसे-व्यठ्येय-स्थूलाभूत्सा-वह मोटी हो गई। लार्येयख्-त्वं स्पृष्टा-तूं छुई। नव्येव-नव्या अभूत्-नई हुई। बड्येयस्-अवधि-बढ़ा। बाँव-र्येय-चञ्चलीभूता वयम्-हम चञ्चल हुए। व्यठ-मोटा होने में। लार-स्पर्श, अनुगमन, पेशली करने अर्थ में। नव-अधिक होने में और नूतनता में। बड-गतिवृद्ध्योः-गति और वृद्धि में। वाँबर-त्वरा में। इस से एय आदि प्रत्यय। यागमः (सू० ४६)। लार-स्पर्शानुगमन में ही कर्तृ प्रत्ययत्व, पेशलीकरण में तो कर्मप्रत्ययत्व, ऐसा समझना चाहिए। सामान्य पूर्ण भूत में जैसे-व्यठियेय-स्थूलीबभूव-मोटी हुई। लारियेयख्-पस्पर्शिथ-स्पर्श किया। नवियेव-नूतना बभूव यूयम्-तुम नूतन हुए। वडियेयस्-ववृधेऽहम्-मैं बढ़ा। बाँबरियेय-चञ्चलीबभूविम-हम चञ्चल हुए। पहले की तरह धातु प्रत्यय। यागमः। (सू० ४६)। व्यञ्जनान्तानां पूर्णे यात्पूर्वं इजनादेशप्रत्ययानाम् (सू० ५० से 'इच्' का आगम। चकार स्वरार्थ है।

त्यंबो नित्यम् ॥ ४५ ॥

त्यंब-नेत्रों की चञ्चलता में, इसे नित्य स्त्रीलिङ्गप्रत्यय होते हैं। त्यंब्येयस्-चाञ्चल्यभूत्तस्य-उसे चञ्चलता हुई। त्यंबियेयस्-चञ्चलीबभूव तस्य-उसे चञ्चलता हुई। साधन सुगम है।

यागमः सर्वेषु सामान्यपूर्णेषु च ॥ ४६ ॥

सर्वेषु कर्तृकर्मधातूनां सामान्यभूतेषु पूर्णभूतेषु च यकारागमो भवति च शब्दात्प्रोक्तानादेशकर्तृधातूनां भूतेऽपि भवति। व्वतल्योव्। उद्मज्जत्। व्वतल्याव्। उदमज्जत्। व्वतलियाव्। उन्ममज्ज। तत्योव्। अतप्यत्। तत्याव। अतप्यत। ततियाव्। तेपे। दर्योव्। अध्रोवत्। दर्याव्। अध्रुवोत्। दरियाव्। दुध्रोव। नम्योव्। अनमत्। नम्याव्। अनामीत्। नमियाव्। ननाम। व्वतल ऊर्ध्वीभवने। तत तप्तीभवने। दर स्थैर्याविस्मृतिवर्षनिरोधेषु। नम नम्रीभवने। पुंकर्तरि (सू० ३९) इति ओव्। सामान्यपूर्णयोः आव् (सू० ४०) अनेन सर्वत्र यकारागमः। व्यञ्जनान्तानां पूर्णे यात्पूर्वं इजनादेश-प्रत्ययानाम् (सू० ५०) इति इच्। सादेशकर्तृधातुसामान्यपूर्णयोर्यथा। चज्योव्। पलायांचकार। चज्याव्। पलायामास। तर्योव्। अतारीत्। तर्याव्। ततार। म्वयोव्। अमृत। म्वयाव्। मम्रे। चल चलने। तर तरणे। मर मरणे। ओव् आव् प्रत्ययौ। अनेन यागमः।

लान्तस्य जः (सू० ७४) इत्यादिना लकारस्य जकारः। मरो वकारः (सू० ३०) इति मर उपधाया वत्वम्। मरश्चापुंभूते (सू० ५९) इति रकारलोपः। कर्मधातुसामान्यपूर्णयोर्यथा। कर्योन्। अकार्षीत्। कर्यान्। चकार। वव्योन्। अवाप्सीत्। वव्यान्। उवाप। कर करणे। वव वापने। ओन्-आन् प्रत्ययौ। अनेन यकारागमः। सादेश-कर्तृधातुकर्मधातुसामान्यपूर्णयोः किम्। चल्। पलायितः। चलि। पलायिताः। करुन्। कृतम्। करिन्। कृताः।

सभी कर्तृकर्मधातुओं के सामान्यभूत और पूर्णभूत में 'यकार' का आगम होता है। 'च' शब्द से उक्त आदेश कर्तृधातुओं के भूत में भी होता है। व्वतल्योव्-उदमज्जत्-डूबा। व्वतल्याव्-उदमज्जत्-डूबा। व्वतलियाव्-उन्ममज्ज-डूब गया। तत्योव्-अतप्यत-तपा। तत्याव्-अतप्यत-तपा। ततियाव्-तेपे-तप गया। दर्योव्-अध्रोवत्-स्थिर हुआ। दर्याव्-अध्रुवीत्-स्थिर हो चुका। दरियाव्-दुध्रोव-स्थिर हो गया। नम्योव्-अनमत्-झुका। नम्याव्-अनामीत्-झुक चुका। नाभियाव्-ननाम झुक गया। व्वतल-ऊपर होने में। तप-तपने में। दर-स्थिरता, अविस्मृति और वर्ष निरोध में। नम-नम्र होने में। पुंकर्तरि (सू० ३९) से 'औव्'। सामान्यपूर्णयोः आव् (सू० ४०) इससे सर्वत्र 'यकार' का आगम। व्यञ्जनान्तानां पूर्णे यात्पूर्व इजनादेशप्रत्ययानाम् (सू० ५०) से 'इच्'। सादेशकर्तृधातुसामान्य पूर्ण में जैसे—चज्योव्-पलायांचकार-भाग गया। चज्याव्-पलायामास-भाग गया। तर्योव्-अतारीत्-तर गया। तर्याव-ततार-तर चुका। म्वयोव्-अमृत-मरा। म्वयाव्-मम्रे-मर चुका। चल-चलने में। तर-तरने में। मर-मरने में। ओव्-आव् प्रत्यय। इस से 'य' का आगम। लान्तस्य जः (सू० ७४) इससे 'लकार' को 'जकार'। मरो वकारः (सू० ३०) से मर उपधा को 'व'। मरश्चापुंभूते (सू० ५९) से 'रकार' का लोप। कर्म-धातु-सामायन्पूर्ण में। जैसे-कर्योन्-अकार्षीत्-कर चुका। कर्यान्-चकार-किया। वव्योन्-अवाप्सीत्-बो चुका। वव्यान्-उवाप-बीजा। कर-करने में। वव-बोने में। ओन्-आन् प्रत्यय। इस से 'यकार' का आगम। सादेशकर्तृधातुकर्मधातु सामान्यपूर्ण में क्या? चलु-पलायितः-भाग गया। चलि-पलायिताः-भाग गए। करुन्-कृतम्-किया। करिन्-कृताः-किए।

अप्रसिद्धचवर्गाल्लोपः ॥ ४७ ॥

अप्रसिद्धचवर्गात्परस्य यकारस्य लोपो भवति । कचान् । सूत्रयामास । ह्यचान । प्रतिजग्राह । दिचान । ददौ । मछान । मर्दयामास । इछान । इयेष । गिन्ज़ान् । चिक्रीड । ग्रज़ान् । गर्जयामास । वज़ान् । रुरोद । वञान् । उवाच । कत सूत्र-वेष्टने । हि प्रति-ग्रहणक्रीणनधारणेषु । दि-दाने । मथ-मर्दने । इछ-इच्छायाम् । गिन्द-क्रीड़ायाम् । ग्रज-गर्जने । वद-रोदने । वन-भाषणे । पूर्णभूते (३५ सूत्रेण) । आन् । तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२।७३) इति तथद-नानां च छ ज ञ आदेशाः । हेरकारागमः (८।२।११) सूत्रेण । यागमः (४६ सूत्रेण) । अनेन लोपः । वाचू । प्राप्ता । वाच् । प्राप्ताः । पूर्वं साधितम् । अनेन इकारस्य यत् (सू० ११) इत्यादेशप्राप्तस्य यकारस्य लोपः । अप्रसिद्धात्किम् । चच्यान् । चिच्छेद । चट-छेदने । पूर्णभूते (३५ सू०) आन् । यागमः । सामान्यपूर्णयोष्टवर्गस्य चवर्गः (सू० ६९) इति टकारस्य चत्वम् ।

अप्रसिद्ध 'चवर्ग' से परे 'यकार' का लोप होता है । कचान्-सूत्रयामास-सूत्र किया । ह्यचान्-प्रतिजग्राह-ग्रहण किया । दिचान्-ददौ-दिया । मछान्-मर्दयामास-मर्दन किया । इछान-इयेष-इच्छा की । गिन्ज़ान्-चिक्रीड-खेला । ग्रज़ान्-गर्जयामास-गर्जना की । वज़ान्-रुरोद-रोया । वञान्-उवाच-कहा । कत-सूत्र बेंटने में । ग्रहण-क्रीणन और धारण अर्थ में । दि-दान अर्थ में । मथ-मसलने में । इछ-इच्छा में । गिन्द-क्रीड़ा अर्थ में । ग्रज-गर्जन अर्थ में । वद-रोने में । वन-भाषण अर्थ में । पूर्णभूते (३५) सूत्र से 'आन्' । तवर्गस्या-प्रसिद्धः (सू० ७२-७३) से 'त, थ, द, न,' को 'च, छ, ज, ञ' आदेश । हेरकारागमः (८।२।११) सूत्र से 'हि' से 'अकार' का आगम । (४६) सूत्र से 'य' का आगम । इस से लोप । वाचू-प्राप्ता-पाई । वाच्-प्राप्ताः-पाई । पहले सिद्ध कर दिया है । इससे 'इकार' को 'यत्' (सू० ११) से, आदेश प्राप्त 'यकार' का लोप । अप्रसिद्ध से क्या ? चच्यान्-चिच्छेद-काटा । चट-छेदन अर्थ में । पूर्णभूते (३५ सू०) से आन् । 'य' का आगम । सामान्य-पूर्णयोष्टवर्गस्य चवर्गः (सू० ६९) से 'टवर्ग' को 'चवर्ग' ।

पिगछोर्भूते ॥ ४८ ॥

पि पतने । गछ गतौ इत्यनयोर्भूतविषये यकारस्य लोपो भवति । प्यौव् । पतितः । गौव् । गतः । घातोः पुंकर्तरि (सू० ३६) औव् प्रत्ययः । पेरकारागमः (८।२।११) गतौ गछोऽन्त्यस्यैव (सू० ५८) इति छलोपः । यागमः । अनेन लोपः । उभयत्र ओकारे औ (सू० ११६) इत्यकारस्य औ परलोपश्च । पूर्वस्य इकारोऽसवर्णे योऽपरलोपः (सू० ११०) इति यत्वम् । प्यय । पतिता । गय । गता । घात्वोः एय प्रत्ययौ । यागमः । अनेन लोपः । पेरकारागमः । गछः छलोपः । पिगछोः स्त्रियामत्प्रत्ययस्वरस्य (सू० ६०) इति एकारस्य अकारः । तस्य स्वरादल्लोपः (सू० ८।१।३६) । यत्वम् ।

पि-पतन अर्थ में, गछ-गति अर्थ में, इन दोनों में भूतविषय में 'यकार' का लोप होता है । प्यौव्-पतितः-गिरा । गौव्-गतः-गया । धातोः पुंकर्तरि (सू० ३६) से 'औव् प्रत्यय । 'पि' से 'अकार' का आगम (८।२।११) । गति अर्थ में 'गछ' के अन्त के अक्षर का ही (सू० ५८) से 'छ' का लोप 'य' का आगम । इस से लोप । उभयत्र ओकारे औ (सू० ११६) से 'अकार' को 'औ' और परलोप । पूर्वस्य इकारोऽसवर्णे योऽपरलोपः (सू० ११०) से 'य' । प्यय-पतिता-गिरी । गय-गता-गई । धातुओं को 'एय' प्रत्यय । 'य' का आगम । इससे लोप । 'पि' के 'अकार' का आगम । 'गछ' के 'छ' का लोप । पिगछोः स्त्रियामत्प्रत्ययस्वरस्य (सू० ६०) से 'एकार' को 'अकार' । उसका 'स्वरादल्लोपः' (सू० ८।१।३६) । 'य' ।

सकाराच्च बहुलम् ॥४८॥

सकारात्परस्य यकारस्य विभाषया लोपो भवति । फसौव् । वा । फस्यौव् । बद्धीभूतः' । फस बद्धीभवने । पुंकर्तरि औव् प्रत्ययः । यागमः । अनेन विकल्पेन लोपः । एवं ठास, दस, घास, मुस, सुसानां ज्ञेयम् । बाहुलकत्वात्क्वचिन्नित्यम् । असौन् । अहासीत् । असान् । जहास । इत्यादि । आवसादीनां निषेधः । आवस्यौव । विशीर्णः । आवस् विशरणे औव् प्रत्ययः । यकारागमः । तस्य बहुलग्रहणाल्लोपाभावः । अवसादयस्तु । आवसड्वसचसत्रसरससंलिसविसव्वलसव्वस इत्यादयः ।

'सकार' से परे 'यकार' का विभाषा से लोप होता है। फसौव्-वा-फस्यौव्-बद्धीभूतः-बन्ध गया। फस-बन्धने में। पुंल्लिङ्ग कर्ता में 'औव्' प्रत्यय। 'यकार' का आगम। इससे विकल्प से लोप। इस तरह ठास, दस, घास, मुस और सुस को जानना। बाहुलकत्व से कहीं नित्य। असौव्। अहासीत्। असान्। जहास। इत्यादि। आवस आदि का निषेध। आवस्यौव- विशीर्णः- टूट गया। आवस्-विशरण अर्थ में 'औव्' प्रत्यय। 'यकार' का आगम। उसके बहुल, ग्रहण से लोप का अभाव। अवसादि तो। आवस, ड्वस, च्वस, त्रस, सर सर्स, लिस, विस, व्वलस व्वस इत्यादि।

न वच् ग्रवच् च्वच् छ्वच् तेज् पज् रोच् व्यच् ब्रज् बावज् ल्यच् श्रोचाम् ॥ ४९।

क्च आर्द्रीभवने। ग्रवच् पात्रस्थेजलादिचेष्टायाम्। च्वच् वृत्तिसंकोचे। छ्वच् निःसारीभवने। तेज् तीक्ष्णीभवने। पज् युक्ती-भवने। रोच् रोचने। व्यच ..। ब्रज दीप्तौ। बाव्रज् रोचने। ल्यच् निर्बलीभवने। श्रोच् शुद्धौ। एभ्यः परस्य यकारस्य लोपो न भवति। क्च्यौव्। आर्द्रीवभूव। ग्रच्यौव्। अचे त। चवच्यौव्। समकोचीत। छ्वच्यौव्। निःसारीवभूव। तेज्यौव्। तितेजे। पज्यौव्। युयुजे। रौच्यौव्। अरोचिष्ट। व्यच्यौव्। अव्याचीत्। ब्रज्यौव्। अभ्राजिष्ट। बावज्यौव्। अरोचिष्ट। ल्यच्यौव्। निर्बलीवभूव। श्रोच्यौव्। शुद्धी-भूत्। धातुभ्यः। पुंकर्तरि (सू० ३९) औव् प्रत्ययः। यागमः (सू० ४६) तस्य पूर्वोक्तसूत्रेण लोपे प्राप्ते अनेन निषेधः। (अछ त्रच वुचां च। अछ्यौव्। दुर्बलीभूत। त्रच्यौव्। अभैषीत्। वुच्यौव्। दग्धीभूत्।

क्च-गीला होने में। ग्रवच-पात्र में स्थित जल आदि की चेष्टा में। च्वच्-वृत्तिसंकोच में। छ्वच-निःसार होने में। तेज-तीक्ष्ण होने में। पज-युक्तो होने में। रोच-अच्छा लगने में। व्यच ...। ब्रज-दीप्ति में। बावज्-रुचिकर होने में। ल्यच-निर्बल होने में। श्रोच-शुद्धि में। इन से परे 'यकार' का लोप नहीं होता है। क्च्यौव्-आर्द्रीवभूव-गीला हुआ। ग्रवच्यौव्-अचे...त...।चवच्यौव्-समकोचीत-संकोच हुआ। छ्वच्यौव्-निःसारीवभूव-निःसार हुआ। तेज्यौव्-तितिजे-तेज हुआ। पज्यौव्-युयुजे-युक्त हुआ। रोच्यौव्-अरोचिष्ट-

रुचिकर हुआ। व्यच्थौव्-अव्याचीत्...। व्रज्यौव्-अभ्राजिष्ट-दीप्ति अर्थ में। ल्यच्यौव्-निर्बलीवभूव-निर्बल हुआ। श्रोच्यौव्-शुद्धोऽभूत्-शुद्ध हुआ। धातुओं से पुंकर्तरि (सू० ३६) 'औव्' प्रत्यय। यागमः (सू० ४६) 'य' का आगम। उसका पूर्वोक्त सूत्र से लोप प्राप्त होने पर इससे निषेध। (अछ ताच् वुचां च। अछ्यौव्-दुर्बलोऽभूत्-दुर्बल हुआ। ताच्यौव्-अभैषीत्-डरा। वुच्यौव्-दग्धोऽभूत्-जल गया।

व्यञ्जनान्तानां पूर्णे यात्पूर्व इजनादेशप्रत्ययानाम् ॥ ५० ॥

अनादेशप्रत्ययानां येषां धातूनां भूते प्रत्ययानामादेशो न स्यात् तेषां व्यञ्जनान्तानां पूर्णभूतविषये यकारागमात्प्राक् इच् आगमो भवति, चकारः स्वरार्थः। जेठियाव्। दोर्घीवभूव। तम्वलियाव्। चचाल। पडियाव्।......। पूर्वं साधितानि। अनादेशेभ्यः किम्। म्त्रयाव्। मत्रे। मेज्याव्। युयुजे। प्रिय्याव। पिप्रिये। मर मरणे। मेल संगमे। प्रिय प्रीणने। भूतपूर्णे (३५ सूत्रेण) आव्। यागमः सू० ४६)। मरो वकार (सू० ३०) इति वत्वम्। परश्चापुंभूते (सू० ५६) इति रकारलोपः। लान्तस्य जः (सू० ७४) इत्यादिना लकारस्य जकारः। व्यञ्जनान्तेभ्यः किम्। प्ययाव्। पपात। पि पतने आव्। यागमः। सर्वत्राकारागमो निदियि वर्जितात् (सू० ८।२। ११) इत्यकारागमः। पूर्णभूते किम्। जेठ्यौव्। दीर्घीभूतः। साधितचरम्।

अनादेशप्रत्ययों वाले जिन धातुओं के भूत में प्रत्ययों के आदेश न हों, उन व्यञ्जनान्तों के पूर्णभूतविषय में 'यकार' के आगम से पहले 'इच्' का आगम होता है, चकार स्वरार्थ है। जेठियाव्-दीर्घी वभूव-लम्बा हुआ। तम्वलियाव्-चचाल-चला गया। पडियाव्.........। पहले सिद्ध किए जा चुके हैं। अनादेशों से क्या? म्त्रयाव्-मत्रे......। मेज्याव्-युयुजे-जुड़ गया। प्रिय्याव-पिप्रिये-प्रिय हुआ। मर-मरने अर्थ में। मेल-संगम अर्थ में। प्रिय-प्रीणने-प्रीति अर्थ में। भूतपूर्णे (३५) सूत्र से 'आव्'। (४६) सूत्र से 'य' का आगम। मरो वकारः (सू० ३०) से 'व'। परश्चापुंभूते (सू० ५६) से 'रकार' का लोप। लान्तस्य जः (सू० ७४) इससे 'लकार' को 'जकार'। व्यञ्जनान्तों से क्या? प्ययाव्-पपात-गिरा। 'पि' गिरने में 'आव्' प्रत्यय। 'य' का आगम। सर्वत्राकारागमो निदियिर्वर्जितात् (सू० ८।२।११) से 'अकार' का

आगम। पूर्णभूत में क्या? जंठ्यौव्-दीर्घीभूतः-ठ.गया हुआ। पहले सिद्ध किए जा चुके हैं।

न गछोऽप्रसिद्धचवर्गाच्च ॥ ५१ ॥

गछ गतौ इत्यस्मात्तथा अप्रसिद्धचवर्गाद्यात्पूर्वम् इच् आगमो न भवति। गयाव्। जगाम। गछ गतौ। पूर्णभूते आव्। यागमः। गतौ गछोऽन्त्यस्यैव (सू० ५८) से छकार का लोपः। खोचाय। विभाय सा। पचाय। प्रतीयाय सा। खछाय। आरुरोह सा। रोज़ाय। अवतस्थौ सा।

गछ-गति अर्थ में, इससे वैसे अप्रसिद्ध चवर्ग से 'य' से पूर्व 'इच्' आगम नहीं होता है। गयाव्-जगाम-गया। गछ-गति अर्थ में। पूर्णभूत में 'आव्'। 'य' का आगम। गतौ गछोऽन्त्यस्यैव (सू० ५८) से 'छकार' का लोप। खोचाय-विभाय सा-वह शोभित हुई। पचाय-प्रतीयाय सा-वह चली गई। खछाय-आरुरोह सा वह सवार हुई। रोज़ाय-अवतस्थौ सा-वह ठहर गई।

अचप्रसोराकारः ॥ ५२ ॥

अच् प्रवेशे। प्रसः कृतादेशस्य च यात्पूर्व आकारागमो भवति। चायाव्। विवेश। प्यायाव्। सुषुवे। अच प्रवेशे। प्रस प्रसवे। पूर्णभूते आव्। यागमः। अच आदेर्लोपः (सू० ५७) इति अकारलोपः। प्रसः पिच्च (सू० ५५) इति पि आदेशः। अनेन यात्पर्व आकारागमः।

अच्-प्रवेश अर्थ में। प्रस और कृतादेश को 'य' से पहले 'आकार' का आगम होता है। चायाव्-विवेश-प्रवेश किया। प्यायाव्-सुषुवे-पैदा हुआ। अच-प्रवेश में। प्रस-प्रसव में। पूर्णभूत में 'आव्'। 'य' का आगम। अच आदेर्लोपः (सू० ५७) से 'अकार' का लोप। प्रसः पिच्च (सू० ५५) से 'पि' आदेश। इससे 'य' से पूर्व 'आकार' का आगम।

येरात्प्रत्ययादिस्वरस्य च ॥ ५३ ॥

यि आगमने इत्यस्य आकारादेशो भवति प्रत्ययादिस्वरस्य च भूते एव आकारो भवति। आव्। आगतः। यिधातोः ओव् प्रत्ययः। अनेन द्वयोरेवाकारः। स्वरः सवर्णे दीर्घपरलोपौ (सू० ११३)। भूत एव किम्। आयोव्। आगमत्सः। आयाव्। आजगाम। धातोः ओव्-आव् प्रत्ययो। यागमः। अनेन केवलधातोरेव आकारादेशः।

'यि' आने अर्थ में, इसे 'आकार' आदेश और प्रत्ययादि स्वर को भूत में ही 'आकार' होता है। आव्-आगतः-आया। 'यि' धातु से 'ओव्' प्रत्यय। इससे दोनों में ही 'आकार'। स्वरः सवर्णे दीर्घपर-लोपौ। (सू० १।३)। भूत में ही क्या ? आयोव्-आगमत्सः-वह आया। आयाव्-आजगाम-आया। धातु से 'ओव्-आव्' प्रत्यय। 'य' का आगम। इससे केवल धातु से ही 'आकार' का आदेश।

जेरन्त्यस्वरस्य पूर्ववच्च ॥ ५४ ॥

जि जनने इति धातोरिकारस्याकारो भवति पूर्ववत्प्रत्ययादि-स्वरस्य भूत एव आकारो भवति। ज़ाव्। जातः। ज़ि धातोः ओव्। अनेन धातुप्रत्ययस्वरयोराकारौ। भूत एव किम्। ज़ायोव्। अज-निष्ट सः। ज़ायाव्। जज्ञे सः। अत्र केवलं धातुस्वरस्यैव न प्रत्य यादिस्वरस्य।

जि-पैदा होने अर्थ में, इस धातु से 'इकार' को 'आकार' होता है, पहले की तरह प्रत्ययादिस्वर को भूत में ही 'आकार' होता है। जाव्-जातः-पैदा हुआ। 'जि' धातु से 'ओव्'। इससे धातुप्रत्यय स्वरों को 'आकार' होते हैं। भूत में ही क्या। ज़ायोव्-अजनिष्ट सः-वह पैदा हुआ। ज़ायाव्-जज्ञे सः-वह पैदा हुआ। यहां केवल धातुस्वर को ही, न प्रत्ययादि स्वर को।

प्रसः पिश्च ॥ ५५ ॥

प्रस प्रसवे इत्यस्य पि आदेशो भवति प्रत्ययादि स्वरस्य पूर्ववदा कारो भवति। प्याव्। प्रसूतः। प्रस धातोः ओव् प्रत्ययः। अनेन धातोः पि आदेशः प्रत्ययादिस्वरस्य चाकारः। यत्वम्। भूत एव किम्। प्यायोव्। प्रासूयत सः। प्यायाव्। प्रसुषुवे सः। प्यायेय्। प्रासूयत सा। अत्र केवलं पि आदेशः।

प्रस-प्रसव अर्थ में, इसे 'पि' आदेश होता है। प्रत्ययादि स्वर को पहले की तरह 'आकार' होता है। प्याव्-प्रसूतः-पैदा हुआ। प्रस-धातु से 'ओव्' प्रत्यय। इससे धातु को 'पि' आदेश और प्रत्ययादिस्वर को 'आकार'। य। भूत में ही क्या ? प्यायोव्-प्रासूयत सः-वह पैदा किया गया। प्यायेव। प्रासूयत सा-वह पैदा की गई। यहां केवल 'पि' आ .श।

नेरो द्रा च ॥ ५६ ॥

नेर् निर्गमने इत्यस्य द्रा आदेशो भवति पूर्ववत्प्रत्ययादिस्वरस्य चाकारो भवति। द्राव्। निर्गतः। द्राय। निर्गता। धातोः ओव्-एय प्रत्ययौ। अनेन धातोर्द्रा आदेशः प्रत्ययस्वरयोराकारः। भूत एव किम्। द्रायोव्। निरगमत्। द्रायाव्। निर्जगाम। द्रायेय। निर्जग्मुः। अत्र केवलं द्रा आदेशः।

'नेर्' निकलने अर्थ में, इसे 'द्रा' आदेश होता है और पहले की तरह प्रत्ययादिस्वर को 'आकार' होता है। द्राव्-निर्गतः-निकला। द्राय-निर्गता-निकली। धातु से 'ओव्-एय' प्रत्यय। इससे धातु को 'द्रा' आदेश और प्रत्ययस्वरों में 'आकार'। भूत में ही क्या? द्रायोव्-निरगमत्-निकल गया। द्रायाव्-निर्जगाम-निकला। द्रायेय-निर्जग्मुः-निकले। यहां केवल 'द्रा' आदेश।

अच आदेर्लोपश्च ॥ ५७ ॥

अच प्रवेशे इत्यस्य धातोराद्यक्षरस्य लोपो भवति च शब्दात्पूर्ववत्प्रत्ययादिस्वरस्याकारो भवति। चाव्। प्रविष्टः। चाय। प्रविष्टा। साधनं पूर्ववत्। भूत एव किम्। चायोव्। अविक्षत। चायाव्। विवेश। चायेय। सा विवेश। अनेन केवलमकारलोपः। अच प्रसोराकारः (सू. ५२) इति यात्पूर्वम् आकारागमः।

अच-प्रवेश में इस धातु से आदि अक्षर का लोप होता है,'च' शब्द से पहले की तरह प्रत्ययादिस्वर को 'आकार' होता है चाव्-प्रविष्टः-प्रविष्ट हुआ। चाय-प्रविष्टा-प्रविष्ट हुई। साधन पहले की तरह। भूत में ही क्या? चायोव्-अविक्षत्-प्रवेश किया। चायाव्-विवेश-प्रवेश-किया। चायेय-सा विवेश-वह प्रविष्ट हुई। इससे केवल 'अकार' का लोप। अचप्रसोराकारः (सू. ५२) से 'य' से पहले 'आकार' का आगम।

गतौ गछोऽन्त्यस्यैव ॥ ५८ ॥

गछ गतौ युक्तीभवने च। इत्यस्य धातोर्गतौ विषयें अन्त्याक्षरस्यैव लोपो भवति न प्रत्ययादिस्वरस्याकारः। गौव्। गतः। गय्। गता। साधितचरम्। गतौ किम्। गछु। गछि।

गछ-गति और युक्ति होने में। इस धातु के गतिविषय में अन्तिम अक्षर का ही लोप होता है, न कि प्रत्ययादिस्वर का

'आकार' । गौव्-गतः-गया । गय्-गता-गई । सिद्ध किए जा चुके हैं । गति में क्या ? गछु । गछि ।

मरश्चापुंभूते ॥ ५९ ॥

मर-मरणे । इत्यस्य धातोः पुंल्लिङ्गभूतं वर्जयित्वा शेषे सर्वत्रातीते अन्त्याक्षरस्य लोपो भवति । म्वयोव् । अमृत । म्वयाव् । मम्रे सा । साधितचरम् । अपुंभूते किम् । मूदु । मृतः । मर धातोः ओव् प्रत्ययः । तस्य (६१) सूत्रेण छुह् आदेशः छहोर्लोपश्च । मरश्च पुंसि (सू २६) इत्युपधाया ऊत्वम् । गरश्च मरणे (सू. ६५) इति रकारस्य दत्वम् ।

मर-मरने अर्थ में, इस धातु के पुंल्लिङ्गभूत को छोड़कर शेष सर्वत्र अतीत में अन्तिम अक्षर का लोप होता है । म्वयोव्-अमृत-मर गया । म्वयाव्-मम्रे सः-वह मरा । म्वय-मृता-मर गई । म्वयेंय-मम्रे सा-वह मरी । सिद्ध किए जा चुके हैं । अपुंभूत में क्या ? मूदु-मृतः-मर गया । मर धातु से 'ओव्' प्रत्यय । उसे (६१) सूत्र से 'छुह्' आदेश और 'छ-ह्' का लोप । मरश्च पुंसि (सू० २६) से उपधा को 'ऊ' । मरश्च मरणे (सू० ६५) से 'र' को 'द' ।

पिगछोः स्त्रियामत्प्रत्ययस्वरस्य ॥ ६० ॥

पि पतने । गछ गतौ । इत्यनयोर्भूते प्रत्ययादिस्वरस्य अकारो भवति । प्यय । पतिता । प्यय । पतिताः । प्ययख् । पतिता त्वम् । प्ययव । पतिता यूयम् । प्ययस् । पतिताहम् । प्यय । पतिता वयम् । गय । गता । गय । गताः । गयख् । गता त्वम् । गयव । गता यूयम् । गयस् । गताहम् । गय । गता वयम् । धातोः पराः एय् आदिप्रत्ययाः । यागमः । तस्य पिगछोर्भूत (सू० ४८) इति लोपः । अनेन प्रत्ययस्वरस्य अकारः । एव प्रत्ययस्य (६१) सूत्रेण यः । पेरकारागमः (८।२।११) सूत्रेण । यत्वम् ।

'पि' गिरने में, गछ-गति अर्थ में । इन दोनों के भूत में प्रत्ययादिस्वर को 'अकार' होता है । प्यय-पतिता-गिरी । प्यय-पतिताः-गिरीं । प्ययख्-पतिता त्वम्-तूँ गिरी । प्ययव-पतिता यूयम्-तुम सब गिरीं । प्ययस्-पतिताहम्-मैं गिरी । प्यय-पतिता वयम्-हम गिरीं । गय-गता-गिरी । गय-गताः-गिरीं । गयख्-गता त्वम्-तूं गई । गयव-गता यूयम्-तुम गईं । गयस्-गताहम्-मैं गई । गय-गता वयम्-हम

गईं। धातु से परे 'एय्' आदिप्रत्यय। 'य' का आगम। तस्य पिगछो-भूतेः (सू० ४८) से लोप। इससे प्रत्ययस्वर को 'अकार'। एव प्रत्ययस्य (६१) सूत्र से 'य'। पेरकारागमः (८।२।२१) सूत्र से। 'य'।

मध्यमानेकत्वे यत् ॥ ६१ ॥

यत् यकारो भवतीति स्पष्टम्। उदाहरणं पूर्वसूत्रे साधितमेव। प्ययव। पतिता यूयम् स्त्री०। गयव। गता यूयम् स्त्री०।

'यत्' यकार होता है, यह स्पष्ट है। उदाहरण पूर्व सूत्र में सिद्ध किए जा चुके हैं। प्ययव-पतिता यूयम्-(स्त्री०)—तुम गिरीं। गयव-गता यूयम् स्त्री०—तुम गईं।

डेषब्यहरोषमषां ठः सर्वत्र ॥ ६२ ॥

डेष प्रेक्षणे। ब्यह् उपवेशने। रोष रुष्टौ। मष विस्मृतौ। एष धातूनां सर्वत्र पुंल्लिङ्गे स्त्रीलिङ्गे एकानेकत्वे च सर्वेषु भूतेषु चान्त्याक्षरस्य ठकारो भवति। ड्यूठुन्। दृष्टः। डीठिन्। दृष्टाः। डीठून्। दृष्टा। डेछ्यन्। दृष्टास्ताः। धातोः पर उन् प्रत्ययः। कर्मणि पुंवहुत्वे (सू० ४) इति उकारस्य इकारः। पुंस्यैकारस्य यूदीताव (सू० २१) इत्युपधायाः क्रमात् यू-ईकारौ। स्त्रीलिङ्गे तु। एकत्वे ऊमात्रादेशः (सू० ८)। स्त्रियां यत् (सू० ५) इति। वहुत्वे यकारः (सू० ५)। स्त्रियामोदेतौ सर्वत्र (सू० २३) इत्युपधाया ईकार-एकारौ। अनेन सर्वत्र अन्त्यस्य ठकारः। स्त्रियां भूतानेकत्वकर्मणि च(७० सूत्रेण) इति ठस्य छः। एवं। डेछ्योन्। अद्राक्षीत्। डेछ्यान्। ददृशे। स्त्रीलिङ्गे यथा। डेछ्येयन्। ददृशे सा। ब्यूठु। उपविष्टः। रूठु। रुष्टः। मठु। विस्मृतः। धातूनां परः ओव् प्रत्ययः। तस्य छुह् आदेशः छहोर्लोपश्च। ब्यहः फेरब्यहमेलां च (सू० २२) इत्यनेन यूकारः। रोष ओकारस्योकारः सादेशपुंकर्तरि च (सू० २४) इत्युपधाया ऊकारः। अनेन सर्वत्र ठकारः। मषः इदुदूद्युतानां पूर्ववर्णस्वराप्रसिद्धता (सू० १९)। एवं वेछ्याव्। समास्त सः। रोछ्याव्। रुरोष सः। मछ्याव्। विसस्मे सः। साधनं पूर्ववत्।

डेष-देखने में। ब्यह्-बैठने में। रोष-नाराज होने में। मष विस्मृति में। इन धातुओं का सर्वत्रपुंल्लिङ्ग-स्त्रीलिङ्ग और एकवचन वहुवचन में तथा सभी भूतों में अन्तिम अक्षर को 'ठकार' होता है। ड्यूठुन-दृष्टः-देखा। डीठिन्-दृष्टाः-देखे। डीठून्-दृष्टा-देखी। डेछ्यन्-

दृष्टास्ताः-वे देखीं। धातु से परे 'उन्' प्रत्यय। कर्मणि पुंबहुत्वे (सू० ४) से 'उकार' को 'इकार'। पुंस्यैकारस्य यूदीताव् (सू० २१) से उपधा को क्रम से 'यू-ईकार'। स्त्रीलिङ्ग में तो एकवचन में 'ऊ' मात्र आदेश (सू० ८)। स्त्रीलिङ्ग में 'यत्' (सू० ५)। बहुवचन में 'यकार' (सू० ५)। स्त्रियामीदेतौ सर्वत्र (सू० २३) से उपधा को 'ईकार-एकार'। इससे सब जगह अन्त के अक्षर को 'टकार'। स्त्रियाँ भूतानेकत्वकर्मणि च (७०) सूत्र से 'ठ' को 'छ'। इस तरह। डेछ्-योन्-अद्राक्षीत्-देख लिया। डेछ्यान्-ददृशे-देखा। स्त्रीलिङ्ग में जैसे-डेछ्येयन्-ददृशे सा-वह देखी। ब्यूठु-उपविष्टः-बैठा। रूठु-रुष्टः-नाराज़ हुआ। मठु-विस्मृतः-भूला। धातुओं के परे 'ओव्' प्रत्यय। उसे 'छुह्' आदेश और 'छ-ह्' का लोप। ब्यहः फेरब्यहमेलां च (सू० २२) इस से 'यूकार'। रोष ओकारस्योकारः सादेशपुंकर्तरि च (स० २४) से उपधा का 'ऊकार'। इस से सब जगह 'ठकार'। मषः इदुदूद्युतानां पूर्ववर्णस्वराप्रसिद्धता (सू० १९)। इस तरह-वेछ्याव्-समास्त सः। रुरोष सः-रोछ्याव्-वह नाराज़ हुआ। मछ्याव्-विसस्मे सः-वह भूल गया। साधन पहले की तरह।

क्चह्वचोस्तः ॥ ६३ ॥

क्च आर्द्रीभवने। ह्वच् विस्त्रीभवने। इत्यनयोरन्त्याक्षरस्य तकारो भवति सर्वत्र। क्तु। अतिम्यत्। क्ति। अतिम्यन्। क्च्योव्। अतिमीत्। क्च्याव्। तितेम। ह्वतु। अकुथ्यत्। ह्वति। अकुथ्यन्। ह्वचोव्। अकोथीत्। ह्वचाय्। चुकुथुः। धात्वोः परो ओव्-एव् प्रत्ययौ। प्रथमयोः छुह् छिह् आदेशौ छहोर्लोपश्च। अनेन चकारस्य तकारादेशः स च तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) इति निर्देशादप्रसिद्धो ज्ञेयः। अपरयोश्चस्य तकारे कृते तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) इत्यनेन तकारस्य चकारः एयश्च पुंसि (सू० १८) इत्यनेन एकारस्य आय आदेशः।

क्च-गीला होने में। ह्वच-विस्नी होने में। इन दोनों में अन्तिम अक्षर को सर्वत्र 'तकार' होता है। क्तु-अतिम्यत्-गीला हुआ। क्ति-अतिम्यन्-गोले हुए। क्च्योव्-अतिमोत्-गीला हो चुका। क्च्याव्-तितेम-गीला-हुआ। हतु-अकुथ्यत्···ह्वति-अकुथ्यन्···। ह्वचोव्-अकोथीत्···। ह्वचाय-चुकुथुः···। धातु से परे 'ओव्-एय्,

प्रत्यय। प्रथम दोनों में 'छुह्-छिह्' आदेश और 'छ-ह्' का लोप। इससे 'चकार' को 'तकार' का आदेश। और वह तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) इस निर्देश से अप्रसिद्ध जानना। दूसरे दोनों में 'च' को 'तकार करने पर तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) इससे 'तकार' को 'चकार'। एयश्च पुंसि (सू० १८) इस से 'एकार' को 'आय' आदेश।

दज़रोज़व्वपज़ां दः ॥ ६४ ॥

दज़ भस्मीभवने। रोज़ स्थितौ। व्वपज़ उत्पत्तौ। इत्येषां धातूनामन्त्यस्य दकारो भवति। दद्। दग्धः। ददि दग्धाः। रूद्। अवस्थितः। रूदि। अवस्थिताः। व्वपद्। उत्पन्नः। व्वपदि। उत्पन्नाः। धातुभ्यः ओव्-एय् प्रत्ययौ। तयोः छुह् छिह् आदेशौ। रोज़ः ओकारस्योकारः सादेशपुंकर्तरि च (सू० २४) इत्युपधाया ओकारस्य ऊकारः अनेनान्त्यस्य दत्वम्।

दज़-राख़ होने में। रोज़-स्थिति में। व्वपज-उत्पत्ति में। इन धातुओं के अन्त के अक्षर को 'दकार' होता है। दद्-दग्धः-जला। ददि-दग्धाः-जले। रूद्-अवस्थितः-ठहरा। रूदि-अवस्थिताः-ठहरे। व्वपद्-उत्पन्नः-पैदा हुआ। व्वपदि-उत्पन्नाः-पैदा हुए। धातुओं से ओव् एय् प्रत्यय। उन दोनों में छुह्-छिह् आदेश। रोज के 'ओकार' को 'ऊकार' सादेशपुंकर्तरि च (सू० २४) इससे उपधा के 'ओकार' को 'ऊकार'। इससे अन्त के अक्षर को 'द'।

मरश्च मरणेऽस्त्रियाम् ॥ ६५ ॥

मर मरणसंधापनयोरित्यस्य मरणार्थं अन्त्याक्षरस्य दकारो भवति अस्त्रियाम्। मूद्। मृतः। मूदि। मृताः। मरश्च पुंसि (सू० २६) इत्युपधाया ऊत्वम्। अनेन रकारस्य दकारः। अस्त्रियां किम्। म्वय। मृता। धातोः ओव् प्रत्ययः। तस्य। मरः स्त्रियाम् स्त्रीप्रत्ययादेशा (सू० ६२) इति सूत्रेण छ्यह् आदेशः छहोर्लोपश्च। स्त्रियां भूतेऽपि (सू० ३१) इत्युपधाया वत्वम्। मरश्चापुंभूते (सू० ५६) इति रकारस्य लोपः। मरणार्थे किम्। मरून्-संधापितः। मरून्-संधापिता। सुगममेव।

मर-मरण और संधापन अर्थ में, इसका 'मरण' अर्थ में अन्त के अक्षर को स्त्रीलिङ्ग को छोड़कर 'दकार' होता है। मूद्-मृतः-मर गया। मूदि-मृताः-मर गए। मरश्च पुंसि (सू० २६) से उपधा को

'ऊ'। इससे रकार को 'दकार'। स्त्रीलिङ्ग से भिन्न क्यों ? म्वय-मृता-मर गई। धातु से 'ग्रोव्' प्रत्यय। उसका। भरः स्त्रियाम् स्त्रीप्रत्ययादेशाः (सू० ६२) इस सूत्र से 'छह्यह्' ग्रादेश और 'छ-ह' का लोप। स्त्रियां भूतेऽपि (सू० ३१) से धपधा को 'व'। मरश्चापुंभूते (सू० ५६) से 'रकार' का लोप। मरणार्थ में क्या। मरून्-संधापितः-स्थापित किया। मरून्-संधापिता-स्थापित की। सुगम ही है।

खसवसोस्थः सर्वत्र ६६ ॥

खस आरोहणे। वस अवतरणे। इत्यनयोः सर्वत्र पुंल्लिङ्गे स्त्रीलिङ्गे च अन्त्यस्य थकारो भवति। खथु आरूढः। वथु। अवतीर्णः। खछू। आरूढा। वछू। अवतीर्णा। साधनं पूर्ववत्। स्त्रियामन्त्यस्य थकारे कृते तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) इत्यादिना छकारः।

खस-सवार होने में। वस-उतरने में। इन दोनों में सब जगह पुंल्लिङ्ग में और स्त्रीलिङ्ग में अन्त के अक्षर को 'थकार' होता है। खथु-आरूढः-सवार हुआ। वथु-अवतीर्णः-उतरा। खछू-आरूढा-सवार हुई। वछू-अवतीर्णा-उतरी। साधन पहले की तरह। स्त्रीलिङ्ग में अन्त के अक्षर को 'थकार' करने पर 'तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) से 'छकार'।

लसश्च स्त्रियाम् ॥ ६७ ॥

लस सम्यग्जीवने इत्यस्य स्त्रीलिङ्गविषये अन्त्यस्य थकारो भवति। लोसधातोरपि वेष्यते। लुछू। जीविता:। लाछ जीविताः। धातोः ओव् एय् प्रत्ययौ तयोरादेशौ। पुंकर्तृ प्रत्ययोकारस्य स्त्रियां च (सू० १०) इत्युकारस्य ऊमात्रादेशः। इकारस्य यत् (५ सूत्रेण)। अनेन सकारस्य थकारः। तस्य तवर्गस्याप्रसिद्धः सू० ७२) इति छः। अप्रसिद्धः (सू० १२) इत्यादिना प्रत्यययकारस्य अकारः। स्त्रियामेकत्वानेकत्वे ऊदातावप्रसिद्धाव् (सू० २८) इति धातूपधाया अप्रसिद्धौ ऊकारआकारौ। स्त्रियां किम्। लूस्तु। जीवितः। प्रत्ययादेशे कृते। लसश्च पुंभते (सू० ३३) इति तकारागमः। लसश्च (सू० २७) इत्युपधाया ऊत्वम्।

लस-अच्छी तरह जीने में, इसका स्त्रीलिङ्गविषय में अन्त के अक्षर को 'थकार' होता है। वा 'लोस' धातु से भी होता है। लुछू, जीविता-जीती है। लाछ-जीविताः-जीती हैं। धातु से 'ओव्-एय्'

प्रत्यय उन्हें आदेश। पुंकर्तृ प्रत्ययोकारस्य स्त्रियां च (सू० १०) से 'उकार' को ऊ मात्र आदेश। इकारस्य यत् (५) सूत्र से 'इकार' को 'यत्'। इससे 'सकार' को थकार। उसे तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) से 'छ'। अप्रसिद्धः (सू० १२) से प्रत्यय 'यकार' को 'अकार'। स्त्रीलिङ्ग के एकवचन और बहुवचन में 'ऊदातावप्रसिद्धाव् (सू० २८) से धातु की उपधा को अप्रसिद्ध 'ऊकार-आकार'। स्त्रीलिङ्ग में क्या ? लूस्तु-जीवितः-जीता है। प्रत्ययादेश करने पर। लसश्च पुंभूते। (सू० ३३) से 'तकार' का आगम। लसश्च (सू० २७) से उपधा को 'ऊ'।

अनादेशकर्तृ धातुभूतादौ नो आदेशाः ॥ ६८ ॥

येषां धातूनां कर्तरि प्रत्ययस्यादेशो न भवति तेषां भूतसामान्यभूतपूर्णभूतेषु वक्ष्यमाणा आदेशाः नो भवन्ति। क्रट्योव् कृशोभवत्। क्रट्याव्। कशोभूत्। क्रटियाव्। कृशीबभूव। ज़ेठ्योव्। दीर्घोवभूव। ज़ेठ्याव्। दीर्घोविभूव। ज़ेठियाव्। दीर्घीविभूव। बुड्यौव्। वृद्धोवभूव। बुड्याव्। वृद्धोवभूव। बुडियाव्। वृद्धीवभूव। कान्योव्। काणीवभूव। कान्याव्। काणीवभूव। कानियाव्। काणीबभूव। ठीक्योव्। अतिष्ठत्। ठीक्याव्। अस्थात्। ठीकियाव्। तस्थौ। स्वग्योव्। सुमूल्यीबभूव। स्वग्याव्। सुमूल्यीवभूव। स्वगियाव्। सुमूल्यीवभूव। तत्योव्। अतप्यत। तत्याव्। अतापि। ततियाव्। तेपे। तन्योव्। अकृष्यत। तन्याव्। तन्वीवभूव। तनियाव्। तन्वीवभूव। क्रट कार्श्ये। ज़ेठ आयतीभवने। बुड स्थविरीभवने। कान काणीभवने। ठीक स्थितौ। स्वग मूल्याल्पतायाम्। तत तप्तीभवने। तन विरलीभवने। ओव् आव् आव् प्रत्ययाः। यागमः। तृतीये। व्यञ्जनान्तानां पूर्णे यात्पूर्व इजनादेशप्रत्ययानाम् (सू० ५०) इति इच्। चकारः स्वरार्थः। एवं स्त्रीलिङ्गेष्वपि बोध्यम्।

जिन धातुओं को कर्ता में प्रत्यय का आदेश नहीं होता है, उनके भूत, सामान्यभूत, पूर्णभूत में वक्ष्यमाण आदेश नहीं होते हैं। क्रट्योव्-कृशोभवत्-कमज़ोर हुआ। क्रट्याव्-कृशोभूत्-कमज़ोर हो चुका। क्रटियाव्-कृशीबभूव-कमज़ोर हो गया। जेठ्योव्-दीर्घीबभूव-लम्बा हुआ। जेठयाव्-दीर्घीवभूव-लम्बा हुआ। जेठियाव्-दीर्घीबभूव-लम्बा

हुआ। बुडियाव्-वृद्धिवभूव-वृद्धि हुई। बुड्याव्-वृद्धिवभूव-वृद्धि हुई। बुडियाव्-वृद्धिवभूव-वृद्धि हुई। कान्योव्-काणीवभूव-काणा हुआ। कान्याव्-काणीवभूव-काणा हुआ। कानियाव्-काणीवभूव-काणा हुआ। ठोक्यौव्-प्रतिष्ठत्-ठहरा। ठोक्याव्-प्रास्थात्-ठहर चुका। ठोकियाव्-तस्थौ-ठहर गया। स्वग्योव्-सुमूल्योवभूव-थोड़ी कीमत हुई। स्वग्याव्-सुमूल्योवभूव-थोड़ी कीमत हुई। स्वगियाव्-सुमूल्योवभूव-थोड़ी कीमत हुई। तत्योव्-अतप्यत-तप गया। तत्याव्-अतापि-तप चुका। ततियाव्-तेपे-तपा। तन्योव्-अकृष्यत-विरला हुआ। तन्याव्-तन्वीवभूव-विरला हो गया। तनियाव्-तन्वीवभूव-विरला हो चुका। क्रट-कृश होने में। जेठ-लम्बा होने में। बुड-वृद्धि होने में। कान-काणा होने में। ठोक-ठहरने में। स्वग-थोड़ो कीमत में। तत-तपने में। तन-विरला होने में। ओव्-आव्-आव् प्रत्यय। 'य' का आगम। तृतीय में। व्यञ्जनान्तानां पूर्णे यात्पूर्वं इजनादेशप्रत्ययानाम् (सू० ५०) से 'इच्'। चकार स्वरार्थ है। इस तरह स्त्रीलिङ्गों में भी जानना।

सामान्यपूर्णयोष्टवर्गस्य चवर्गः॥ ६९॥

अनादेशव्यतिरिक्तानां शिष्टानां कर्तृभावकर्मधातूनां सर्वेषां सामान्यभूते च टवर्गस्य क्रमेण चवर्गादेशो भवति। चेच्योन्। अकुट्ट्यत्। चेच्यान्। कुट्टयाभास। डेछ्योन्। अदृश्यत। डेछ्यान्। ददृशे। गंज्योन्। अवान्त्सीत्। गंज्यान्। वबन्ध। रञोन्। अपाक्षीत्। रञान्। पपाच। चेट कुट्टने। डेष प्रेक्षणे। गंड ग्रन्थे। रन पाके। ओन्-आन् प्रत्ययौ। डेषव्यहरोषमषां ठः सर्वत्र (सू० ६२) इति षकारस्य ठकारः। यागमः (सू० ४६)। अनेन ट ठ डानां च छ जा आदेशाः। (रनस्तु)। नान्तस्य ञ (सू० ७३) इत्यनेन नकारस्य ञत्वम्। अप्रसिद्धचवर्गाल्लोपः (सू० ४७) इति यकारस्य लोपः। कर्तृधातूनां यथा। कच्याव्। उद्भिद्यते स्म सः। रोछ्याव्। रुरोष। व्वज्याव्। निममज्ज। छ्यञाव्। छिद्यते स्म। फट काष्ठभेदाङ्कुरोद्भेदयोर्जलनिमज्जनादिषु। रोष रुष्टौ। व्वड निमज्जने। छ्यन छेदे। आव् प्रत्ययः। रोषः डेषव्यहरोषमषां ठः सर्वत्र (सू० ६२) इति ठकारः। यागमः। अनेन ट ठ डानां च छ जा आदेशाः। (छ्यन इत्यस्य नकारस्य नान्तः (सू० ७३) इति ञत्वम। अप्रसिद्धः

(सू० ४७) इत्यनेन य लोपः। शेषं पूर्ववत्। एवं भावधातूनामपि बोध्यम्।

अनादेश से अतिरिक्त शिष्ट-कर्तृ भाव-कर्मधातु सब के सामान्य-भूत और पूर्णभूत में 'टवर्ग' को क्रम से 'चवर्ग' का आदेश होता है। चेच्योन्-अकुट्टयत्-कूटा गया। चेच्यान्-कुट्टयामास-कूटा। डेछ्योन्-अदृश्यत-देखा गया। डेछ्यान्-ददृशे-देखा। गंज्योन्-अवान्त्सीत्-गांठा गया। गंज्यान्-ववन्ध-गांठा। रञोन्-अपाक्षीत्-पकाया गया। रञान्-पपाच-पकाया। चेट-कूटने में। डेष-देखने में। गंड-ग्रन्थे-गांठने में। रन-पकाने में। ओन्-आन् प्रत्यय। डेषव्यहरोषमषां ठः सर्वत्र (सू० ६२) से 'षकार' को 'ठकार'। 'य' का आगम (सू० ४६)। इससे 'ट, ठ, ड' को 'च, छ, ज' आदेश। 'रनस्तु-रन तो। नान्तस्य ञः (सू० ७३) इस से 'नकार' को 'ञ'। अप्रसिद्धचवर्गाल्लोपः (सू० ४७) से 'यकार' का लोप। कर्तृधातुओं के जैसा-फच्याव्-उद्भिद्यते स्म सः-वह फुटाया जाता था। रोछ्याव्-रुरोष-नाराज हुआ। व्रज्याव्-निममज्ज-डूबा। छ्यञाव्-छिद्यते स्म-छेद किया गया था। फट-सूखी लकड़ी को फाड़ने, अङ्कुर फूटने और जल में डूबने आदि अर्थ में। रोष-नाराज होने में। व्वड-डूबने में। छ्यन-छेद में। 'आव्' प्रत्यय। रोषः डेषव्यहरोषमषां ठः सर्वत्र (सू० ६२) से 'ठकार'। 'य' का आगम। इस से ट, ठ, ड को च, छ, ज आदेश। (छ्यन-इस के 'नकार' को 'नान्तः' (सू० ७३) से 'ञ'। अप्रसिद्धः (सू० ४७) इससे 'य' का लोप। बाकी पहले की तरह)। इस तरह भावधातुओं के भी जानना।

सादेशभूतकर्तृकर्मिणोरनेकत्वे च स्त्रियाम् ॥ ७० ॥

भूते प्रत्ययादेशयुतानां कर्तृधातूनां भूते कर्मिधातूनां स्त्रीलिङ्गे कर्तरि कर्मणि सति बहुत्वविषये टवर्गस्य चवर्गादेशो भवति सर्वत्र सामान्यभूते पूर्णभूते च। स्त्रीकर्तरि यथा। फटू। मग्ना सा। फच्य। मग्नास्ताः। मठू। विस्मृता सा। मछ्य। विस्मृतास्ताः। व्वडू। निमग्ना सा। व्वज्य। निमग्नास्ताः। छ्यञ्। छिन्ना सा। छ्यञ। छिन्नास्ताः। फट काष्ठभेदादिषु। मष विस्मृतौ। व्वड निमज्जने। छ्यञ छेदे। ओव् एय् प्रत्ययौ तयोः छुह् छिह् आदेशौ छहोर्लोपश्च। पुंप्रत्ययोकारः सू० १०-११) इत्यादिना ऊमात्रादेशः इकारस्य च यः। मषः ठकारः। अनेन टादीनां बहुत्वे चाद्या आदेशाः (नस्य

(सू० ७३) ञ:) स्त्रीकर्मणि च यथा। चेत्यन्। कुट्टितास्ता:। डेछ्यन्। दृष्टास्ता:। गंज्यन्। बद्धास्ता:। रञन्। पच्यन्ते स्म ता:। चेच्येयन्। कुट्टयामास स ताम्। डेछ्येयन्। ददृशे सा तेन। गंज्येयन्। बबन्धे सा तेन। रञेयन्। पेचे सा तेन। अत्र सामान्यपूर्णभूतस्वरूपेषु पूर्वसूत्रेणादेशे सिद्धेऽपि भूतस्वरूपार्थमेव योगारम्भ:। धातो: उन्। स्त्रियां यत् (सू० ५) इति उकारस्य यकार:। डेष: ठ: (सू० ६२)। अनेन क्रमात् टवर्गस्य चवर्गादेश:। (नस्य (७३ सूत्रेण) ञ:। बहुवचने किम्। चोटून्। कुट्टिता सा तेन। डोठून्। दृष्टा सा तेन। गंडून्। बद्धा सा तेन। रञून्। पक्वा सा तेन। साधितचरम्।

भूत में प्रत्ययादेशयुक्त कर्तृ धातुओं के भूत में कर्मिधातुओं के स्त्रीलिङ्ग-कर्ता-कर्म में होने पर बहुबचन के विषय में टवर्ग को 'चवर्ग' का आदेश सर्वत्र सामान्यभूत और पूर्णभूत में होता है। स्त्रीकर्ता में जैसे-फटू-मग्ना सा-वह मग्न थी। फच्य-मग्नास्ता:-वे मग्न थीं। मठू-विस्मृता सा-वह भूली। मछ्य-विस्मृतास्ता:-वे भूलीं। व्वडू-निमग्ना सा-वह डूबी। व्वज्य-विमग्नास्ता:-वे डूबीं। छयञ्-छिन्ना सा-वह टूटी। छ्यञ-छिन्नास्ता:-वे टूटीं। फट-लकड़ी फोड़ने आदि में। मष-विस्मृति में। व्वड-डूबने में। छयञ-छेद में। ओव्-एय् प्रत्यय, उनमें छुह्-छिह् आदेश और 'छ-ह' का लोप। पुंप्रत्ययोकार: (सू० १०-११) से 'ऊ' मात्र आदेश और 'इकार' को 'य'। मष: ठकार:-मष से 'ठकार'। इससे 'ट' आदि को बहुवचन में 'च' आदि आदेश। ('न' को (सू० ७३) से ञ। स्त्रीकर्म में जैसे-चच्यन्-कुट्टितास्ता:-वे कूटी गईं। डेछ्यन्-दृष्टास्ता:-वे देखी गईं। गंज्यन्-बद्धास्ता:-वे बाँधी गईं। रञन्-पच्यन्ते स्म ता:-वे पकाई गई थीं। चेच्येयन्-कुट्टयामास स ताम्-उसने उसे कूटा। डेछ्येयन्-ददृशे सा तेन-वह उस से देखी गई। गंज्येयन्-बबन्धे सा तेन-वह उस से बंधी। रञयन्-पेचे सा तेन-वह उस से पकी। यहां सामान्य, पूर्णभूत स्वरूपों में पूर्वसूत्र से आदेश के सिद्ध होने पर भी भूतस्वरूप के लिए ही योगारम्भ है। धातु से 'उन्'। स्त्रियां यत् (सू० ५) से 'उकार' को 'यकार'। डेष: ठ: (सू० ६२)। इससे क्रमपूर्वक 'टवर्ग' को 'चवर्ग' का आदश। ('न' को (७३) सूत्र से 'ञ'। बहुवचन में क्या? चीटून् कुट्टिता सा तेन-वह उससे कूटी गई। डीठून्-दृष्टा सा तेन-वह

उससे देखो गई। गंडून्-बद्धा सा तेन-वह उससे बंधी। रञून्-पक्वा सा तेन-वह उस से पकी। पहले सिद्ध किए जा चुके हैं।

कवर्गस्यैकत्वेऽपि ॥ ७१ ॥

प्रत्ययादेशयुतानां स्त्रीलिङ्गे कर्तरि सति कर्मिधातूनां कर्मणि सति एकत्व-वहुत्वयोः कवर्गस्य चवर्गादेशो भवति सर्वत्र सामान्य-पूर्णयोरपि। थचू। श्रान्तास्ताः। ह्वछू। शुष्का सा। ह्वछ्य। शुष्कास्ताः। लजू। लग्ना। लज्य। लग्नाः। थक श्रमे। ह्वख शोषे। लग संगे पीडायां सामञ्जस्ये च। ओव्-एय् प्रत्यययोः छुह् छिह् आदेशौ। पुंप्रत्ययोकारः (सू० १०।११) इत्यादिना ऊमात्रा-यकारौ। अनेन कादीनां चादयः। कर्मिणां यथा। छचून्। अवकीर्णा तेन। छच्यन्। अवकीर्णास्तेन। लोछून्। लिखिता तेन। लेछ्यन्। लिखितास्तेन। दजून्। आहता तेन। दज्यन्। आहतास्तेन। छक कीर्णने। लेख लेखने। दग घातने। उन् प्रत्ययः। उकारस्य एकत्वे ऊमात्रादेशः (सू० ८)। वहुत्वे यकारः (सू० ५)। स्त्रियामीदेतौ सर्वत्र (सू० २३) इत्युपधाया ईकार-एकारौ। अनेन कखगानां चछजा आदेशाः। सर्वेषाम् सामान्यपूर्णयोर्यथा। थच्योव्। थच्याव्। शश्राम। ह्वछ्योव्। ह्वछ्याव्। चस्कन्द। लज्योव्। लज्याव्। ललाग। छच्योन्। छच्यान्। अवाकिरत् तं सः। लेछ्योन्। लेछ्यान्। लिलेख तं सः। दज्योन्। दज्यान्। आजघान तं सः।

प्रत्ययादेश युक्तों के स्त्रीलिङ्ग-कर्ता में होने पर कर्मिधातुओं के कम में होने पर एकवचन-वहुवचन में सर्वत्र सामान्य, पूर्ण में भी कवर्ग को 'चवर्ग' का आदेश होता है। थचू-श्रान्ता सा-वह थक गई। थच्य-श्रान्तास्ताः-वे थक गईं। ह्वछू-शुष्का सा-वह सूख गई। ह्वछ्य-शुष्कास्ताः-वे सूख गईं। लजू-लग्ना-लग्न थी। लज्य-लग्नाः-लग्न थीं। लग-संग, पीड़ा और सामञ्जस्य में। ओव्-एय् प्रत्ययों को छुह्-छिह् आदेश। पुंप्रत्ययोकारः (सू० १०।११) से 'ऊ' मात्र और 'यकार'। इससे 'क' आदि को 'च' आदि। कर्मिओं के जैसे-छचून्-अवकीर्णा तेन-उसने विखेर दी। छच्यन्-अवकीर्णास्तेन-उसने विखेर दीं। लीछून्-लिखिता तेन-उसने लिखी। लेछ्यन्-लिखितास्तेन-उसने लिखीं। दजून्-आहता तेन-उसने ज़ख्मी की। दज्यन्-आहतास्तेन-उसने ज़ख्मी कीं। छक-विखेरने में। लेख-लिखने में। दग-मारने

में। 'उंन्' प्रत्यय। 'ऊकार को एकवचन में 'ऊ' मात्र ग्रादेश (सू० ८ बहुवचन में 'यकार' (सू० ५) स्त्रियामीदेतौ सर्वत्र (सू० २३) से उपधा को 'ईकार-एकार'। इससे 'क, ख, ग' को 'च, छ, ज' ग्रादेश। सभी को सामान्य-पूर्ण में जैसे-थच्योव्-थच्याव्-शश्राम-थक गया। ह्वछ्योव्-ह्वछ्याव्-चस्कन्द-सूख गया। लज्योव्-लज्याव्-ललाग-लग्न हुआ। छच्योन्-छच्यान्-अवाकिरत् तं सः-उसने उसे बिखेरा। लेछ्योव्-लेछ्याव्-लिलेख तं सः-उसने उसे लिखा। दज्योन्-दज्यान्-ग्राजघान तं सः-उसने उसे मारा।

तवर्गस्याप्रसिद्धः सर्वत्र सामान्यादौ ॥ ७२ ॥

तवर्गान्तानां धातूनां सर्वत्र सामान्यभूते पूर्णभूते च सादेशस्त्रीकर्त्रेकत्वबहुत्वयोश्च स्त्रीकर्मैकत्वबहुत्वयोश्च अप्रसिद्धः चवर्गो भवति। कचून्। सूत्रिता सा तेन। कचन्। सूत्रितास्तास्तेन। कचायन्। सूत्रयामास तां सः। मछून्। लिप्ता सा तेन। मछन्। लिप्तास्तास्तेन। मछायन्। लिलेप तां सः। लजून्। प्रेषिता सा तेन। लजन्। प्रेषितास्तास्तेन। लजायन्। प्रेषयामास तां सः। कत सूत्रवेष्टने। मथ उपदेहे। लद वस्तुप्रषणे गृहादिनिर्माणे च। उन्-ग्रोन् प्रत्ययौ। उकारस्य एकत्वे ऊमात्रादेशः (सू० ८)। बहुत्वे यकारः (सू० ५)। अनेन तथदानां चछजा ग्रादेशाः। अप्रसिद्धचवर्गादकारः (सू० १२) इति यकारस्य अकारः। ग्रोनः अप्रसिद्धचवर्गादाय (सू० १७) इति ग्रोकारस्य ग्राय ग्रादेशः। सादेशस्त्रीकर्तरि यथा। वाचू। प्राप्ता। वाच। प्राप्तास्ताः। व्वछू। उत्थिता। व्वछ। उत्थितास्ताः। दजू। दग्धा। दज। दग्धास्ताः। वात प्रापणे। व्वथ उत्थाने। दन। भस्मीभवने। धातोः ग्रोव्-एय् प्रत्ययौ तयोः छुह्-छिह ग्रादेशौ। दज़रोज़व्वपज़ां दः (सू० ६४) इति जकारस्य दः। पुंप्रत्ययोकार (सू० १०।११) इत्यादिना क्रमात् ऊकार-यकारौ। अनेन तथदानां च छ ज़ा ग्रादेशाः। अप्रसिद्धचवर्गादकारः (सू० १२) इति यकारस्य अकारः।

तवर्गान्त-धातुग्रों के सर्वत्र सामान्यभूत ग्रौर पूर्णभूत में ग्रादेश-सहित स्त्रीलिङ्ग-कर्तृ-एकवचन ग्रौर बहुवचन में स्त्रीलिङ्ग कर्म-एकवचन ग्रौर बहुवचन में अप्रसिद्ध चवर्ग होता है। कचून्-सूत्रिता सा तेन-वह उस सूत्र से वेष्टित की गई। कचन्-सूत्रितास्तास्तेन-

उससे वे सूत्र से वेष्टित की गईं। कचायन्-सूत्रयामास तां सः-उसने उसे सूत्र से वेष्टित किया। मछून्-लिप्ता सा तेन-वह उससे लिप्त हुई। मछन्-लिप्तास्तास्तेन-वे उससे लिप्त हुईं। मछायन्-लिलेप तां सः-उसने उसे लेप किया। लजून्-प्रेषिता सा तेन-वह उससे भेजी गई। लजन्-प्रेषितास्तास्तेन-वे उससे भेजी गईं। लजायन्-प्रेषयामास तां सः-उसने उसे भेजा। कत-सूत बेठने में। मथ…। लद-वस्तु भेजने में और गृह आदि निर्माण में। उन्-ओन्-प्रत्यय। उकार' को एकवचन में 'ऊ' मात्र आदेश (सू० ८)। बहुवचन में 'यकार' (सू० ५)। इससे 'त, थ, द' को 'च, छ, ज,' आदेश। अप्रसिद्धचवर्गादकारः (सू० १२) से 'यकार' को 'अकार'।

नान्तस्य ञः ॥ ७३ ॥

नकारान्तस्य धातोः सर्वत्र सामान्यभूते पूर्णभूते च सादेशस्त्रीकर्त्रेकत्वबहुत्वयोश्च स्त्रीकर्मैकत्वबहुत्वयोश्च ञकारो भवति। रञोन्। अपाक्षीत्। रञान्। पपाच। छ्यञ्। छिन्ना। छ्यञ। छिन्नास्ताः। रञून्। पक्वा सा। रञन्। पक्वास्ताः। साधनं पूर्ववत्।

नकारान्त धातु से सब जगह सामान्यभूत और पूर्णभूत में आदेश सहित-कर्तृ-एकवचन और बहुवचन में, स्त्रीलिङ्ग-कर्म-एकवचन और बहुवचन में 'ञकार' होता है। रञोन्-अपाक्षीत्-पक चुका। रञान्-पपाच-पका। छ्यञ्-छिन्ना-कटी। छ्यञ-छिन्नास्ताः-वे कटीं। रञून्-पक्वा सा-वह पकी। रञन्-पक्वास्ताः-वे पकीं। साधन पहले की तरह।

लान्तस्य जः ॥ ७४ ॥

लकारान्तस्य धातोः सर्वत्र सामान्यभूते पूर्णभूते च सादेशस्त्रीकर्त्रेकत्वबहुत्वयोश्च स्त्रीकर्मैकत्वबहुत्वयोश्च जकारो भवति। पाजून् पालिता सा। पाज्यन्। पालितास्ताः। पाज्येयन्। पालयामास। वाजून्। अवतारिता। वाज्येयन्। अवतारयामास ताम्। पाल रक्षण। वाल अवतारणे। अनेन लकारस्य जकारः। शेषं साधनं पूर्ववत्। सादेशस्त्रीकर्तरि यथा। चजू। पलायिता। चज्य। पलायिताः। फ्वजू। फुल्ला। फ्वज्य। फुल्लाः। फजू। जीर्णा सा। फज्य। जीर्णास्ताः। एवं सर्वेषाम्।

लकारान्त धातु से सर्वत्र सामान्यभूत और पूर्णभूत में सादेश-स्त्रीलिङ्ग-कर्तृ-एकवचन और वहुवचन में, स्त्रीलिङ्ग-कर्म-एक वचन और वहुवचन में 'जकार' होता है। पाजून् पालिता सा-वह पाली। पाज्यन्-पालितास्ताः-वे पालीं। पाज्येयन्-पालयामास-पाली गई। वाजून्-अवतारिता-उतारी। वाज्येयन्-अवतारयामास ताम्-उसे उतारा गया। पाल-रक्षा करने में। वाल-उतारने में। इससे 'लकार' को 'जकार'। शेष साधन पहले की तरह। सादेश-स्त्रीलिङ्ग-कर्ता में जैसे-चजू-पलायिता-भागी। चज्य-पलायिताः-भागीं। फ्वजू-फुल्ला-फूली। फ्वज्य-फुल्लाः-फूलीं। फजू-जीर्णा सा-वह जीर्ण हुई। फज्य-जीर्णास्ताः-वे जीर्ण हुईं। इसी तरह सभी के।

पिह्मुह्सहग्ह्चह्रां शः ॥ ७५ ॥

पिह् संचूर्णने। मुह मोहने। सह सहने। ग्ह घर्षणे। च्ह चूषे। एषां सर्वत्र सामान्यभूतादावन्त्यस्य शकारो भवति। पिशून्। पिष्टा सा। पिश्यन्। पिष्टास्ताः। पिश्येयन्। पिपेष ताम्। मुशून्। मुषिता सा। मुश्यन्। मुषितास्ताः। मुश्येयन्। मुमोष ताम्। सशून्। सोढा सा। सश्यन्। सोढास्ताः। सश्येयन्। सेहे ताम्। गशून्। घृष्टा सा। गश्यन्। घृष्टास्ताः। ग्श्येयन्। जघर्ष ताम्। च्शून्। चूषिता सा। च्श्यन्। चूषितास्ताः। चश्येयन्। चुचूष ताम्। साधनं पूर्ववत्। एषां धातूनां सादेशकर्तृप्रयोगाभावात्तदुदाहरणाभाव इति बोध्यम्।

पिह्-पीसने में। मुह्-मोहन में। सह-सहन में। ग्ह-घिसने में। च्ह-चूसने में। इन्हें सर्वत्र सामान्यभूत के आदि में अन्त के अक्षर को 'शकार' होता है। पिशून्-पिष्टा सा-वह पिसी। पिश्यन्-पिष्टास्ताः-वे पिसीं। पिश्येयन्-पिपेष ताम्-उसे पीसा। मुशून्-मुषिता सा वह मोहित हुई। मुश्यन्-मुषितास्ताः-वे मोहित हुईं। मुश्येयन्-मुमोष ताम्-उसे मोहित किया। सशून्-सोढा सा-वह सहन हुई। सश्यन्-सोढास्ताः-वे सहन हुईं। सश्येयन्-सेहे ताम्-उसे सहन किया। ग्शून्-घृष्टा सा-वह घिसी। ग्श्यन् घृष्टास्ताः-वे घिसीं। ग्श्येयन्-उसे घिसा। च्शून्-चूषिता सा-वह चूसी। च्श्यन्-चूषितास्ताः-वे चूसीं। चश्येयन्-चुचूष ताम्-उसे चूसा। साधन पहले की तरह।

इन धातुओं के सादेश-कर्तृ-प्रयोग न होने से उनके उदाहरण नहीं दिए गए, यह जानना।

हहरस्तुमध्यान्त्यवर्णविनिमये वा ॥ ७६ ॥

हहर - विवाहकर्मणि इत्यस्य धातोर्मध्यमान्तिमवर्णयोर्हकार रेफयोर्विकल्पेन विनिमये कृते सति अन्त्यभूतस्य हकारस्य शकारादेशो भवति। हरशून्। विवाहिता। हहरून्। विवाहिता।

हहर-विवाहकर्म में, इस धातु से मध्यम और अन्तिम वर्ण में 'हकार और 'रेफ' का विकल्प से विनिमय करने पर अन्त में होने वाले हकार को 'शकार' का आदेश होता है। हरशून्-विवाहिता-विवाहित थी। हहरुन्-विवाहिता-विवाहित थी।

थकपकोरोवादीनां पुंवर्तमानादेशाश्छहोर्लोपश्च भूते ॥ ७७ ॥

थक श्रमे। पक गतौ। अनयोः ओव् एय् ओख् एव ओस् एय् इति पुंकर्तृ प्रत्ययानां भूतविषये क्रमेण पुंकर्तृ संबन्धिवर्तमानायाः छुह् छिह् छुख् छिव छुस् छिह् इत्येते आदेशा भवन्ति छकारहकारयोश्च लोपो भवति। ततः स्त्रीकर्तरि सति पुंकर्तृ प्रत्ययोकारः (सू० १०) इत्यादिसूत्रैः स्त्रीसंबन्धिस्वरूपाणि साध्यानि। थकु। श्रान्तः। थकि। श्रान्ताः। पकु। चलितः। पकि। चलिताः। पकुख्। चलितस्त्वम्। पकिव। चलिता यूयम्। पकुस्। चलितोऽहम्। पकि। चलिता वयम्। धात्वोः पुंकर्तरि (सू० ९) इति ओव् एय् ओख् एव-ओस् एय् प्रत्ययाः। तेषामनेन छुह् आदयो वर्तमाना (विभक्ति प्रत्यया) देशाः छकारहकारयोश्च लोपः। एषामेव स्त्रीलिङ्गक्रिया स्वरूपसिद्धयै पुंकर्तृ प्रत्ययोकारस्य स्त्रियां च (सू० १०) इति सूत्रेण उकारस्य ऊमात्रादेशः। इकारस्य यत् (सू. ११) इति इकारस्य यकारः। कवर्गस्यैकत्वेऽपि (सू. ७१) इति ककारस्य चत्वम्। पचू इत्यादीनि संपद्यन्ते। पचू। चलिता सा। पच्य-चलितास्ताः। पचूख्। चलिता त्वम् स्त्री०। पच्यव। चलिता यूयम् स्त्री०। पचूस्। चलिताहम् स्त्री०। पच्य। चलिता वयम् स्त्रियः। इति स्त्रीकर्तृ स्वरूपाणि भवन्ति। एवमग्रे सर्वत्रावधार्यम्।

थक-थकावट में। पक-गति में। इन दोनों में ओव् एय् ओख् एव ओस् एय्-ये पुंलिङ्ग- कर्तृ-प्रत्ययों के भूत के विषय में क्रम से पुंलिङ्ग कर्तृ-संबन्धि वर्तमान को 'छुह्-छिह्-छुख्-छिव-छुस्-

छिह् ये आदेश होते हैं और 'छकार-हकार' का लोप होता है। इस के बाद स्त्रीलिङ्गकर्ता में होने पर 'पुंकर्तृप्रत्ययोकारः (सू. १०) इत्यादि सूत्रों से स्त्रीसंबन्धिस्वरूप सिद्ध कर लेने। थकु-श्रान्तः-थक गया। थकि-श्रान्ताः-थक गए। पकु-चलितः-चल पड़ा। पकि-चलिताः-चल पड़े। पकुख्-चलितास्त्वम्-तू चल पड़ा। पकिव-चलिता यूयम्-तुम चल पड़े। पकुस् चलितोऽहम्-मैं चल पड़ा। पकि-चलिता वयम्-हम चले पड़े। धात्वोः पुंकर्तरि (सू. ३६) से 'ओव्, एय्, ओख्, एव, ओस्, एय् प्रत्यय। उन्हें इससे 'छुह्' आदि वर्तमान विभक्तिप्रत्ययादेश और 'छकार-हकार' का लोप होता है। इन्हें ही स्त्रीलिङ्गक्रियास्वरूपसिद्धि के लिए 'पुंकर्तृप्रत्ययोकारस्य स्त्रियां च (सू. १०) इस सूत्र से 'उकार' को 'ऊ' मात्र आदेश। इकारस्य यत् (सू. ११) से 'इकार' को 'यकार'। कवर्गस्यैकत्वेऽपि (सू. ७१) से 'ककार' को 'च'। पचू-इत्यादि बन जाते हैं। पचू-चलिता सा-वह चली। पच्य-चलितास्ताः-वे चलीं। पचूख्-चलिता त्वम् स्त्री०-तू चली। पच्यव-चलिता यूयम् स्त्री०-तुम चलीं। पचूस्-चलिताहम्-मैं चली। पच्य-चलिता वयम्-हम चलीं। ये स्त्रीकर्तृ-स्वरूप होते हैं। इस प्रकार आगे सब जगह समझ लेना।

ओवावादयः सामान्यपूर्णयोः ॥ ७८ ॥

येषां धातूनां भूतविषये वर्तमानप्रत्ययादेशो भवति तेषां सामान्य-भूते ओव् आदयः पूर्णभूते आवादयः प्रत्ययाः अवगन्तव्याः। पच्योव्। अचालीत्। पच्याव्। चचाल। पक गतौ। ओव् आव् प्रत्ययौ। यागमः। कवर्गस्यैकत्वेऽपि (सू. ७१) इति ककारस्य चकारः। एवं सर्वेषां ज्ञेयम्।

जिन धातुओं के भूत विषय में वर्तमान प्रत्ययादेश होता है, उनके सामान्यभूत में 'ओव्' आदि, पूर्णभूत में 'आव्' आदि प्रत्यय जानने। पच्योव्-अचालीत्-चल पड़ा। पच्याव्-चचाल-चला। पक-गति अर्थ में, ओव्-आव् प्रत्यय 'य' का आगम। कवर्गस्यैकत्वेऽपि (सू. ७१) से 'ककार' को 'चकार'। इस तरह सभी का जानना।

समखह्वखोः खात् ॥ ७९ ॥

खान्तेषु धातुषु। समख समक्षीभवने। ह्वख शोषे इत्यनयोर्भूत-विषये ओव् आदीनां प्रत्ययानां वर्तमानप्रत्ययादेशा भवन्ति छकार-

हकारयोश्च लोपः। ओव् आदयो निरादेशाः सामान्यभूते। आव् आदयश्च पूर्णभूते प्रत्यया विज्ञेयाः। समखु। समक्षीभूतः। समखि। समक्षीभूतास्ते। ह्वखु। शुष्कः। ह्वखि। शुष्कास्ते। साधनं पूर्ववत्। स्त्रीलिङ्गे तु। समछू समक्षीभूता सा। समछ्य। समक्षीभूतास्ताः। ह्वछु। शुष्कास्ताः। ह्वछ्य। शुष्कास्ताः। इत्यादयो ज्ञेयाः। समछ्यौव्। समक्षीबभूव सः। समछ्याव्। समक्षीवभूव सः। इति सामान्यपूर्णभूतयोर्बोध्यम्।

खान्त धातुओं में। समख-सामने होने में। ह्वख-सूखने में, इन दोनों के भूतविषय में 'ओव्' आदि प्रत्ययों के वर्तमानप्रत्ययादेश और 'छकार-हकार' का लोप होता है। 'ओव्' आदि निरादेश सामान्यभूत में और 'आव्' आदि पूर्णभूत में प्रत्यय जानने। समखु-समक्षीभूतः-सामने हुआ। समखि-समक्षीभूतास्ते-वे सामने हुए। ह्वखु-शुष्कः-सूखा। ह्वखि-शुष्कास्ते-वे सूखे। साधन पहले की तरह। स्त्रीलिङ्ग में तो-समछू-समक्षीभूता सा-वह सामने हुई। समछ्य-समक्षीभूतास्ताः-वे सामने हुईं। ह्वछु-शुष्का सा-वह सूखी। ह्वछ्य-शुष्कास्ताः-वे सूखीं। इत्यादि जानने। समछ्यौव्-समक्षीवभूव सः-वह सामने हुआ। समछ्याव्-समक्षीवभूव सः वह सामने हुआ। यह सामान्य और पूर्णभूत में जानना।

तग्श्वंगलगां गात् ॥ ८० ॥

गकारान्तेषु धातुष। तग तज्ज्ञतायाम्। श्वंग शयने। लग संगे पीडायां सामञ्जस्ये च। इत्येषां भूतविषये ओव् आदीनां प्रत्ययानां वर्तमानप्रत्ययादेशा भवन्ति छकारहकारयोश्च लोपः। ओवावादयश्च सामान्यपूर्णयोर्वेद्याः। तगु। (सुज्ञातम्)। तगि सुज्ञातानि। लगु। लग्नः। लगि। लग्नाः। श्वंगु। सुप्तः। श्वंगि। सुप्ताः। साधनं। पूर्ववत्। स्त्रीलिङ्गे तु। तजू। सुज्ञाता। तज्य। सुज्ञाताः। लजू। लग्ना। लज्य। लग्नाः। श्वंजू। सुप्ता। श्वंज्य। सुप्ताः। इत्यादयो वेद्याः। तज्योव्। सुज्ञातमभूत्। तज्याव। सुज्ञातं वभूव। लज्योव्। अलागीत्। लज्याव। ललाग। श्वंज्योव्। अस्वाप्सीत् सः। श्वंज्याव्। सुष्वाप सः। इत्यादयः सामान्यपूर्णयोर्विज्ञातव्याः।

गकारान्त धातुओं में। तग-उसे जानने में। श्वंग-सोने में। लग-संग में, पीड़ा में और सामञ्जस्य में। इनके भूतविषय में

'ओव्' आदि प्रत्ययों के वर्तमान प्रत्ययादेश और छकार-हकार का लोप होता है। 'ओव्-आव्' आदि सामान्य और पूर्ण में जानने। तगु-सुज्ञातम्-अच्छी तरह जाना। तगि-सुज्ञातानि-अच्छी तरह जाने। लगु-लग्नः-लग्न हुआ। लगि-लग्नाः लग्न हुए। श्वंगु-सुप्तः-सोआ। श्वंगि-सुप्ताः-सोए। साधन पहले की तरह। स्त्रीलिङ्ग में तो-तजू-सुज्ञाता-अच्छी तरह जानी। तज्य-सुज्ञाताः-अच्छी तरह जानीं। लजू-लग्ना-लग्न हुई। लज्य-लग्नाः-लग्न हुईं। श्वजू-सुप्ता-सोई। श्वंज्य-सुप्ताः-सोईं। इत्यादि जानने। तज्योव्-सुज्ञातमभूत्-अच्छी तरह जाना गया। तज्याव्-सुज्ञातं बभूव-अच्छी तरह जाना गया। लज्योव्-अलागीत्-लग चुका। लज्याव्-ललाग-लगा। श्वज्योव-अस्वाप्सीत् सः-वह सो गया। श्वंज्याव्-सुष्वाप सः-वह सोया। इत्यादि सामान्य और पूर्ण में जानने।

क्चखोचपचरोचव्यचह्वचां चात् ॥ ८१ ॥

अप्रसिद्धचकारान्तानां मध्यात्। क्च आर्द्रीभवने। खोच भये। पच ऋणादिविश्वासे। रोच रोचने। व्यच संभवे। ह्वच विस्त्रीभवने। एषां धातूनां भूतविषये ओवादीनां प्रत्ययानां वर्तमानादेशाः स्युः छकारहकारयोश्च लोपः। ओवावादयश्च सामान्यपूर्णयोर्बोद्धव्याः। कतु। तिमितः सः। कति। तिमितास्ते। खूचु। भीतः। खूचि। भीताः। पचु। विस्रब्धं तेन। पचि। विस्रब्धं तैः। रूचु। रोचितः। रूचि। रोचिताः। व्यचु। व्यचितः। व्यचि। व्यचिताः। ह्वतु। कुथितः। ह्वति-कुथिताः। क्चह्वचोस्तः (सू. ६३) इति द्वयोस्तकारः। खोचरोचोः ओकारस्योकारः सादेशः पुंकर्तरि च (सू. २४) इत्युपधाया ऊकारः। शेषं साधनं पूर्ववत्। स्त्रीलिङ्गे तु। क्चू। तिमिता सा। क्च। तिमितास्ताः। खूचू। भीता सा। खोच। भीतास्ताः। रूचू। रोचिता सा। रोच। रोचितास्ताः। व्यचू। व्यचिता सा। व्यच। व्यचितास्ताः। ह्चू। अकुथ्यत्सा। ह्वच्। अकुथ्यन्ताः। बहुवचनेषु इकारस्य यत्वे कृते तस्य अप्रसिद्धः चवर्गादकारः (सू.१२)। खोचरोचोः स्त्रियामूदोताव् (सू.२५) इत्युपधाया ऊकार-ओकारौ। ह्वचः पुंल्लिङ्गसंबन्धिनि तकारे कृते तस्य तवर्गस्याप्रसिद्धः सर्वत्र सामान्यादाव् (सू. ७२) इति चत्वम्। कच्योव्। तितेम सः। खोचोव्। अभैत्सीत् सः। रोच्योव्। रुरुचे। व्यच्योव्।

विव्याच । ह्‌वचोव् । अकोथीत् । इत्यादयः सामान्यभूतादौ निर्धार्याः । अत्र क्‌चरोचव्यचां न क्‌चग्व्रच (४६) इत्यादि सूत्रेण यकारलोपनिषेधः । शेषं पूर्ववत् ।

अप्रसिद्ध चकारान्तों के मध्य से । क्‌च-गीला होने में । खोच भय में । पच-ऋणादि विश्वास में । रोच-रुचिकर होने में । व्यच-संभव में । ह्‌वच—विस्री होने में । इन धातुओं के भूतविषय में 'ओव्' आदि प्रत्ययों के वर्तमान-आदेश और छकार-हकार का लोप होता है । ओव्-आव् आदि सामान्य और पूर्ण में जानने । क्‌तु-तिमितः सः—वह गीला हुआ । क्‌ति-तिमितास्ते-वे गीले हुए । खूचू-भीतः-डरा । खूचि-भीताः-डरे । पचु-विस्रब्धं तेन-उसने विश्वास किया । पचि-विस्रब्धं तैः-उन्होंने विश्वास किया । रूचु-रोचितः-अच्छा लगा । रूचि-रोचिताः अच्छे लगे । व्यचु-व्यचितः-संभव हुआ । व्यचि-व्यचिताः-संभव हुए । ह्‌वतु-कुथितः······ । ह्‌वति-कुथिताः···। क्‌चह्‌वचोस्तः (सू. ६३) से दोनों को 'तकार' । खोच-रोच के 'ओकार' को 'उकार' । सादेशः पुंकर्तरि च (सू. २४) से उपधा को 'ऊकार' । बाकी साधन पहले की तरह । स्त्रीलिङ्ग में तो-क्‌चू-तिमिता सा-वह गीली हुई । क्‌च-तिमितास्ताः-वे गीली हुईं । खूचू-भीता सा-वह डरी । खोच-भीतास्ताः-वे डरीं । रूचू-रोचिता सा-वह अच्छी लगी । रोच-रोचितास्ताः-वे अच्छी लगीं । व्यचू-व्यचिता सा-वह संभव हुई । व्यच-व्यचितास्ताः-वे संभव हुईं । ह्‌वचू-अकुथ्यत्-सा······। ह्‌वच-अकुथ्यन् ताः ······। बहुवचनों में 'इकार' को 'य' करने पर उसे अप्रसिद्ध चवर्ग से 'अकार' (सू. १२) । खोचरोचोः स्त्रियामूदोताव् (सू. २५) से उपधा को 'ऊकार-ओकार' । ह्‌वच् को पुंल्लिङ्ग से सम्बद्ध 'तकार' करने पर उस 'तवर्ग' को अप्रसिद्ध 'सर्वत्र सामान्यादाव् (सू. ७२) से 'च' । क्‌च्योव्-तितेम सः-वह गीला हुआ । खोचोव्-अभैत्सीत् सः—वह डर गया । रोच्यौव्-रुरुचे-अच्छा लगा-व्यच्योव् विव्याच-संभव हुआ । ह्‌वचोव्-अकोथीत्······। इत्यादि सामान्यभूतादि में जानने । यहां 'क्‌चरोचव्यचां न क्‌च-ग्व्रच (४६) इस सूत्र से 'यकार' के लोप का निषेध । बाकी पहले की तरह ।

गच्छो योग्यार्थे ॥ ८२ ॥

गछ गतौ युक्तीभवने चेत्यस्य योग्येच्छाया अर्थे भूते ओव् आदीनां

प्रत्ययानां वर्तमानप्रत्ययादेशाः स्युः छकारहकारयोश्च लोपः। गछू। गछि। गछुख्। गछिव। गछुस्। गछि। इति। अस्य सामान्यपूर्णयोः प्रयोगादर्शनात्केवलं भूतप्रयोगा एव साधवः।

गछ-गति और युक्ति होने में 'इसके योग्य-इच्छाके अर्थ में होने पर 'ओव्' आदि प्रत्ययों को वर्तमान प्रत्ययादेश और छकार-हकार का लोप होता है। गछ्। गछि। गछुख्। गछिव्। गछुस्। गछि। इति। इसका सामान्य और पूर्ण में प्रयोग न देखे जाने से केवल भूत में प्रयोग ही साधु है।

व्वपजदज़रोजां ज़ात् ॥ ८३ ॥

व्वपज़ उत्पत्तौ। दज भस्मीभवने। रोज स्थितौ। इत्येषां जकारान्तेषु धातुषु भूतविषये ओव् आदीनां प्रत्ययानां वर्तमानादेशाः स्युः चहोर्लोपश्च। ओवादयश्च सामान्यपूर्णयोर्बोध्याः व्वपदु। उत्पन्नः। व्वपदि। उत्पन्नाः। ददु-दग्धः। ददि। दग्धाः। रूद्। स्थितः। रूदि। स्थिताः। अत्र दजरोजव्वपजां दः (सू० ६४) इति जकारस्य दकारः। शेषं पूर्ववत्। स्त्रीलिङ्गकर्तरि तु। दजू। दग्धा। दज। दग्धाः। रूजू। अवस्थिता। रोज। अवस्थिताः। व्वपजू। उत्पन्ना। व्वपज। उत्पन्नाः। अत्रापि पुंलिङ्गस्वरूपेषु जकारस्य दकारे कृते तवर्गस्याप्रसिद्धः (७२) इत्यादिसूत्रेण दस्य जः। रोजः स्त्रियामूदो ताव् (सू. २५) इत्युपधाया एकत्र ऊकारः। व्वपजोव्। उत्पद्यत सः। व्वपजाव्। उत्पेदे सः। दजोव्। अदह्यत। दजाव्। देहे। रोजोव्। अस्थात् सः। रोजाव्। तस्थौ सः। इत्यादीनि सामान्यभूतयोः स्वरूपाणि वेदितव्यानि।

व्वपज-उत्पत्ति में। दज-राख होने में। रोज-स्थिति में। इनके जकारान्त धातुओं में भूतविषय में 'ओव्' आदि प्रत्ययों को वर्तमान-आदेश और 'छ-ह' का लोप होता है। 'ओव्' आदि सामान्य और पूर्ण में जानने। व्वपदु-उत्पन्नः-पैदा हुआ। व्वपदि-उत्पन्नाः-पैदा हुए। ददु-दग्धः-जला। ददि-दग्धाः-जले। रूदु-स्थितः-ठहरा। रूदि-स्थिताः-ठहरे। यहां 'दजरोजव्वपजां दः' (सू. ६४) से 'जकार' को 'दकार'। बाकी पहले की तरह। स्त्रीलिङ्गकर्ता में तो दजू-दग्धा जली। दज-दग्धाः। जले। रूजू-अवस्थिता-खड़ी थी। रोज-अवस्थिताः

खड़ी थीं। व्वपज़ू-उत्पन्ना पैदा हुई। व्वपज-उत्पन्नः पैदा हुई। यहां भी पुंल्लिङ्गस्वरूपों में 'जकार' को 'दकार' करने पर 'तवर्गस्याप्रसिद्धः (७२) इस सूत्र से 'द' को 'ज'। रोज से 'स्त्रियामूदोताव् (सू. २५) से उपधा को एक जगह 'ऊकार'। व्वपजोव्-उत्पद्यत सः वह पैदा हो गया। व्वपजाव्-उत्पेदे सः— वह पैदा हुआ। दजो - अदह्यत-जल गया। दजाव्-देहे-जला। रोजोव्-आस्थात् सः-वह ठहर गया। रोजाव्-तस्थौ सः-वह ठहरा। ये सामान्य और भूत में स्वरूप जानने।

फटफुटरोटां टात् ॥ ८४॥

टकारान्तेषु धातुषु। फट काष्ठभेदाङ्कुरोद्भेदयोर्जलनिमज्जनादिषु च। फुट भङ्गे। रोट अवष्टम्भे। एषां धातूनां भूतविषये ओव् आदीनां प्रत्ययानां वर्तमानप्रत्ययादेशा भवन्ति पूर्ववच्छहोश्च लोपः। सामान्यपूर्णभूतयोः ओवावादयो मन्तव्याः। फटु। उद्भिन्नः। फटि। उद्भिन्नाः। फुटु। भग्नः। फुटि। भग्नाः। रूटु। स्तम्भितः। रूटि। स्तम्भिताः। साधनं सुगमम्। स्त्रीकर्तरि तु। फटु। उद्भिन्ना। फच्य उद्भिन्नाः। फुटू। भग्ना। फुच्य। भग्नाः। रूटु। स्तम्भिता। रोच्य। स्तम्भिताः। अत्र सादेशकर्तृकर्मिणोरनेकत्वे च स्त्रियाम् (सू. ७०) इति सूत्रेण बहुषु टस्य चत्वम्। रोटः। स्त्रियामूदोताव् (सू. २५) इति एकत्वे ऊकारः। शेषं पूर्ववद्विधेयम्। फच्योव्। उद्भिद्यते स्म सः। फुच्याव्। उद्भिद्यते स्म सः। फुच्योव्। भज्यते स्म सः। रोच्योव् वा रोठ्योव्। अवाष्टम्भिष्ट। रोच्याव् वा रोठ्याव्। (अवतस्तम्भे)। रोटोऽत्र विकल्पेन वर्तमानादेशा बोध्याः। आदेशाभावे अनादेशकर्तृधातुभूतादौ नो आदेशा (६८) इति सूत्रेण चकारादेशनिषेधः। तत्र रोटियाव् इति पूर्णभूतस्वरूपं वेद्यम्।

टकारान्त धातुओं में। पट-लकड़ी सूखी चीरना और अङ्कुर फूटने में तथा जल में डूबने आदि में। फुट-भङ्ग में। रोट-अवष्टम्भ में। इन धातुओं के भूतविषय में 'ओव्' आदि प्रत्ययों को वर्तमानप्रत्ययादेश और 'छ-ह' का लोप होता है। सामान्य और पूर्णभूत में 'ओव्-आव्' आदि मानने। फटु-उद्भिन्नः-फूटा। फटि-उद्भिन्नाः-फूटे। फुटु-भग्नः-टूटा। फुटि-भग्नाः-टूटे। रूटु-स्तम्भितः-स्तम्भित हुआ। रूटि-स्तम्भिताः—स्तम्भित हुए। यहां 'सादेशकर्तृकर्मिणोर-

नेकत्वे च स्त्रियाम् (सू. ७०) इस सूत्र से बहुतों में 'ट' को 'च'। 'रोट' से स्त्रियामूदोताव् (सू. २५) से एकवचन में 'ऊकार'। बाकी पहले की तरह जानना। फच्योव्-उद्भिद्यते स्म सः-वह फूट रहा था। फच्याव्- उद्भिद्यते स्म सः-वह फूट रहा था। फुच्योव्-भज्यते स्म सः-वह टूट रहा था। फुच्याव्-भज्यते स्म सः-वह टूट रहा था। रोच्योव् वा रोठ्योव्-अवाष्टम्भिष्ट-स्तम्भित हो गया। रोच्याव् वा रोठ्याव्-अवतस्तम्भे-स्तम्भित हुआ। 'रोट' से यहां विकल्प से वर्तमान-आदेश जानने। आदेश न होने पर 'अनादेशकर्तृधातुभूतादौ नो आदेशा (६८) इस सूत्र से चकारादेशनिषेध। वहां 'रोटियाव्' यह पूर्णभूत स्वरूप जानना।

ब्वडो डात् ॥ ८५ ॥

डकारान्तेषु धातुषु। ब्वड निमज्जने इत्यस्य भूतविषये ओव् आदीनां छुह् आदि प्रत्ययादेशाः स्युः। लोपसामान्यपूर्णभूतप्रत्ययादयश्च पूर्ववज्ज्ञेयाः। ब्वडु। निमग्नः। ब्वडि। निमग्नाः। साधनं सुगमम्। स्त्रीकर्तरि यथा। ब्वडू। निमग्ना। ब्वज्य। निमग्नाः। वहुत्वे सादेशभूतकर्तृकर्मिणोर् (सू. ७०) इत्यादिना डस्य जः। ब्वज्योव्। न्यमज्जीत् व्यज्याव्। निममज्ज। इति सामान्यपूर्णस्वरूपे।

डकारान्त धातुओं में। ब्वड-डूबने में, इसके भूतविषय में 'ओव्' आदि को 'छुह्' आदि प्रत्ययादेश होते हैं। लोपसामान्यपूर्णभूतप्रत्ययादि पहले की तरह जानने। ब्वडु-निमग्नः-डूब गया। ब्वडि-निमग्नाः-डूब गए। साधन सुगम है। स्त्रीकर्ता में जैसे-ब्वडू-निमग्ना-डूब गई। ब्वज्य-निमग्नाः-डूब गई। वहुवचन में-सादेशभूतकर्तृ-कर्मिणोर् (सू० ७०) इस से 'ड' को 'ज'। ब्वज्योव्-न्यमज्जीत्-डूब चुका। ब्वज्याव्-निममज्ज-डूबा। यह सामान्यपूर्णस्वरूप में।

वातस्ताव ॥ ८६ ॥

तकारान्तेषु। वात प्रापणे इत्यस्य भूतविषये वर्तमानप्रत्ययादेशाः स्युः छुहोर्लोपश्च। सामान्यपूर्णप्रयोगाश्च पूर्ववत्। वोतु। प्राप्तः। वाति। प्राप्ताः। अत्र उद्युतस्योपधाया आत ओत्वम् (सू० २०)। इत्युपधाकारस्य ओकारः। अपरत्र इदुदद्युतानां पूर्ववर्णस्वराप्रसिद्धता

(सू० १९) इति । स्त्रीकर्तरि यथा । वाचू । प्राप्ता । वाच । प्राप्ताः । तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) इत्यादिना चत्वम् । बहुत्वे अप्रसिद्धचवर्गादकारः (सू० १२) इति यकारस्याकारः । वाचोव् । प्राप्सीत् । वाचाव् । प्राप । इति सामान्यपूर्णयोः प्रयोगौ ।

तकारान्तों में । वात-प्राप्त करने में, इसके भूतविषय में वर्तमानप्रत्ययादेश और 'छ-ह' का लोप होता है । सामान्यपूर्णप्रयोग पहिले की तरह । वोतु-प्राप्तः-पाया । वाति-प्राप्ताः-पाए । यहाँ 'उद्युतस्योपधाया आत ओत्वम् (सू० २०) से उपधा के 'आकार' को 'ओकार' । दूसरी जगह 'इदुदद्युतानां पूर्ववर्णस्वराप्रसिद्धता (सू० १९) । स्त्रीलिङ्गकर्ता में जैसे-वाचू-प्राप्ता-पाई । वाच-प्राप्ताः-पाए । तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) इस से 'च' । वहुवचन में 'अप्रसिद्धचवर्गादकारः (सू० १२) से 'यकार' को 'आकार' । वाचोव्-प्राप्सीत्-पाया गया । वाचाव्-प्राप-पाया । ये सामान्य और पूर्ण में प्रयोग ।

व्वथस्थात् ॥ ८७ ॥

थकारान्तेषु । व्वथ उत्थाने इत्यस्य भूतविषये वतमानादेशादयः स्युः । व्वथु । उत्थितः । व्वथि । उत्थिताः । सुगमम् । स्त्रीकर्तरि यथा । व्वछू । उत्थिता । व्वछ । उत्थितास्ताः । अत्र तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) इति यस्य 'छत्वम् । यकारस्य अकारः । व्वछोव् । उदस्थात् सः । व्वछाव् । उत्तस्थौ सः । इति सामान्यपूर्णयोर्भवतः ।

थकारान्तों में । व्वथ-उठाने में, इसके भूतविषय में वर्तमानादेश होते हैं । व्वथु-उत्थितः-उठा । व्वथि-उत्थिताः-उठे । सुगम है । स्त्रीकर्ता में जैसे-व्वछू-उत्थिता-उठीं । व्वछ-उत्थितास्ताः-वे उठीं । यहाँ 'तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० २७) से 'य' को 'छ' । 'यकार' को 'अकार' । व्वछोव्-उदस्थात् सः-वह उठ गया । व्वछाव्-उत्तस्थौ सः-वह उठा । ये सामान्य और पूर्ण में होते हैं ।

छ्यनसपनोर्नात् ॥ ८८ ॥

नकारान्तेषु । छ्यन छेदे । सपन संपन्ने । इत्यनयोर्भूतविषये वर्तमानप्रत्ययादेशाद्या भवन्ति । तत्र सपनसहचरयोः सपद संपन्ने । सपज संपन्ने । इत्यनयोश्चेत्थं वर्तमानादेशादयो बुद्धिमतोह्याः । सपनु । संपन्नः । सपनि । संपन्नाः । स्त्रीलिङ्गे । सपंञ् । संपन्ना । सपंञ । संपन्नास्ताः । साधनं पूर्ववत् । सपञोव् । समपादि । सपञाव् । संपेदे इति च विज्ञेयम् ।

नकारान्तों में । छ्यन-छेद अर्थ में । सपन-संपन्न करने अर्थ में । इन दोनों में भूतविषय में वर्तमानप्रत्ययादेश आदि होते हैं । वहां सप्न-सहचर में । सपद-संपन्न करने अर्थ में । सपज्ञ-संपन्न करने अर्थ में । इनमें इस प्रकार वर्तमान-आदेश-आदि बुद्धिमान् को जानना चाहिए । सपनु-संपन्नः-संपन्न हुआ । सपनि-संपन्नः-संपन्न हुए । स्त्रीलिङ्ग में-सपंञ्-संपन्ना-संपन्न हुई । सपञ-संपन्नास्ताः- वे संपन्न हुईं । साधन पहले की तरह । सपञोव्-समपादि-संपन्न हो गया । सपञाव्-संपेदे-संपन्न हुआ । यह जानना ।

वुपश्रपोः पात् ॥ ८९ ॥

वुप अन्तर्दाहे । श्रप जीर्णने । इत्यनयोः पकारान्तेषु धातुषु भूतविषये वर्तमानप्रत्ययादेशाः स्युः छहोर्लोपश्च । वुपु । अन्तर्दग्धः । वुपि । अन्तर्दग्धाः । श्रपु । जीर्णः । श्रपि । जीर्णाः । वुप्योव् । अन्तर्दग्धोभूत् । वुप्याव् । अन्तर्दग्धो वभूव । साधनं सुगमम् । विकल्पेन पूर्णभूते । वुपि याव् । अन्तर्दग्धो वभूव । श्रपियाव् । जीर्णो वभूव । इति स्वरूपे भवतः ।

वुप-अन्तर्दाह में । श्रप-जीर्ण होने में । इन दोनों में पकारान्त-धातुओं में भूतविषय में वर्तमानप्रत्ययादेश और 'छ-ह' का लोप होता है । वुपु-अन्तर्दग्धः-भीतर से जला । वुपि-अन्तर्दग्धाः-भीतर से जले । श्रपु-जीर्णः-जीर्ण हुआ । श्रपि-जीर्णाः-जीर्ण हुए । वुप्योव्-अन्तर्दग्धोऽभूत्-भीतर से जल गया । वुप्याव्-अन्तर्दग्धो वभूव-भीतर से जला । साधन सुगम है । विकल्प से पूर्णभूत में । वुपियाव्-अन्तर्दग्धो वभूव-भीतर से जला । श्रपियाव्-जीर्णो वभूव-जीर्ण हुआ । ये स्वरूप में होते हैं ।

प्रयलयवयां यात् ॥ ९० ॥

यकारान्तेषु धातुषु । प्रय प्रीणने । लय अर्पणे । वय पथ्यीभवने । इत्येषां धातूनां भूतविषये । वर्तमानप्रत्ययादेशा पूर्ववत्स्युः । प्रयु । प्रीणितः । प्रयि । प्रीणिताः ।लयु । अर्पितम् । लयि । अर्पितानि । वयु । पथ्यीभूतम् । वयि । पथ्योभूतानि । साधनं पूर्ववत् । प्रय्योव् । प्रय्याव् । लय्योव् । लय्याव् । वय्योव् । वय्याव् । इति सामान्य-पूर्णस्वरूपाणि भवन्ति ।

यकारान्त धातुओं में। प्रय-प्रसन्न करने में। लय अर्पित करने में। वय-पथ्यी होने में। इन धातुओं के भूतविषय में। वर्तमान-प्रत्ययादेश पहले की तरह हों। प्रयु-प्रीणितः-प्रसन्न हुआ। प्रयि-प्रीणिताः-प्रसन्न हुए। लयु……। लयि……। वयु-पथ्य हुआ। वयि-पथ्य हुए। साधन पहले की तरह। प्रय्योव्। प्रय्याव्। लय्योव्। लय्याव्। वज्योव्। वज्याव्। ये सामान्य पूर्णस्वरूप होते हैं।

खरतरफरफेरमरसोरां रात्॥ ६१॥

रकारान्तेषु धातुषु। खर अप्रीतौ। तर तरणे। फर स्तेये। फेर भ्रमणविस्रीभवनपश्चातापवैलोम्येषु। मर मरणसंधापनयोः। सोर अवसाने। इत्येषां भूतविषये पूर्ववत् वर्तमानादेशादयः स्युः। तत्र मरः संधापनार्थे कर्मप्रयोगाः कर्तृप्रयोगाश्च भवन्ति। मरणार्थे तु केवलं कर्तृप्रयोगा एवेति निर्णयम्। खरु। अप्रीणितः। खरि अप्रीणिताः। तरु। तीर्णः। तरि। तीर्णाः। फरु। चोरितं तेन फरि। चोरितं तैः। फ्यूरु। परिवर्तितः। फीरि। परिवर्तिताः। मूदु। मृतः। मूदि। मृताः। सूरु। अवसितः। सूरि। अवसिताः। पूर्वं सर्वाणि साधितान्येव। मरः संधापनार्थे तु मरु। संधापितः। मरि। संधापिताः। इत्यादयो भवन्ति। मेरून्। संधापितस्तेन सः। मरिन्। संधापितास्ते तेन। इत्यादीनि कर्मस्वरूपाणि स्युः। स्त्रीकर्तृस्वरूपाणि च पूर्ववत्साध्यानि।

रकारान्त धातुओं में। खर-अप्रसन्नता में। तर-तैरने में। फर-चोरी में। फेर-भ्रमण-विस्रीभवन, पश्चाताप-वैलोम्य में। मर-मरण और संधापन में। सोर-अन्त में। इनके भूतविषय में पहिले की तरह वर्तमान-आदेश आदि होते हैं। वहां मर-संधापन अर्थ में कर्मप्रयोग और कर्तृप्रयोग होते हैं। मरण अर्थ तो केवल कर्तृप्रयोग ही; यह निर्णय लेना चाहिए। खरु-अप्रसन्न हुए।। खरि अप्रसन्न हुए। तरु-तीर्णः-तैरा। तरि-तैरे। फरु-उसनेचुराया। फरि-उन्होंने चुराया। फ्यूरु-परिवर्तित हुआ। फीरि-परिवर्तित हुए। मूदु-मरा मूदि-मरे। सूरु-समाप्त हुआ। सूरि-समाप्त हुए। पहले सभी सिद्ध किए जा चुके हैं। मर-संधापनार्थ में तो। मरु-संधापित हुआ। मरि-संधापित हुए। इत्यादि होते हैं। मरुन्-वह उससे संधापित

हुआ। मरिन्-वे उससे संघापित हुए। इत्यादि कर्मस्वरूप हों। स्त्री-लिङ्ग में कर्तृ-स्वरूप पहिले ही सिद्ध किए जा चुके हैं।

मरः स्त्रियां स्त्रीप्रत्ययादेशाः ॥ ९२ ॥

प्रोक्तानां धातूनां मध्यात्। मर मरणे इत्यस्य स्त्रीकर्तरि सति ओव् आदीनां प्रत्ययानां वर्तमानसंबन्धिस्त्रीप्रत्ययादेशाः स्युः। न तु पुंकर्तृ प्रत्ययोकारः (सू० १०) इत्यादिना सिद्धिः। म्वय। मृता सा। म्वय। मृताः। म्ययख्। मृता त्वम्। म्वयम्। मृता यूयम्। म्वयस्। मृता अहम्। म्वय। मृता वयम्। मर मरणे ओव् आदीनां क्रमात् छयह् छयह् छयख् छयव छयस् छयह् इति आदेशेषु कृतेषु छहोर्लोपः। स्त्रियां भूतेऽपि (सू० ३१) इति उपधाया नत्वम्। मरश्चापुंभूते (सू० ५८) इति रकारलोपः। संथापनार्थे तु। मरु-संधापिता। मर्य। संधापिताः। इत्यादयो भवन्ति।

कही गई धातुओं के मध्य से। मर-मरने अर्थ में स्त्रीलिङ्गकर्ता में होने पर 'ओव्' आदि प्रत्ययों को वर्तमानसंबन्धिप्रत्ययादेश हों। न कि पुंलिङ्ग-कर्तृ प्रत्ययोकारः (सू० १०) इत्यादि से सिद्धि। म्वय-मृता सा-वह मर गई। म्वय-मृताः-मर गईं। म्वयख्-मृता त्वम्-तू मरी। म्वयव्-मृता यूयम्-तुम मरीं। म्वयस्-मृता अहम्-मैं मरी। म्वय-हम मरीं। मर-मरने अर्थ में 'ओव्' आदि को क्रम से छयह, छयह्, छयख्, छयव, छयस्, छयह इन आदेशों के करने पर 'छ-ह' का लोप होता है। स्त्रियां भूतेऽपि (सू० ३१) से उपधा को 'न'। मरश्चापुंभूते (सू० ५९) से 'रकार' का लोप। संधापनार्थ में तो-मरु-संधापिता-संधापित की। मर्य-संघापिताः-संधापित कीं। इत्यादि होते हैं।

गलचलडलडोलफलप्चलमेलां लात् ॥ ९३ ॥

लकारान्तेषु धातुषु। गल नाशे। चल चलने। डल उल्लङ्घने। डोल अपरिचयने। फल वस्त्रादिजीर्णने साफल्ये च। प्चल विकसने। मेल संगमे। इत्येषां धातूनां वर्तमानप्रत्ययादेशाः स्युः भूतविषये। गलु। नष्टः। गलि। नष्टास्ते। चलु। पलायितः। चलि। पला-यिताः। डलु। उल्लङ्घिताः। डूलु। अपरिचितः। डूलि। अपरिचितं तैः। फलु। जीर्णः। फलि। जीर्णाः। प्चलु। विकसितः। प्चलि। विकसितास्ते। म्यूलु। संगतः सः। मीलि। संगतास्ते। डोलः

ओकारस्योकारः सादेशपुंकर्तरि च (सू० २४) इत्युपधाया ऊकारः। मेलः फेरब्यहमेलां च (सू० २२) इत्युपधायाः एकत्वे यूकारः बहुत्वे ईकारः। शेषं सुकरम्। स्त्रीकर्तरि यथा। गजू। नष्टा। गज्य। नष्टाः। चजू। पलायिता सा। चज्य। पलायितास्ताः। डजू। उल्लङ्घिता। डज्य। उल्लङ्घिताः। डूजू। अपरिचिता। डोज्य। अपरिचितास्ताः। फजू। जीर्णा। फज्य। जीर्णास्ताः। प्चजू। विकसिता। फ्वज्य। विकसितास्ताः। मीजू। संगता। मेज्य। संगतास्ताः। अत्र डोलः स्त्रियामूदोताव् (सू० २५) इत्युपधाया ऊकार-ओकारौ। मेलः स्त्रियामोदेतौ सर्वत्र (सू० २३) इति एकत्वे ईकारः। एवं चज्योव्। पलायामास। चज्याव्। प्रदुद्राव। इत्यादि स्वरूपाणि साध्यानि।

लकारान्त धातुओं में। गल-नाश में। चल-चलने में। डल-उल्लङ्घन में। डोल-अपरिचय में। फल-वस्त्र आदि के जीर्ण होने में और सफलता में। प्चल-विकास में। मेल-संगम में। इन धातुओं को वर्तमानप्रत्ययादेश भूतविषय में हों। गलु-नष्टः-नष्ट हुआ। गलि-नष्टास्ते-वे नष्ट हुए। चलु-पलायितः-भागा। चलि-पलायिताः-भागे। डलु-उल्लङ्घितः-उल्लङ्घन किया। डलि-उल्लङ्घिताः-उल्लङ्घन किए। डलु-अपरिचितः-अपरिचित था। डूलि-अपरिचितं तैः-उन्हों से अपरिचित था। फलु-जीर्णः-जीर्ण हुआ। फलि-जीर्णाः-जीर्ण हुए। प्चलु-विकसितः-खिला था। प्चलि-विकसितास्ते-वे खिले थे। म्यूलु-संगतः सः-वह मिला। मीलि-संगतास्ते-वे मिले थे। डोलः ओकारस्योकारः सादेशपुंकर्तरि च (सू० २४) से उपधा को 'ऊकार' मेलः फेरब्यहमेलां च (सू० २२) से उपधा के एकवचन में 'यूकार' वहुवचन में 'ईकार'। बाकी सुगम है। स्त्रीलिङ्ग कर्ता में जैसे-गजू-नष्ट हुई। गज्य-नष्टाः-नष्ट हुईं। चजू-पलायिता सा-वह भागी। चज्य-पलायितास्ताः-वे भागीं। डजू-उल्लङ्घिता-लांघी गई। डज्य-उल्लङ्घिता-लांघी गईं। डूजू-अपरिचिता-अपरिचित थी। डोज्य-अपरिचितास्ता-वे अपरिचित थीं। फजू-जीर्णा-जीर्ण थी। फज्य-वे जीर्ण थीं। प्चजू-विकसिता-खिली थी। प्चज्य-विकसितास्ताः-वे खिलीं। मीजू-संगता-मिली। मेज्य-संगतास्ताः-वे मिलीं। यहाँ डोलः स्त्रियामूदोताव् (सू० २५) से उपधा को ऊकार-ओकार। मेलः स्त्रियमीदेतौ सर्वत्र (सू० २३) से एकवचन में 'ईकार'। इस तरह-चज्योव्-

पलायामास-भाग गया। चज्याव्-प्रदुद्राव-भागा। इत्यादि स्वरूप सिद्ध किए हुए हैं।

ब्ववरावोर्त्रात् ॥ ९४ ॥

वकारान्तेषु धातुषु ब्वव उत्पत्तौ। राव नष्टीभवने। इत्यनयोर्भूतविषये प्रोक्तवत् वर्तमानादेशाः स्युः। व्वबु। उद्भूतः। ब्ववि। उद्भूतास्ते। रावु। नष्टः सः-रावि। नष्टास्ते। एकत्र उद्युतस्योपधाया आत ओत्वम् (सू० २०) इति। अन्यत्र इदुदूद्युतानां पूर्वदर्ण-स्वराप्रसिद्धता (सू० १९) इति। स्त्रीकर्तरि यथा-रावू-नष्टा सा। राव्य। नष्टास्ताः। व्ववू। उत्पन्ना। ब्वव्य। उत्पन्नास्ताः। राव्योव्। व्यनशत सः। राव्याव्। ननाश। इत्यादयश्च सामान्यादिषु विचार्याः।

वकारान्त धातुओं में ब्वव-उत्पत्ति अर्थ में। राव-नष्ट होने में। इन दोनों के भूतविषय में कहे हुए की तरह वर्तमानादेश हों। ब्ववु-उद्भूतः-पैदा हुआ। ब्वबि-उद्भूतास्ते-वे पैदा हुए। रावु-नष्टः सः। वह नष्ट हुआ। रावि-नष्टास्ते-वे नष्ट हुए। एक जगह उद्युतस्योपधाया आत ओत्वम् (सू० २०)। दूसरी जगह इदुदूपधानां पूर्ववर्ण-स्वराप्रसिद्धता (सू० १९)। स्त्री लिङ्ग कर्ता में जैसे—रावू-नष्टा सा-वह नष्ट हुई। राव्य-नष्टास्ताः-वे नष्ट हुईं। ब्ववू-उत्पन्ना-पैदा हुई। ब्वव्य-उत्पन्नास्ताः-वे पैदा हुईं। राव्योव्-व्यनशत् सः-वह नष्ट हुआ। राव्याव्-ननाश-नष्ट हुआ। इत्यादि सामान्य आदि में विचारने चाहिए।

द्रुषपोषमषरोषां षात् ॥ ९५ ॥

षकारान्तेषु धातुषु। द्रुष च्यवने। पोष पर्याप्ततायाम्। मष विस्मृतौ। रोष रुष्टौ। इत्येषां भूतकालविषये वर्तमानादेशाः प्रोक्तवद्भवन्ति। द्रुषु। श्च्योतितः। द्रुषि-नश्च्योतिताः। पूषु। पर्याप्तः। पूषि। पर्याप्ताः। मठु। विस्मृतः सः। मठि। विस्मृतास्ते रूठु। रुष्टः सः। रूठि। रुष्टास्ते। पोषरोषोः ओकारस्योकारः सादेशपुंकर्तरि च (सू० २४) इति उपधाया ऊकारः। मषरोषोः डेषव्यहरोषमषां ठः सर्वत्र (सू० ६२) इति ठकारः। स्त्रीकर्तरि यथा। द्रुषू। श्च्योतिता सा। द्रुष्य। श्च्योतितास्ताः। पूषू। पर्याप्ता सा। पोष्य। पर्याप्तास्ताः। मठू। विस्मृता सा। मछ्य। विस्मृतास्ताः। रूठू। रुष्टा सा।

रोछ्य । रुष्टास्ता: । पोषरोषो: स्त्रियामूदोताव् (सू० २५) इति । मषरोषो: ठकारे कृते । सादेशाभूतकर्तृकर्मिणोरनेकत्वे च स्त्रियाम् (सू० ७०) इति ठस्य छ: । द्रष्योव् । द्रष्यात्र् । चुश्च्योत । पोष्योव् । पोष्याव् । पर्याप । मछ्योव् । व्यस्मारि । मछ्याव् । विसस्म्रे । येछ्योव् । अरोषीत् । रोछ्याव् । रुरोष । इति सामान्यपूर्णयो: साध्यानि ।

षकारान्त धातुओं में । द्रष-चोने में । पोष-पर्याप्तता में । मष-विस्मृति में । रोष-नाराजगी में । इनके भूतकालविषय में वर्तमान-आदेश पहले की तरह होते हैं । द्रषु-श्च्योतित:-चोआ । द्रषि-श्च्योतिता:-चोए । पूषू-पर्याप्त: पर्याप्त । पूषि-पर्याप्त बहुत । मठु-विस्मृत:-वह भूला । मठि-विस्मृतास्ते-वे भूले । रूठ्-रुष्ट: स:-वह नाराज हुआ । रूठि-रुष्टास्ते-वे नाराज हुए । पोपरोषो: ओकारस्यो-कार: सादेशपुंकर्तरि च (सू० २४) से उपधा का 'ऊकार' । मषरोषो: डेषव्यहरोषमषां ठ: सर्वत्र (सू० ६२) से 'ठकार' । स्त्रीकर्ता में जैसे—द्रषू-श्च्योतिता सा-वह चोई । द्रष्य-श्च्योतितास्ता:-वे चोईं । पूषू-पर्याप्ता सा-वह पर्याप्त थी । पोष्य-पर्याप्तास्ता:-वे पर्याप्त थीं । मठू विस्मृता सा-वह भूली । मछ्य-विस्मृतास्ता:-वे भूलीं । रूठू-रुष्टा सा-वह रुष्ट थी । रोछ्य-रुष्टास्ता:-वे रुष्ट थीं । पोषरोषो: स्त्रिया-मूदोताव् । (सू० २५) । मष-रोष से 'ठकार' करने पर सादेशभूत-कर्तृकर्मिणोरनेकत्वे च स्त्रियाम् (सू० ७०) से 'ठ' को 'छ' । द्रष्योव्-द्रष्यात्र्-चुश्च्योत-चोआ । पोष्योव्-पोष्याव्-पर्याप-पर्याप्त हुआ । मछ्योव्-व्यस्मारि-विस्मृत हुआ । मछ्याव्-विसस्म्रे-विस्मृत हुआ । रोछ्योव्-अरोषीत्-रुष्ट हो गया । रोछ्याव्-रुरोष-रुष्ट हुआ । यह सामान्य और पूर्ण में सिद्ध किए जा चुके हैं ।

आसखसफसबसलसलोसवसां साल् ।। ६६ ।।

सकारान्तेषु धातुषु । आस सत्तायाम् । खस आरोहे । फस वद्धी-भवने । वस निवासे । लस सम्यग्जीवने । लोस श्रमे । वस अवरोहणे । इत्येषां भूतकालविषये वर्तमानादेशा: प्रोक्तवत्स्यु: । ओसु । आसीत् स: । आसि । आसन् ते । खथु । आरूढ: स: । खथि । आरूढास्ते । फसु । वद्धीवभूव स: । फसि । वद्धीबभूवुस्ते । वसु । निवसित: स: । वसि । निवसितास्ते । लूस्तु । जीवित: स: । लूस्ति । जीवितास्ते ।

लूसु । श्रान्तः सः । लसि । श्रान्तास्ते । वथु । अवरूढः सः । वथि । अवरूढास्ते । प्रथमस्य उद्युतस्योपधाया आत ओत्वम् (सू. २०) इति । खसवसोस्थः सर्वत्र (सू० ६६) इत्यनयोः सकारस्य थकारः । लसः लसश्च पुंभूते (सू० ३३) इति तकारागमः । लसश्च (सू० २७) इत्युपधाया ऊत्वम् एकत्वे ख्यातः बहुत्वे अप्रसिद्धः । लोसः ओकारस्योकारः सादेशपुंकर्तरि च (सू० २४) इत्युपधाया ऊकारः। स च लसधातुवत्प्रसिद्धाप्रसिद्धो निर्णयः । स्त्रीकर्तरि यथा । आसू । आसीत् सा । आस । आसन् ताः । खछू । आरूढा सा ! खछ । आरूढास्ताः । कसू । बद्धोवभूव सा । बद्धीवभूवुस्ताः । वसु । निवसिता सा । वस । निवसितास्ताः । लूछु । जीविता सा । लाछ । जीवितास्ताः । लूसू वा लूछू । श्रान्ता सा । लोस वा लोछ । श्रान्तास्ताः । वछू । अवतीर्णा सा । वछ । अवतीर्णास्ताः । आस एकत्व इदुदूद्युतानाम् (सू० १९) इति आकारस्य अप्रसिद्धता । बहुत्वे सकाराच्च (सू० १३) इति यकारस्याकारः । श्वसवसोस्थकारे कृते । तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) इति छकारः यकारस्य चाकारः । लसः स्त्रियामेकत्वानेकत्वे ऊदातावप्रसिद्धाव् (सू० २८) इति ऊकार आकारौ । लोसः स्त्रियामूदोताव् (सू० २५) इति ऊकारओकारौ । विकल्पेन थकारछकारौ । शेषं पूर्ववत् । आस धातोः सामान्यपूर्णभूतप्रयोगाः साधुशब्दवन्नोच्चार्यन्ते अतो नोदाहृताः । खछोव् । खछाव् । आरुरोह । फसोव् । फसाव् । बबन्धे । वसोव् । वसाव् । उवास । लाछोव् । लाछाव् । जिजीव । लोसोव् । लोसाव । शश्राम । वछोव् । वछाव् । अवरुरोह । इत्यादयः सामान्यपूर्णयोः प्रयोगा वेदितव्याः । लसधातोः । लसोव् । लसाव् । जिजीव । इति विकल्पेन स्वरूपाणि सेत्स्यन्ते परन्तु (अ) साधुशब्दतया नादीयन्ते । फसवसलोसां यागमस्य प्रत्ययाद्यवयवत्वे सिद्धे । सकाराच्च (सू० १३) इति निर्देशतः (सकाराच्च वहुलम् (सू० ४८ क इति सूत्रेण) तस्य लोपः । यद्वा खस वसोस्थ (सू० ६६) इति ज्ञापकात् सकारस्वकारपरिणतो भवति थकारस्य तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) इत्यनेन छकारपरिणामः सिद्ध एव अतः सकारात्परस्यापि यकारस्य अप्रसिद्धचवर्गाल्लोपः (सू० ४७) इति लोपविधिः ।

सकारान्त धातुओं में । आस-सत्ता में । खस-चढ़ने में । फसबद्ध होने में । वस-निवास में । लस-अच्छी तरह जीने में । लोस-

थकावट में। वस-उतरने में। इन के भूतकालविषय में वर्तमान-आदेश कहे की तरह हों। ओसु-आसीत् सः-वह था। असि-आसन् ते-वे थे। खथु-वह वार था। खथि-आरूढास्ते-वे सवार थे। फसु-बद्धोबभूव सः-वह बन्धा। फसि-बद्धोवभुवुस्ते-वे बन्धे। वसु-निवसितः सः-वह रहा। वसि-निवसितास्ते-वे रहे। लूस्तु-जीवितः सः-वह जीवित था। लूस्ति-जीवितास्ते-वे जीवित थे। लूसु-श्रान्तः सः-वह थका। लूसि-श्रान्तास्ते-वे थके। वथु-अवरूढः सः-वह उतरा। वथि-अवरूढास्ते वे उतरे। प्रथमस्य उद्युतस्योपधाया आत ओत्वम् (सू० २०) इति। खसवसोस्थः सर्वत्र (सू० ६६) इन दोनों में 'सकार' को 'थकार'। लसः लसश्च पुंभूते (सू० ३३) से 'तकार' का आगम। लसश्च (सू० २७) से उपधा का 'ऊ' एकवचन में प्रसिद्ध है, बहुवचन में अप्रसिद्ध है। लोसः ओकारस्योकारः सादेशपुंकर्तरि च (सू० २४) से उपधा का 'ऊ' और वह 'लस' धातु की तरह प्रसिद्ध अप्रसिद्ध का निर्णय कर लेना। स्त्रीलिङ्ग कर्ता में जैसे—आसू-आसीत्-सा-वह थी। आस-आसन् ताः-वे थीं। खछू-आरूढा सा-वह सवार थी। खछ-आरूढास्ताः-वे सवार थीं। लसू-बद्धो वभूव सा-वह बन्धी। फस-बद्धो-वभुवुस्ताः-वे बन्धी। वसू-निवसिता सा-वह रही। वस-निवसिता-स्ताः-वे रहीं। लूछू-जीविता सा-वह जीवित थी। लाछ-जीवितास्ताः-वे जोवित थीं। लूसू वा लूछू श्रान्ता सा-वह थकी। लोस वा लोछ-श्रान्तास्ताः-वे थकीं। वछू-अवतीर्णा सा-वह उतरी। वछ-अवतीर्णा-स्ताः-वे उतरीं। आस एकत्व इदुदूद्युतानाम् (सू० १६) से 'आकार' की अप्रसिद्धता। बहुत्वे सकाराच्च (सू० १३) से 'यकार' को 'आकार'। लसः स्त्रियामेकत्वानेकत्वे ऊदाताव प्रसिद्धाव् (सू० २८) से 'ऊकार-आकार'। लोसः स्त्रियामूदोताव् (सू० २५) से ऊकार-ओकार। विकल्प से 'थकार-छकार'। बाकी पहले की तरह। 'आस' धातु से सामान्यपूर्णभूतप्रयोग साधु शब्द की तरह उच्चरित नहीं होते, इसलिए उनके उदाहरण नहीं दिए गए। खछोव्। खछाव्। आरुरोह-सवार हुआ। फसोव्-फसाव्-ववन्धे-वन्धा। वसोव्-वसाव्-उवास-रहा। लाछोव्-लाछाव्-जिजीव-जीवित हुआ। लोसोव्-लोसाव्-शश्राम-थकावट हुई। वछोव्-वछाव्-अवरुरोह-उतरा। इत्यादि सामान्य और पूर्ण में प्रयोग जानने। लस धातु से-लसोव्-लसाव्-जिजीव-जीवित था। ये विकल्प से स्वरूप सिद्ध किए जायेंगे,

पर असाधु शब्द होने से अपनाए नहीं जाते। फस-वस-लोस के 'य' आगम के प्रत्ययादि-अवयवत्व सिद्ध होने पर। सकाराच्च (सू० १३) इस निर्देश से (सकाराच्च बहुलम् (सू० ४८ क इस सूत्र से) उसका लोप। अथवा खसवसोस्थ (सू० ६६) इस ज्ञापक से 'सकार' 'थकार' में बदल जाता है और 'यकार' तवर्गस्याप्रसिद्धः (सू० ७२) इससे 'छकार' में बदलना सिद्ध ही है। इसीलिए 'सकार' से परे भी 'यकार' की 'अप्रसिद्धचवर्गाल्लोपः (सू० ४७) से लोपविधि।

ब्यहो हात् ॥ ६७ ॥

हकारान्तेषु धातुषु। व्यह उपवेशने इत्यस्य भूतविषये वर्तमानादेशाः स्युः। ब्यूठु। उपविष्टः। बीठि। उपविष्टाः। डेषब्यहरोषमषां ठः सर्वत्र (सू० ६२) इति ठकारः। फेरब्यहमेलां च (सू० २२) इति उपधाया एकत्वे यूकारः बहुत्वे ईकारः। स्त्रीकर्तरि। बीठू। उपविष्टा। वेछ्य। उपविष्टाः। अन्त्यस्य ठकारे कृते। सादेशभूतकर्तृकर्मिणोरनेकत्वे च स्त्रियाम् (सू० ७०) इति छकारः। स्त्रियामोदेताव् (सू० २३) इत्युपधाया ईकार-एकारौ। शेषं पूर्ववत्। वेछयोव्। उपाविशत्। वेछ्याव्। उपविवेश। इत्यादयः सामान्यपूर्णयोर्विवेच्याः। क्रियातिपत्त्यपरपर्यायापूर्णभूतस्योभयोर्भविष्यदतीतयोरन्तर्गतत्वात्तन्निरूपणं द्वितीये भविष्यत्पादे यथासंभवं विरचितमिति चतुष्प्रकारोऽतीतकालः।

हकारान्त धातुओं में। 'ब्यह' बैठने अर्थ में, इसके भूतविषय में वर्तमान-आदेश हों। ब्यूठु-उपविष्टः-बैठा। बीठि-उपविष्टाः-बैठे। डेषब्यहरोषमषां ठः सर्वत्र (सू० ६२) से 'ठकार'। फेरब्यहमेलां च (सू० २२) से उपधा के एकवचन में 'यूकार' बहुवचन में 'ईकार'। स्त्रीलिङ्ग कर्ता में-बीठू-उपविष्टा-बैठी। वेछ्य-उपविष्टाः-बैठीं। अन्तिम अक्षर को 'ठकार' करने पर। सादेशभूतकर्तृकर्मिणोरनेकत्वे च स्त्रियामोदेताव् (सू० २३) से उपधा को ईकार-एकार। बाकी पहले की तरह। वेछयोव्-उपाविशत्-बैठ गया। वेछ्याव्-उपविवेश-बैठा। इत्यादि सामान्य और पूर्ण में समझने। क्रियातिपत्ति अपरपर्याय-अपूर्णभूत के दोनों भविष्यत् और अतीत में अन्तर्गत होने से उसका निरूपण दूसरे भविष्यत् पाद में यथासंभव किया गया है, इस तरह अतीतकाल चार प्रकार का है।

इति शारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते
आख्यातप्रक्रियायां भूतपादस्तृतीयः ॥८॥३॥

अथाख्यातप्रक्रियायाम् ॥ ८ ॥

हेतुपादः ॥ ४ ॥

स्वाकर्तृत्वावसरे परक्रियाकर्तृत्वारोपो हेतुः ॥ १ ॥

निखिलस्य वस्तुजातस्य कर्तृत्वं भवत्येव अतो यस्य कस्यचिद्वस्तुन आत्मनः कर्तृत्वाकाले क्रियाकरणे प्रवर्तमानस्य तदितरस्य वस्तुनः कर्तृत्वे य आरोपः स हेतुरवधार्यः । यथा लोभः कुरुते पापमित्यत्र लोभस्य स्वकर्तृत्वम् । लोभः कारयति पापमित्यत्र लोभव्यतिरिक्तस्य पापक्रियाप्रवर्तमानस्य जीवस्य कर्तृत्वे लोभस्य कर्तृत्वारोपः । अस्यामवस्थायां लोभः स्वयं करणक्रियां न विदधाति किन्तु जीवस्य पापक्रियाया हेतुः संपन्नः क्रियायाश्च कर्तेत्यभिधीयत इति ।

सम्पूर्ण वस्तुजात का कर्तृत्व होता ही है, इसलिए जिस किसी वस्तु के अपने कर्तृत्वाकाल-क्रियाकरण में प्रवर्तमान उस से इतर वस्तु के कर्तृत्व में जो आरोप है। वह 'हेतु' जानना। जैसे—'लोभ पाप को करता है। यहां 'लोभ' का स्वकर्तृत्व है। 'लोभ पाप को कराता है। यहां 'लोभ' से अतिरिक्त पापक्रिया में प्रवृत्त 'जीव' के कर्तृत्व में 'लोभ' का कर्तृत्वारोप है। इस अवस्था में लोभ स्वयं करणक्रिया नहीं करता है, किन्तु जीव की पापक्रिया का 'हेतु' और 'क्रिया' का 'कर्ता' हुआ। ऐसा कहा जाता है।

हेतौ धातोराव् ॥ २ ॥

क्रियाया अर्थे हेतोः कर्तृतया अभिधेये सति धातोः पर आव् भवति स च धातुवद्भवति । यथा केवलो धातुर्विभक्तिसमुदायेषु परिणतो भवति तथा आव् प्रत्ययविशिष्टोऽपि भवतीत्यर्थः । करनावान् छुह् । कारयति । परनावान् छुह् । पाठयति । रननावान् छुह । पाचयति । साधनमुत्तरसूत्रे ।

क्रिया के अर्थ में हेतु के कर्तृत्व से अभिधेय में होने पर धातु से परे 'आव्' होता है और वह धातु की तरह होता है। जैसे केवल

धातु विभक्ति समुदायों में बदल जाता है, वैसे 'आव्' प्रत्यय विशिष्ट भी होता है, यह अर्थ है। करनावान् छुह्-कारयति-कराता है। परनावान् छुह्-पाठयति-पढ़ाता है। रननावान् छुह्। पाचयति-पकाता है। साधन उत्तरसूत्र में

आव्यऽनागमः ॥ ३ ॥

धातोः आवि भावहेतौ परे अन् आगमो भवति। करनावान् छुह्। कारयति। परनावान् छुह्। पाठयति। रननावान् छुह्। पाचयति। कर करणे। पर पठने। रन पाके। हेतौ धातोराव् (सू. २) इति आव्। अनेन अन् आगमः। करनाव्। परनाव्। रननाव्। इति सिद्धे वर्तमानायां छुह् प्रत्ययः (८।१।११ सूत्रेण)। धातोरानागमः (सू. ८।१।१९)।

धातु से 'आव्' के भाव हेतु में परे होने पर 'अन्' आगम होता है। करनावान् छुह्-कारयति-कराता है। परनावान् छुह्-पाठयति-पढ़ाता है। रननावान् छुह्-पाचयति-पकाता है। कर-करने में। पर-पढ़ने में। रन-पकाने में। हेतौ धातोराव् (सू.२) से 'आव्'। इससे 'अन्' आगम। करनाव्-परनाव्-रजनाव्-ये सिद्ध होने पर वर्तमान में 'छुह्' प्रत्यय (८।१।११) सूत्र से। धातु से 'अन्' का आगम (सू. ८।१।१९)।

बुफो नो लः सूचनायाम् ॥ ४ ॥

वुफ विहायसा गतावित्यस्य मनुष्यादिसूचनाया अर्थे अनागम-संबन्धिनो नकारस्य लकारो भवति। वुफलावान् छुह्। सूचयति। सूचनायां किम्। वुफनावान् छुह्। उड्डाययते।

'वुफ' पक्षी की गति में, इसके मनुष्यादि सूचना के अर्थ में अनागम संबन्धी 'नकार' को 'लकार' होता है। वुफलावान् छुह्-सूचयति-सूचित करता है। सूचना में क्या? वुफनावान् छुह्-उड्डायते उड़ाता है।

वुजकाम्यप्रसां वा ॥ ५ ॥

वुज जागरणे। काम्य कम्पने। प्रस प्रसवे। एषां धातूनाम् आवि परे विकल्पेन अन् आगमो भवति। (१४-१५) सूत्राभ्याम् आव आदे-र्ह्रस्वः। वुजवान् छुस्-जागरयति तम्। काम्पवान् छुस्। कम्पयति तम्। प्रसवान् छुस्। प्रसावयति। पक्षे। वुजनावान् छुस्। जागर-

यति । काम्पनावान् छुस् । कम्पयति । प्रसनावान् छुस् । प्रसावयति ।

'वुज' जागरण में । काम्प-कम्पन में । प्रस-प्रसव में । इन धातुओं के 'आव्' परे रहते विकल्प से 'अन्' आगम होता है । (१४-१५ सूत्रों से 'आव' आदि को ह्रस्व) । वुजवान् छुस्-जागरयति तम्-उसे जगाता है । काम्पवान् छुस्-कम्पयति तम्-उसे कंपाता है । प्रसवान् छुस्-प्रसावयति-प्रसव कराता है । पक्ष में-वुजनावान् छुस्-जागरयति-जगाता है । काम्पनावान् छुस्-कम्पयति-कंपाता है । प्रसनावान् छुस्-प्रसावयति-प्रसव कराता है ।

येरनादेशो ऽनि ॥ ६ ॥

यि आगमने इत्यस्य आव्संबन्धिनि अनि परे अन् आदेशो भवति । अननावान् छुह् । अनाययाति ।

'यि' आने अर्थ में, इसे आव् से सम्बद्ध 'अन्' परे 'अन्' आदेश होता है । अननावान् छुह्-आनाययति-आता है ।

सादेशानादेशभूतेभ्यस्त्र्यक्षरधातुभ्योऽनो लोपः ॥ ७ ॥

येषां कर्तृधातूनां भूतकालविषये प्रत्ययानामादेशः कृतो न भवति येषां च कृतो भवति ते त्र्यक्षराश्चेत्स्युस्तेभ्य आवि परे अन् आगमस्य लोपो भवति । ब्ववरावान् छुह् । समापयति । काचरावान् छुह् । पिङ्गलीकरोति । कुमलावान् छुह् । कोमलीकरोति । चांखरावान् छुह् । संकोचयति । छाँछनावान् छुह् । लघ्वीकरोति । मन्दछावानू छुह् । ह्रेपयति । ब्वजलावान् छुह् । उज्ज्वली करोति । ब्ववर समाप्तौ । काचर पिङ्गलीभवने । कुमल कोमलीभवने । चोंखर संकोचने । छाँछन लघ्वीभवने । गन्दछ मन्दाक्षे । ब्रजल रक्तीभवने । हेतौ धातोराव् (सू० २) इत्याव् । आव्यनागमः (सू० ३) । अनेन लोपः । सादेशानां यथा । समखावान् छुह् । समक्षीकरोति । ब्वपजा-वान् छुह् । उत्पादयति । सादेशानादेशभूतेभ्यः किम् । कमवनावान् छुह् । अर्जयति । कतरनावान् छुह् । कृन्तयति । कपटनावान् छुह् । शकलीकरोति । त्र्यक्षरेभ्यः किम् । बुडनावान् छुह् । स्थविरीकरोति । खलरावान् छुह् । विस्तारयति । बेत्रावान् छुह् । भावयति । थकनावान् छुह् । श्रामयति ।

जिन कर्तृधातुओं के भूत काल विषय में प्रत्ययों का आदेश किया हुआ नहीं होता है और जिनका किया हुआ होता है, वे यदि तीन

अक्षर वाले हों, उनसे 'आव्' परे रहते 'अन्' आगम का लोप होता है। ब्ववरावान् छुह्-समापयति-समाप्त करता है। काचरावान् छुह्-पिङ्गली करोति-पीला करता है। कुमलावान् छुह्-कोमली करोति-कोमल करता है। चोंखरावान् छुह्-संकोचयति-संकोच करता है। छाँछनावान् छुह्-लघ्वी करोति-हल्का करता है। मन्दछा-वान् छुह्-ह्रेपयति लज्जा करता है। ब्वजलावान् छुह्-उज्वली करोति-उज्वल करता है। ब्ववर-समाप्ति में। काचर-पीला होने में। कुमल-कोमल होने में। चोंखर-संकोच करने में। छाँछन-हल्का होने में। गन्दछ-नज़र कमज़ोर होने में। ब्वजल-लाल होने में। हेतौ धातोराव् (सू० २) से 'आव्'। आव्यनागमः (सू० ३) इससे लोप। सादेशों के जैसे— समखावान् छुह्-समक्षी करोति-सामने करता है। ब्वपजावान् छुह्-उत्पादयति-पैदा करता है। सादेश-अनादेश भूतों से क्या ? कमवनावान् छुह्-अर्जयति-कमाता है। कतरनावान् छुह्-कृन्तयति काटता है। कपटनावान् छुह्-शकलीकरोति-टुकड़े करता है। तीन अक्षरों से क्या ? बुडनावान् छुह्-स्थविरीकरोति-बूढा बनाता है। खलरावान् छुह्-विस्तारयति-फैलाता है। बत्र्‌रावान् छुह्-भावयति…थकनावान् छुह्-श्रामयति-थकाता है।

बुष्णश्च ॥ ८ ॥

वुष्ण उष्णीभवने इत्यस्य आवि परे अनागमस्य लोपो भवति। वुष्णावान् छुह्। उष्णीकरोति।

'वुष्ण' गर्म होने में, इसके 'आव्' परे रहते अनागम का लोप होता है। वुष्णावान् छह्-उष्णीकरोति-गर्म करता है।

पिद्योरिलोपश्च ॥ ९ ॥

पि पतने। दि दाने। इत्यनयोः आवि परे अनागमस्य लोपो भवति। धातोरिकारस्य च लोपः। पावान् छुस्। पातयति तम्। दावान् छुह्। दापयति।

'पि' गिरने में। 'दि' दान में। इन दोनों में 'आव्' परे रहते अनागम का लोप होता है और धातु के 'इकार' का लोप होता है। पावान् छुस्-पातयति तम्-उसे गिराता है। दानाव् छुह्-दापयति-दिलाता है।

इकारान्ताद्वा ॥ १० ॥

इकारान्ताद्धातोर्विकल्पेन अनागमस्य लोपो भवति। न्यावान् छुह्। नाययति। ख्यावान् छुह्। खादयति। च्यावान् छुह्। पाययति। ह्यावान् छुह्। हारयति।

इकारान्त धातु से विकल्प के साथ अनागम का लोप होता है। ब्यावान् छुह्-नाययति-लाता है। ख्यावान् छुह्-खादयति-खिलाता है। च्यावान् छुह्-पाययति-पिलाता है। ह्यावान् छुह्-हारयति-हराता है।

अनः पूर्वमाव् वा ॥ ११ ॥

इकारान्ताद्धातोः अनागमात्पूर्वं विकल्पेन आव् प्रयोज्यः (पक्षे अनागमलोपश्च)। ख्यावनावान् छुह् वा ख्यावान् छुह्। खादयति। च्याबनावान् छुह् वा च्यावान् छुह्। पाययति।

इकारान्त धातु से अनागम से पूर्व विकल्प के साथ 'आव्' प्रयुक्त करना। (पक्ष में अनागम का लोप)। ख्यावनावान् छुह् वा ख्यावान् छुह्-खादयति-खिलाता है। च्यावनावान् छुह वा च्यावान् छुह् पापपति-पिलाता है।

निद्योरावादिलोपः ॥ १२ ॥

नि हरणे। दि दाने। इत्याभ्यां परस्य आव आदिलोपो भवति। निवनावान् छुह्। हारयति। दिवनावान् छुह्। दापयति। (अन् लोप) पक्षे। न्यावान् छुह्। हारयति। दानाव् छुह्। दापयति।

'नि' हरण में। 'दि' दान में। इन दोनों से परे के 'आव' के आदि का लोप होता है। निवनावान् छुह्-हारयति-हराता है। दिवनावान् छुह्-दापयति-दिलाता है। (अन् का लोप) पक्ष में। न्यावान् छुह्-हारयति-हराता है। दावान् छुह्-दापयति-दिलाता है।

हेर्ह्रस्वः ॥ १३ ॥

हि प्रतिग्रहणादिषु। इत्यस्मादाय आदेर्ह्रस्वो भवति। ह्यपनावान् छुह्। प्रतिग्राहयाति। (अन् लोप) पक्षे। ह्यावान् छुह्। प्रतिग्राहयति।

'हि' प्रतिग्रहण आदि में। इससे 'आय' के आदि को ह्रस्व होता है। ह्यपनावान् छुह्-प्रतिग्राहयति-प्रतिग्रहण करता है। (अन् का लोप) पक्ष में। ह्यावान् छुह्-प्रतिग्राह्ययति-प्रतिग्रहण कराता है।

बुज़ जागरणे । ब्वड निमज्जने । (लार स्पर्शानुगमनस्निग्धीकरणेषु) । पिल पर्याप्तौ । काम्प कम्पने । रन्ज प्रीतौ रागे च । एभ्यः परस्य (विकल्पेन) अनो लोपे कृते आव् प्रत्ययस्य ह्रस्वो भवति । बुज़वान् छुह् । जागरयति । ब्वडवान् छुह् । निमज्जयति । (लारवान् छुह् । स्पर्शयति) । पिलवान् छुह् । प्रापयति । काम्पवान् छुह् । कम्पयति । रन्ज़वान् छुह् । रन्ज़यति अन आगमस्य लोपाभावपक्षे तु । बुजनावान् छुह् । जागरयति । ब्वडनावान् छुह् । निमज्जयति । (लारनावान् छुह् । स्पर्शयति) । पिलनावान् छुह् । पर्यापयति । काम्पनावान् छुह् । कम्पयति । रन्ज़नावान् छुह् । रन्ज़यति ।

बुज़-जागरण में । ब्वड-डूबने में । (लार-स्पर्श, अनुगमन, स्निग्ध करने में) । पिल-पर्याप्त में । काम्प-कम्पन में । रन्ज़-प्रीति और अनुराग में । इनसे परे के (विकल्प से) अन का लोप करने पर 'आव्' प्रत्यय को ह्रस्व होता है । बुजवान् छुह्-जागरयति-जगाता है । ब्वड़वान् छुह्-निमज्जयति-डूबता है । (लारवान् छुह्-स्पर्शयति-स्पर्श करता है) । पिलवान् छुह्-प्रापयति-पहुँचाता है । काम्पवान् छुह्-कम्पयति-कंपाता है । रन्ज़वान् छुह्-रन्ज़यति-प्रसन्न होता है । अन[1] आगम का लोपाभावपक्ष में तो । बुज़नावान् छुह्-जागरयति-जगाता है । ब्वडनावान् छुह्-निमज्जयति-डूबता हे । (लारनावान् छुह्-स्पर्शयति-स्पर्श करता है) । पिलनावाव् छुह्-पर्यापयति-पर्याप्त करता है । काम्पनावान्-छुह्-कम्पयति-काँपता है । रन्ज़नावान् छुह्-रन्ज़यति-प्रसन्न होता है ।

प्रसः पीनादेशश्च वा ॥ १५ ॥

प्रस प्रसवे इत्यस्मात्परस्य आव् प्रत्ययस्य ह्रस्वो भवति । विकल्पेन पीन आदेशः (अनो लोपश्च) स्यात् । प्रसवान् छुह् । प्रसावयति । पक्षे । पीनवान् छुह् । प्रसावयति । प्रसनावान् छुह् इति तृतीयं स्वरूपमुक्तचरमेव (सू० ५) ।

'प्रस' प्रसव अर्थ में, इस से परे 'आव्' प्रत्यय को ह्रस्व होता है विकल्प से 'पीन' आदेश और 'अन' का लोप होता है । प्रसवान् छुह्-प्रसावयति-प्रसव कराता है । पक्ष में । पीनवान् छुह्-प्रसाव-

१. अस्मिन्स्थाने मूलपुस्तकेएभ्यः परस्य किमिति पाठोऽसंगतार्थोऽभूत् ।

यति-प्रसव कराता है। प्रसनावान् छुह्-यह तृतीय स्वरूप कहा जा चुका है। (सू० ५)।

फट उपधादीर्घश्च ॥ १६ ॥

फट काष्ठभेदादिषु इत्यस्मात्परस्य आव् प्रत्ययस्य ह्रस्वो भवति धातोरुपधायाश्च दीर्घः स्यात्। फाटवान् छुह्। निमज्जयति (अनो-लोपाभाव) पक्षे। फाटनावान् छुह्। उद्भेदयति।

'फट' काष्ठ भेद आदि में, इससे परे 'आव्' प्रत्यय को ह्रस्व और धातु की उपधा को दीर्घ होता है। फाटवान् छुह्-निमज्जयति-डूबता है। (अन के लोपाभाव पक्ष में) फाटनावान् छुह्-उद्भेदयति-फूटता है।

न क्चादिभ्योऽनो लोपादि ॥ १७ ॥

क्चव धातुर्धातुपाठे सिद्ध एव पठितः कच आर्द्रीभवने। ग्वह् दीप्तौ। ग्रक चाञ्चल्यपाकातिशययोः। ज़ोत दीप्तौ। द्व धावने। तेल विस्फोटादिदंशे। तोष तोषे। दोर गतिचातुर्ये। नाम्पू दीप्तौ। नील हरितीभवने। पिस पाकेन बहिर्निःसरणे। पेड निर्यासे। पोर पर्याप्त्यनार्द्रत्वयोः। मार समीक्षणे। फव प्रशस्तीभवने। फर स्तेये। फल वस्त्रजीर्णने। फुह फुश अन्तःकोपे। फेर भ्रमणादिषु। फोर स्फुरणे। वाद प्रबलीभवने। वास भासने। ब्वड स्थविरीभवने। व्रज़ दीप्तौ। याप व्याप्तौ। रम्ब शोभायाम्। रस सरसीभवने। रोच रोचने। रोट अवष्टम्भे। र्ड रूढीभवने। रण जीर्णने। ल्यड परा-जयीभवने। लोर वैकल्ये। इत्यादयः (क्चादयः)। एषामनो लोपादि न भवति आदिशब्दात् ह्रस्वविकल्पादि च न भवति। कचनावान् छुह्। आर्द्रीकरोति। ग्वहनावान् छुह्। दीपयति। ग्रकनावान् छुह्। पाचयति। ज़ोतनावान् छुह्। दीपयति। दकनावान् छुह्। धाव-यति। इत्यादि। (अत्रानो लोपादिविधेरप्राप्तावपि वक्ष्यमाण (सू० २०) शिष्टेत्यादिसूत्रविध्याश्रयपरिशिष्टधातुपर्युदासंज्ञापनार्थ-मयं योगारम्भः।)

'क्चव, धातु धातुपाठ,में सिद्ध में ही पढ़ी गई। कच्-गीला होने में। ग्वह-दीप्ति में। ग्रक-चञ्चलता और पाकातिशय में। ज़ोत-दीप्ति में। द्व दौड़ने में। तेल-विस्फोट आदि दंश में। तोष-सन्तोष

में। दोर-गतिचातुर्य में। नाम्पू-दीप्ति में। नील-हरा होने में। पिस-पाक के बाहर निकलने में। पेड-निकलने में। पोर-पर्याप्ति और अनादरत्व में। गार-समीक्षा में। फव-प्रशस्त होने में। फर-चोरी में। फल-वस्त्र पुराना होने में। फुह फुश-भीतरी क्रोध में। फेर-भ्रमणादि में। फोर-स्फुरण में। वाद-प्रबल होने में। वास-शोभित होने में। बुड-बूढ़ा होने में। व्रज-दीप्ति में। याप-व्याप्ति में। रम्ब-शोभा में। रस-सरस होने में। रोच्-रुचिकर होने में। रोट-स्तम्भित होने में। र्ड-रूढ होने में। र्‌ण-जीर्ण होने में। ल्यड-पराजित होने में। लोर्-व्याकुल होने में, इत्यादि (क्च् आदि)। इनके 'अन' का लोप आदि नहीं होता है और आदि शब्द से ह्रस्व-विकल्प आदि नहीं होता है। क्चनावान् छुह्-आर्द्रीकरोति-गीला करता है। ग्वहनावान् छुह्-दीपयति-प्रदीप्त होता है। ग्रकनावान् छुह् पाचयति-पकाता है। छुह्-दीपयति प्रदीप्त होता है। द्कनावान् छुह्-धावयति-दौड़ाता है। इत्यादि। (अत्रानो लोपादिविधेरप्राप्तावपि वक्ष्यमाण (सू० २०) शिष्टेत्यादि सूत्र से विधि-आश्रय-परिशिष्ट-धातुपर्गुदा संज्ञापन के लिए यह योगारम्भ है।)

मर: संधापने ॥ १८ ॥

मर मरणसंधापनयोरित्यस्य संधापनार्थे अनोलोपादि न भवति। मरनावान् छुह्। संधापयति। संधापनार्थे किम्। मारान् छुह्। मारयति। यद्यपि मार मारणे इत्यादयः केचिद्धातवो धातुपाठे सिद्धा एव पठिताः परं त्वत्र पाठकानां भ्रमनिरसनाय तेषां कारितक्रिया विशदीकृता।

मर-मरण और संधापन में, इसके संधापन अर्थ में 'अन' का लोप आदि नहीं होता है। मरनावान् छुह्-संधापयति-संधापन करता है। संधापनार्थ में क्या? मारान् छुह्-मारयति-मारता है। यद्यपि मार-मारने अर्थ में इत्यादि कई धातुएं धातुपाठ में सिद्ध ही पढ़ी गईं, परन्तु यहां पाठकों का भ्रम दूर करने के लिए उनकी कारित क्रियाएं विशद की गईं हैं।

ट्यठो वा ॥ १९ ॥

ट्यठ तिक्तीभवने इत्यस्य विकल्पेन अनो लोपादि न भवति। ट्यठनावान् छुह्। तिक्तीकरोति। पक्षे। ट्यठरावान् छुह्। तिक्तीकरोति।

'ट्यठ' तीखा होने में, इसके विकल्प से 'अन' का लोप आदि नहीं होता है। टथठनावान् छुह्-तिक्तीकरोति-तीखा करता है। पक्ष में—टथठरावान् छुह्-तिक्तीकरोति-तीखा करता है।

शिष्टेभ्य आविरागमोऽनादेशेषु ॥ २० ॥

अनादेशभूतप्रत्ययेषु मध्याच्छिष्टेभ्यो धातुभ्य आव् प्रत्यये परे रकारागमो भवति। कल्रावान् छुह्। मूकीकरोति। खल्रावान् छुह् वा खज्रावान् छुह्। विस्तारयति। ग्वब्रावान् छुह्। गुर्वी करोति। च्वफरावान् छुह्। अम्ली करोति। चुक्रावान् छुह्। कोपयति। पूठरावान् छुह्। स्थूली करोति। व्यठ्रावान् छुह्। स्थूलयति। तीज़रावान् छुह्। उत्तेजयति। ठीक्रावान् छुह्। स्थापयति। इत्यादयः स्वयमेव साधनीयाः।

अनादेशभूतप्रत्ययों में मध्य से शिष्ट धातुओं से 'आव्' प्रत्यय परे रहते 'रकार' का आगम होता है। कल्रावान् छुह्-मूकी करोति-गूंगा करता है। खल्रावान् छुह् वा खज्रावान् छुह्-विस्तारयति-विस्तार होता है। ग्वब्रावान् छुह्-गुर्वीकरोति-भारा करता है। च्वफ्रावान् छुह्-अम्लीकरोति-खट्टा करता है। चुकरावान् छुह्[1]-कोपयति-गुस्से होता है। पूठरावान् छुह्-स्थूलयति-मोटा होता है। तीज़्रावान् छुह्-उत्तेजित होता है। ठीकरावान् छुह्-स्थापयति-स्थापित करता है। इत्यादि स्वयमेव सिद्ध कर लेने चाहिए।

चलछचन्तथकफसफुटपवलमषरावह्लखह्लचश्वपेभ्यो वा ॥२१॥

सादेशप्रत्ययधातुषु प्रोक्तेभ्योधातुभ्यः आव् नत्यये परे रकारागमो विकल्पेन स्यात्। चल्रावान् छुह्। प्रद्रावयति। चलनावान् छुह्। विद्रावयति। छचञ्रावान् छुह्। छेदयति। छ्यन्ननावान् छुह्। छेदयति। थकरावान् छुह् वा थकनावान् छुह्। श्रमयति। फसरावान् छुह् वा फसनावान् छुह्। निबद्धयति। फुटरावान् छुह् वा फुटनावान् छुह्। भनक्ति। एवमितरेषामपि ज्ञेयम्।

सादेशप्रत्ययधातुओं में कहे गए बातुओं से 'आव्' प्रत्यय परे रहते 'रकार' का आगम बिकल्प से हो। चलरावान् छुह्-प्रद्रावयति-भगाता है। चलनावान्-छुह्-विद्रावयति-भगाता है। छचञरावान् छुह्-छेदयति-छेद करता है। छ्यन्ननावानछुह्-छेदयति छेद करता

---

१. च्वक धातुर्धातुपाठे वकारोपधः पठ्यते चुक्रावान् छुह् इत्येतत्प्रयोगनिष्पच्या अत्रो कारोपधो ज्ञयः।)

है। थक्रावान् छुह् वा थकनावान् छुह्-श्रमयति-थकता है। फस्रावान् छुह् वा फसनावान् छुह्-निबद्धयतिबांधता है। फुटरावान् छुह् वा फुटनावान् छुह्-भनक्ति-तोड़ता है। इस तरह दूसरों के भी जानना।

छप चेनमानां भूतकर्मधातुषु ॥ २२ ॥

भूतकाले ये धातवः कर्मप्रयोगिणो भवन्ति तेषु मध्यात्। छप वृष्टिकालयोः क्षेपे। चेन चेतने। मान स्वीकरणे। इत्येतेभ्य आव् प्रत्यये रकारागमो वा भवति। छप्रावान् छुह्। क्षेपयति। चीञ्रावान् छुह्। संज्ञापयति। माञ्रावान् छुह्। स्वीकारयति। पक्षे। छपनावान् छुह्। चेननावान् छुह्। माननावान् छुह्। प्रथमो वकारविशिष्टोऽपि दृश्यते। छ्वपरावान् छुह्। इति।

भूतकाल में जो धातु कर्म प्रयोगी होते हैं, उनके बीच से। 'छप, वृष्टि और काल के विताने में। चेन-चेतन में। मान-स्वीकार करने में। इनसे 'आव्' प्रत्यय परे रहते 'रकार' का आगम होता है। छप्रावान् छुह्-क्षेपयति-फैंकता है। चीञ्रावान् छुह्-संज्ञापयति-पहचान कराता है। माञ्रावान् छुह्-स्वीकारयति-स्वीकार कराता है। पक्ष में छपनावान् छुह्। चेननावान् छुह्। माननावान् छुह्। प्रथम वकारविशिष्ट भी देखा जाता है। छ्वपरावान् छुह्। इति।

छकः स्वार्थे ॥ २३ ॥

छक कीर्णने इत्यस्य आव् प्रत्यये परे रकारागमो भवति स्वार्थे एव। छकान् छुह्। अवकिरति। छक्रावान् छुह्। अवकिरति। छक्रान् छुह्। अवकिरति। हेतौ तु। छकनावान् छुह् वा छक्रनावान् छुह्। इति स्वरूपे स्तः।

'छक' विखरने में, इसके 'आव्' प्रत्यय परे रहते 'रकार' का आगम स्वार्थ में ही होता है। छकान् छुह्-अवकिरति-विखरता है। छक्रावान् छुह्-अवकिरति-विखरता है। छक्रान् छुह्-अवकिरति-विखरता है। हेतु में तो-छकनाबान् छुह् वा छक्रनावान् छुह्। ये दो स्वरूप हैं।

रादावो लोपो वा ॥ २४ ॥

रकारात्परस्य आव् प्रत्ययस्य विकल्पेन लोपो भवति। चुक्रान् छुह्। कोपयति। छयट्रान् छुह्। उच्छिष्टीकरोति। छयव्रान् छुह्। शमयति। छ्वट्रान् छुह्। संक्षेपयति। पूठ्रान् छुह्। स्थूल

यति। इत्यादि। पक्षे। चुक्रावान् छुह्। कोपयति। छ्यट्रावान् छुह्। उच्छिष्टीकरोति छ्। यव्रावान् छुह्। शमयति। छ्वट्रावान् छुह्। शमयति। पूठ्रावान् छुह्। स्थूलयति।

'र्कार' से परे 'आव्' प्रत्यय का विकल्प से लोप होता है। चुक्रान् छुह्-कोपयति-क्रुद्ध होता है। छ्यट्रान् छुह्- उच्छिष्टीकरोति जूठा करता है। छ्यवरान् छह्-शमयति-शान्त होता है। छ्वट्रान्-छुह् संक्षेपयति-संक्षिप्त करता हैं। पूठ्रान् छुह्-स्थूलयति मोटा होता है। इत्यादि। पक्ष में—चुक्रावान् छुह्-कोपयति-कुपित होता है। छयट्रावान् छुह-उच्छिष्टीकरोति-जूठा करता है। छ्यव्रावान् छुह् शमयति-शान्त होता है। छ्वट्रावान् छुह-शमयति-शान्त होता है। पूठ्रावान् छुह्-स्थूलयति-मोटा होता है।

तवर्गस्याप्रसिद्धचवर्गो रे ॥ २५ ॥

तवर्गान्तस्य धातोः रे रप्रत्यये परे अप्रसिद्धचवर्गादेशो भवति। छच्रावान् छुह्। श्वेतयति। तच्रावान् छुह्। तापयति। स्वच्रावान् छुह्। शमयति। श्वजरावान् छुह्। शोधयति। थज्रावान् छुह्। उन्नती करोति। वञ्रावान् छुह्। भावयति। तञरावान् छुह। कर्शयति। क्यञ्रावान् छुह। क्लेदयति। इत्यादयो विज्ञेयाः। छत श्वैत्ये तन तप्तीभवने। स्वत शमने। श्वद शोधने। थद उन्नती भवने। वन भवने। तन विरलीभवने। क्यन्न क्लेदने। हेतौ (२ सूत्रेण) आव्। शिष्टेभ्य आवि रागमोऽनादेशेषु (सू. २७) इति रकारागमः। अनेन क्रमात्तवर्ग्याणामप्रसिद्धचवर्ग्यादिशः।

तवर्गान्त धातु से रे 'र' प्रत्यय परे रहते अप्रसिद्ध चवर्ग आदेश होता है। छच् रावान् छुह्-श्वेतयति सफेद करता है। तचरावान् छुह्-तापयति-तपाता है। स्वचरावान् छुह-शमयति-शान्त करता है। श्वज्रावान् छुह्-शोधयति-शोधन करता है। थजरावान् छुह्-उन्नतीकरोति-उन्नत करता है। वञरावान् छुह्-भावयति......। तञरावान् छुह्-कर्शयति-कृश होता है। क्यञ्रावान् छुह्-क्लेदयति-क्लिन्न होता है। इत्यादि जानने। छत-सफेद होने में। तन-तपने में। स्वत-शान्त होने में। श्वद-शोधन में। थद-उन्नत होने में। वन-होने में। तन-विरला होने में। क्यन्न-क्लिन्न होने में। हेतु में (२) सूत्र से आव्। शिष्टेभ्य आविरागमोऽनादेशेषु (सू. २०)

से 'रकार' का आगम। इससे क्रमपूर्वक तवर्गों को अप्रसिद्ध 'चवर्ग' आदेश।

जेरन्त्यस्यौव् ॥ २६ ॥

जि जनने इत्यस्य रकारे परे अन्त्यस्वरस्य ओव् आदेशो भवति। जोवरान् छुह्। जनयति। पक्षे। जोवरावान् छुह्। जनयति।

'जि' पैदा होने में इसके 'रकार' परे रहते अन्त के स्वर को 'ओव्' आदेश होता है। जोवरान् छुह्-जनयति—पैदा होता है। जोवरावान् छुह्-जनयति-पैदा होता है।

भूतोक्तस्त्र्येकत्ववदुपधादेशादयश्च ॥ २७ ॥

धातूनां रकारे परे उपधादेशादयः भूतोक्तस्त्रीलिङ्गैकत्ववत् भवन्ति। ये भूतकाले स्त्रीलिङ्गैकवचनसम्बन्धिन उपधाया आदेशादयो भवन्ति ते हेतुसंबन्धिनि रकारेऽपि भवन्तीत्यर्थः। माञ्रावान् छुह्। मानयति। काञ्रावान् छुह्-काणीकरोति। व्रीठ्रावान् छुह्। मूढीकरोति। मोठ्रावान् छुह्। मधुरी करोति। पूठ्रावान् छुह्। स्थूलयति। लूकरावान् छुह्-क्षुद्रीकरोति। मान स्वीकरणे। कान काणीभवने। व्रेठ मूर्खीभवने। मेठ मधुरीभवने। पोठ स्थूलीभवने। लोक क्षुद्रीभवने। हेतौ धातोराव् (सू.२) इति आव् प्रत्ययः। छपचेनमानां भूतकर्मधातुषु (सू. २२) इति रकारागमः। शिष्टानां पञ्चानां शिष्टेभ्य आविरागमोऽनादेशेषु (सू. २०) इति रकारागमः। तवर्गस्याप्रसिद्धचवर्गो रे (सू. २५) इति नकारस्य ञकारः। एकत्वे ऊमात्रा देशः (सू. ८।३।८) इति सूत्रवृत्तिसिद्धा उपधाया आकारस्याप्रसिद्धता। स्त्रियामीदेतौ सर्वत्र (सू. ८।३।२३) इति एकारस्य-ईकारः। स्त्रियामूदोताव् (सू. ८।३।२५) इति ओकारस्य ऊकारः। माञराव् इत्यादिसिद्धौ वर्तमानायां छुह् (सू. ८।१।११)। धातोरानागमः (सू. ८।१।१९)।

धातुओं के 'रकार' परे होते उपधादेशादि भूत में कहे स्त्रीलिङ्ग के एकवचन की तरह होते हैं। जो भूतकाल में स्त्रीलिङ्ग के एकवचन से सम्बद्ध उपधा को आदेशादि होते हैं, वे हेतु से सम्बद्ध 'रकार' में भी होते हैं। यह अर्थ है। माञ्रावान् छुह-मानयति-स्वीकार करता है। काञ्रावान् छुह्-काणीकरोति-काणा करता है। व्रीठ्रावान् छुह्-मूढीकरोति-मूर्ख बनाता है। मोठ्रावान् छुह्-मधुरीकरोति-

मधुर करता है। पूठ्रावान् छुह्-स्थूलयति-मोटा करता है। लूक्रावान् छुह्-क्षुद्री करोति-क्षुद्र बनाता है। मान-स्वीकार करने में। कान-काणा होने में। व्रेठ-मूर्ख होने में। मेठ-मधुर होने में। पोठ-मोटा होने में। लोक-क्षुद्र होने में। हेतौ धातोराव् (सू. २) से 'आव्' प्रत्यय। छपचेनमानां भूतकर्मधातुषु (सू. २२) से 'रकार' का आगम। शिष्ट पाँचों को शिष्टेभ्य आवि रागमोऽनादेशेषु (सू. २०) से 'रकार' का आगम। तवर्गस्याप्रसिद्धचवर्गौ रे (सू. २५) से 'नकार' को 'ञकार'। एकवचन में 'ऊमात्र' आदेश (सू. ८।३।८) से सूत्रवृत्तिसिद्ध उपधा के 'आकार' की अप्रसिद्धता। स्त्रियामीदेतौ सर्वत्र (सू. ८।३।२३) से 'एकार' को 'इकार'। स्त्रियामूदोताव् (सू. ८।३।२५) से 'ओकार' हो 'ऊकार'। 'मात्र्राव्' इत्यादि सिद्धि में वर्तमान में छुह् (सू. ८।१।११)। धातोरानागमः (सू. ८।१।१६)।

तरमरडललगां हेतुप्रत्ययागमलोपोपधादीर्घौ ॥ २८ ॥

तर तरणे। मर मरणसंधापनयोः। डल उल्लङ्घने। लग संगे पीडायां संगतीभवने च। एषां धातूनां हेतोः कारितस्य संबन्धिनोः प्रत्ययागमयोर्लोप उपधायाश्च दीर्घो भवति। मरः मरणार्थ एव। लगः संग एव। तारान् छुह्। तारयति। मारान् छुह्। मारयति। डालान् छुह्। उल्लङ्घयति। लागान् छुह्। संगमयति। मरणार्थं किम्। मरनावान् छुह्। संधापयति। संगे किम्। लगनावान् छुह्। साधनं पूर्ववत्।

तर-तरने में। मर-मरने और संधापन में। डल-उल्लंघन में। लग-संग में, पीडा में और संगत होने में। इन धातुओं के हेतु कारित के सम्बन्धी प्रत्यय-आगम का लोप और उपधा को दीर्घ होता है। मर-मारने के अर्थ में। लग-संग में। तारान छुह्-तारयति-तारता है। मारान् छुह्-मारयति-मारता है। डालान् छुह्-उल्लङ्घयति-उल्लङ्घन करता है। लागान् छुह्-संगमयति-मिलाता है। मरने के अर्थ में क्या? मरनावान् छुह्-संधापयति-संधापन करता है। संग में क्या? लगानावान् छुह्। साधन पहले की तरह।

खसवसोरन्त्यस्य रश्च ॥ २६ ॥

खस आरोहे। वस अवरोहणे। अनयोर्हेतुप्रत्ययागमलोपौ

भवत: अन्त्याक्षरस्य च रकारो भवति । खारान् छुह् । आरोपयति । वालान् छुह् । अवतारयति ।

खस-सवार होने में । वस-उतरने में । इन दोनों के हेतु-प्रत्ययागम का लोप और अन्त के अक्षर को 'रकार' होता है। खारान् छुह्-आरोपयति-सवार होता है। वालान् छुह्-अवतारयति-उतारता है।

श्वङ्ग: सावादेशो वा ॥ ३० ॥

श्वङ्ग शयने इत्यस्य हेतुप्रत्ययागम लोपौ सावादेशश्च विकल्पेन भवति । सावान् छुह् । शामयति । पक्षे । श्वङ्गनावान् छुह् ।

श्वङ्ग-सोने में। इसे हेतु और प्रत्ययागमलोप तथा 'सावादेश' विकल्प से होता है। सावान् छुह्-शाययति-सुलाता है। पक्ष में। श्वङ्गनावान् छुह् ।

दज़ो ज़ाल: ॥ ३१ ॥

दज़ भस्मीभवने इत्यस्य धातोर्हेतुप्रत्ययागमलोपौ ज़ाल आदेशश्च भवति । ज़ालान् छुह् । दाहयति । दज़नावान् छुह् इति न साधु शब्द: ।

'दज़' भस्म होने में, इस धातु के हेतु और प्रत्ययागम का लोप तथा 'ज़ाल' आदेश होता है। ज़ालान् छुह्-दाहयति-जलाता है। दज़नावान् छुह्, यह साधु शब्द नहीं है।

डेषो हावो व ॥ ३२ ॥

डेष प्रेक्षणे इत्यस्य धातोर्हेतु प्रत्ययागमलोपौ हावादेशश्च भवति । हावान् छुह् । दर्शयति । पक्षे । डेषनावान् छुह् इति गौण: ।

'डेष' देखने अर्थ में, इस धातु के हेतु और प्रत्ययागम का लोप तथा 'हावादेश' होता है। हावान् छुह्-दर्शयति-दिखाता है। पक्ष में-डेषनावान् छुह्, यह गौण है।

गछ: पक: ॥ ३३ ॥

गछ गतौ इत्यस्य हेतुप्रत्ययागमलोपौ पकादेशश्च भवति । पकनावान् छुह् । गमयति । गछनावान् छुह् इति न साधु शब्द: किंतु गंगाय गछनावान् छुस् । गङ्गां गमयति । इत्येवंविधे स्थाने यत्र स्वसाहचर्यं नस्यात्तत्रापर एव मुख्य: । यत्र तु स्वसाहचर्यं स्यात्

यथा गोवुन पकनावान् छुह् । गा गमयति । इत्येवंविधे स्थाने प्रथम एव मुख्य इति निर्णयम् ।

'गछ' गति अर्थ में इसे हेतु और प्रत्ययागमलोप तथा 'पकादेश' होता है। पकनावान् छुह्-गमयति-जाता है। गछनावान् छुह्-यह साधु शब्द नहीं है। किन्तु-गंगाय गछनावान् छुस्-गङ्गां गमयति-गङ्गा को जाता है। इसप्रकार के स्थान में यहां अपना साहचर्य न हो वहां दूसरा ही मुख्य है। यहां पर अपना साहचर्य हो, जैसे-गोवुन् पकनावान् छुह्-गा गमयति-गौओं को जाता है। इस प्रकार के स्थान में पहला ही मुख्य है, यह निर्णय लेना चाहिए।

व्यथस्तुलः ॥ ३४ ॥

व्यथ उत्थाने। इत्यस्य हेतुप्रत्ययागमलोपौ तुलादेशश्च भवति। तुलान् छुह् । उत्थापयति । व्वथनावान् छुह् । इति गौणः । अत्रापि स्वहस्तेन वस्तुन उत्थापने आद्यो मुख्यः । प्रेरणादिना सजीवस्योत्थापनेऽपरो मुख्यः ।

'व्वथ' उठाने में। इसके हेतु और प्रत्ययागम का लोप तथा तुलादेश होता है। तुलान् छुह्-उत्थापयति-उठाता है। व्यथनावान् छुह्, यह गौण है। यहां भी अपने हाथ से वस्तु के उठाने में पहला मुख्य है! प्रेरणादि से सजीव के उठाने में दूसरा मुख्य है।

इतिशारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते
आख्यातप्रक्रियायां हेतुपादश्चतुर्थः ॥ ८।४ ॥
समाप्ता चैषा आक्यातप्रक्रिया ॥ ८ ॥

अथ कृदन्त प्रक्रियायाम् ॥ ६ ॥

कृत्क्रियादिपादः ॥ १ ॥

चादृतेऽनेककालक्रियायुगपदुक्तावप्रधाना कृत्क्रिया ॥ १ ॥

चशब्दं तदपरपर्यायमपिशब्दं च विना द्वयोः कालयोस्त्रयाणां वा वर्तमानातीतभविष्यद्रूपाणां कालानां क्रिययोः क्रियाणां वा युगपदुक्तौ एककालं भाषणे सति कृदन्तसंबन्धिनी क्रिया अप्रधाना आख्यातक्रिया कृदन्तमुख्यक्रिया वा एकैव प्रधानाऽवधार्या। यथा द्वयोर्वर्तमानक्रिययोर्युगपदुक्तौ तयोरन्यतरा मुख्या। अतीतमुख्यतायां वर्तमानः अप्रधानः। वर्तमानमुख्यतायामतीतोऽप्रधान इति। एवं वर्तमानभविष्यन्तौ ३ अतीतातीतौ ४ अतीतभविष्यन्तौ ५ भविष्यद्भविष्यन्तौ ६ वर्तमानभविष्यदतीताः ७ अतीतभविष्यद्वर्तमानाः ८ अतीतवर्तमानभविष्यन्तः ९ वर्तमानातीतातीताः १० वर्तमानभविष्यद्भविष्यन्तः ११ अतीतभविष्यद्भविष्यन्तः १२ अतीतवर्तमानवर्तमानाः १३ अतीतभविष्यदतीताः १४ भविष्यद्वर्तमानवर्तमानाः १५ इति पञ्चदश स्वरूपाणि भवन्ति। तत्र द्वयोः क्रिययोवर्तमानद्वयसत्वे भविष्यद्वर्तमानसत्वे वा परस्परमुख्यगौणकल्पनया न कोप्यर्थस्य विनिमयः स्यात्। केवलं मुख्यक्रियागौणक्रियानिर्देशइति। क्रियाद्वये वतमानातीतकालयोः सत्वे मुख्यगौणकल्पनयार्थविपर्यास इति। एवं क्रियात्रितयसमुदाये वर्तमानद्वयसत्वे मुख्यगौणकल्पनयार्थविलोमता न संभवति। वर्तमानैकसत्वे तु भविष्यदप्रधानक्रियया संबन्धे सति मुख्यगौणकल्पनयार्थविनिमयः। प्रधानक्रियया तु नार्थविपर्यय इति। अत्रातीतादिकाला: क्रियाकालापेक्षया निर्णयाः न तु वर्तमानकालापेक्षयेति। क्रमादुहरणानि। ख्यवान् गछान् छुह्। खादन् गच्छति। ख्यथ् क्चथ् गछान् छुह्। भुक्त्वा गच्छति। ख्यवान् गछि। खादन् गमिष्यति। ख्यथ् गयाव्। भुक्त्वा जगाम। ख्यथ् गछि। खादन् गमिष्यति। परनस् कितु गछि। पठितुं गमिष्यति। ख्यवान् ख्यवान् परनस् कितु गयोव्। खादन्पठितु जगाम। परिथ् जेननस्

कितु गछान् छुह् । पठित्वा जेतुं व्रजति । ह्यथ् क्यथ् दवान् पकि । घृत्वा धावन्गमिष्यति । दिथ् क्यथ् ख्यनस् कितु गछि । दत्वा भोक्तुं गमिष्यति । च्यथ् क्यथ् असान् यिवान् छुह् । पीत्वा हसन्नायाति । श्रान् करिथ् परनस् कितु मयोव् । स्नात्वा पठितुं ययौ । नचान् वसनस् कितु गछान् छुह् । नृत्यन्निवसितुं याति ।

'च' शब्द और उसके अन्य पर्याय भी शब्द के विना दोनों कालों वा तीनों का वर्तमान, भूत, भविष्यत् रूप कालों का दोनों क्रियाओं वा तीनों क्रियाओं के एक साथ कथन में एक काल भाषण होने पर कृदन्त से सम्बद्ध क्रिया अप्रधान आख्यातक्रिया वा कृदन्तमुख्यक्रिया एक ही प्रधान जाननी । जैसे दोनों वर्तमान क्रियाओं के एक साथ कथन में उनमें दूसरी मुख्य । अतीतमुख्यता में वर्तमान अप्रधान । वर्तमानमुख्यता में अप्रीत अप्रधान । इस तरह वर्तमान और भविष्यत् ३ अतीत और अतीत ४ अतीत और भविष्यत् ५ भविष्यत् और भविष्यत् ६ वर्तमान भविष्यत् और अतीत ७ अतीत-भविष्यत् और वर्तमान ८ अतीतवर्तमान और भविष्यत् ९ वर्तमान-अतीत और अतीत १० वर्तमानभविष्यत् और भविष्यत् ११ अतीत-भविष्यत् और भविष्यत् १२ अतीत-वर्तमान और वर्तमान १३ अतीत-भविष्यत् और अतीत १४ भविष्यत्-वर्तमान और वर्तमान १५ ये पन्द्रह स्वरूप होते हैं । वहां दोनों क्रियाओं के दो वर्तमान में वा भविष्यत्-वर्तमान में होने पर परस्पर मुख्य गौण कल्पना से अर्थ का कोई भी विनिमय न हो । केवल मुख्यक्रियागौण क्रिया का निर्देश । दो क्रियाओं में वर्तमान-अतीत काल में होने पर मुख्यगौण कल्पना से अर्थविपर्यास होता है । इस तरह तीन क्रियाओं के समुदाय में दो वर्तमान होने पर मुख्य-गौणकल्पना से अर्थविलोमता नहीं होती है । वर्तमान एक होने पर तो भविष्यत्-अप्रधान क्रिया से सम्बन्ध होने पर मुख्यगौणकल्पना से अर्थविनिमय होता है । प्रधान क्रिया से तो अर्थविपर्यय नहीं होता । यहां अतीतादिकाल क्रियाकालापेक्षा से निर्णीत करने न कि वर्तमान-कालापेक्षा से । क्रम से उदाहरण:—ख्यवान् गछान् छुह्-खादन् गच्छति-खाता हुआ जाता हैं । ख्यथ् क्यथ् गछान् छुह्-भुक्त्वा गच्छति-खाकर जाता है । ख्यवान् गछि-खादन् गमिष्यति-खाता हुआ जाएगा । ख्यथ् गयाव्-भुक्त्वा जगाम-खाकर गया । ख्यथ् गछि-

भुक्त्वा गमिष्यति-खा कर जाएगा। परनस् कितु गछि-पठितुं गमिष्यति-पढ़ने के लिए जाएगा। ख्यवान् ख्यवान् परनस् कितु गयोव्-खादन्पठितुं जगाम-खाता हुआ पढ़ने के लिए गया। परिथ् ज़ेननस् कितु गछान् छुह्-पठित्वा जेतुं व्रजति-पढ़कर जीतने के लिए जाता है। ह्यथ् क्चथ् दवान् पकि-धृत्वा धावन्गमिष्यति-धारण कर दौड़ता हुआ जाएगा। दिथ् क्चथ् ट्कान् गौव्-दत्वा धावञ्जगाम-देकर दौड़ता हुआ गया। ज़ेननस् कितु दवान् गछि-जेतुं धावन्गमिष्यति-जीतने के लिए दौड़ता हुआ जाएगा। दिथ् क्चथ् ख्यनस् कितु गछि-दत्वा भोक्तुं गमिष्यति-देकर खाने के लिए जाएगा। च्यथ् क्यथ् असान् यिवान् छुह्-पीत्वा हसन्नायाति-पीकर हंसता हुआ आता है। श्रान् करिथ् परनस् कितु मयोव्-स्नात्वा पठितुं ययौ-स्नान कर पढ़ने के लिए गया। नचान् वसनस् कितु गछान् छुह्-नृत्यन्निवसितुं याति-नाचता हुआ रहने के लिए जाता है।

वर्तमाने धातुभ्य आन् ॥ २ ॥

मुख्यक्रियाया वर्तमानकाले च शब्दं विना अपरक्रियायां वाच्यायां सत्यां धातुभ्य आन् प्रत्ययो भवति स चाव्ययः। करान्। कुर्वन्। वोज़ान्। शृण्वन्। परान्। पठन्। इत्यादि। कर करणे। वोज़ निशामने। पर पठने। अनेन आन् प्रत्ययः।

मुख्यक्रिया के वर्तमान काल में 'च' शब्द के विना अपरक्रिया के वाच्य में होने पर धातुओं से 'आन्' प्रत्यय होता है और वह अव्यय होता है। करान्-कुर्वन्-करता हुआ। वोज़ान्-शृण्वन्-सुनता हुआ। परान्-पठन्-पढ़ता हुआ। इत्यादि। कर-करने में। वोज़-सुनने में। पर-पढ़ने में। इससे 'आन्' प्रत्यय।

वपूर्वः स्वरान्तात् ॥ ३ ॥

स्वरान्ताद्धातोरान् प्रत्ययः वकारपूर्वो भवति क्रियावर्तमाने गम्यमाने सति। दिवान्। ददन्। ख्यवान्। खादन्। च्यवान्। पिबन्। दि दाने। खि खादने। चि पाने। अनेन वान् प्रत्ययः। चिख्योः सर्वत्राकारागमो निदियिर्वजितात् (सू० ८।२।११) इत्यकारागमः।

स्वरान्त धातु से 'आन्' प्रत्यय 'वकार' पूर्व क्रियावर्तमान गम्यमान होने पर होता है। दिवान्-ददन्-देता हुआ। ख्यवान्-खादन्-खाता हुआ। च्यवान्-पिबन्-पीता हुआ। दि-दान में। खि-खाने में।

चि-पीने में। इससे 'वान्' प्रत्यय। चिव्योः सर्वत्राकारागमो निर्दियिवर्जितात् (सू० ८।२।११)' से 'अकार' का आगम।

अभीक्ष्ण्ये द्विश्च पदम्॥ ४॥

आभीक्ष्ण्ये असकृत्कर्मणि गम्यमाने पदं द्विर्द्विवारं प्रयोज्यम्। दिवान् दिवान् गौव्। ददद्ददद्गगतः। च्यवान् च्यवान् आव्। पिवन्पिवन्नागतः। परान् परान् करुन्। पटन्पटन्नकरोत्।

आभीक्ष्ण्य-असकृत्कर्म-गम्यमान में पद दो-दो बार प्रयुक्त करना चाहिए। दिवान् दिवान् गौव्-ददत्-ददत्-गतः-देता देता गया। च्यवान् च्यवान् आव्-पिवन् पिवन् आगतः-पीता पीता आया। परान् परान् करुन्-पठन् पठन् अकरोत्-पढ़ते पढ़ते किया।

अतीते इथ्॥ ५॥

मुख्यक्रियाकाले च शब्दं विना तदितरातीतक्रियायां गम्यमानायां धातोः इथ् प्रत्ययः स्यात्। करिथ्। कृत्वा। परिथ्। पठित्वा। दारिथ्। धृत्वा। साधनं सुगमम्।

मुख्यक्रियाकाल में 'च' शब्द के विना उस से इतर अतीतक्रिया गम्यमान में धातु से 'इथ्' प्रत्यय हो। करिथ्-कृत्वा-कर के। परिथ्-पठित्वा-पढ़ कर। दारिथ्-धृत्वा-धारण कर। साधन सुगम है।

इथः क्यथ् वा॥ ६॥

इथ् प्रत्ययात्परो विकल्पेन क्यथ् प्रत्ययो भवति। करिथ् क्यथ्। कृत्वा। परिथ् क्यथ्। पठित्वा। दारिथ् क्यथ्। धृत्वा। पक्षे। करिथ्। कृत्वा। परिथ्। पठित्वा। दारिथ्। धृत्वा। इति पूर्वं साधितानि।

'इथ्' प्रत्यय से परे विकल्प से 'क्यथ्' प्रत्यय होता है। करिथ् क्यथ्-कृत्वा-करके। परिथ् क्यथ्-पठित्वा-पढ़ कर। दारिथ् क्यथ्-धृत्वा-धारणकर। पक्ष में। करिथ्-कृत्वा-करके। परिथ्-पठित्वा-पढ़ कर। दारिथ्-धृत्वा-धारण कर। ये पहले सिद्ध किए जा चुके हैं।

स्वरान्तादिथोऽत्॥ ७॥

स्वरान्ताद्धातोः इथः इकारस्य अत् अकारो भवति। द्यथ् क्यथ्। धृत्वा। ख्यथ् क्यथ्। खादित्वा।

स्वरान्त धातु से 'इथ्' के 'इकार' को 'अत्' अकार होता है। द्यथ् क्यथ्-धृत्वा-धारण कर। ख्यथ्-क्यथ्-खादित्वा-खा कर।

निदियिभ्य इलोपः ॥ ८ ॥

नि हरणे । दि दाने । यि आगमने । एभ्य इकारलोपो भवति । निथ् । हृत्वा । दिथ् । दत्वा । यिथ् । आगत्य ।

'नि' हरने अर्थ में । 'दि' दान अर्थ में । 'यि' आने अर्थ में । इनसे 'इकार' लोप होता है । निथ्-हृत्वा-हर कर । दिथ्-दत्वा-दे कर । यिथ् आगत्य-आकर ।

वुडो ज इथि मोक्षे ॥ ९ ॥

वुड उड्डयने इत्यस्य इथ् प्रत्यये परे डकारस्य जकारो भवति मोक्षे गम्यमाने । वुजिथ गोव । मोक्षं गतः इत्यर्थः ।

'वुड' उड़ने अर्थ में, 'इथ्' प्रत्यय परे रहते इसके 'ड' को मोक्ष गम्यमान में 'न' होता है । वुजिथ् गोव्-मोक्षं गतः—मोक्ष को प्राप्त हुआ, यह अर्थ है ।

मप्रावो रलोपः स्वरविनिमयश्च मरणकर्मणि ॥ १० ॥

मप्राव् विस्मारणे इत्यस्य धातोर्मरणपदे कर्मणि सति इथ् प्रत्यये परे रकारस्य लोपो भवति पूर्वापरस्वरविनिमयश्च स्यात् । पूर्वस्य दीर्घो द्वितीयस्य ह्रस्वो भवतीत्यर्थः । मरुन् मापविथ । मरणं विस्मारयित्वेत्यर्थः ।

'मप्राव्' भुलाने अर्थ में, इस धातु से मरणपद कर्म में होने पर 'इथ्' प्रत्यय परे रहते 'रकार' का लोप और पूर्वापरस्वरविनिमय होता है । पूर्व को दीर्घ और द्वितीय को ह्रस्व होता है, यह अर्थ है । मरुन् मापविथ-मरणं विस्मारयित्वा-मौत को भुला कर ।

इ प्रत्यय आभीक्ष्ण्ये द्विश्च पदम् ॥ ११ ॥

अतीते काले आभीक्ष्ण्ये गम्यमाने धातोः इ प्रत्ययो भवति पदं च द्विर्भवति करि करि । कारं कारं । वूजि वूजि । श्रावं श्रावम् । लूनि लूनि । लावं लावम् ।

अतीतकाल में आभीक्ष्ण्य गम्यमान में धातु से 'इ' प्रत्यय और पद द बार होता है । करि करि-कारं कारं-कर-करके । वूजि वूजि-श्रावं श्रावम्-सुन-सुन कर । लूनि-लूनि-लावं लावम्-काट-काट कर ।

स्वरान्ताद्वा ॥ १२ ॥

स्वरान्ताद्धातोः अतीतकाले आभीक्ष्ण्ये गम्यमाने विकल्पेन इ प्रत्ययो भवति । पदं च द्विर्भवति । दि दि । दायं दायम् । यि यि । एत्यैत्य । ख्य ख्य । भुक्त्वा भुक्त्वा । प्रथमयोः निदियिभ्य इलोपः (सू० ८) । तृतीयस्य

स्वरान्तादिथोऽव् (सू० ७)। इति इकारस्य अकारः। इकारोऽसवर्णे योऽपरलोपः (सू० १।१०)। पक्षे। दिथ् दिथ्। दायं दायम्। यिथ् यिथ्। एत्यैत्य। ख्यथ् ख्यथ्। भुक्त्वा भुक्त्वा। च्यथ् च्यथ्। पायं पायम्। साधनं पूर्ववत्।

स्वरान्त धातु से अतीतकाल-आभीक्ष्ण्य-गम्यमान में विकल्प से 'इ' प्रत्यय होता है और पद दो बार होता है। दि दि-दायं दायम्-दे देकर। यि यि-एत्यैत्य-आ आ कर। ख्य ख्य-भुक्त्वा भुक्त्वा-खा खा कर। प्रथम दोनों में निदियिख्य इलोपः (सू० ८) से 'इ' का लोप। तीसरे में 'स्वरान्तादिथोऽव् (सू० ७) से 'इकार' को 'अकार'। इकारोऽसवर्णे योऽपरलोपः (सू० १।१०)। पक्ष में। दिथ् दिथ्-दिथ्-दायं दायम्-दे देकर। यिथ् यिथ्-एत्यैत्य-आ आकर। ख्यथ ख्यथ-भुक्त्वा भुक्त्वा-खा खा कर। च्यथ् च्यथ्-पायं पायम्-पी पीकर। साधन पहले की तरह।

आदुपधाया अप्रसिद्धता ॥ १३ ॥

अतीतक्रियायां धातोरुपधाभूतस्याकारस्याप्रसिद्धता भवति। कारिथ्। क्वथित्वा। मारिथ् क्यथ्। हत्वा। तारिथ्। तारयित्वा। एवं कारि कारि। क्वाथं क्वाथम्। मारि मारि। मारं मारम्। तारि तारि। तारं तारम्। साधनं सुगमम्।

अतीतक्रिया में धातु के उपधाभूत 'आकार' की अप्रसिद्धता होती है। कारिथ्-क्वथित्वा···। मारिथ् क्यथ्-हत्वा-मार कर। इस तरह-कारिकारि क्वाथं क्वाथम्···। मारि मारि-मारं मारम्-मार मारकर। तारि तारि-तारं तारम्-तार तार कर। साधन सुगम है।

एत ईत् ॥ १४ ॥

अतीतक्रियायां धातोरुपधाभूतस्य एकारस्य ईकारो भवति। चीटिचीटि। कुट्टं कुट्टम्। वीहि वीहि। आसमासम्। लीखि लीखि। लेखं लेखम्। चेट कुट्टने। ब्यह उपवेशने। लेख लेखने। इ प्रत्यय आभीक्ष्ण्ये द्विश्च पदम् (सू० ११) इति इ प्रत्ययः। (ब्यह धातुरस्य विधेरनाश्रयः। किंच विहि विहि इति ह्रस्वेकारेणैव पाठः शुद्धोऽस्ति।)

अतीतक्रिया में धातु के उपधाभूत 'एकार' को 'ईकार' होता है। चीटि चीटि-कुट्टं कुट्टम्-कूट कूट कर। वीहि वीहि-आसम् आसम्- बैठ बैठ कर। लीखि लीखि-लेखं लेखम्-लिख लिख कर। चेट-कूटने अर्थ में। ब्यह-बैठने अर्थ में। लेख-लिखने अर्थ में। इ प्रत्यय आभीक्ष्ण्ये द्विश्च पदम् (सू० ११)

से 'इ' प्रत्यय। ('व्यह्' धातु, इसके विधि का अनाश्रय है और 'विहि विहि' इस ह्रस्व 'इकार' से ही पाठ शुद्ध है।)

ऊदोकारस्य ॥ १५ ॥

अतीतक्रियायां धातोरुपधाभूतस्य ओकारस्य ऊकारो भवति। खूचि खूचि। भायं भायम्। वूजि वूजि। श्रावं श्रवम्। तूलि तूलि। तोलयं तोलयम्। एवं खूचिथ्। भीत्वा। वूजिथ्। श्रुत्वा। तूलिथ्। तोलयित्वा। साधनं सुगमम्।

अतीतक्रिया में धातु के उपधाभूत 'ओकार' को 'ऊकार' होता है। खूचि खूचि-भायं भायम्-डर डर कर। वूजि वूजि-श्रावं श्रावम्-सुन सुन कर। तूलि तूलि-तोलयं तोलयम्-तोल तोल कर। इस तरह-खूचिथ-भीत्वा-डर कर। वूजिथ-श्रुत्वा-सुन कर। तूलिथ-तोलयित्वा-तोल कर। साधन सुगम है।

आनादयोऽव्ययम् ॥ १६ ॥

आन् इथ् इथ्-क्यथ् इ इति चत्वारः प्रत्ययाः अव्ययमव्ययसंज्ञा भवन्ति।

आन्, इथ्, इथ्-क्यथ् और 'इ' ये चार प्रत्ययों की अव्यय संज्ञा होती हैं।

भविष्यति कितु पदम् ॥ १७ ॥

प्रधानक्रियाया भविष्यत्काले इतरस्यामप्रधानायां क्रियायां गम्यमानायां धातोः कितु इति पदं भवति पदग्रहणात् कितु इत्यस्य पुंस्त्रीत्वमेकत्वानेकत्वं च भवतीति विज्ञेयम्। परनस् कितु। पठितुं सः। रननस् कितु। पक्तुं सः। परनस् किचू। पठितुं सा। रननस् किचू पक्तुं सा। परनस् किति। पठितुं ते। रनरस् किच। पक्तुं ताः। पर पठने। रन पाके। अनेन कितु। कितावनस् (सू० २०) इति अनस् आगमः। द्वितीययोः सर्वेषामुकारान्तानामूकारादेशः (सू० ६।४) इति सूत्रेण ऊमात्रादेशः। तवर्गान्तानामप्रसिद्धः (सू० ६।११) इति तकारस्य चकारः। तृतीययोरेकस्य उवर्णान्तानामिकारः (सू० २।१।३०) इति उकारस्य इकारः। अपरस्य ऊमात्रादेशे तकारादेशे च कृते। वहुत्वेऽकारागमः (सू० २।२।११) इत्यकारागमः। उवर्णान्तानामिकारः (सू० २।१।३०) इति ऊकारस्य इकारः, इकारोऽसवर्णे योऽपरलोपः (सू० १।१०) इति यत्वम्। तस्य अप्रसिद्धचवर्गल्लोपः (सू०८।३।४७)। चेटनस् कितु। कुट्टयितुं सः। चेटस् कितु (सू० ६।२।१२) कुट्टनाय सः अजनस् कितु। गर्जितुं सः। अजि कितु सू० ६।२।६५) गर्जनाय सः। इति चतुर्थी-स्वरूपाणि च तेषां धातूनां दृश्यन्ते

येषां भावा अनेकधा भवन्ति । येषां तु पुंस्त्रीभेदाद्द्विविध एव स्यान्न तत्र चतुर्थीप्रयोगेन सिद्धिः । किन्तु वक्ष्यमाणव्यञ्जनान्तेभ्यो धातुभावशब्देभ्यश्चतुर्थीप्रोक्तप्रत्ययेषु कृतेषु व्यञ्जनान्तस्योकारोपधाया अत् (सू० २।१।३२) इत्यादिना चतुर्थीस्वरूपं सेत्स्यतीति ।

प्रधानक्रिया के भविष्यत्काल में इतर-अप्रधानक्रियागम्यमान में धातु को 'कितु' यह पद होता है । पदग्रहण से 'कितु' इसके पुंल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग में एकवचन और बहुवचन होता है, यह जानना चाहिए । परनस् कितु-पठितुं सः-वह (पुं०) पढ़ने के लिए । रननस् कितु-पक्तुं सः-वह (पुं०) पकाने के लिए । परनस् किचू-पठितुं सा-वह (स्त्री०) पढ़ने के लिए । रननस् किचू-पक्तुं सा-वह (स्त्री०) पकाने के लिए । परनस् किति-पठितुं ते-वे पढ़ने के लिए । रननस् किच-वे (स्त्री०) पकाने के लिए । पर-(पुं०) पढ़ने में । रन-पकाने में । इससे 'कितु' । कितावनस् (सू० २०) से 'अनस्' का आगम । दूसरे दोनों में सभी उकारान्तों को 'ऊकार' आदेश (सू० ६।४) इस सूत्र से 'ऊ' मात्र आदेश । तवर्गान्तानामप्रसिद्धः (सू० ६।११) से 'तकार' का 'चकार' । तीसरे दोनों में एक के उवर्णान्तानामिकारः (सू० २।१।३०) से 'उकार' को 'इकार' । दूसरे को 'ऊ' मात्र आदेश और 'तकार' आदेश करने पर बहुत्वेऽकारागमः (सू० २।१।११) से 'अकार' का आगम । उवर्णान्तानामिकारः (सू० २।१।३०) से 'ऊकार' को 'इकार' । इकारोऽसवर्णे योऽपरलोपः (सू० १।१०) से 'य' । उसका अप्रसिद्धचवर्गाल्लोपः (सू० ८।३।४७) चेटनस् कितु-कुट्टयितुं सः-वह (पुं०) कूटने के लिए । चेटस् कितु (सू० ६।२।१२)-कुट्टनाय सः-वह (पुं०) कूटने के लिए । ग्रज्जनस् कितु-गर्जितुं सः-वह (पुं०) गर्जने के लिए । ग्रज्जि कितु (सू० ६।२।६५)-गर्जनाय सः- वह (पुं०) गर्जने के लिए । यह चतुर्थीस्वरूप उन धातुओं के देखे जाते हैं, जिनके भाव अनेक प्रकार के होते हैं । जिनके तो पुंल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग भेद से दो प्रकार ही हों, वहां चतुर्थी के प्रयोग से सिद्धि नहीं । किन्तु वक्ष्यमाणव्यञ्जनान्तों से धातुभावशब्दों से चतुर्थीप्रोक्तप्रत्ययों के करने पर व्यञ्जनान्त की उकार उपधा को अत् (सू० २।१।३२) इत्यादि से चतुर्थीस्वरूप सिद्ध होगा ।

अनि च ॥ १८ ॥

प्रधानक्रियाया भविष्यत्काले इतरस्यामप्रधानायां क्रियायां गम्यमानायां धातोः परः अनि प्रत्ययो भवति । परनि गछान् छुह् । पठितुं व्रजति । रननि गोव् । पक्तुं गतः । ख्यनि गछि । अत्तुं यास्यति ।

प्रधानक्रिया के भविष्यत् काल में इतर अप्रधान क्रिया गम्यमान में धातु से परे 'अनि' प्रत्यय होता है। परनि गछान् छुह्-पठितुं व्रजति-पढ़ने के लिए जाता है। रननि गौव्-पक्तुं गतः-पकने के लिए गया। ख्यनि गछि-अत्तुं यास्यति-खाने के लिए जाएगा।

समखः शुक्प्रष्टव्ये नित्यम्॥ १९॥

समख समक्षीभवने इत्यस्य धातोः शोके प्रष्टव्ये सति नित्यमनिप्रत्ययो भवति। समखनि गौव्। शोकपृच्छार्थं गत इत्यर्थः। अन्यत्र। समखन-पुच्छय रूदु। समक्षीभवनाय स्थितः।

समख-सामने होने में, इस धातु से 'शोक' पूछे जाने पर नित्य 'अनि' प्रत्यय होता है। समखनि गौव्-शोकपृच्छार्थं गतः-शोक पूछने के लिए गया। समखन-पुच्छ्य रूदु-समक्षीभवनाय स्थितः-सामने होने के लिए खड़ा था।

कितावनस्॥ २०॥

धातोः कितु प्रत्यये परे अनस् आगमो भवति। करनस् कितु। कर्तुं सः। साधनं सुगमम्।

धातु से 'कितु' प्रत्यय परे रहते 'अनस्' आगम होता है। करनस् कितु-कर्तुं सः-वह करने के लिए। साधन सुगम है।

निदियिभ्योऽकारलोपः॥ २१॥

नि हरणे। दि दाने। यि आगमने। एभ्यः परस्य अकारस्य लोपो भवति। निनस् कितु। हर्तुं सः। दिनस् कितु। दातुं सः। यिनस् कितु। आगन्तुम्।

नि-हरने में। दि-देने में। यि-आने में। इनसे परे 'अकार' का लोप होता है। निनस् कितु-हर्तुं सः-वह हरने के लिए। दिनस् कितु-दातुं सः-वह देने के लिए। यिनस् कितु-आगन्तुम्-आने के लिए।

उनु वा॥ २२॥

धातोः कितु प्रत्यये उनु (सू० ९।२।३) आगमो विकल्पेन भवति। करुनु कितु-कर्तुं सः।

धातु से 'कितु' प्रत्यय परे रहते 'उनु' (सू० ९।२।३) आगम विकल्प से होता है। करुनु कितु-कर्तुं सः-वह करने के लिए।

उन्वन्तं लिङ्गवत्॥ २३॥

अत्र वक्ष्यमाणे भावविकल्पस्वरूपे च उनु (सू० ९।२।३) अन्ते यस्य तत्पदं लिङ्गवद्भवति। यथा कितु प्रत्ययस्य पुंस्त्रीत्वमेकत्वानेकत्वं च संभवति

तथैव तस्मात्पूर्वस्य उनु विशिष्टस्य धातोरपि भवति । रनुनु कितु । पक्तुं सः । रननि किति । पक्तुं ते । करञ् किचू । कर्तुं सा । करञ् किच् । कर्तुं ताः । साधनमुक्तवत् ।

यहां वक्ष्यमाण और भावविकल्प स्वरूप में 'उनु' (सू० ६।२।३) अन्त में जिसके वह पद लिङ्ग की तरह होता है । जैसे 'कितु' प्रत्यय के पुंल्लिङ्ग-स्त्रीलिङ्ग और एकवचन-वहुवचन होता है, वैसे ही उससे पूर्व 'उनु' विशिष्ट धातु से भी होता है । रनुनु कितु-पक्तुं सः-वह पकाने के लिए । रननि किति-पक्तुं ते-वे पकाने के लिए । करञ् किचू-कर्तुं सा-वह (स्त्री०) करने के लिए । करञ् किच्-कर्तुं ताः-वे (स्त्री०) करने के लिए । साधन कहे की तरह ।

स्वरान्तेभ्योऽनिदियिभ्य आदेरत् ।। २४ ।।

नि हरने । दि दाने । यि आगमने । एतान्वर्जयित्वा स्वरान्तेभ्यो धातुभ्यः उनु प्रत्ययस्यादेरुकारस्य अकारो भवति । ख्यनु कितु । खादितुं सः । च्यनु कितु । पातुं सः । प्यनु कितु । पतितुं सः । ह्यनु कितु । वोढुं सः । अनिदियिभ्यः किम् । दिनु कितु । दातुं सः । निनु कितु । हर्तुं सः । यिनु कितु । आयातुं सः । साधनं पूर्ववत् ।

नि-हरण में । दि-दान में । यि-आने में । इन्हें छोड़ कर स्वरान्त धातुओं से उनु प्रत्ययादि उकार को अकार होता है । ख्यनु कितु-खादितुं सः-वह खाने के लिए । च्यनु कितु-पातुं सः-वह पीने के लिए । प्यनु कितु-पतितुं सः-वह गिरने के लिए । ह्यनु कितु-वोढुं सः-वह सवारी के लिए । अनिदियि से क्या ? दिनु कितु-दातुं सः-वह देने के लिए । निनु कितुः-हर्तुं सः-वह हरने के लिये । यिनु कितु आयातुं सः-वह आने के लिए,। साधन पहले की तरह ।

कर्तरि वनु ।। २५ ।।

धातोः कर्तर्यर्थे वनु प्रत्ययो भवति । करवनु । कर्ता । परवनु । पाठकः ।

धातु से कर्तृ अर्थ में 'वनु' प्रत्यय होता है ।' करवनु-कर्ता-करने वाला । परवनु-पाठकः-पढ़ने वाला ।

वनावकारागमः ।। २६ ।।

धातोः वनु प्रत्यये परे अकारागमो भवति । व्यठवनु-स्थूलीभवन् । पोठवनु । पोष्टा । सुगमम् ।

धातु से 'वनु' प्रत्यय परे रहते 'अकार' का आगम होता है । व्यठवनु-स्थूलीभवन्-मोटा होता हुआ । पोठवनु-पोष्टा······सुगम है ।

स्वरान्तेभ्यो वपूर्वः ॥ २७ ॥

स्वरान्तेभ्यो धातुभ्यो वपूर्वः अकारागमः वकारागमो भवति । निववनु । हारकः । दिववनु-दायकः । यिववनु । आगन्ता । एवं ख्यववनु । खादकः । च्यववनु । पायकः । ह्यववनुं । क्रायकः । अत्र वकारागमे कृते सर्वत्राकारागमो निदियिवर्जितात् (सू० ८।२।११) इति धातोरेव अकारागमः ।

स्वरान्त धातुओं से 'व' पूर्व 'अकार' आगम 'वकार' आगम होता है । निववनु-हारकः-हरने वाला । दिववनु-दायकः-देने वाला । यिववनु-आगन्ता-आने वाला । इस तरह । ख्यववनु-खादकः-खाने वाला । च्यववनु-पायकः-पीने वाला । ह्यववनु-क्रायकः-...... यहां 'वकार' आगम करने पर 'सर्वत्राकारागमो निदियिवर्जितात् (सू० ८।२।११) से धातु से ही 'अकार' का आगम ।

वोलुप्राक् पदौ च ॥ २८ ॥

धातोः कर्तर्यर्थे वोलुप्रत्ययः प्राक् प्रत्ययश्च भवति उदाहरणमुत्तरसूत्रे ।

धातु से कर्तृ अर्थ में 'वोलु' प्रत्यय और 'प्राक्' प्रत्यय होता है । उदाहरण उत्तर सूत्र में ।

तयोरनागमः ॥ २९ ॥

तयोर्वोलु प्राक् प्रत्यययोः परयोर्धातोः अन् आगमो भवति । करन् वोलु । कर्ता । परन् वोलु । पठिता । एवं । करन्-प्राख् । कर्ता । परन् प्राख् । पाठकः । पदसंज्ञाव्यपदेशाद्वक्ष्यमाणपुंस्त्रीभावपदात्परौ प्रयुक्तौ सन्तौ प्रोक्तसमासवत्सिद्धिरवधार्या । तद्यथा । जानन् भावपदात् अग्रे वोलुपदम् । व्यञ्जनान्तस्योकारोपधाया अत् (सू०२।१।३२) इति उपधाया उकारस्य अकारः । एवं । जानू-वोलु । अत्र जान् (सू० ६।२।७१) भावपदात् अग्रे वोलु पदम् । तवर्गान्तानामप्रसिद्धः (सू० ६।११) इति नकारस्य ञकारः । कृतादेशानामूमात्रा आगमः (सू० ३।१ १६) इति ऊमात्रा आगमः । जानन्-वोलु । ज्ञाता । जाञू वोलु । ज्ञाता । इति सिद्धम् । यस्यैव धातोः स्वार्थे पुंस्त्रीरूपे भावपदे स्यातां तस्यैव स्वरूपद्वयं सगच्छत इत्यवधार्यम् । (यस्यैवेत्यत्रायमर्थः यस्य धातोः स्वार्थे निजार्थे कर्तुः स्वस्यैवात्मन आन्तरधर्मद्योतके न तु केनचिद्बाह्येन कर्मादिनां संयुज्यमानार्थके पुंस्त्रीरूपे पुंसि स्त्रियां च न तु द्वयोरन्यतरस्मिन्नेव निष्पद्यमानप्रयोगे भावपदे वक्ष्यमाणभावप्रत्ययान्तरूपे स्यातां तस्यैवेति । यथात्र जानुन् जान् इत्युभे पुंस्त्रीरूपे भावपदे कर्तृसंबन्धिज्ञानरूपस्यान्तरधर्मस्य वाचके स्त इति बोध्यम् । करादीनां (सू० ६।२।२) स्वबाह्यकर्मसंयोगात् चरादीनां (सू० ६।२।२४)

नित्यस्त्रीभावात् छ्वकादीनां (सू० ६।२।६) स्त्रीभावप्रत्ययान्तभावाभावात् डलादीनां (सू० ६।२।२७) बाह्यधर्मसंयोगभावात्पदसंज्ञाव्यपदेशादित्यादिना सूचितविधेरप्रसक्ततोह्येति ।)

उन 'वोलु-ग्राक्' प्रत्ययों के परे रहते 'अन' आगम होता है। करन्वोलु-कर्ता-करने वाला। परन् वोलु-पठिता-पढ़ने वाला। इस तरह करन् ग्राख्-कर्ता-करने वाला। परन् ग्राख्-पाठकः-पढ़ने वाला। पदसंज्ञाव्यपदेश से और वक्ष्यमाण पुंल्लिङ्ग-स्त्रीलिङ्ग भाव पद से परे प्रयुक्त हुए कहे समास की तरह सिद्धि जानना। सो जैसे। जानुन् भावपद से आगे वोलु पद। व्यञ्जनान्तस्योकारोपधाया अत् (सू० २।१।३२) से उपधा के 'उकार' को 'अकार'। इस तरह-ज़ाऩ वोलु। यहां ज़ान (सू० ६।२।७१) भावपद से आगे 'वोलु' पद। तवर्गान्तानामप्रसिद्धः (सू० ६।११) से 'नकार' को 'ऩकार'। कृतादेशानामूमात्रा आगमः (सू० २।१।१६) से ऊमात्रा आगम। ज़ानन् वोलु-ज्ञाता-जानने वाला। ज़ाऩू वोलु-ज्ञाता-जानने वाला। यह सिद्ध हुआ। जिस ही धातु के स्वार्थ, पुंस्त्रीरूप-भावपद में होवें, उसके ही दो स्वरूप होते है, यह समझना। (जिसके ही यह यहां यह अर्थ है, जिस धातु के स्वार्थ में निजार्थ में कर्ता का अपने ही अपने आन्तरधर्मद्योतक में न कि किसी बाह्य कर्मादि से संयुज्यमान अर्थ पुंस्त्री रूप पुंल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग में, न कि दोनों में, और ही निष्पद्यमानप्रयोग भावपद में वक्ष्यमाणभावप्रत्ययान्तरूप में उसके ही होवें। जैसे यहां ज़ानुन् ज़ान्, इन दोनों पुंस्त्रीरूप भावपद में कर्तृसंबन्धिज्ञानरूप अन्तरधर्म के वाचक में होवें, यह जानना। करादीनां (सू० ६।२।२) स्वबाह्यकर्मसंयोग से चरादीनां (सू० ६।२।२४) नित्यस्त्रीभाव से छ्वकादीनां (सू० ६।२।६) स्त्रीभावप्रत्ययान्तभावाभाव से डलादीनां (सू० ६।२।२७) बाह्यधर्मसंयोगभाव से पदसंज्ञाव्यपदेश इत्यादि से सूचितविधि की अप्रसक्तता समझना।)

स्वरान्तात्सस्वरः ॥ ३० ॥

सः अन् आगमः स्वरान्ताद्धातोः सस्वरः स्वरान्तो भवति। ख्यन-वोलु। खादिता। च्यन्-वोलु। पाता। एवं। ख्यन-ग्राख्। भक्षकः। च्यन-ग्राख्। पायकः।

वह 'अन्' आगम स्वरान्त धातु से सस्वर स्वरान्त होता है। ख्यन-वोलु-खादिता-खाने वाला। च्यन-वोलु-पाता-पीने वाला। इस तरह। ख्यन-ग्राख्-भक्षकः-खाने वाला। च्यन-ग्राख्-पायकः-पीने वाला।

न्यादीनामल्लोपः ॥ ३१ ॥

नि हरणप्रापणयोः । दि दाने । यि आगमने । इत्येषां अन् आगमस्य अकारलोपो भवति । निन-वोलु । नेता । दिन-वोलु-दाता । यिन-वोलु-आगन्ता । एवं । निन-ग्राख् । नायकः । दिन-ग्राख्-दायकः । यिन-ग्राख्-आगन्ता ।

'नि'—हरने और प्राप्त करने में । दि-देने में । यि-आने में । इनके 'अन्' आगम के 'अकार' का लोप होता है । निज-वोलु-नेता-ले जाने वाला । दिन-बोलु-दाता देने वाला । यिन-वोलु-आगन्ता-आने वाला । इस तरह-निन ग्राख्-नायकः ले जाने वाला । दिन ग्राख्-दायकः देने वाला । यिन ग्राख्-आगन्ता-आने वाला ।

दिदावोर्नल्लौ व्यभिचारिण्याम् ॥ ३२ ॥

दि दाने । दाव दापने । इत्यनयोर्व्यभिचारिण्यां स्त्रियां क्रमेण नल् अल् प्रत्ययौ भवतः । दिनल् । व्यभिचारिणी । दावल् । व्यभिचारिणी ।

दि-देने में । दाव-देने में । इन दोनों के व्यभिचारिणी स्त्री में नल्, अल् प्रत्यय होते हैं । दिनल्-व्यभिचारिणी-व्यभिचार करने वाली । दावल्-व्यभिचारिणी-व्यभिचार करने वाली ।

कर्मोपपदे पुंस्यऽश्लीले ॥ ३३ ॥

तयोर्दिदावोः कर्मण्युपपदे सति पुंसः अश्लीले नल्-अलौ भवतः । माज्यदिनल् । मातृगामी । व्यञ दिनल् । स्वसृगामी । कोरि दिनल् । कन्यागामी । एवं माज्यदावल् । व्यञ् दावल् । कोरि दावल् ।

उन 'दि-दाव' के कर्म उपपद में होने पर पुरुष के अश्लील अर्थ में 'नल्-अल्' प्रत्यय होते हैं । माज्यदिनल्-मातृगामी-माता से भोग करने वाला । व्यञ दिनल्-स्वसृगामी-बहिन से भोग करने वाला । कोरि दिनल्-कन्यागामी-कन्या से भोग करने वाला । इस तरह-माज्यदावल्ःमातृगामी । व्यञ दावल्-स्वसृगामी कोरिदावल्-कन्यागामी ।

नलो लो वा ॥ ३४ ॥

नल्प्रत्ययस्यादेर्विकल्पेन लकारो भवति । माज्य दिलल् ।

नल् प्रत्यय के आदि को विकल्प से 'लकार' होता है । माज्यदिलल्-मां से भोग करने वाला ।

क्वचिल्लोपः ॥ ३५ ॥

नल् प्रत्ययस्यादेः क्वचिल्लोपो भवति । माज्यदिल् । मातृगामी ।

'नल्' प्रत्यय के आदि का कहीं लोप हो जाता है । माज्यादिल्-मातृगामी-मां से भोग करने वाला ।

प्रधानातीते उः ॥ ३६ ॥

धातोः प्रधाने क्रियारूपे अतीते गम्यमाने उ प्रत्ययो भवति । करु । कृतम् । परु । पठितम् । खनु । खातम् ।

धातु के प्रधान-क्रियारूप अतीत गम्यमान में 'उ' प्रत्यय होता है । करु-कृतम्-किया । परु-पठितम्-पढ़ा । खनु-खातम्-खोदा ।

चिरख्योरौवादेशः ॥ ३७ ॥

चि पाने । खि खादने । इत्यनयोः उ् प्रत्ययस्य औव् आदेशो भवति । च्यौव् । पीतम् । ख्यौव् । भुक्तम् ।

चि-पीने में । खि-खाने में । इन दोनों के 'उ' प्रत्यय को 'औव्' आदेश होता है । च्यौव्-पीतम्-पिया । ख्यौव्-भुक्तम्-खाया ।

नेरूव् ॥ ३८ ॥

नि हरणे इत्यस्मात् उ प्रत्ययस्य ऊव् आदेशो भवति । न्यूव् । नीतम् । तत्र युष्मच्छब्दकर्तरि आख्यातोक्तभूतक्रियैव (सू. ८।३।३४) मुख्या स्पष्टा च प्रोक्ता तु गौणेति बोध्यम् ।

'नि' हरने अर्थ में, इससे 'उ' प्रत्यय को 'ऊव्' आदेश होता है । न्यूव्-नीतम्-लिया । वहां युष्मत् शब्द कर्ता में आख्यातोक्तभूतक्रियैव (सू. ८।३।३४) मुख्य और स्पष्ट कही गई है, तो भी गौण ही समझना ।

कर्तृधातूनामाख्यातभूतक्रियैव नित्यम् ॥ ३९ ॥

येषां धातूनामतीतकाले कर्तृप्रयोगा एव भवन्ति तेषामाख्यातोक्तभूतकाले-क्रियैव नित्यं भवति कर्मप्रयोगाभावात् । चलु । पलायितः । चलि । पलायिताः । व्यठ्योव् । पुष्टः । व्यठ्येय् । पुष्टाः । आख्यातक्रियायां साधितानि ।

जिन धातुओं के अतीतकाल में कर्तृप्रयोग ही होते हैं । उनके आख्यातोक्तभूतकालक्रिया ही कर्मप्रयोग अभाव से नित्य होती है । चलु-पलायितः-भाग गया । चालि-पलायिताः-भाग गए । चलि-पलायिताः-भाग गए । व्यठ्योव्-पुष्टः-पुष्ट है । व्यठ्येव्-पुष्टाः-पुष्ट हैं । आख्यातक्रिया में सिद्ध किए जा चुके हैं ।

भूतपदान्मतु पदं कर्मणि ॥ ४० ॥

कर्मणि धातुक्रियाविशिष्टे पदार्थे अभिधेये सति कर्मधातोः कृदुक्तभूतक्रिया-पदात् कर्तृधातोश्चाख्यातोक्तभूतपदात् मतु पदं भवति । मतु पदे तु मतु इति उकारविशिष्टं च व्यवह्रियते । भूतपदग्रहणेन यथा मतु पदस्य प्रथमादि

विभक्तिपरिणामो भवति एकत्वानेकत्वपुंस्त्रीपरिणामश्च भवति तथा तत्तद्भूतक्रियापदस्यापि भवति । मतुविशिष्टं पदं त्वेकमेव भवति न तु द्वितयम् । करु-मतु । कृतम् । करू मचू । कृता । गरु मतु । घट्टितम् । गरू मचू । घट्टिता । करि मति । कृतानि । कयं मच । कृताः । गरि मति । घट्टितानि । गयं मच । घट्टिताः । कर करणे । गर घट्टने । प्रधानातीते उः (सू. ३६) । करु पदात् गरु पदाच्चानेन मतु पदम् । पुंबहुत्वे पूर्वोत्तर-पदयोरन्त्यस्वरस्य इकारः । स्त्रीलिङ्गे ऊमात्रादेशः तकारस्य च चत्वम् । एवं सर्वत्र विभक्तिगणे विज्ञेयम् । कर्तृधातूनां यथा । व्यठ्यो मतु । स्थूलीभूतः । खूचु मतु । भीतः । व्यठ स्थूली भवने ग्रोव् यागमः (८।३।४६ सूत्रेण) व्यठ्योव् पदात् मतु पदम् । संबन्धिप्रत्ययेषु वयोर्लोपः (सू. ८।३।४१) इति वकारस्य लोपः । एवम् । खोच भये ग्रोव् तस्य छुह् आदेशः छहोर्लो-पश्च । ग्रोकारस्योकारः सादेशपुंकर्तरि च (सू. ८।३।२४) इत्युपधाया ऊकारः । खूचु पदात् मतुपदम् । ननु कर्तृधातूनां वकारस्य लोपे ग्रोदन्तविशेषणादो-दन्तस्य च लिङ्गप्रयोगादर्शनात्कथं पूर्वपदस्य लिङ्गपरिणामः क्रियते । अत्रोच्यते यथा उकारान्तस्य प्रथमाबहुत्वादिषु एकमात्र एव इकारादेशः क्रियते तथैव द्विमात्रस्य सन्ध्यक्षरस्य ग्रोकारस्यापि द्विमात्रसन्ध्यक्षरस्य एकार-स्यादेशो भवतीति बोध्यम् । तेन व्यठच मति । स्थूलीभूताः । यद्वा । व्यठ्येय् इति बहुवचनभूतक्रियाया मतु पदे कृते प्रोक्तसूत्रेण यकारलोपात्सेत्स्यतीति । एकाक्षरावशिष्टानां तु पदसंज्ञानिवृत्तिः । तेन । ग्रामतु । ग्रागतः । ग्रामति । ग्रागताः । चामतु । प्रविष्टः । चामति । प्रविष्टाः । द्रामतु । निर्गतः । द्रामति । निर्गताः । प्यामतु । प्रसूतः । प्यामति । प्रसूताः । जामतु । जातः । जामति । जाताः । मूदु इति क्रियापदस्य मतौ ग्रन्त्यव्यञ्जनादेर्विकल्पेन लोप इष्यते । मूदुमतु । मृतः । पक्षे । मूमतु । मृतः । स्त्रीलिङ्गे तु नित्यमिष्यते । मूमचू । मृता । मूमच । मृताः ।

कर्म में धातुक्रियाविशिष्ट पदार्थ ग्रभिधेय में होने पर कर्म धातु के कृत्-उक्त भूतक्रियापद से कर्तृधातु के ग्राख्यात में उक्त भूतपद से मतु पद होता होता है। मतु पद में तो मतु यह उकारविशिष्ट व्यवहृत होता है। भूतपदग्रहण से जैसे मतु पद का प्रथमादि विभक्ति परिणाम होता है ग्रौर एकत्व-ग्रनेकत्व पुंस्त्रीपरिणाम होता है, वैसे तत्तद्भूतक्रियापदका भी होता है। मतु विशिष्ट पद तो एक ही होता है न कि दो। करु मतु-कृतम्-किया। करू मचू-कृता-की। गरु मतु-घट्टितम्-घटा। गरू मचू-घट्टिता-घटी। करि मति-कृतानि-किए। कयं मच-कृताः-कीं। गरिमति-घट्टितानि-घटे। गयं मच-

घट्टिता-घटीं। कर-करने में। गर-घटने में। प्रधानातीते उ: (सू. ३६)। करु पद से और गरु पद से इससे मतु पद। पुंल्लिङ्गवहुवचन में पूर्व-उत्तर पद में अन्त के स्वर को 'इकार' होता है। स्त्रीलिङ्ग में ऊ मात्र आदेश और तकार को 'च'। इस तरह सब जगह विभक्तिगण में जानना। कर्तृ धातुओं के जैसे-व्यठचो मतु-स्थूलीभूत:-मोटा हुआ। खूचु मतु-भीत:-डरा। व्यठ-मोटा होने में ओव् यागम: (८।३।४६) सूत्र से व्यठचोव् पद से 'मतु' पद। सम्बन्धिप्रत्ययेषु वयोर्लोप: (सू. ८।३।४१) से वकार का लोप। इस तरह-खोच-भय में ओव् उसे छुह् आदेश और छ ह का लोप। ओकारस्योकार: सादेशपुंकर्तरि च (सू. ८।३।२४) से उपधा को 'ऊकार'। खूचु पद से मतु पद। कर्तृ धातुओं के वकार का लोप होने पर ओदन्त विशेषण से और ओदन्त के लिङ्गप्रयोग अदर्शन से कैसे पूर्वपद का लिङ्ग परिणाम किया जाता है। यहां कहा जाता है जैसे उकारान्त के प्रथमा-वहुवचन आदि में एकमात्र ही 'इकार' आदेश किया जाता है वैसे ही द्विमात्र सन्ध्यक्षर ओकार को भी द्विमात्र सन्ध्यक्षर एकार का आदेश होता है, यह जानना। उस से व्यठ्ये मति-स्थूलीभूता:-मोटे हुए। अथवा-'व्यठ्येय' इस वहुवचनभूत-क्रिया का 'मतुं' पद करने पर उक्त सूत्र से यकार लोप से सिद्ध हो जाएगी। एकाक्षर अवशिष्टों के तो पदसंज्ञानिवृत्ति। उससे-आमतु-आगत:-आया। आमति-आगता:-आए। चांमतु प्रविष्ट:-प्रविष्ट हुआ। चामति-प्रविष्टा:-प्रविष्ट हुए। द्रामतु-निर्गत:-निकला। द्रामति-निर्गता:-निकले। प्यामतु-प्रसूत:-पैदा हुआ। प्यामति-प्रसूता:-पैदा हुए। जामतु-जात:-पैदा हुआ। जामति-जाता:-पैदा हुए। 'मूदु' इस क्रियापद के मतु में अन्त के व्यञ्जनादि का विकल्प से लोप होता है। मूदु मतु-मृत:-मरा। पक्ष में-मूमतु-मृत:-मरा। स्त्रीलिङ्ग में तो नित्य होता हैं। मूमचू-मृता-मरी। मूमच-मृता:-मरीं।

हे: पूर्वं भावपदं चारब्धे ॥ ४१ ॥

हि ग्रहणादिषु इत्यस्य धातो: कृदुक्तभूतपदात्परं मतुपदं भवति। धातो: पूर्वं च भावपदं (सू. ६।२।३) प्रयोज्यम् आरब्धे कर्मणि अभिधेये सति। ग्यवनु ह्यतु मतु। गीयमानम्। करुनु ह्यतु मतु। क्रियमाणम्।

'हि' ग्रहणादि में, इस धातु से कृत् में उक्त भूतपद से परे मतु पद होता है। धातु से पूर्व 'च' भावपद (सू. ६।२।३) आरब्ध कर्म अभिधेय होने पर प्रयुक्त करना चाहिए। ग्यवनु ह्यतु मतु-गीयमानम् गाए जाते हुए। करुनु ह्यनु मतु-क्रियमाणम्-किए जाते हुए।

गछोऽतीतानागतौ धातुभावतस्तव्यार्थे ।। ४२ ।।

अत्र शब्दशास्त्रे तव्यार्थकः शब्दः अतीतकाले भविष्यत्काले च भवतीति बोध्यम् । गछ सामञ्जस्ये इत्यस्य प्रधानभूतकालस्वरूपं प्रधानभविष्यत्-कालस्वरूपं च धातोर्भावशब्दाद्वक्ष्यमाणरीत्या पूर्वे परे वा प्रयुज्येते क्रमेण भूततव्यार्थभविष्यत्तव्यार्थके भवतः । च्य गेछ गछनु । त्वया गन्तव्यं भूते । त्वह्य गछ गछनु । युष्माभिर्गन्तव्यम् । अनागते यथा । ततु गछि गछनु । तत्र गन्तव्यम् । साधनं सुगमम् ।

यहां शब्दशास्त्र में तव्यार्थक शब्द अतीतकाल और भविष्यत् काल में होता है, यह जानना । गछ-सामञ्जस्य,में इसके प्रधानभूतकालस्वरूप को और प्रधानभविष्यत्कालस्वरूप को धातु के भावशब्द से वक्ष्यमाणरीति से पूर्व अथवा पर प्रयुक्त होते हैं । क्रम से भूततव्यार्थ और भविष्यत्-तव्यार्थक होते हैं । च्य गछ गछनु-त्वया गन्तव्यं भूते-भूत में तुझे जाना चाहिए । त्वह्य गछ गछनु-युष्माभिर्गन्तव्यम्-तुम्हें जाना चाहिए । अनागत में जैसे-ततु गछि गछनु-तत्र गन्तव्यम्-वहां जाना चाहिए । साधन सुगम है ।

विधिनिषेधयोर्लगः ।। ४३ ।।

लग संगे पीडायां च इत्यस्य स्वरूपं धातोर्भावशब्दात्प्रयोज्यम् विधौ निषेधे च गम्यमाने । तत्र अतीतक्रियाया विधिनिषेधयोर्निषेधादनागतस्व-रूपमेव ज्यायः न भूतस्वरूपं । किन्त्वपूर्णभूतस्वरूपं युज्यते ततु लगि गछनु । तत्र गन्तव्यम् । ततु लगि न गछनु । तत्र न गन्तव्यम् । ततु लगिहे गछनु । (तत्र गन्तव्यं योग्यमभविष्यत् ।)

लग संग में और पीडा में, इसका स्वरूप धातु के भावशब्द से विधि और निषेध गम्यमान में प्रयुक्त करना चाहिए । वहां अतीत क्रिया के विधि और निषेध के निषेध से अनागत स्वरूप ही {बड़ा है, न कि भूतस्वरूप । किन्तु अपूर्णभूतस्वरूप उचित है । ततु लगि गछनु-तत्र गन्तव्यम्-वहां जाना चाहिए । ततु लगि न गछनु-तत्र न गन्तव्यम्-वहां नहीं जाना चाहिए । ततु लगिहे गछनु-तत्र गन्तव्यं योग्यमभविष्यत्- वहां जाना चाहिए, योग्य होगा ।

भाव्यार्थे पजश्च ।। ४४ ।।

पज युक्तीभवने इत्यस्यातीतापूर्णभूतस्वरूपं धातुभावतः प्रयोज्यं च शब्दाद् भूतप्रयोगाश्च भाव्ये सामञ्जस्ये गम्यमाने । ततु पजि गछनु । तत्र गमनेन भाव्यम् । ततु पजिहे गछनु । (तत्र गन्तव्यं योग्यमभविष्यत् ।) एवमन्यत् ।

'पज' उचित होने में, इसके अतीतपूर्णभूतस्वरूप को धातुभाव से प्रयुक्त

करना चाहिए, 'च' शब्द से भूतप्रयोग भाव्य सामञ्जस्य गम्यमान में। ततु पजि गछ्नु-तत्र गमनेन भाव्यम्-वहां जाना चाहिए। ततु पजिहे गछ्नु-तत्र गन्तव्यं योग्यमभविष्यत्-वहां जाना ठीक होगा। इस तरह और।

षष्ठी तृतीया वैषां कर्तरि ॥ ४५ ॥

एषां प्रोक्तानां गछादीनां कर्तरि षष्ठी तृतीया वा स्यात्। च्य गछु करुन्। त्वया कर्तव्यं भूते। वा। च्योनु गछु करुन। ते कर्तव्यं भूते। च्य पजि रनुन्। त्वया पक्तव्यम्। च्योनु पजि रनुन्। तव पक्तव्यम्। च्य लगि दपुन्। त्वया वाच्यम्। च्योनु लगि न दपुन। तव न वक्तव्यम्।

इन कहे गए 'गछ' आदि के कर्ता में षष्ठी वा तृतीया हो। च्य गछु करुन्-त्वया कर्तव्यं भूते-भूत में तुझे करना चाहिए। अथवा-च्योनु गछु करुन्-ते कर्तव्यं भूते-भूत में तेरा कर्तव्य। च्य पजि रनुन्-त्वया पक्तव्यम्-तुझे पकाना चाहिए। च्योनु पजि रनुन्- तव पक्तव्यम्-तेरा पकाना चाहिए। च्य लगि दपुन्-त्वया वाच्यम्-तुझे कहना चाहिए। च्योनु लगि न दपुन्-तव न वक्तव्यम्-तेरा न कहना चाहिए।

एभ्य एव संबन्धप्रत्ययाश्च ॥ ४६ ॥

एभ्यो गछादिभ्यः स्वरूपेभ्यस्तत्संवन्धादिप्रत्ययाश्च भवन्ति न तु धातुभावतः। गछुस् करुन्। तस्मै कर्तव्यं भूते। गछय् करुन्। तुभ्यं कर्तव्यम् भूते। एवं। लग्यस् करुन्। कर्तव्यं तस्य। लगिय् करुन्। कर्तव्यं तव। लग्यस् करुन्। कर्तव्यं मम। एवं। पज्यस् परुन्। पाठेन तस्य भाव्यम्। पज्यम् परुन्। पाठेन मम भाव्यम्।

इन 'गछ' आदि स्वरूपों से तत्संबन्धादिप्रत्यय होते हैं, न कि धातुभाव से। गछस् करुन्-तस्मै कर्तव्यं भूते-भूत में उसके लिए करना चाहिए। गछय् करुन्-तुभ्यं कर्तव्यम् भूते। भूत में तुम्हारे लिए करना चाहिए। इस तरह-लग्यस् करुन्-कर्तव्यं तस्य-उस का करना चाहिए। लगिय् करुन्-कर्तव्यं तव-तेरा कर्तव्य है। लग्यस् करुन्-कर्तव्यं मम-मेरा कर्तव्य है। इस तरह पज्यस् परुन्-पाठेन तस्य भाव्यम्-पाठ से उस का होना चाहिए। पज्यम् परुन्-पाठेन मम भाव्यम्-पाठ से मेरा होना चाहिए।

एकपदे भावतः परा वा ॥ ४७ ॥

एकस्मिन्नेव क्रियारूपे पदे वक्तव्ये सति गछादीनां प्रयोगा भावतः परा वा प्रयोज्याः। गछु गछुन् वा गछुन गछु। (गन्तव्यम्)। लगि परुन् वा परुन् लगि। (पठितव्यम्)। पजि ख्यनु वा ख्यनु पजि। अत्तव्यम्।

एक ही क्रियारूप पद वक्तव्य होने पर 'गछ' आदि का प्रयोग भाव से वा परे प्रयुक्त करने चाहिए। गछु गछुन् वा गछन् गछ-गन्तव्यम्-जाना चाहिए। लगि परुन् वा परुन् लगि-पठितव्यम्-पढ़ना चाहिए। पजि ख्यनु वा ख्यनु पजि-अत्तव्यम्-खाना चाहिए।

अनेकपदेषु वाक्यारम्भपदात् ।। ४८ ।।

एकाधिकपदैर्वाक्ये वक्तव्ये सति वाक्यस्य आरम्भपदादग्रे ते गछादीनां प्रयोगाः स्युः। अद गछु तनु गछनु। ततस्तत्र गन्तव्यम्। एवं। अद लगि तति विहनु। ततस्तत्रासितव्यम्। एवं। अद पजि तति दपनु। ततस्तत्र वक्तव्यम्। एवमन्यत्।

एक से अधिक पदों से वाक्य वक्तव्य होने पर वाक्य के आरम्भ पद से आगे वे 'गछ' आदि के प्रयोग हों। अद गछु ततु गछनु-ततस्तत्र गन्तव्यम्-इस के बाद वहां जाना चाहिए। इस तरह-अद पजि तति दपनु-ततस्तत्र वक्तव्यम्-इसके बाद वहां कहना चाहिए। इस तरह और।

गछो गतागतप्रयोगा उदन्तभावतः कामार्थे ।। ४९ ।।

इच्छार्थे गम्यमाने सति गछ गतौ सामञ्जस्ये च इत्यस्य अतीतानागत-कालिकाः सर्वे प्रयोगा उकारान्तभावतः प्रयोज्याः। ते तु कर्तर्येव ज्ञेयाः। भावस्योकारान्तत्वं च धातुवद् एकत्वानेकत्वपरिणामार्थमिति। तत्रानागते यथा। सुह् गछि गछनु। (स गच्छतु)। तिम् गछन् गछनि। (ते गच्छन्तु)। च़्ह् गछख् गछनु। (त्वं गच्छ)। त्वहि गछिव् गछनि। (यूयं गच्छत)। व्वह् गछ गछनु। अहं गच्छामि। असि गछव् जेननि। (वयं जयेम)। इत्यादयो वाक्यार्था इच्छार्थे बोध्याः)। अतीतकालिकेषु यथा। ताफ् गछु करुनु। आतपोऽभविष्यत्)। कुलि गछि खसनि। (वृक्षा अरुक्ष्यन्)। च़्ह् गछख् गछनु। (त्वमगमिष्याः)। त्वहि गछिव गछनि। (यूयमगमिष्यत)। व्वह् गछस् गछनु। (अहमगमिष्यम्)। असि गछि बडनि। (वयमवर्धिष्याम)। इति वाक्यार्था आशंसापरा बोध्याः। अतीतकालश्चात्र क्रियातिपत्तौ चरितार्थः। सर्वेषाम् साधनं पूर्ववत्।

इच्छा अर्थ में गम्यमान में होने पर 'गछ' गति और सामञ्जस्य में, इस के अतीत-अनागत कालिक सभी प्रयोग उकारान्तभाव से प्रयुक्त करने चाहिए। वे तो कर्तृ में ही जानने। भाव का उकारान्तत्व धातु की तरह एकत्व अनेकत्व परिणाम के लिए। वहां अनागत में जैसे- सुह् गछि गछनु-स गच्छतु-वह जाए। तिम् गछन् गछनि-ते गच्छन्तु-वे जाएं। च़्ह् गछख् गछनु-त्वं गच्छ-

तू जा। त्वहि गछिव् गछनि-यूयं गच्छत-तुम सब जाओ। व्वह् गछ गछनु-अहं गच्छामि-मैं जाता है। असि गछव् जेननि-वयं जमेम-हम जीतें। इत्यादि वाक्यार्थं इच्छा-अर्थं में जानने। अतीतकालिक में जैसे-ताफ् गछु करुनु-आतपोऽभविष्यत्-धूप होगी। कुलि गछि खसनि-वृक्षा अरुक्ष्यन्-वृक्ष.........। च्ह् गछख गछनु-त्वमगमिष्यः-तू जाएगा। त्वहि गछिव गछनि-यूयमगमिष्यत-तुम सब जाओगे। व्वह् गछस् गछनु-अहमगमिष्यम्-मैं जाऊंगा। असि गछि बडनि-वयमवर्धिष्याम-हम वृद्धि को प्राप्त करेंगे। ये वाक्य-अर्थ प्रशंसापरक जानने। अतीतकाल यहां क्रियातिपत्ति में चरितार्थ है। सभी के। साधन पहले की तरह।

नञोऽर्थे धातोरनय् ॥ ५१ ॥

धातोः नञ्शब्दस्य अभावस्यार्थे वाच्ये अनय् भवति स चाव्ययम्। करनय्। अकृतम्। गरनय् अघट्टितम्। परनय्। अपठितम्। पोठनय्। अपुष्टम्। दिनय्। अदत्तम्। ह्यनय्। अक्रीतम्। साधनं सुगमम्।

धातु से 'नञ्' शब्द को अभाव के अर्थ वाच्य में 'अनय्' होना होता है और वह अव्यय है। करनय्-अकृतम्-नहीं किया। गरनय्-अघट्टितम्-नहीं घटा। परनय्-अपठितम्-नहीं पढ़ा। पोठनय्-अपुष्टम्-पुष्ट नहीं हुआ। दिनय्-अदत्तम्-नहीं दिया। ह्यनय्-अक्रीतम्-नहीं खरीदा। साधन सुगम है।

इति शारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते
कृदन्तप्रक्रियायां कृत्क्रियादिपादः प्रथमः ॥६।१॥

अथ कृदन्त प्रक्रियायाम् ॥९॥

भावपादः ॥२॥

भावे ॥१॥

इतः परं ये वक्ष्यमाणाः प्रत्ययास्ते सर्वे भावे विज्ञेयाः ।
इससे परे जो वक्ष्यमाण प्रत्यय है, वे सभी भाव में जानने ।

पुंस्युन् ॥२॥

धातोर्भावे उनू प्रत्ययो भवति स च पुंल्लिङ्गे वर्तते । करुन् । करणम् । परुन् । पटनम् । द्युन् । दानम् । असुन् । हसनम् ।

धातु के भाव में 'उन्' प्रत्यय होता है और वह पुंल्लिङ्ग में है । करुन्-करणम्-करना । परुन्-पठनम्-पढ़ना । द्युन्-दानम्-देना असुन्-हसनम्-हंसना ।

अनु (उनु) वा ॥३॥

धातोर्भावविषये अनु प्रत्ययो वा विकल्पेन भवति सोऽपि पुंल्लिङ्गे । चरनु । उपचयनम् । जुवनु । जीवनम् । (अनु प्रत्ययस्थाने उनु प्रत्ययव्यवहारो दृश्यते । यथा ९।१ सूत्रेषु २२, २३, ४१, ४२ इत्यादिषु) । पक्षे । चरुन् । जुवनु । इति स्वरूपे स्तः ।

धातु के भावविषय में 'अनु' प्रत्यय विकल्प से होता है, वह भी पुंल्लिङ्ग में । चरनु-उपचयनम्-चुनना । जुवनु-जीवनम्-जीवन । ('अनु' प्रत्यय के स्थान में 'उनु, प्रत्यय-व्यवहार देखा जाता है । जैसे—९।१ सूत्रों में २२, २३, ४१, ४२ इत्यादि में) पक्ष में—चरुन् । जुवनु । ये स्वरूप हैं ।

तलबजोर्यागमो वा ॥४॥

तल स्नेहपाके । बज सेवायां स्नेहने च । इत्यनयोः उन् प्रत्यये परे विकल्पेन यकारागमो भवति । तत्र बजः स्नेहन एव । तल्युन् । स्नेहपाकः । बज्युन् । स्नेहपाकः । पक्षे । तलुन् । बजुन् ।

तल-तेल सेपकाने में। बज-सेवा में और तेल में। इन दोनों में 'उन्' प्रत्यय परे रहते विकल्प से 'यकार' का आगम होता है। वहाँ 'बज' तेल में ही। तल्युन्-स्नेहपाकः-तेल से पकाना। वज्युन्-स्नेहपाकः-तेल से पकाने में। पक्ष में-तलुन्, बजुन्।

मषश्च रव् ॥५॥

मष विस्मरणे इत्यस्य भावे रव् प्रत्ययो भवति। मष् रव्। विस्मरणम्। पक्षे। मषुन्।

'मष' भूलने में, इसके भाव में 'रव्' प्रत्यय होता है। मषरव्-विस्मरणम्-भूलना। पक्ष में। मषुन्।

द्वदरज्वजरस्वसरां च उ ॥६॥

द्वदर जीर्णीभवने। ज्वजर जर्जरत्वे। स्वसर काष्ठादिजीर्णने इत्येषां भावे ऊ प्रत्ययश्च स्यात्। द्वदरु्। जीर्णनम्। ज्वजरु्। जीर्णनम्। स्वसरु। जीर्णनम्। पक्षे। द्वदरुन्। ज्चजरुन्। स्वसरुन्।

द्वदर जीर्ण होने में। ज्वजर-जर्जर होने में। स्वसर-काष्ठ आदि के जीर्ण होने में। इनके भाव में 'उ' प्रत्यय हो। द्वदरु-जीर्णनम्-जीर्ण होना। ज्वजरु्-जीर्णनम्-जर्जर होना। स्वसरु्-जीर्णनम्-काष्ठ आदि का जीर्ण होना पक्ष में— द्वदरुन्, ज्वजरुन्, स्वसरुन्।

छ्वम्बज्वसबगारब्यहलमलोसवुनाम ऽच्च ॥७॥

छ्वम्ब कर्णमर्दने। ज्वस कासे। बगार म्रक्षणे। ब्यह उपवेशने। लम आकर्षणे। लोस श्रमे। वुन दैवानार्जवे। एषां भावे अ प्रत्ययश्च भवति। छ्वम्ब। मर्दनम्। ज्वस। कासः। बगार। म्रक्षणम्। ब्यह। आसनम्। लम। आकर्षणम्। लोस। श्रमः। वुन। (दौर्भाग्यम्)। पक्षे। छ्वम्बन्। इत्यादयो भवन्ति।

छ्वम्ब-कान मसलने में। ज्वस-खांसी में बगार........। ब्यह बैठने में। लम-आकर्षण में। लोस-श्रम में। वुन-दुर्भाग्य में। इनके भाव में 'अ' प्रत्यय होता है। छ्वम्ब-मर्दनम्-मसलना। ज्वस-कासः-खांसी। बगार-म्रक्षणम्...। ब्यह-आसनम्-बैठना। लम-आकर्षण। लोस-श्रम। वुन-दुर्भाग्य। पक्ष में— छ्वम्बन्, इत्यादि होते हैं।

लदश्चाव् वेतनेऽपि ॥८॥

लद वस्तुप्रेषणेगृहादिनिर्माणोर्ध्वान्तरीकरणयोः सूत्रादिकर्मणि च इत्यस्य भावे आव् प्रत्ययश्च भवति। तद्वेतनेऽपि गृहादिर्निर्माण एव बोध्यम्। इतरयोस्तु गौणतया। लदाव्। (गृहादि) निर्माणम्। तद्वेतनं च।

'लद' वस्तु भेजने में, गृह आदि का निर्माण वा ऊर्ध्वान्तरी करने में और सूत्रादि कर्म में, इसके भाव में 'आव्' प्रत्यय होता है। उसके वेतन में भी गृहादिनिर्माण में ही जानना। दूसरों में गौण होने से। लदाव्-गृह आदि निर्माण और उसका वेतन।

छ्वकवछ्वकटकटुकट्वकठुकत्रुक्थकपाकवफुकपचकब्रकामुंल्लोपो वा ॥९॥

छ्वकवजलावगाहने। छ्वक धाङ्नैर्बल्ये। टक शब्दवद्दन्तैश्छेदने। टुक आखुवच्छेदे। ट्वकव कूटाद्याघाते। ठुक ऊत्खनने। त्रुक कणशश्छेदने भक्षणे च। थक श्रमे। पाकव पचने। फुक अङ्गार प्रदीपने। ब्रक दंष्ट्राघाते। एषां भावे उन् प्रन्ययस्य लोपो वा भवति। तत्र छ्वको दाहवैदग्धयोः। टकश्छेददन एव। ट्वकवछ्वकवपाकवानामन्त्यस्वरादिलोपः। फुकः फूत्कारे उपधाया वत्वमिष्यते। छ्वख्। जलशोधना। छ्वख्। दाहः वैदग्ध्यं वा। टख्। छेदः। टुख्। छिद्रवच्छेदः। ट्वख्। मृगादिहननम्। टुख्। उत्तूवननम्। त्रुख कणभक्षणं छेदनं वा। थख्। श्रमः। पाख्। पाकः। फुख्। अङ्गारप्रदीपनम्। फ्वख्। फूत्कारः। ब्रख्। आघातः।

छ्वकव-जल में स्नान करके अर्थ में। छ्वक-वाणी की निर्बलता में। टक-शब्द की तरह दान्तों से काटने में। टुक-चूहे की तरह छेद में। ट्वकव-कूट कपट आदि से प्रहार करने पर। ठुक-खोदने में। त्रुक-कणों के छेद करने और खाने में। थक-श्रम में। पाकव-पकाने में। फुक-अङ्गारों के प्रदीप्त होने में। ब्रक-दान्तों से प्रहार करने में। इनके होने पर 'उन्' प्रत्यय का लोप होता है। वहाँ छ्वक-दाह और वैदग्ध्य में। टक-छेद करने में ही। ट्वकवछ्वकव-पाकव के अन्त के स्वरादि का लोप। फुक-फूत्कार में उपधा को 'व' होता है। छ्वख्-जल से शुद्ध करने में। छ्वख्-दाह वा वैदग्ध्य। टख्-छेद। टुख्-छिद्र की तरह छेद। ट्वख्-मृग आदि का मारना। टुख्-खोदना। त्रुख्-कण खाना व

छेद करना । थख्-श्रम । पाख्-पाक । फुख्-अङ्गारों को प्रदीप्त होना । फ्वख्-फूत्कार । व्रख्-आघात ।

द्वगरङ्गसगां गात् ॥१०॥

द्वगव अवखण्डने । रङ्ग । रञ्जने सगव वृक्षादिसिञ्चने गकारान्तेषु एषां धातूनां भावे उन् प्रत्ययस्य विकल्पेन लोपो भवति । द्वगवसगवयोर्मूलधातू-अनुपलब्धावपि कारितोत्पन्नो व प्रत्ययोऽनुमीयते । अतः ट्वकवधातुवदत्रापि अन्त्यस्वरादिलोपे गान्तेषु पठितौ । द्वग् । खण्डनम् । रङ्ग् । रागः । सग् । सेकः ।

'द्वगव'—अवखण्डन में । रङ्ग-रंगने में । सगव-वृक्ष आदि के सींचने में । गकारान्तों में इन धातुओं के भाव में 'उन्' प्रत्यय का विकल्प से लोप होता है । द्वगव और सगव के मूलधातु अनुपलब्ध होते हुए भी कारितोत्पन्न 'व' प्रत्यय का अनुमान लगाया जाता है । इसलिए ट्वकव धातु की तरह यहां भी अन्त के स्वरादि का लोप होने पर गकारान्तों में पढ़े गए हैं । द्वग्-खण्डन । रङ्ग-रंगना । सग्-सिञ्चन ।

वाँचश्चात् ॥११॥

अप्रसिद्धचवर्गान्तेषु धातुषु वाँच वञ्चने इत्यस्य धातोर्भावे उन् प्रत्ययस्य लोपो वा भवति । वाँछ् । वञ्चनम् ।

अप्रसिद्धचवर्गान्त धातुओं में 'वाँच'-ठगने अर्थ में, इस धातु के भाव में 'उन्' प्रत्यय का लोप होता है । वाँछ-ठगना ।

चेटलूटवाटां टात् ॥१२॥

टकारान्तेषु धातुषु । चेट कुट्टने । लूट लुण्ठने । वाट संधापने । इत्येषां भावे उन् प्रत्ययस्य लोपो वा भवति ।। चेट् । कुट्टनम् । लूट् । लुण्ठनम् । वाट् । संधिः ।

टकारान्त धातुओं में । चेट्-कूटने में । लूट-लूटने में । वाट्-संधि कराने में । इनके भाव में 'उन्' प्रत्यय का लोप होता है । चेट्-कूटना । लूट्-लूटना । वाट्-सन्धि ।

गण्डो डात् ॥१३॥

डकारान्तेषु । गण्ड ग्रन्थे । इत्यस्य भावे उन् प्रत्ययस्य लोपो वा भवति । गंड । ग्रन्थिः ।

डकारान्तों में । गण्ड-गांठने में । इसके भाव में 'उन्' प्रत्यय का लोप होता है । गण्ड-गांठ ।

खनछ्यनोर्नात् ॥१४॥

नकारान्तेषु । खन अवदारणे । छ्यन छेदे । इत्यनयोर्भावे उन् प्रत्ययस्य लोपो वा भवति । खन् । खातः । छ्यन् । छेदः ।

नकारान्तों में । खन-अवदारण में । छ्यन-छेद में । इन दोनों के भाव में 'उन्' प्रत्यय का लोप होता है । खन-खात । छ्यन्-छेद ।

काम्पक्रुपचापजपटपां पात् ॥१५॥

पकारान्तेषु । काम्प कम्पने । क्रुप कर्तने । चाप अादने । जप जपने । टप परोक्षपरिभाषणे । एषां धातूनां भावे उन् प्रत्ययस्य लोपो वा भवति । टपः अश्वाघाते कार्यघाते च , काम्फ । कम्पः । क्रुफ् । क्रन्तनम् । चाक् । अदनम् । जफ् । जपः । टफ् । अश्वपादादिप्रहारादि ।

पकारान्तों में । काम्प-काँपने में । क्रुप-काटने में । चाप-खाने में । जप-जप करने में । टप-परोक्षपरिभाषण में । इन धातुओं के भाव में उन् प्रत्यय का लोप होता है । टप-अश्वाघात और कार्यघात में । काम्फ-कम्प । कृफ्-काटना । चाक्-खाना । जफ्‌जप । टफ्-अश्व के पादादि का प्रहार ।

ब्रमो मात् ॥१६॥

ब्रम भ्रान्तौ । इत्यस्य मकारान्तेषु धातुषु भावे उन् प्रत्ययस्य लोपो वा भवति । ब्रम । भ्रान्तिः ।

ब्रम-भ्रान्ति में । इसके मकारान्त धातुओं में भाव में 'उन्' प्रत्यय का लोप होता है । ब्रम-भ्रान्ति ।

चारचीरतारफुकारफ्यारमारस्वरां रात् ॥१७॥

रकारान्तेषु धातुषु । चार बलाद्बन्धने । चीर निष्पीडने । तार तारणे । फुकार कोपालापे । फ्यार रसनिष्कासने । मार मारणे । स्वर स्मरणे इत्येषां भावे उन प्रत्ययस्य लोपो वा भवति । फुकारः पाकभेदे च । स्वरश्चेष्टायां च । चार । अतिबन्धनम् । चीर । निष्पीडनम् । तार । तारणम् । फुकार् । ऊष्म-निर्गमः । मार् । मारणण् । स्वर् । चेष्टा स्मृतिश्च ।

रकारान्त धातुओं में। चार-बलपूर्वक बान्धने में। चीर-निष्पीडन में। तार-तारने में। फुकार-क्रोध से बात करने में। फ्यार्-रस के निकालने में। मार-मारने में। स्वर-स्मरण में। इनके भाव में 'उन्' प्रत्यय का लोप होता है। फुकार-पाकभेद में। स्वर-चेष्टा में ! चार-अतिबन्धन। चीर्-निष्पीडन। तारतारना। फुकार-गर्म सांस का निकालना। मार् मारना। स्वर्-चेष्टा और स्मृति।

च्यलछलज्लतोलदलमेलां लात् ॥१८॥

लकारान्तेषु धातुषु। च्यल बलात्प्रवेशने। छल छलने। जुल नखैस्तक्षणे। तोल तोलने। दल विदारणे। मेल संगमे। एषां धातूनां भावे प्रत्ययस्य लोपो वा भवति। च्यल्। बलात्प्रवेशः। छल्। छलम्। ज्ल्। नखक्षतम्। तोल्। तौल्यम्। दल्। अवखण्डनम्। मेल्। मङ्गः।

लकारान्त धातुओं में। च्यल-बलपूर्वक प्रवेश करने में। छल-छल करने में। जल-नाखूनों से काटने में। तोल-तोलने में। दल-विदारण में। मेल-संगम में इन धातुओं के भाव में 'उन्' प्रत्यय का लोप होता है। च्यल्-बलपूर्वक प्रवेश। छल-छल। ज्-नाखूनों से काटना। तोल्-तोलना। दल्-आवखण्डन। मेल्-सङ्ग।

जुवडुवतावव्वहवां वात् ॥१९॥

वकारान्तेषु। जुव जीवने। डुव संमार्जने। ताव तापने। व्वहव शापे। इत्येषां भावे उन् प्रत्ययस्य लोपो वा भवति। जुव। जीवः। डुव। नाशः। ताव्। व्वहव् शापः।

वकारान्तों में। जुव-जीने में। डुव झाड़ने पोंछने में। ताव तपाने में। व्वहव-शाप में। इनके भाव में 'उन्' प्रत्यय का लोप होता है। जुव-जीवः-जीव। डुव-नाशः-नाश। ताव्-तापः-ताप। व्वहव्-शापः-शाप।

रसहसवोः सात् ॥२०॥

रस सरसीभवने। ह्सव श्वादि सूचनायाम्। इत्यनयोर्भावे उन् प्रत्ययस्य लोपो वा भवति। ह्सवोऽत्रापि पूर्ववद्वकारलोप इष्यते। रस्। रसः। ह्स्। सूचना।

रस-सरस होने में। ह्सव-श्वादि की सूचना में। इन दोनों के भाव में उन्

प्रत्यय का लोप होता है। 'ह्सव' के यहां भी पहिले की तरह 'वकार' का लोप होता है। रस्-रस। ह्स्-सूचना।

ग्ह: सकारो वा ॥२१॥

ग्ह घर्षणे इत्यस्य भावे उन् प्रत्ययस्य लोपो वा भवति। धातोरन्त्यस्य च विकल्पेन सकारो भवति। ग्ह। घर्षणम्। पक्षे। गस्। घर्षणम्।

'ग्ह' घिसने में, इसके भाव में 'उन्' प्रत्यय का लोप होता है और धातु के अन्त के अक्षर को विकल्प से 'सकार' होता है। ग्ह्-घर्षणम्-घिसना। पक्ष में। गस्-घर्षणम्-थिसना।

च्हश्च ॥२२॥

च्ह चूषे इत्यस्य भावे उन्प्रत्ययस्य लोपो वा भवति। च्ह्। चूषणम्।

'च्ह' चूसने में, इसके भाव में 'उन्' प्रत्यय का लोप होता है। च्ह्-चूषणम्-चूसना।

स्त्रियाम् ॥२३॥

इत उत्तरं ये वक्ष्यमाणा: प्रत्ययास्ते स्त्रियां भावे विज्ञेया:।

इसके बाद जो वक्ष्यमाण प्रत्यय हैं, वे स्त्री लिङ्ग में भाव में जानने।

चरचुवमोरवमर्चा नित्यमिञ् ॥२४॥

चर अन्त:कोपे। चुव कलहे। मोरव पीड़ासहने। मर्च अमर्षे। इत्येषां भावे नित्यम् इञ् प्रत्ययो भवति स च स्त्रियामेव। चरिञ्। अन्त:कोप:। कुविञ्। कलह:। मोरवूञ्। सहनम्। मर्चूञ्। सहनम्। मर्चूञ्। अमर्षणम्।

चर-भीतरी क्रोध में। चुव-लड़ाई-झगड़े में। मोरव-पीड़ा सहने में। मर्च-न सहने में। इनके भाव में नित्य 'इञ्' प्रत्यय होता है और वह स्त्रीलिङ्ग में ही। चरिञ्-अन्त:कोप:-भीतरी क्रोध। चुविञ्-कलह:-झगड़ा। मोरवूञ्-सहनम्-सहना। मर्चूञ्-अमर्षणम्-न सहना।

मोरवमर्चख्सफिचादिभ्य ऊदादे: ॥२५॥

मोरव-पीड़ा सहने में। मर्च-न सहने में। इन दोनों से परे के उत्तरसूत्र में

वक्ष्यमाण फिच् आदि से इञ् प्रत्यय के आदि स्वर को ऊ मात्र आदेश होता है। मोरवूञ्-सहनम्-सहना। मर्चूञ्-अमर्षणम्-न सहना।

मोख पीड़ा सहने। मर्च अमर्षे। इत्याभ्यां परस्य उत्तरसूत्रे वक्ष्यमाण-फिचादिभ्यश्च इञ् प्रत्ययस्य आदिरचरस्य ऊमात्रादेशो भवति। भोरखूञ्। (सहनम्)। मर्चूञ्। (अमर्षणम्)।

फिच् (ख्स) फुहफ्वभ्रवजववुचां वा ॥२६॥

फिच विस्मरणे। (खस् तनूरुहकर्षणे)। फुहफ्वश् अन्तः कोपे। वजव सार्द्रीकरणे। वुच दग्धीभवने। इत्येषां भावे नित्यं विकल्पेन इञ् प्रत्ययो भवति। फिचूञ्। कार्यविस्मृतिः। (ख्मूञ्। तनूरुह-कर्षणम्।) फुहूञ्। अन्तःकोपः। फ्वशूञ्। अन्तःकोपः। वजवूञ्। (सार्द्रीभावाय मलादौ स्थापनम्)। वुचूञ्। दाहः। (अत्रापि क्रोधेनैवान्तर्दाह इव संताप इत्यर्थः)। पक्षे। किचुन्। (ख्सुन्)। फुहुन्। फ्वशुन्। वजवुन्। वुचुन्।

फिच—भूलने में। (खस्-वृक्ष खींचने में)। फुह्फ्वश्-भीतरी क्रोध में। वजव-गीला करने में। वुच-जल जाने में। इनके भाव में नित्य विकल्प से 'इञ्' प्रत्यय होता है। फिचूञ्-कार्यविस्मृतिः-काम भूल जाना। (ख्मूञ्-तनूरुह-कर्षणम्-वृक्ष खींचना। फुहूञ्-अन्तःकोपः-भीतरी क्रोध। फ्वशूञ्-अन्तःकोपः-भीतरी क्रोध। वजवूञ्-सार्द्रीभावाय मलादौ स्थापनम्-गीला करने के लिए मल आदि रखना। वुचूञ्-दाहः-दाह। (यहां भी गुस्से से ही अन्तर्दाह की तरह संताप, यह अर्थ है)। पक्ष में—किचुन्, खसुन्, फुहुन्, फ्वशुन्, वज-वुन्, वुचुन्।

सारखुतटुवडुवडलत्रुकथ्यकनचनटनमवुजवुठवुपां च ॥२७॥

सार स्वारादिषु। खुत अन्तःखनने। टुव संकोचने। डुव संमार्जने। डल उल्लंघने। त्रुक् भक्षणे। थ्यक श्लाघायाम्। नच नर्तने। नट कम्पे। नम नम्री-भावे। वुज जलादिव्यक्तीभावे। वुठ वेष्टने वुप अन्तर्दाहे। इत्येषां भावे स्त्रियां विकल्पेन इञ् प्रत्ययो भवति। सारिञ्। स्वारः। खुतिञ्। अन्तः-खननम्। टुविञ्। संकोचः। डुविञ्। संमार्जना। डलिञ्। प्रवणम्। त्रुकिञ्। कणभक्षणम्। थ्यकिञ्। श्लाघा। नचिञ्। नर्तनम् नर्तकी च। टिञ्। कम्पः। नमिञ्। नम्रता। वुंजिञ्। जलादेराविर्भावः। वुठिञ्।

वेष्टनम् । वुपिञ् । अन्तर्दाहः । तत्र प्रसङ्गागतस्तद्धितोक्तः अल्पप्रत्ययश्चेञन्त-भावादेव व्यवह्रियते नान्यत इति धीमद्भिरवाधार्यम् । तद्यथा । थ्यकिञल् । श्लाथी । नटिञल् । कम्पवान् । इत्यादि ।

सार-स्वारादि में । खुत-भीतर खोदने में । टुव-संकोच करने में । डुव-झाड़ने पोंछने में । डल-उल्लंथन करने में । त्रुक-खाने में । थ्यक-प्रशंसा में । नच-नाचने में । नट-कांपने में । नम-नम्र होने में । वुज-जल आदि प्रकट होने में । वुठ-बेठने में । वुप-भीतरी दाह में । इनके होने पद स्त्री लिङ्ग में विकल्प से 'इञ्' प्रत्यय होता है । सारिञ्-स्वारः...। खुतिञ्-भीतर खोदना । टुविञ्-संकोचः-संकोच । डुविञ्-समार्जना-झाड़ना । डलिञ्-प्रवणम्-उल्लंधन करना । त्रुकिञ्-कणभक्षणम्-कण खाना । थ्यकिञ्-श्लाघा-प्रशंसा करना । नचिञ्-नर्तनम्-नाचना और नाचने वाली । नटिञ्-कम्पः-कांपना । नमिञ्-नम्रता-नम्रता । वुजिञ्-जलादेराविर्भावः-जल आदि का आविर्भाव । वुठिञ्-वेष्टनम्-बेठना । वुपिञ्-अन्तर्दाहः-भीतरी जलन । वह प्रसङ्ग से आया तद्धित में कहा गया अल्पप्रत्यय चेञन्तभाव से ही व्यवहृत होता है, अन्य प्रकार से नहीं, ऐसा बुद्धिमान् पुरुषों को जानना चाहिए । सो जैसे —थ्यकिञल्-श्लाघी-प्रशंसा करने वाला । नटिञल्-कम्पवान्-कांपने वाला । इत्यादि ।

लिवल्यवोश्च ॥२८॥

लिव लेपने । ल्यव लेहने । इत्यनयोर्भावे स्त्रियां विकल्पेन इञ् प्रत्ययो भवति । लिविञ् । लेपनम् । ल्यविञ् । लेहनम् ।

लिव-लेप करने में । ल्यव-चाटने में । इन दोनों के भाव में स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से 'इञ्' प्रत्यय होता है । लिविञ्-लेपनम्-लेप करना । ल्यविञ्-लेहनम्-चाटना ।

लिवो वस्य वश्च ॥२९॥

लिव लेपने । इत्यस्य वकारस्य पकारश्च भवति । लिपिञ् । लेपनम् । लिव-लेप करने में । इसके 'वकार' को 'पकार' होता है । लिपिञ्-लेपनम्-लेप करना :

करो लेपकायुधे ॥३०॥

कर करणे, इत्यस्य लेपकायुधे गम्यमाने स्त्रियाम् इञ् प्रत्ययो भवति । करिञ् । लेपकायुधः । भावे करुन् इति पुंल्लिङ्गमेव भवति ।

कर करने में। इसके लेप करने वाले आयुध-गम्यमान स्त्रीलिङ्ग में 'इञ्' प्रत्यय होता है। करिञ्-लेपकायुधः-लेप करने वाला आयुध। भाव में 'करुन्' यह पुंल्लिङ्ग ही होता है।

वटः संग्रहे ॥३०॥

वट वेष्टने। इत्यस्य संग्रहार्थे स्त्रियाम् इञ् प्रत्ययो भवति। वटिञ्। संग्रहः।

वट-वेठने में। इसके संग्रह अर्थ में स्त्री लिङ्ग में 'इञ्' प्रत्यय होता है। वटिञ्-संग्रहः-संग्रह।

फरंश्चौरिण्याम् ॥३२॥

फर स्तेये। इत्यस्य चौरिण्या अर्थे स्त्रियाम् इञ् प्रत्ययो भवति। फरिञ्। चौरिणी।

फर-चोरी करने में। इसके चोरी करने के अर्थ में स्त्रीलिङ्ग में 'इञ्' प्रत्यय होता है। फरिञ्-चौरिणी-चोरी करने वाली।

च्वकतपलङ्गामिश् ॥३३॥

च्वक क्रोधेऽम्लीभवने च। तप औष्ण्योपादाने। लङ्ग पङ्गवीभवने। इत्येषां भावे स्त्रियाम् इञ् प्रत्ययो भवति। च्वकिञ्। तपिञ्। तापः। लङ्गिश्। पङ्गुता।

च्वक-क्रोध और खट्टा होने में। तप-गर्म होने में। लङ्ग-लंगडा होने में। इनके भाव में स्त्रीलिङ्ग में 'इञ्' प्रत्यय होता है। च्वकिञ्-क्रोधः-क्रोध। तपिञ्-तापः-गर्मी। लङ्गिश्-पङ्गुता-लंगडापन।

मिलवोऽन्त्यस्य मश्च ॥३४॥

मिलव संयोजने इत्यस्य भावे इञ् प्रत्ययो भवति। अन्त्याक्षरस्य च मकारो भवति। मिलमिश। संयोगः।

मिलव-मिलने में। इसके भाव में 'इञ्' प्रत्यय होता है और अन्त के अक्षर को 'मकार' होता है। मिलमिश्-संयोगः-संयोग।

कपटदननहावपिलफिरमाजमिलवमुचरमूरलयववुठवुहामन् ॥३५॥

कपट कृन्तने। दन दनव वस्त्रादिरजोपहरणे। नहाव क्रियाघाते। पिल प्राप्तौ। फिर पुस्तकादिपरिवर्तने। माज तत्परतायां शोधने च। मिलव

संयोजने । मुचर उद्घाटने । मूर त्वचो निष्कर्षे । ल्यव लेहने। वुठ वेष्ठने । वुह अनिर्वाणे । इत्येषां भावे स्त्रियां अन् प्रत्ययो वा भवति । कपटन् । कृन्तनम् । दनन् । (वस्त्रादेः) रजोपहरणार्थं कम्पनम् । नहावन् । क्रियाघातः । पिलन् । प्राप्तिः । फिरन् । परिवर्तनम् । माजन् । शोधना । सा तु धान्यादिक एव व्यवह्रियते । मिलवन् । संयोजना । मुचरन् । उद्घाटनम् । मूरन् । त्वङ्निष्कर्षणम् । ल्यवन् । लोहः । वुठन् । वेष्टनम् । वुहन् । अनिर्वाणः ।

कपट-काटने में । दन-दनव-वस्त्र आदि की धूल दूर करने में । नहाव्—क्रियाघात में । पिल-प्राप्ति में । फिर-पुस्तक आदि के बदलने में । माज-तत्परता और शोधन में । मिलव-मिलने में । मुचर-उद्घाटन में । मूर-चमड़ी के निष्कर्ष में । ल्यव-चाटने में । वुठ-वेठने में । वुह-अनिर्वाण में । इनके भाव में स्त्रीलिङ्ग में 'अन्' प्रत्यय होता है। कपटन्-कृन्तनम्-काटना । दनन्-वस्त्रादि की धूल दूर करने के लिए हिलाना । नहावन्-क्रियाघातः-क्रियाघात । पिलन् । प्राप्तिः-पाना । फिरन्-परिवर्तनम्-परिवर्तन । माजन्-साफ करना । वह तो धान्यादि में व्यवहृत किया जाता है। मिलवन्-संयोजना-मिलना । मुचरन्-उद्घाटनम्-उद्घाटन । मूरन्-त्वङ्निष्कर्षणम्-चमड़ी का निष्कर्ष । ल्यवन्-लेह :—चाटना । वुठन्-वेष्टनम्-बेठना । वुहन्-अनिर्वाणः-अनिर्वाण ।

गिलवश्चेष्टार्थेऽन्त्यलोपश्च ॥३६॥

गिलव भ्रामणे । इत्यस्य चेष्टाया अर्थे अन् प्रत्ययो भवति अन्त्याक्षरस्य च लोपो भवति । गिलन् । चेष्टा ।

'गिलव-घुमाने में । इसके चेष्टा के अर्थ में 'अन्' प्रत्यय होता है और अन्त के अक्षर का लोप होता है। गिलन्-चेष्टा-हरकत ।

आड्रखण्ड्रछ्वट्रजीठ्रट्वट्रपीठ्रबड्रबाग्रम्वट्रवोवरां च ॥३७॥

आडर मिश्रणे । खण्ड्र विभाजने । छ्वटर-ह्रस्वीकरणे । जीठर-दीर्घीकरणे । ट्वेटर-वृत्तिसंकोचे । पीठर सशिक्षं प्रतिक्षेपणे । फुट्र भञ्जने । बड्र-वर्धने । वाग्र विभाजने । म्वटर घनीकरणे । वोव्र धातूनां तक्षणे । इत्येषां भावे अन् प्रत्ययो भवति । आड्रन् । मिश्रणम् । खण्ड्रन् । खण्डना, छ्वटरन् । संक्षेपता । जीठ्रन् । विस्तारः । ट्वट्रन् । वृत्ति-संकोचः । पीठ्रन् । सशिक्ष-

मुपालम्भः । फुट्रन् । भञ्जनम् । बड्रन् । वर्धनम् । बाग्रन् । विभागः । म्वट्रन् । धनता । वोव्रन् । तक्षणम् ।

आड्र-मिलाने में । खण्ड्र-विभाग करने में । छ्वट्र-छोटा करने में । जीठ्र-दीर्घीकरणे-लम्बा करने में । ट्वटर-वृत्ति के संकोच में । पीठ्र-शिक्षा-पूर्वक प्रतिक्षेपण में । फुट्र-भञ्जन में । वड्र-बढ़ने में । बाग्र-बांटने में । म्वट्र-घना करने में । वोव्र-धातुओं के तक्षण में । इनके भाव में 'अन्' प्रत्यय होता है । आड्रन्-मिश्रणम्-मिलाना । खण्ड्रन्-खण्डना-टुकड़े-टुकड़े करना । छ्वटरन्-संक्षेपता-संक्षेप करना । जीठ्रन्-विस्तारः-विस्तार । ट्वट्रन्-वृत्तिसंकोचः-वृत्ति में संकोच । पीठ्रन्-सशिक्षमुपालम्भः-शिक्षा के साथ उलाहना । फुट्रन्-भञ्जनम्-तोड़ना । बड्रन्-वर्धनम्-बढ़ना । वाग्रन्-विभागः-विभक्त करना । म्वट्रन्-धनता-घनापन । वोव्रन्-तक्षणम्-तराशना ।

नव उपधाया वश्च ॥३८॥

नव नूतनतायाम् । इत्यस्य अन् प्रत्ययो भवति उपधाया अकारस्य वकारश्च भवति । न्ववरन् । दोषोपचयनम् ।

नव-नूतनता में । इसको 'अन्' प्रत्यय और उपधा के 'अकार' को 'वकार' होता है । न्ववरन्-दोषोपचयनम्-दोषों को बढाना ।

तञ्रतच्रस्यज्रां च क्वचित् ॥३९॥

तञ्र विरलीकरणे । तच्र तापने । स्यज्र ऋज्वीकरणे । इत्येषां भावे क्वचित् अन् प्रत्ययो भवति । तञ्रन् । तनुता । तच्रन् । तप्तता । स्यज्रन् । ऋजुता ।

तञ्र-विरला करने में । तच्र-तपने में । स्यज्र-सीधा जरने में । इनके भाव में कहीं पर 'अन्' प्रत्यय होता हैं । तञ्रन्-तनुता-पतलापन । तच्रन्-तप्तता-गर्मपन । स्यज्रन्-ऋजुता-सीधापन ।

लारः कम्पे ॥४०॥

लार स्पर्शानुगमनस्निग्धीकरणेषु । इत्यस्य कम्पार्थे अन् प्रत्ययो भवति । लारन् । कम्पः ।

लार-स्पर्श, अनुगमन, स्निग्धीकरण में । इसके कम्प अर्थ में 'अन्' प्रत्यय होता है । लारन्-कम्पः-कांपना ।

चिखिह्यां पुंस्येव ॥४१॥

चि पाने । खि खादने । हि धारणादिषु । इत्येषां भावे पुंसि अन् प्रत्ययो भवति । च्यन् । पानम् । ख्यन् । अशनम् । ह्यन । धारणम् ।

चि-पीने में । खि-खाने में । हि-धारण आदि में । इनके भाव में पुंल्लिङ्ग में 'अन्' प्रत्यय होता है । च्यन्-पानम्-पीना । ख्यन्-अशनम्-खाना । ह्यन-धारणम्-धारण करना ।

कडपास्रश्रुकामञ् ॥४२॥

कड निष्कासने । पास्र धिक्करणे । श्रुक क्रन्दने । इत्येषां अञ् प्रत्ययो भवति । तेषां तु नित्यं बहुत्वमेव । कडञ । धिक्वारः । पास्रञ् । धिक्वारः । श्रुकञ् । रोदनम् ।

कड-निकालने में । पास्र-धिक्कार करने में । श्रुक-चिल्लाने में । इन्हें 'अञ्' प्रत्यय होता है । उनके तो नित्य वहुवचन ही । कडञ्-धिक्कारः-धिक्कार । पास्रञ्-विक्कारः-धिक्कार । श्रुकञ-रोदनम्-रोना ।

चेनश्चावागमः ॥४३॥

चेन चेतने । इत्यस्य अञ् प्रत्ययो भवति अव् आगमश्च । चेनवञ् । संज्ञापनम् ।

चेन-चेतन अर्थ में । इसे 'अञ्' प्रत्यय और 'अव्' का आगम होता है । चेनवञ्-संज्ञापनम्-संज्ञापान ।

अर्जबावव्वपजश्रपस्यदगरवटशहलह्यकामत् ॥४४॥

अर्ज अर्जने । बाव अभिप्रायाविष्करणे । व्वपज उत्पत्तौ । श्रप जीर्णने । स्यद सिद्ध्यामृज्वीभवने च । गर घट्टने । वट वेष्टने । शहल शीतिभवने । ह्यक शक्तौ । एषां भावे स्त्रियां अत् प्रत्ययो भवति । व्वपजोऽन्त्यस्वरादिलोपश्चेष्यते । वटः संग्रहे । गरः पुंसि च । अर्जथ् । अर्जनम् । बावथ् । अभिप्रायाविष्करणम् । व्वपथ् । उत्पत्तिः । श्रपघ् । अन्नादेर्जीर्णनम् । स्यदथ् । सिद्धिः । गरथ् । घट्टना । वटथ् । संग्रहः । शाहलघ् । शीतलता । ह्यकथ् । शक्तिः ।

अर्ज-कमाने में। बाव-अभिप्राय प्रकट करने में। व्वपज-उत्पत्ति में। अप-जीर्ण होने में। स्यद-सिद्धि और सीधा होने में। गर-घटने में। वट-बेठने में। शहल-ठण्डा होने में। ह्यक-शक्ति में। इनके भाव में स्त्रीलिङ्ग में 'अत्' प्रत्यय होता है। व्वपज के अन्त के स्वर आदि का लोप होता है। वट-संग्रह में। गर-पुंल्लिङ्ग में। अर्जघ्-अर्जनम्-कामना। बावथ्-अभिप्रायाविष्क-रणम्-अभिप्राय प्रकट करना। व्वपथ्-उत्पत्तिः-उत्पत्ति। अपथ्-अन्नादि का जीर्ण होना। स्यदथ्-सिद्धिः-सिद्धि। गरथ्-घट्टना-घटना। वटथ्-संग्रहः-संग्रह। शहनथ्-शीतलसा-ठण्डक। ह्यकथ्-शक्तिः-शक्ति।

पोठोऽक् शक्तौ॥४५॥

पोठ स्थूली भवने। इत्यस्य धनादिशत्तचर्थे अक् प्रत्ययो भवति। पोठख्। (धनादिसंचयेन) शक्तिः।

पोठ-मोटा होने में। इसके धन आदि शक्ति अर्थ में 'अक्' प्रत्यय होता होता है। पोठख्-धनादि संचय से शक्ति।

वखनखारजागवालनचह्वखामनामऽय् ।४६॥

वखन-व्याख्याने। खार आरोहणे। जाग प्रतिजागरणे। बाल अवतारणे। नच नर्तने। ह्वख शोषे। आमन वैवर्ण्ये। इत्येषाँ भावे स्त्रियां अय् प्रत्ययो भवति। खारवालोर्निन्दार्थे तयोस्तु अन् आगमो वेष्यते। वखनय्। व्याख्यानम्। खारनय् वा खारय्। आरोहणम्। जागय्। प्रतिजागरणम्। वालनय् वा वालय्। अवतारणम्। नचय्। नर्तनम्। ह्वखय्। शोषणम्। आमनय्। वैवर्ण्यम्।

वखन-व्याख्यान में। खार-चढ़ाने में। जाग-जागने में। बाल-उतारने में। नच-नाचने में। ह्वख-सूखने में। आमन-वैवर्ण्य में। इनके भाव में स्त्रीलिङ्ग में 'अय्' प्रत्यय होता है। खार-वाल इन दोनों के निन्दा अर्थ में इन दोनों को 'अन्' आगम होता है। वखनय्-व्याख्यानम्-व्याख्यान। खारनय् वा खारय्-आरोहणम्-चढ़ना। जागय्-प्रतिजागरणम्-जागना। वालनय् वा वालय्-अवतारणम्-उतारना। नचय-नर्तनम्-नाचना। ह्वखय्-शौषणम्-सूखना। आमनय्-वैवर्ण्यम्-रंग बिगड़ना।

मङ्गो दीर्घश्च ॥४७॥

मङ्ग याचने। इत्यस्य भावे अय प्रत्ययो भवति पूर्ववर्णस्य च दीर्घः स्यात्। माङ्गय्। याञ्चा।

मङ्ग- मांगने में। इसके भाव में 'अय्' प्रत्यय और पूर्ववर्ण को दीर्घ होता है। माङ्गय्-याञ्चा-मांगना।

बाग्रो रलोपश्च ॥४८॥

स्पष्टम्। वागय्। विभागः।

स्पष्ट है। वागय्-विभागः-विभाग।

जेन उपधाया इदाद्यन्तलोपोऽपि प्रत्ययधात्वोः ॥४९॥

जेन जये। इत्यस्य अय् प्रत्ययो भवति उपधायाश्च इत्वं भवाते प्रत्ययस्य आद्यक्षरस्य धातोश्चान्त्याक्षरस्यापि लोपो भवति। जिय्। जयः।

जेन—विजय में। इसे 'अय्' प्रत्यय और उपधा को 'इ' होता है। प्रत्यय के आदि अक्षर धातु के अन्त के अक्षर का भी लोप होता है। जिय्-जयः—विजय।

उदोपपदे साव उन्निद्रतायाम् ॥५०॥

साव शायने। इत्यस्य उदशब्दे उपपदे सति उन्निद्रताया अर्थे अय् प्रत्ययो भवति। उदसावय्। उन्निद्रता।

साव—सुलाने में। इस के उद शब्द उपपद होने पर उन्निद्रता के अर्थ में 'अय्' प्रत्यय होता है। उदसावय्-उन्निद्रता—उनीन्दापन।

केवलात्सुखार्थे ॥५१॥

साव शायने। इत्यस्मात्केवलात् सुखार्थे अय् प्रत्ययो भवति। सावय्। सुखम्।

साव—सुलाने में। इस 'केवल' से सुख अर्थ में 'अय्' प्रत्यय होता है। सावय्-सुखम्-सुख।

होपपदे आमनो मिथ्याभियोगे ॥५२॥

आमन वैवर्ण्ये। इत्यस्य ह शब्दे उपपदे सति मिथ्याभियोगार्थे अय् प्रत्ययो भवति। हामनय्। मिथ्याभियोगः।

ग्रामन—रंग विगड़ने में । इस के 'ह्' शब्द उपपद होने पर मिथ्याभियोग अर्थ में 'अय्' प्रत्यय होता है । हामजय्-मिथ्याभियोगः—झूठा अभियोग ।

लागोऽनय् कृष्यर्थे ॥५३॥

स्पष्ट । लागनय् । कृषिः ।

स्पष्ट है । लागनय्-कृषिः-खेती ।

वाग्रो रलोपश्च ॥५४॥

स्पष्टम् । वागनय् । विभागः ।

स्पष्ट है । वागनय्-विभागः-विभाग ।

सादो निमित्ते ॥५५॥

स्पष्टम् । सादनय् । मुख्यहेतुः ।

स्पष्ट है । सादनय्-मुख्यहेतुः-मुख्य कारण

छकछिकचमकट्कफूंकशेंकाम्जिो लोपः ॥५६॥

छक कीर्णने । छिक सेचने प्रमेहने च । चमक दीप्तौ ट्क धावने । फूंक आघ्राणे । शेक शङ्कायाम् । इत्येषां धातूनां भावे इञ् प्रत्ययस्य लोपो भवति । छख् । कीर्णनम् । छिख् सिञ्चनन् । चमख् । दीप्तिः । ट्ख् । धावनम् । फूंख् । आघ्राणम् । शेंख् । शङ्का ।

छक-विखरने में । छिक-सींचने और प्रमेहन में । चमक-दीप्तौ-दीप्ति में । ट्क-धावने-दौड़ने में । फूँक-सूंघने में । शेंक-शङ्का में । इन धातुओं के भाव में 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है । छख्-कीर्णनम्-विखरना । छिख्-सिञ्चनम्-सींचना । चमख्-दीप्तिः-चमक । ट्ख्-धावनम्-दौड़ना । फूँख्-आघ्राणम्-सूंघना । शेंख्-शङ्का-शङ्का ।

जागटाँगदगमङ्गलगलागवुङ्गश्वङ्गां गात् ॥५७॥

गकारान्तेषु धातुषु । जाग प्रतिजागरे । टाँग घोरवाशिते । दग घातने । मङ्ग याचने । लग सङ्गे पीडायां संगतीभवने च । लाग अनुकरणादिषु । वुङ्ग । श्वरवे । श्वङ्ग शयने । इत्येषां धातूनां भावे इञ् प्रत्ययस्य लोपो भवति । जाग । अवेक्षा । टाँग् । घोरवाशितम् । दग् । घातः । मङ्ग् । याञ्चा । लग् । सङ्गः । लाग् । नियमाल्लगनम् । वुङ्ग् । श्वादिरवः ।

श्वङ्ग् । निद्रा । वुङ्गस्तु अकारान्तस्वरूपं मनुष्याणां चिन्तया रात्रिक्षेपे चेति । (वुङ्ग) ।

गकारान्त धातुओं में । जाग-जागने में । टांग-घोरवाशित में । दग । घातन में । मङ्ग-मांगने में । लग-सङ्ग में, पीडा में और संगति होने में । लाग-अनुकरणादि में । वुङ्ग—कुत्ते की आवाज में । श्वङ्ग-सोने में । इन धातुओं के भाव में 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है । जाग-अवेक्षा-जागना । टाँग-घोरवाशितम्-घोरवाशित । दग्-घातः घात । मङ्ग-याञ्चा-मांगना । लग्-सङ्गः-सङ्ग । लाग-नियमाल्लगनम्-नियम से लगना । वुङ्ग-श्वादिरवः-कुत्ते की आवाज । श्वङ्ग्-निद्रा-नीन्द । वुङ्ग तो अकारान्त्र स्वरूप मनुष्यों की चिन्ता से रात्रिक्षेप में । वुङ्ग ।

पचरोचश्रोचां चात् ॥५८॥

अप्रसिद्धचकारान्तेषु । पच ऋणादिविश्वासे । रोच रोचने । श्रोच शुद्धौ । इत्येषां धातूनां भावे स्त्रियां इञ् प्रत्ययस्य लोपो भवति । पछ् । विश्वासः । रूछ् । रुचिः । श्रोछ् । शौचः ।

अप्रसिद्ध चकारान्तों में । पच-ऋण आदि के विश्वास में । रोच—अच्छा लगने में । श्रौच-शुद्धि में । इन धातुओं के भाव में स्त्री लिङ्ग में 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है । पछ्-विश्वासः-विश्वास । रूछ्-रुचिः-रुचि । श्रोछ्-शौचः-शौच ।

इछप्रिछोश्छात् ॥५९॥

इछ इच्छायाम् । प्रिछ पृच्छायाम् । अनयोरप्रसिद्धछकारान्तेषु इञ् प्रत्ययस्य लोपो भवति । इछ् । इच्छा । प्रिछ् । पृच्छनम् । द्वितीयस्योदाहृतिर्यथा । प्रिछ प्यौव् । पृच्छनयोग्यः सम्पन्नः । यथा च । प्रिछ-गारू करूनस् । पृच्छनादिका रचिता तस्य ।

इछ-इच्छा में । प्रिछ-पूछने में । इन दोनों के अप्रसिद्ध छकारान्तों में 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है । इछ-इच्छा-इच्छा । प्रिछ-पृच्छनम्-पूछना । दूसरे का उदाहरण जैसे—प्रिछ प्यौव्-पृच्छनयोग्यः सम्पन्नः—पूछने योग्य हुआ । जैसे—प्रिछ-गारू करूनस्—पृच्छनादिका रचिता तस्य—उसे पूछना आदि किया ।

दून्छ्रोऽन्त्यव्यञ्जनलोपः ॥६०॥

दून्छ्र पृथक् पृथक्करणे । इत्यस्य भावे इञ् प्रत्ययस्य लोपो भवति अन्त्यव्यञ्जनस्य च लोपो भवति । दून्छ् । पृथक्पृथक्करणम् ।

दून्छ्र—अलग अलग करने में । इस के भाव में 'इञ्' प्रत्यय का लोप । और अन्त के व्यञ्जन का लोप होता है । दून्छ्—अलग अलग करना ।

तछमन्दछरछां छात् ॥६१॥

प्रसिद्धछकारान्तेषु धातुषु । तछ तक्षणे । मन्दछ मन्दाक्षे । रछ-रक्षायाम् । इत्येषां भावे इञ् प्रत्ययस्य लोपो भवति । तछ् । कण्डूः । मन्दछ् । लज्जा । रछ् । रक्षा ।

प्रसिद्धछकारान्त धातुओं में । तछ-तक्षण में । मन्दछ-मन्दाक्ष में । रछ-रक्षा में । इन के भाव में 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है । तछ्-कण्डूः-खारिश । मन्दछ्-लज्जा-शर्म । रछ्-रक्षा-रक्षा ।

तछ ऊमात्रागमो वा ॥६२॥

स्पष्टम् । तछू । कण्डूः ।

ष्पष्ट है । तछू-कण्डूः-खारिश ।

रछो नित्यम् ॥६३॥

अस्य नित्यं ऊमात्रागमः स्यात् न तु विकल्पेन । रछू । रक्षा ।

इस को नित्य 'ऊ' मात्र आगम होता है, न कि विकल्प से । रछू-रक्षा—रक्षा ।

ग्रजो जात् ॥६४॥

जकारान्तेषु धातुषु । ग्रज गर्जने । इत्यस्य इञ् प्रत्ययलोपो भवति । ग्रज । गर्जनम् ।

जकारान्त धातुओं में । ग्रज-गर्जने में । इस के 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है । ग्रज-गर्जनम्-गर्जना ।

चूँटछटफुटां टात् ॥६५॥

चूंट अपानशब्दे । छट उत्क्षेपणे । फुट भङ्गे । इत्येषां इञ् प्रत्ययलोपो भवति । चूंट । पर्दनम् । छट । उत्क्षेपणम् । फुट् । वलिः ।

चूंट—अधोवायु के शब्द में। छट—उत्क्षेपण में। फुट-भङ्ग में। इन के 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है। चूंट-पर्दनम्-पद्द। छट—उत्क्षेपणम्—ऊपर फैंकना। फुट्-वलिः-वलि।

टचठः प्रयोजने ॥६६॥

टचठ तिक्तीभवने। इत्यस्य प्रयोजनार्थे इञ् प्रत्ययलोपो भवति। टचठ्। प्रयोजनम्।

टचठ-तीखा होने में। इस के प्रयोजनार्थं में 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है। टचठ्-प्रयोजनम्-प्रयोजन।

मांडवड्रोंडात् ॥६७॥

मांड मिश्रीकरणे। वड्र निक्षेपे। इत्यनयोरिञ् प्रत्ययलोपो भवति। मांड्। मिश्रणम्। वड्रोऽन्त्यव्यञ्जनलोप इष्यते। वड्-उत्कोचः।

मांड-मिलाने में। वड्र-निक्षेप में। इन दोनों में 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है। मांड्-मिश्रणम्-मिला हुआ। वड्र के अन्त के व्यञ्जन का लोप होता है। वड्-उत्कोचः-रिश्वत।

छांड ऊमात्रागमो वा ॥६८॥

छांड अन्वेषणे। इत्यस्य ऊमात्रा आगमो वा स्यात्। छांड वा छांडू। अन्वेषणम्।

छांड—खोजने में। इस को 'ऊ' मात्र आगम विकल्प से होता है। छांड् वा छांडू—अन्वेषणम्-खोजना।

छाडो नित्यम् ॥६८क॥

छाड़ अन्वेषणे। इत्यस्य धातोः स्त्रियां भावे इञ् प्रत्ययलोप ऊमात्रागमश्च नित्यं भवति। छाडू। अन्वेषणम्।

छाड़—खोजने में। इस धातु के स्त्री लिङ्ग भाव में 'इञ्' प्रत्यय का लोप और नित्य 'ऊ' मात्र आगम होता है। छाडू—अन्वेषणम्—खोजना।

न्यतलतोस्तात् ॥६९॥

न्यत पशुरोमकृन्तने। लतव लत्ताघाते। इत्यनयोः इञ् प्रत्ययलोपः स्यात्। लतवो वकारस्य च लोप सष्यते। न्यथ्। पशुरोमकृन्तनम्। लथ्। लताघातः।

न्यत-पशुओं के वाल काटने में। लतव-लत्त के आघात में। इन दोनों के प्रत्यय का लोप होता है और लतव के वकार का लोप होता है। न्यथ्—पशुओं के वाल काटना। लथ्-लत्त का प्रहार करना।

पदप्यदप्वन्दां दात् ॥७०॥

पद कुत्सिते शब्दे। प्यद वृत्तज्ञतायाम्। प्वन्द क्षुते। एषां भावे इञ् प्रत्ययस्य लोपः स्यात्। पद्। पर्दनम्। प्यद। वृत्तज्ञता। प्वन्द। क्षुतम्।

पद—अधोवायु के कुत्सित शब्द में। प्यद-वृत्तज्ञता में। प्वन्द-क्षुत में। इनके भाव में 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है पद-पर्दनम्-कुत्सित शब्द। प्यद-वृत्तज्ञता...........। प्वन्द-क्षुतम्।

आमनजानोर्नात् ॥७१॥

आमन वैवर्ण्ये। जान अवबोधने। इत्यनयोर्भावे इञ् प्रत्ययस्य लोपो भवति। आमन्। आमता। जान्। ज्ञानम्।

आमन-रंग बिगढ़ने में। जान-जानने में। इन दोनों के भाव में 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है। आमन्-आमता-रंग विगड़ना। जान-ज्ञानम्-ज्ञान।

छानदोनोरूदागमश्च ॥७२॥

छान उत्पवने शातने च। दोन पिचुवद्विवरणे। अनयो इञ् प्रत्ययस्य लोप ऊमात्रागमश्च भवति। छाञ्। उत्पवनम्। दूञ्। पृथक्पृथक्करणम्।

छान-छानने में। दोन—अलग अलग करने में। इन दोनों के 'इञ्' प्रत्यय का लोप और 'ऊ' मात्र आगम होता है। छाञ्-उत्पवनम्-छानना। दूञ्-पृथक्-पृथक्करणम्—अलग अलग करना।

चापः पात् ॥७३॥

चाप अदने। इत्यस्य इञो लोपो भवति। चाफ्। अदनम्।

चाप-खाने में। इस के 'इञ्' का लोप होता है। चाफ्-अदनम्-खाना।

वुफः फात् ॥७३॥

वुफ विहायसा गतौ। इत्यस्येञो लोपो भवति। वुफ् उड्डीतिः।

वुफ-पक्षी की चाल में। इस के 'इञ्' का लोप होता है। वुफ्-उड्डीतिः-उड़ना।

लेखोऽन्त्यस्य च फः ॥७५॥

लेख लेखने। इत्यस्य इञ् प्रत्ययलोपो भवति अन्त्यस्य खकारस्य च फकारः। लेक्। लिपिः। शास्त्रदर्शिनां मते एवायं प्रयोगः।

लेख—लिखने में। इस के 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता और अन्त के 'खकार' को 'फकार' होता है। लेफ्-लिपिः—लिपि। शास्त्रदर्शियों के मत में ही यह प्रयोग है।

रम्बशूबोर्बात् ॥७६॥

रम्ब शोभायाम्। शूब शोभायाम्। वान्तेष्वनयोः इञ् प्रत्ययस्य लोपो भवति। रम्ब्। शोभा। शूब्। शोभा।

रम्ब-शोभा में। शूब्-शोभा में। वकारान्तों में इन दोनों के 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है। रम्ब्-शोभा। शूब्-शोभा।

प्रयो यात् ॥७७॥

प्रय प्रीणने। इत्यस्येञो लोपो भवति। प्रय्। प्रीतिः। प्रय-प्रियत्ता में। इस के 'इञ्' का लोप होता है। प्रय्-प्रीति।

आवर्डख्रतूरथाँथरदोरमूरलारसखरां रात् ॥७८॥

रकारान्तेषु। आवर व्यापने आवरणे च। डख्र। आधारीकरणे। तूर शीतलीभवने। थाँथर त्वरायाम्। दोर गतिचातुर्ये। मूर त्वचो निष्कर्षे भक्षणे च। लार स्पर्शानुगमनस्निग्धीकरणेषु। सखर प्रस्थाने। इत्यषां भावे इञ् प्रत्ययस्य लोपो भवति। (आवरडख्रतूरामूमात्रागमश्च बोध्यः।) आवरू। आवृतिः। डख्रू। आधारः। तूरू। शीतम्। थाँथर्। (सभयं) त्वरा। दोर्। धावनम्। मूर्। निष्कर्षणम्। लार्। पलायनम्। सख्र्। प्रस्थानम्। (मूरोऽन्च। मूरन्।)

रकारान्तों में। आवर-व्यापन और आवरण में। डख्र-आधार करने में। तूर-शीतल होने में। थाँथर-त्वरा में। दोर-गति चातुर्य में। मूर-त्वचा के निष्कर्ष और खाने में। लार-स्पर्श, अनुगमन और स्निग्ध करने में। सखर-प्रस्थान में। इन के भाव में 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है। (आवर, डख्रतूर को 'ऊ' मात्र आगम जानना।) आवरू-आवृति।

डख़्रू-आधार । नूरू-शीत । थाँथर (भय के साथ) त्वरा । दोर्-दौड़ना। मूर्-निष्कर्षण । लार्-भागना। सख़्र्-प्रस्थान । (मूर को अनच्—मूरन् ।)

दवो वात् ॥८१॥

दव शीघ्रगतौ । इत्यस्य भावे इञ् प्रत्ययस्य लोपो भवति । दव् । शीघ्रगतिः ।

दव-शीघ्रगति में । इसके भाव में 'इञ्' प्रत्यय का लोप होता है । दव्-शीघ्रगति ।

वेतनार्थे धातोर्वञ् ॥८२॥

क्रियाया वेतने गम्यमाने सति धातोर्भावे स्त्रियां वञ् प्रत्ययो भवति । करवञ् । कर्मवेतनम् । परवञ् । पाठवेतनम् । लोनवञ् । लवनवेतनम् । रोज-वञ् । स्थितिवेतनम् ।

क्रिया के वेतन-गम्यमान में, धातु के भाव में, स्त्रीलिङ्ग में 'वञ्' प्रत्यय होता है । करवञ्—कर्मवेतन । परवञ्-पाठवेतन । लोनवञ्-लवनवेतन । रोजवञ् स्थितिवेतन ।

व्यञ्जनान्तादकारागमः ॥८३॥

व्यञ्जनान्ताद्धातोरकारागमो भवति उदाहरणानि पूर्वसूत्रे (८२) उक्तानि ।

व्यञ्जनान्त से धातु को 'अकार' का आगम होता है । उदाहरण (८२) पूर्वसूत्र में कहे जा चुके हैं ।

स्वरान्ताद्वः ॥८४॥

स्वरान्ताद्धातोः वकारागमो भवति । दिववञ् । दानवेतनम् । निववञ् । हरणवेतनम् । ख्यववञ् । भुक्तिवेतनम् । च्यववञ् । पानवेतनम् ।

स्वरान्त धातु से 'वकार' का आगम होता है । दिववञ्-दानवेतन । निववञ्-हरणवेतन । ख्यववञ्-भुक्तिवेतन । च्यववञ्-यानवेतन ।

छानद्वसिल्भ्यां वय् ॥८५॥

छानशब्दद्वसिल्शब्दाभ्यां तयोर्वेतने गम्यमाने वय् प्रत्ययो भवति । छानवय् । तक्षवेतनम् । द्वसिल्वय् । लेपकवेतनम् ।

छान और द्वसिल् शब्दों से उन दोनो के वेतनगम्यमान में 'वय्' प्रत्यय होता है। छानवय्-तक्षवेतन। द्वसिल्वय्-लेपकवेतन।

नावो वलोपश्च ॥८६॥

नाव् शब्दात्तद्वेतने अभिधेये वय् प्रत्ययो भवति वकारस्य च लोपो भवति। नावय्। आतरः।

'नाव्' शब्द से उसके वेतन अभिधेय में 'वय्' प्रत्यय और 'वकार' का लोप होता है। नावय्-आतर।

वार उपधाऽप्रसिद्धता ॥८७॥

वार्शब्दात्तद्वेतने वाच्ये वय् प्रत्ययो भवति उपधायाश्चाप्रसिद्धता। तदप्रसिद्धत्वे सिद्धे। व्यञ्जनान्तात् (सू० ८३) इत्यादिसूत्रेणोक्ता कारागमस्य च ऊमात्रादेशोऽवगन्तव्यः। वारू वय्। भारवेतनम्।

'वार' शब्द से उसके वेतन वाच्य में 'वय्' प्रत्यय होता है और उपधा की अप्रसिद्धता। उसकी अप्रसिद्धता सिद्ध होने पर। व्यञ्जनान्तात् (सू० ८३) इत्यादि सूत्र से उक्त 'अकार' आगम को 'ऊ' मात्र आदेश जानना। वारूवय-भारवेतन।

क्रेयाद्गरु शिल्प्यर्थे ॥८८॥

(स्त्रियामिति निवृत्तम्) शिल्पिनः अर्घे तस्य (वि)क्रेयाद्वस्तुनः गरु प्रत्ययो भवति। लायगरु। लाजाविक्रेता। मंडन्गरु। और्णमर्दकः। गंडन्गुरु। पुस्तक-संदर्भी। कङ्गञ्गरु। कङ्कतिका विक्रेता। एवमन्येषां रूढपदव्यतिरिक्तानां पदानां बोध्यम्। यथा स्वनर् इति स्वर्णकारस्य रूढिः तस्य स्वनगरु इति न भवति।

(स्त्री लिङ्ग में निवृत्त है) शिल्पी के अर्थ में उसकी विक्रेय वस्तु से 'गरु' प्रत्यय होता है। लायगरु-फुल्लियां बेचने वाला। मंडन्गरु—ऊन मलने वाला। गंडन्गरु-पुस्तकसंदर्भी। कङ्गञगरु-कंघी बेचने वाला। इस तरह दूसरे रूढपद-व्यतिरिक्त पदों को जानना। जैसे 'स्वनर्' यह सुनार की रूढि, उसे 'स्वनगरु' यह नहीं होता है।

दाज आदेर्डः ॥८९॥

दाजशब्दात् क्रेयाद्वस्तुनः शिल्प्यर्थे गरु् प्रत्ययो भवति । आद्यक्षरस्य दकारस्य डकारो भवति । उत्तरपदे परे तु जकारस्यानुस्वारः पूर्वं (सू० ३।८) सिद्ध एव । डाँगरु् । धान्यविक्रेता ।

'दाज्' शब्द से क्रेय वस्तु के शिल्पी अर्थ में 'गरु' प्रत्यय होता है । आदि के अक्षर 'दकार' को 'डकार' होता है । उत्तरपद परे होने पर 'जकार' को पूर्व अनुस्वार (सू० ३।८) सिद्ध ही है । डाँगरु्-धान वेचने वाला ।

योग्यार्थे लगो हार ॥९०॥

लग सङ्गे पीडायां च । इत्यस्मात् हार् प्रत्ययो भवति योग्यार्थे । लगहार् । योग्यः ।

लग—सङ्ग और पीड़ा में । इस से योग्य अर्थ में 'हार्' प्रत्यय होता है । लगहार्-योग्य ।

धातोस्तद्योग्यार्थेऽनागमश्च ॥९१॥

तस्य धातोः क्रियाया योग्यत्वे अभिधेये सति हार् प्रत्ययो भवति अनागमश्च स्यात् । करन्हार् । करणयोग्यः । गण्डन्हार् । ग्रन्थनयोग्यः ।

उस धातु की क्रिया के योग्यत्व अभिधेय में होने पर 'हार्' प्रत्यय और 'अन्' का आगम होता है । करन्हार्—करने योग्य । गण्डन् हार्—गूंथने योग्य ।

स्वरादागमः स्वरवृद्धः ॥९२॥

स्वरान्ताद्धातोः अन् आगमः स्वरवृद्धः स्वरेण अकारेण वृद्धः भवति अर्थात् 'अन' आगमो भवति । ख्यनहार् । खादनयोग्यः । च्यनहार् । पानयोग्यः । ह्यनहार् । धारणयोग्यः । तत्र न्यादिभ्यस्त्रिभ्य आगमादिवर्णलोप इष्यते । निनहार् । हरणयोग्यः । यिनहार् । आगमनयोग्यः । दिनहार् । दानयोग्यः ।

स्वरान्तधातु से 'अन्' आगम स्वर 'अकार' से वृद्ध होता है अर्थात् 'अन' आगम होता है । ख्यनहार-खाने योग्य । च्यनहार-पीने योग्य । ह्यनहार्-धारण

करने योग्य। वहाँ न्यादि से स्त्रीलिङ्ग से आगमादिवर्णलोप हो जाता है। निनहार्-हरने योग्य। यिनहार्-आने योग्य। दिनहार्-दान के योग्य।

इति शारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे कश्मीरशब्दामृते

कृदन्तप्रक्रियायां भावपादो द्वितीयः ॥६।२॥

कृदन्तप्रक्रिया समाप्ता ॥६॥

समाप्तं चेदं कश्मीरशब्दामृतं नाम व्याकरणम् ॥

———

अथ गणपाठः

तत्रादौ

कथादयः । २।१।२५।।

कथ । वथ् । व्यथ् । लथ् । दथ् । ध्वथ् । च्वथ् । चित्थ । चेथ । ग्थ् । पोथ् । तोथ । इति कथादयः । ये कथ् आदि हैं ।

कछलादयः ।।२।१।७४।।

कछलु । च्वतलु । चकलु । ग्वगलु । कतलु । वतकु । गगरु् । म्वंगरु् । इत्यादयः कछलादयः । ये कछल आदि हैं ।

क्चादयः ।।८।४।१७।।

क्च आर्द्रीभवने । ग्वह् दीप्तौ । ग्रक चाञ्चल्यपाकातिशययोः । जोत दीप्तौ । ट्क धावने । तेल विस्फोटादिदंशे । तोष तोषे । दोर गतिचातुर्ये । नाँप दीप्तौ । नील ह्रितीभवने । पिस पाकेन बहिर्निःसरणे । पेड निर्यासे । पोर पर्याप्त्यनार्द्रत्वयोः । प्रार समीक्षणे । फव प्रशस्तीभवने । फर स्तेये । फल वस्त्रजीर्णने । फुह फुश अन्तः कोपे । फेर भ्रमणादिषु । फोर स्फुरणे । वाद प्रबलीभवने । वास-भासने । वुड स्थविरीभवने । व्रज दीप्तौ । याप दीप्तौ । रम्ब शोभायाम् । रस सरसीभवने । रोच रोचने । रोट अवष्टम्भे । र्ड रूढीभवने । र्ण जीर्णने । ल्यड पराजयीभवने । ठोर वैकल्ये । इत्यादयः क्चादयः ।

क्च-गीला होने में । ग्वह्-दीप्ति में । ग्रक-चञ्चलता और पाकातिशय में । जोत-दीप्ति में । ट्क-दौड़ने में । तेल-विस्फोटादिदंश में । तोष-प्रसन्नता में । दोर-गतिचातुर्य में । नाँप-दीप्ति में । नील-हरा होने में । पिस-पाक से बाहर निकलने में । पेड-निर्यास में । पोर-पर्याप्ति और गीला न होने में । प्रार-समीक्षण में । फव-प्रशस्ती होने में । फर-चोरी में । वाद-प्रबल होने में । वास-चमकने में । वुड-बूढा होने में । व्रज-दीप्ति में । याप-दीप्ति में । रम्ब-शोभ

में। रस-सरस होने में। रोच-अच्छा लगने में। रोट-अवष्टम्भ में। रुड-रूढ होने में। रुण-जीर्ण होने में। ल्यड-पराजयी होने में। ठोर-व्याकुलता में। ये कुच आदि हैं।

चरादयः ॥८।१।४५॥

चर अन्तःकोपे। फ्वश फुह अमर्षे। मर्च। अन्तः कोपे। वुच दग्धी भवने। किच विस्मरणे। इति चरादयः।

चर-भीतरी क्रोध में। फ्वश फुह-अमर्ष में। मर्च-भीतरी क्रोध में। वुच-जल जाने में। किच-भूलने में। ये चर आदि हैं।

तिहादयः ॥२।३।१॥

तिह्। यिह। क्याह्। इह्। हुह्। इति तिहादयः। ये तिह आदि है।

मूलादयः ॥ १।१।३५॥

मूल्। कस्तूरू। कूटु। चूँठु। छूल्। टुरु। ड्रुरु। डस्। नूरू। दूरू। नस्तूरु। वूथु। मूरू। रूद। लूख्। लूदर्। लूबर्। दूँठ्। मूर। डूस्। इत्यादयो मूलादयः। ये मूल आदि हैं।

इति श्रीशारदाक्षेत्रभाषाव्याकरणे
कश्मीरशब्दामृते गणपाठः समाप्तः।
समाप्तं चेदं साङ्गकश्मीरशब्दामृतं नाम व्याकरणम्।
मुदे भूयात्सताम्।

निष्प्रत्यूहनिरर्गलत्वविधये योगं जुषद्भूचामिव
संप्रीत्या विषयेऽत्र[1] पण्डितपटुः प्रोद्भावितोऽहं पुरा ।
तत्पादाभ्युपपत्तितः खलु सरस्वत्या[2] गणेशेन[3] च
ग्रन्थं नूतनमेव पूर्तिमनयं सच्छाब्धिकोल्लासनम् ॥१॥
वेदव्याकरणे किल त्रिनयनाभ्यस्ते च सारस्वत
एन्द्रे सादर ऐन्दवे सुमनसां यो वाहुलेयेऽपि च ।
प्रीत्या ईश्वर कौल ईशनिरतः कश्मीरशब्दामृतं
सद्वर्षे सुतिथौ शुभोडुनि त्रुभे घस्रे च मासे व्यधात् ॥२॥

दोषाच्छादनकृन्मर्त्यः किल देवप्रियो भवेत् ।
स देवानां प्रियो यस्तु दोषाच्छादनकृद्भवेत् ॥३॥

इति श्री कश्मीरमण्डलान्तर्मध्यनगरवर्तिसिद्धलक्ष्म्युपचित-प्राशस्त्यवितस्ताकमलाप्लावितव्रीडामठप्रदेशनिवासिनेश्वरकौलेनैषा शारदाक्षेत्रभाषाव्याकृतिः कश्मीरशब्दामृताख्या यथामति विस्तरतां नीता । शुभाय भवतु वाचकश्रोतृपाठकानामोम् ।

भद्रं पश्येम प्रचरेम भद्रम् । समाप्तं चेदं साङ्गं शब्दशास्त्रम् ।

---

१. (१) विषमे देशे च (२) सरस्वत्या देवतया तन्नाम्नया मात्रा च । (३) गणेशेन देवेन तनाम्ना पित्रा च ।

२. वेदेति इदं पद्यं ग्रन्थारम्भ एव व्याख्याय प्रकाशितम् ।

३. दोषेति दोषाणामाच्छादनं गोपनं शोधनं च करोतीति दोषाच्छादनकृत् तादृशो मर्त्यो देवप्रियो देवस्य प्रकाशात्मनो ज्योतिःस्वरूपस्येश्वरस्य प्रियो भवति ईश्वरस्तं प्रति प्रसन्नो भवतीत्यर्थः । यस्तु दोषाच्छादनकृत् दोषाणामाच्छादनं वस्त्रतुल्यं कृन्तति छेदयतीति स देवानां प्रियो (देवानां प्रिय इति च मूर्खे पा० सू० ६।३।२२) मूर्खः पापी च भवतीत्यर्थः) ।

अथाकारादिवर्णान्तक्रमेण धातुपाठसूची

खि. चि. जि. दि. नि. पि. यि. हि।

खिस्क. ग्रक. चमक. च्वक. छक. छिक (छ्वक). टक. टुक. ट्क. ठाक. ठीक. ठुक. डक. ड्वक. त्रुक. थक. थ्यक. थ्वक. ट्वक. निक. पक. फक. फुक. फूंक. फ्रक. बक ब्रक. लोक. बुक. शेंक. श्वक. मुक. ह्यक।

जख. लख. लिख. लेख. समख. ह्लख।

च्यङ्ग. जाग. टाँग. ठग. तग. तङ्ग. दग. द्वग फाँग. वुग. मङ्ग रङ्ग. लग. लङ्ग. लाग. वुङ्ग. व्वलङ्ग. श्वङ्ग. स्वग. ख्वग. हग।

खरच. वच।

अच. क्च. खोच. ग्वच. चर्च. च्वच. छ्वच. त्रच. नच. पच. फिच. मर्च. स्वच. रौच. ल्यच. वाँच. व्यच. वच. श्रौच. हच।

काँछ. तछ. वुछ. वेछ. मन्दछ. मुछ. रछ. वुछ. ह्यछ।

अछ. इछ. गछ. प्रिछ. व्रिछ।

आँज।

डा० अनन्तराम शास्त्री का जन्म जम्मू-काश्मीर राज्यान्तर्गत पुन्छ में आश्विन सं १९७७ को हुआ। आपने लाहौर से शास्त्री, जम्मू से साहित्याचार्य, काशी से साङ्ग अथर्ववेद तथा दिल्ली से डाक्टरेट की उपाधि ग्रहण की। प्रारम्भ से ही आपने अध्यापन कार्य किया और रणवीर केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, जम्मू से आचार्य पद पर रहकर अवकाश ग्रहण किया।

आप की लिखित वासुकिपुराणम् गुलाब चरित्र (हिन्दी), पंचतंत्र, बाबा जित्तो की अमर-कथा, पौंगर, सत्यनारायण कथा डोगरी भाषा में देवनागरी लिपि में प्रकाशित हो चुकी हैं। पुस्तकों के अतिरिक्त आप के कई लेख पत्र-पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हो चुके हैं।

आप का बहुत सी शिक्षण, सांस्कृतिक तथा सामाजिक संस्थाओं से भी संबंध है। :

आप की लिखित काश्मीर शब्दामृतम्, दश-भाषोदय कोष, भृंगीश संहिता तथा सैनिक शिक्षा एवं भुवनकोश वर्णनोद्योत प्रकाशनाधीन है।

महापुराणम्

१. ब्रह्ममहापुराणम्
२. पद्ममहापुराणम्
३. विष्णुमहापुराणम्
४. शिवमहापुराणम्
५. भागवतमहापुराणम्
६. नारदीयमहापुराणम्
७. मार्कण्डेयमहापुराणम्
८. अग्निमहापुराणम्
९. भविष्यमहापुराणम्
१०. ब्रह्मवैवर्तमहापुराणम्
११. लिंगमहापुराणम्
१२. वाराहमहापुराणम्
१३. स्कन्दमहापुराणम्
१४. वामनमहापुराणम्
१५. कूर्ममहापुराणम्
१६. मत्स्यमहापुराणम्
१७. गरुडमहापुराणम्
१८. ब्रह्माण्डमहापुराणम्
१९. वायुमहापुराणम्

विष्णधर्मोत्तर पुराण ::
हरिवंश पुराण ::
वासुकी पुराण ::
देवीभागवत